

भारत का विदेश नीति

• गुटनिरपेक्षता की अवधारणा

• भारत - यू.एस. का संबंध

• भारत - चीन

• अफगानिस्तान

• I - मॉल्दोवा

• I - अफगानिस्तान

• I - सीरिया

• I - पाकिस्तान

• I - NTPC

CTBT

• I - Russia

• I - USA

• भारत - यूरोपीय संघ

• जलवायु परिवर्तन

• Imp international

conferences

भारतीय विदेश नीति से संबद्ध महत्वपूर्ण मुद्दे (Important Issues Associated with India's Foreign Policy)

*** (इस टॉपिक का उल्लेख मुख्य परीक्षा पाठ्यक्रम में स्पष्ट रूप से कहीं भी नहीं किया गया है। यह आपको इसलिए दिया जा रहा है ताकि आप प्रश्नपत्र-2 में उल्लिखित अंतर्राष्ट्रीय संबंध से संबंधित आधारभूत अवधारणाओं की समझ विकसित कर सकें। है। 'दृष्टि' द्वारा वर्गीकृत पाठ्यक्रम के 15 खंडों में से इसका संबंध भाग-7 से है।)

गुटनिरपेक्षता की अवधारणा (Concept of Non-Alignment)

यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में मजबूती लाने हेतु कृतसंकल्प गुटनिरपेक्षता की नीति मूलतः भारत की देन है। अंतरिम प्रधानमंत्री का प्रभार संभालने के तुरंत बाद पं. जवाहरलाल नेहरू ने जिस विदेश नीति की घोषणा की थी वही आगे चलकर गुट-निरपेक्षता की अवधारणा के रूप में विकसित हो गई। यह अवधारणा प्रत्यक्षतः शीतयुद्ध से संबंधित है। वस्तुतः शीतयुद्ध उस तनाव की स्थिति का ध्यान है जो द्वितीय विश्व युद्ध के बाद संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ के बीच उत्पन्न हो गयी थी। ये दोनों देश 1939-1945 के महायुद्ध में मित्र राष्ट्रों के रूप में भागीदार थे। परिणामतः युद्ध के दौरान जो विद्वेष धीरे-धीरे पनप रहा था वह अब खुलकर सामने आ गया था। ब्रिटेन, फ्रांस, संयुक्त राज्य अमेरिका, सोवियत संघ तथा अन्य मित्र राज्यों की युद्ध में स्पष्ट विजय हुई थी। भले ही मित्र राष्ट्रों ने जर्मनी, इटली और जापान को पराजित किया हो, परंतु वे अपने वैचारिक मतभेद स्थायी रूप से मूलभूत बनाए रखे। शीतयुद्ध इन्हीं मतभेदों का परिणाम था। यह एक अज्ञात युद्ध था जिससे दो विरोधी गुटों के बीच राजनयिक रूप से झड़प गयी।

विश्व के देश जिन दो गुटों में बँट गए थे वे थे-

- (i) अमेरिका के नेतृत्व में पूँजीवादी गुट या पश्चिमी गुट या लोकतांत्रिक गुट और
- (ii) सोवियत संघ के नेतृत्व में पूर्वी गुट या समाजवादी गुट या सोवियत गुट।

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है गुटनिरपेक्षता की नीति का उद्देश्य गुटों की राजनीति से दूर रहना, दोनों गुटों के साथ मैत्री रखना, किसी के साथ भी सैनिक संधियों न करना और एक स्वतंत्र विदेश नीति का विकास करना था। नेहरू ने 7 सितम्बर 1946 को कहा था कि- 'हम अपनी इच्छा से इतिहास का निर्माण करेंगे। उन्होंने आगे यह भी कहा था कि हमारा प्रस्ताव है कि जहाँ तक संभव होगा हम समूहबद्ध शक्ति राजनीति (Power Politics) से दूर रहेंगे क्योंकि इस प्रकार की गुटबद्धी से पहले दो विश्व युद्ध हो चुके हैं और यह हो सकता है कि एक बार फिर अधिक भयंकर युद्ध हो जाए। भारत ऐसा किसी भी आशंका के प्रति सचेत था तथा किसी भी प्रकार का कोई युद्ध नहीं चाहता था।

1947 में नेहरू ने अपनी बात को दोहराते हुए कहा था कि भारत किसी भी शक्ति गुट में शामिल नहीं है। भारत की गुट-निरपेक्षता की नीति को एक सकारात्मक तटस्थता कहा जा सकता है। इस व्यवस्था के अंतर्गत देश स्वतंत्र रूप से कार्य करता है और प्रत्येक अंतर्राष्ट्रीय प्रश्न पर गुण दोष के आधार पर ही किसी नतीजे पर पहुँचता है। गुट-निरपेक्षता अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की एक ऐसी घटना है जो कि द्वितीय विश्व युद्ध के बाद घटी। आज की तिथि में गुटनिरपेक्षता (Non-Alignment) अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की प्रकृति निर्धारण में निर्णायक भूमिका निभाती है।

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के संचालन में और विशेषकर दो महाशक्तियों के प्रति अपनाई गई नीतियों के परिप्रेक्ष्य में पूरी तरह स्वतंत्र होना गुटनिरपेक्षता की अभिव्यक्ति करता है। पं. नेहरू के अनुसार 'गुटनिरपेक्षता' शक्ति की राजनीति से दूर रहने, शक्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के लिए कार्य करने तथा गुटों में शामिल तथा गुटनिरपेक्ष, सभी देशों के आपसी सहयोग का नाम है।

कोई भी गुटनिरपेक्ष देश अपनी नीतियाँ बनाने और कार्य विधि तय करने के लिए स्वतंत्र होता है। इस नीति से अंतर्राष्ट्रीय शांति, सुरक्षा और सहयोग को प्रोत्साहन मिलता है। गुटनिरपेक्षता के लिए असंलग्नता शब्द का भी प्रयोग किया जाता है क्योंकि कोई भी गुटनिरपेक्ष देश किसी महाशक्ति के साथ स्थायी रूप से नहीं जुड़ा था।

जैसा कि हमने ऊपर वर्णन किया है, गुटनिरपेक्षता का सीधा संबंध शीतयुद्ध से था। गुटनिरपेक्षता शीतयुद्ध के विरुद्ध एक प्रतिक्रिया थी। एक ओर जहाँ महाशक्तियाँ आक्रामक रूप से गुट निर्माण में संलग्न थीं वहीं दूसरी ओर नवोदित देश किसी भी सैनिक

गठबंधन से दूर रहना चाहते थे और गुट नेताओं से आदेश प्राप्त करने के विरुद्ध थे। इसलिए अब जब कि शीतयुद्ध समाप्त हो गया है, यह विचार बार-बार व्यक्त किया जा रहा है कि गुटनिरपेक्षता का औचित्य ही नहीं रह गया है। फिर भी गुटनिरपेक्ष आंदोलन आज भी सक्रिय है।

अपनी नवीन राजनीतिक स्वतंत्रता की रक्षा के लिए भारत ने तथा उसका अनुसरण करते हुए बाद में कई देशों ने विदेश नीति के साधन के रूप में गुटनिरपेक्षता को अपनाया। औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्रता यद्यपि एक महत्वपूर्ण उपलब्धि तो थी लेकिन इसे अपने आप में पर्याप्त नहीं कहा जा सकता था। सामाजिक, आर्थिक विकास के द्वारा ही भारत के राष्ट्रीय हितों की अभिवृद्धि हो सकती थी। गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों का यह विश्वास था कि इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अंतर्राष्ट्रीय शांति एक आवश्यक शर्त हो गई थी। गुटनिरपेक्ष देश शीतयुद्ध, गुटों की राजनीति, शक्ति की राजनीति आदि को सामाजिक-आर्थिक विकास के मार्ग में बाधाओं के रूप में स्वीकारते थे और इनसे दूर रहने में ही अपना विकास देखते थे।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि गुटनिरपेक्षता या असंलग्नता सोची समझी कार्यनीति का परिणाम था। इसका अंतिम उद्देश्य भारत की संप्रभुता और प्रादेशिक अखंडता की रक्षा, राष्ट्रीय हित की अभिवृद्धि और भारत तथा अन्य विकासशील देशों का आर्थिक विकास करना था। अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा भी गुटनिरपेक्षता से किसी न किसी रूप में जुड़े हुए थे।

गुटनिरपेक्षता की अवधारणा इतनी मूल्यवान हो गई कि जो भी देश इस काल में स्वतंत्र हुए उन्होंने अपनी राजनीतिक स्वतंत्रता की रक्षा और आर्थिक विकास के लिए गुटनिरपेक्षता का मार्ग ही चुना। साथ ही साथ गुटनिरपेक्षता भारत की विदेश नीति का तर्कसंगत सिद्धांत बन गया था। एक स्वतंत्र विदेश नीति, जन साधारण की इच्छाओं और अपेक्षाओं का प्रत्युत्तर थी। इसने जनमानस में गौरव की भावना विकसित की और देश की एकता का निर्माण करने में सहायता की। गुटनिरपेक्षता का यह सिद्धांत एक ऐसे महान राष्ट्र का प्रत्युत्तर था जो उपनिवेशवाद से बाहर निकलकर शीतयुद्ध के दबाव को रोकना चाहता था। यह द्विध्रुवीय अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था में स्वायत्तता की एक सुनिश्चित अवधारणा थी। गुटनिरपेक्षता वास्तव में एक ऐसा आंदोलन था, जिसमें उपनिवेशवाद के उन्मूलन के लिए, अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा के लिए तथा एक ऐसी विश्व व्यवस्था के लिए वचनबद्धता थी जिसमें न तो किसी प्रकार का शोषण होगा न जाति-भेद या रंग-भेद होगा और जिसमें सभी स्वाधीन लोगों को एक समान अवसर उपलब्ध होंगे।

गुटनिरपेक्ष आंदोलन की पृष्ठभूमि (Background of Non-Aligned Movement)

इस नीति को आंदोलन के रूप में स्वीकृति मिलना कोई आश्चर्यजनक घटना नहीं थी। गुटनिरपेक्ष आंदोलन को 1961 में भारत की पहल पर शुरू किया गया और औपचारिक रूप से गुटनिरपेक्ष आंदोलन का शुभारंभ प्रधानमंत्री नेहरू, यूगोस्लाविया के राष्ट्रपति मार्शल टोटो और मिस्र के राष्ट्रपति नसिर ने किया।

बेलग्रेड में गुटनिरपेक्ष देशों के पहले सम्मेलन में पच्चीस देशों ने भाग लिया। इसकी अध्यक्षता टोटो ने की थी। किस देश को आमंत्रित करना है और किसको नहीं इसका निर्णय सामूहिक रूप से नेहरू, नसिर और टोटो ने किया था। उन्होंने निर्भ्रमण भेजेते समय विभिन्न देशों की विदेश नीतियों का परीक्षण भी किया था।

पहले शिखर सम्मेलन में भाग लेने के लिए पाँच मानदंड निर्धारित किए गए थे। ये निम्नवत थे-

1. संबद्ध देश गुटनिरपेक्षता और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की विदेश नीति पर स्वतंत्र आचरण करता हो।
2. संबद्ध देश उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद का विरोध करता हो।
3. संबद्ध देश शीत युद्ध से संबंधित न हो।
4. संबद्ध देश ने किसी महाशक्ति के साथ कोई द्विपक्षीय संधि न की हो, और
5. उस देश की भूमि पर कोई भी विदेशी सैनिक अड्डा स्थापित न किया गया हो।

आरंभ में गुटनिरपेक्ष आंदोलन पच्चीस देशों ने शुरू किया था। कालांतर में इसके विकास क्रम में कई परिवर्तन आए हैं। इन परिवर्तनों को गुणात्मक व संख्यात्मक दोनों ही रूपों में देखा जा सकता है। समय-समय पर इसके शिखर सम्मेलन होते हैं, जिनमें अंतर्राष्ट्रीय राजनीति से जुड़े ज्वलंत प्रश्नों पर विचार किया जाता है और यह प्रयत्न किया जाता है कि आंदोलन के सभी देश एक समान दृष्टिकोण अपनाएँ। हालाँकि यह कार्य कठिन अवश्य हो गया है, क्योंकि सदस्य देशों की संख्या बढ़ने से आम सहमति का निर्माण प्रायः जटिल होता है। फिर भी गुटनिरपेक्ष आंदोलन की सफलता आज भी अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में एक नया आयाम जोड़ती है।

क्या गुटनिरपेक्षता का आशय तटस्थता या पृथक्ता से है?

(Does Non-Alignment Mean Neutrality or Separation?)

गुटनिरपेक्षता हेतु दो प्रमुख शब्दों का प्रयोग किया जाता है। 'तटस्थता' (Neutrality) और 'तटस्थतावाद' (Neutralism)। परंतु इन दोनों ही शब्दों से गुटनिरपेक्षता की अवधारणा का सही अर्थ नहीं निकलता। वस्तुतः अवधारणा के रूप में तटस्थता शब्द का प्रयोग युद्ध के दौरान ऐसे देश के लिए किया जाता है जो लड़ाई में सम्मिलित ही न हो। इस संदर्भ में स्पेन का उदाहरण लिया जा सकता है। द्वितीय विश्व युद्ध में स्पेन न तो मित्र राष्ट्रों के पक्ष में था और न ही धुरी राष्ट्रों के पक्ष में। उसने स्वेच्छा से युद्ध में भाग नहीं लिया। अतः स्पेन तटस्थ था।

ऑक्सफोर्ड शब्दकोश के अनुसार तटस्थता वह स्थिति है जिसमें कोई देश किसी भी युद्धरत देश का समर्थन नहीं करता है और युद्ध के दौरान प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से किसी की सहायता नहीं करता है। तटस्थ देश के आचरण का आधार अंतर्राष्ट्रीय कानून होता है।

गुटनिरपेक्षता के संदर्भ में तटस्थता का आशय स्पष्ट करना आवश्यक है। गुटनिरपेक्षता किसी ऐसे राज्य की तटस्थता नहीं है जिसकी किसी युद्ध में भागीदारी न हो। यह स्विट्जरलैंड और आस्ट्रिया की स्थिति से भी भिन्न है। शेष सभी राज्यों ने इन दोनों देशों को यह आश्वासन दिया हुआ है कि वे उन पर कभी भी आक्रमण नहीं करेंगे। परंतु विशेषज्ञों के अनुसार तटस्थता शब्द का प्रयोग शांतिकाल में राजनयिक तौर पर अलग रहने की नीति के लिए किया जा सकता है। तटस्थता का यह अर्थ गुटनिरपेक्षता के उद्देश्यों को सुपरिभाषित करता है।

यहाँ तक तो ठीक है कि कोई तटस्थ राज्य इसलिए तटस्थ कहलाता है कि वह युद्ध में शामिल नहीं है। अमेरिका 7 दिसंबर, 1941 से पूर्व द्वितीय विश्व युद्ध में तटस्थ था। परंतु जापान द्वारा पेरल हार्बर (Pearl Harbor) पर हमला आक्रमण के बाद वह युद्ध में शामिल हो गया। इसी स्थिति में इसे तटस्थ नहीं कहा जा सकता। दूसरी ओर, 'तटस्थतावाद' की प्रयोग स्विट्जरलैंड जैसी स्थिति के लिए किया जाता है। ये शब्द विशेष रूप से उन राज्यों के लिए प्रयुक्त होते हैं जिन्होंने कभी भी किसी पर भी आक्रमण न करने की घोषणा की होती है। स्विट्जरलैंड की अपनी कोई सेना ही नहीं है और उस पर दोनो ही विश्व युद्धों में किसी ने आक्रमण भी नहीं किया। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि आस्ट्रिया को भी 1955 में तटस्थतावादी देशों की श्रेणी में रखा गया।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि एक गुटनिरपेक्ष देश उस नीति का पालन करता है जिसके अनुसार वह गुटों की राजनीति से तो दूर रहता है परंतु उसने स्थायी रूप से तटस्थ रहने का वचन नहीं दिया होता है वही दूसरी ओर तटस्थतावादी देश स्थायी रूप से सभी युद्धों से अलग रहता है।

उदाहरण के लिए गुटनिरपेक्ष भारत को 1962 में चीन के विरुद्ध तथा 1965 और 1971 में पाकिस्तान के विरुद्ध युद्ध करने पड़े। भारत फिर भी गुटनिरपेक्ष रहा। इन तीनों युद्धों में न तो भारत तटस्थ था और न ही वह स्थायी रूप से तटस्थतावाद का पालन कर रहा था। गुटनिरपेक्ष देश अपने सभी निर्णय केवल अपने राष्ट्रीय हितों के अनुसार करते हैं। वे अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं पर विचार व्यक्त करने के लिए संयुक्त राष्ट्र इत्यादि में मतदान करने के लिए स्वतंत्र होते हैं।

कभी-कभी गुटनिरपेक्षता को पृथक्ता से भी जोड़ लिया जाता है। यह भ्रम धारण है। पृथक्ता का अर्थ है अन्य देशों की समस्याओं से अलग रहना। संयुक्त राज्य अमेरिका 1823 में घोषित मूनरो सिद्धांत (Monroe Doctrine) के अनुसार अपने आप को यूरोप की समस्याओं से पूरी तरह दूर रखता था। क्योंकि प्रथम विश्व युद्ध से पहले यूरोप में उसकी कोई रुचि नहीं थी। वह पृथक्ता के अनुसार केवल अमेरिका की समस्याओं में रुचि लेता था। इसके विपरीत गुटनिरपेक्ष देश अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में पूरी रुचि लेते हैं। वे केवल इसलिए गुटनिरपेक्ष कहलाते हैं क्योंकि वे स्थायी रूप से किसी बड़ी शक्ति का दामन नहीं पकड़ते। इस प्रकार गुटनिरपेक्षता को पृथक्तावाद से हटकर देखा जाना चाहिए।

गुटनिरपेक्ष देश स्वेच्छा से निर्णय करते हैं, प्रत्येक प्रश्न पर अपने विचार व्यक्त करते हैं और मतदान करते हैं। वे न तो किसी गुट में होते हैं, और न ही सभी से पृथक् होते हैं। वास्तव में गुटनिरपेक्ष देश अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं में सकारात्मक भूमिका निभाते हैं। गुटनिरपेक्ष देश स्थायी संधियों से दूर रहने की नीति का अनुसरण करते हैं। कुछ विद्वानों का मानना है कि गुटनिरपेक्ष देश दोनों गुटों के साथ एक समान संबंध रखते हैं। इसे न तो तटस्थता कहा जा सकता है और न ही पृथक्ता। गुटनिरपेक्ष देश दोनों के साथ एक जैसी दूरी बनाकर चलते हैं।

गुटनिरपेक्षता के सकारात्मक और नकारात्मक आयाम (Positive and Negative Dimensions of Non Alignment)

किसी भी अवधारणा के दो पहलू होते हैं— सकारात्मक और नकारात्मक। गुटनिरपेक्षता भी इसका अपवाद नहीं है। सकारात्मक पक्ष का अर्थ है कि नए-राज्य (गुट निरपेक्ष देश) शीत युद्ध से बचना चाहते थे परंतु वे अंतर्राष्ट्रीय राजनीति से दूर नहीं रहना चाहते थे। उनके अनुसार सकारात्मक तटस्थता बड़ी शक्तियों के बीच होने वाली भयानक लड़ाइयों के बीच मध्यस्थता करने का प्रयास था। नकारात्मक दृष्टि से गुटनिरपेक्षता का अर्थ है शक्तिहीनता के कारण नए राज्यों का बड़ी शक्तियों की समस्याओं से दूर रहना। भारत इस शक्तिहीनता के विचार से सहमत नहीं है। भारत का दृढ़ विचार है कि गुटनिरपेक्षता कमजोरी नहीं है, यह तो विश्व राजनीति में स्वतंत्र भागीदारी का नाम है। इस प्रकार गुटनिरपेक्षता स्वतंत्र रूप से कार्य करने की अवधारणा का नाम है। सकारात्मक गुटनिरपेक्षता का अर्थ है अपनी इच्छा से स्वतंत्र निर्णय करना, महाशक्तियों से आदेश न लेना, सैनिक गठबंधनों में न फँसना और न ही किसी बड़े देश को अपनी भूमि पर सैनिक अड्डे बनाने देना।

इसका अर्थ अंतर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्व से भागना नहीं है। यह कगार पर बैठने की नीति भी नहीं है। गुटनिरपेक्ष देश, विश्व-राजनीति में पूरी तरह भाग लेते हैं और दोनों गुटों के साथ मैत्री रखने में विश्वास रखते हैं। भारत ने गुटनिरपेक्षता के द्वारा कभी भी एक महान शक्ति बनने का प्रयास नहीं किया। गुटनिरपेक्षता एक आदर्शवादी अवधारणा न होकर बिल्कुल यथार्थवादी सिद्धांत है। गुटनिरपेक्षता स्वतंत्र रूप से राष्ट्रीय हितों को सुरक्षित करने और विश्व शांति बनाए रखने की एक अनोखी नीति है।

भारतीय विदेश नीति में गुटनिरपेक्षता की प्रस्थिति (Status of Non-Alignment in India's Foreign Policy)

हम सभी इस बात को जानते हैं कि भारत की नीति सकारात्मक और सक्रिय रूप से विश्व राजनीति में भाग लेने की है। यही कारण है कि भारत गुटनिरपेक्षता की नीति अपनाते वाला पहला देश था। भारत की गुटनिरपेक्ष नीति का अग्रदूत भी कहा जाता है। भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति केवल गुटों की राजनीति से दूर रहने की नीति है। नेहरू ने 1949 में अमरीकी कांग्रेस में बोलते हुए कहा था कि "यदि कहीं पर स्वतंत्रता संकट में पड़ेगी या त्याग का खतरा होगा या कहीं आक्रमण किया जाएगा तो हम न तो तटस्थ रह सकते हैं और न ही रहेंगे।" हमारी नीति तटस्थतावादी नहीं है, बल्कि यह ऐसी नीति है जो सक्रिय रूप से शांति स्थापित करने और उसे मजबूत आधार देने की नीति है। भारत ने अपने लिए एक स्वतंत्र स्थान बनाया है और अपने जैसे अन्य राज्यों के सहयोग से अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव स्थापित करने में उसकी प्रभावी भूमिका रही है। भारत की विदेश नीति के समीक्षकों ने आरंभ में ही यह कहा था कि यह नीति लोकतंत्र के पक्ष में तटस्थता की नीति होगी। इस प्रकार से यह नीति महात्मा गाँधी के अहिंसा के विश्वास को प्रोत्साहन देती है।

भारत संसार की तीसरी महायुद्ध से बचना चाहता था। प. नेहरू का मानना था कि यदि कोई विपत्ति आएगी तो वह समस्त संसार को प्रभावित करेगी। अतः हमारा पहला प्रयास यह होना चाहिए कि विपत्ति को आने से ही रोका जाए। भारत के इस संकल्प को दोहराते हुए कि हम शक्ति गुटों से दूर रहेंगे, नेहरू ने 1949 में कहा था कि "यदि किसी कारण से हमें एक शक्ति गुट में शामिल होना ही पड़ता है तो शायद एक दृष्टिकोण से हम कुछ भला ही करेंगे। पर मुझे इस विषय में कोई भी शंका नहीं लगती कि एक बृहत-दृष्टिकोण से ऐसा करना न केवल भारत के लिए बल्कि विश्व शांति के लिए भी हानिकारक होगा।"

भारत की विदेश नीति की प्राथमिकताओं में सम्मिलित हैं— देश का आर्थिक विकास, विदेशी मामलों में कार्य करने की स्वतंत्रता, देश की संप्रभुता और प्रादेशिक अखंडता को सुरक्षित रखना तथा विश्व शांति के प्रयास। भारत का यह दृढ़ विश्वास रहा है कि इन उद्देश्यों की प्राप्ति तथा विदेश नीति संबंधी निर्णय स्वतंत्रता से लेकर शक्ति गुटों से दूर रहकर ही की जा सकती है।

नेहरू की प्रतिबद्धता उदारवाद की पश्चिमी संकल्पना और लोकतंत्र के प्रति थी। परंतु उन्होंने कभी भी उन सैनिक गठबंधनों का समर्थन नहीं किया जिन्हें अमेरिका ने साम्यवाद के प्रसार को रोकने के लिए स्थापित किया था। उनके द्वारा सैनिक संधियों का विरोध जिन दो कारणों से किया गया, वे हैं— उपनिवेशवाद को नए रूप में प्रोत्साहन मिलना तथा इन सैनिक संधियों की देखादेखी दूसरे गुट में भी सैनिक संधियाँ होंगी और शस्त्रों की होड़ आरंभ होने की भी आशंका बढ़ जाएगी।

लोकतांत्रिक समाजवाद के विचार के समर्थक के रूप में नेहरू जी जाने जाते हैं। लेकिन यहाँ उल्लेखनीय बात यह है कि उन्होंने साम्यवादी राज्य को एकाधिकारवादी कहकर अस्वीकार किया था और मार्क्सवाद को घिसा-पिटा सिद्धांत बताया था। उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में शक्ति गुटों की राजनीति के विचार का ही विरोध किया था। इस प्रकार भारत की नीति का उद्देश्य एक तीसरा गुट बनाना नहीं था, परंतु नए स्वतंत्र हुए राज्यों को निर्णय करने की स्वतंत्रता सुनिश्चित करने की दिशा में यह एक कदम था।

जहाँ तक गुटनिरपेक्षता के संबंध में भारत के दृष्टिकोण की बात है तो भारत ने गुटनिरपेक्षता को शांति की नीति के रूप में

अपनाया था, झगड़ा बढ़ाने के लिए नहीं। भारत की गुटनिरपेक्षता का संबंध, अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में स्थिति को अपरिवर्तनीय रखने से नहीं था बल्कि यह तो देश और विश्व के हित में परिवर्तन लाने, उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद, जातिभेद और नव उपनिवेशवाद का विरोध करने की नीति है। गुटनिरपेक्षता के माध्यम से भारत इन बुराइयों से संपूर्ण विश्व को मुक्त कराना चाहता था, साथ ही साथ वह महाशक्तियों की श्रेष्ठता का दबाव कम करके सभी राष्ट्रों में समानता की भावना भी गुटनिरपेक्षता के माध्यम से लाना चाहता था।

गुटनिरपेक्षता बल प्रयोग को अस्वीकार करके अंतर्राष्ट्रीय विवादों में शांतिपूर्ण निःशस्त्रीकरण की सिफारिश करती है और सभी देशों के मध्य मैत्रीपूर्ण संबंधों को प्रोत्साहन देती है। यह सभी परमाणु अस्त्रों के विनाश और पूर्ण निःशस्त्रीकरण की सिफारिश करती है। भारत की विदेश नीति समस्त मानवता की सामाजिक और आर्थिक समस्याओं के समाधान पर जोर देती है। भारत अन्याय और असंतुलन पर आधारित वर्तमान अर्थव्यवस्था को समाप्त करके एक 'नई अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था' (New International Economic Order) की स्थापना का पूरी तरह से समर्थन करता है। गुटनिरपेक्षता को संयुक्त राष्ट्र संघ को शक्तिशाली बनाने की नीति के रूप में भी देखा जा सकता है।

गुटनिरपेक्षता का विकल्प चुनने का तर्काधार

(Logic behind Choosing the Option of Non-Alignment)

गुटनिरपेक्षता की नीति अपनाने के पीछे भारत का दृष्टिकोण मुख्यतः निर्णय लेने की स्वतंत्रता की रक्षा करना था। इसके अतिरिक्त आर्थिक विकास पर भारत बहुत अधिक बल दे रहा था। आरंभ में गुटनिरपेक्षता की नीति अपनाने के प्रमुख कारण थे—

- ऐसा माना जा रहा था कि अमेरिका या सोवियत गुट के साथ भारत की संलग्नता अंतर्राष्ट्रीय तनाव को बढ़ा सकती थी तथा अंतर्राष्ट्रीय शांति को संभावनाएँ दी जा सकती थी। इसलिए नेहरू ने कहा था कि शक्ति गुटों से विपत्तियाँ आएँगी और भारत इनसे दूर रहना चाहता है। भारत के भौगोलिक, सामाजिक, महत्व के कारण और समृद्धता के विकास में उसके योगदान के आधार पर अंतर्राष्ट्रीय तनाव कम करने व शांति को प्रोत्साहन देने में इसे महत्वपूर्ण भूमिका निभानी थी।
- दोनों गुटों के बीच एक सतु के कार्य की सकारात्मक भूमिका निभाने वाला भारत तो एक बड़ी शक्ति था और न ही बिल्कुल महत्वहीन राष्ट्र था। भारत के पास एक महान शक्ति बनने की संभावना अवश्य थी। भारत की वर्तमान आवश्यकताओं और उसकी राष्ट्रीय पहचान को धृष्टिगत रखते हुए गुटनिरपेक्षता की नीति आवश्यक थी। भविष्य में भारत को एक महान शक्ति के रूप में उभारने में भी गुटनिरपेक्षता काफी सहायक सिद्ध हो सकती थी।
- भारत पश्चिमी गुट में इसलिए भी सम्मिलित नहीं हो सकता था क्योंकि इस गुट के अनेक देश उपनिवेशवादी शक्ति थे या रहे चुके थे। कुछ देश अब भी जातीय भेद का व्यवहार कर रहे थे। दूसरी ओर भारत सातत्य गुट में इसलिए नहीं हो सकता था क्योंकि भारत को साम्यवादी विचारधारा कभी स्वीकार्य नहीं थी। अतः भारत ने भावनात्मक और वैचारिक दोनों ही कारणों से किसी शक्तिगुट में न शामिल होने का निर्णय किया।
- किसी भी अन्य प्रभुसत्ता संपन्न देश की भाँति भारत भी अपने निर्णय स्वयं करता चाहता था।
- अपनी आर्थिक विकास की परियोजनाओं हेतु भारत को विदेशी पूँजी की तुरत आवश्यकता थी। राजनीतिक तौर पर किसी एक विशेष देश से सहायता उचित नहीं थी। फलतः कठिना शक्ति न जुड़ा होने की स्थिति में देश के लिए लाभदायक तो यह था कि हमें जहाँ से भी सहायता मिले, उसे स्वीकार करें।
- सत्य और अच्छाई किसी एक धर्म या दर्शन के एकाधिकार में नहीं होते। इस भावना का प्रबल पक्षधर भारत सहनशीलता में विश्वास करता है। उस समय की स्थिति में सहनशीलता और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व ही देश के हित में थे। भारत मित्रता सबके साथ शत्रुता किसी से नहीं के आदर्श पर चलना चाहता था।
- देश की आंतरिक स्थिति भी गुटनिरपेक्षता की नीति अपनाने के लिए बहुत हद तक उत्तरदायी थी। यदि भारत किसी भी गुट के साथ संलग्न होने का निर्णय करता तो उससे राजनीतिक विवाद तो उत्पन्न होते ही साथ ही साथ अस्थिरता की भी आशंका बढ़ती।

यह स्पष्ट है कि भारत की जनता ने आमतौर पर पं. नेहरू की गुटनिरपेक्षता की नीति का समर्थन किया। अन्य अनेक देशों ने भी इस नीति को अपने राष्ट्रीय हितों के अनुकूल पाया और इसके प्रसार में भरपूर सहयोग दिया। यह नीति लगभग पचास वर्षों तक अबाध गति से सफलतापूर्वक चली।

एकध्रुवीय विश्व में गुटनिरपेक्षता की प्रासंगिकता (Relevance of Non-Alignment in Unipolar World)

पिछले एक दशक से अंतर्राष्ट्रीय पहल पर बटित होने वाली घटनाओं पर यदि दृष्टि डाली जाए तो अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के पंडित भी यह समझ पाने में अपने आप को असमर्थ पाते हैं कि नई विश्व व्यवस्था का क्या रूप होगा। शीतयुद्ध 1990 से पूर्व ही समाप्त हो गया था। गोर्बाचेव के सोवियत साम्यवादी पार्टी के महासचिव बनने के साथ ही इसकी समाप्ति की प्रक्रिया 1985 में ही शुरू हो गई थी। उन्होंने देश की राजनीति और अर्थव्यवस्था में अनेक सुधार आरंभ किए परंतु उन सुधारों का परिणाम कुछ विचित्र ही हुआ।

गोर्बाचेव और अमेरिकी राष्ट्रपति रीगन ने विदेशी संबंधों की दिशा में बातचीत का जो सिलसिला शुरू किया वह संसार को शीतयुद्ध की समाप्ति की ओर ले गया। ये दोनों नेता चार वर्ष के अंतराल में (1985-1988) चार बार मिले और अंततः 1987 में एक अत्यंत महत्वपूर्ण संधि पर हस्ताक्षर किए। इस संधि के द्वारा मध्यम-दूरी और कम-दूरी के परमाणु प्रक्षेपास्त्रों के उन्मूलन का निर्णय लिया गया। इस संधि का अनुमोदन 1988 में हुआ, जिसने अगले वर्ष शीतयुद्ध के तनाव को समाप्त करने का मार्ग प्रशस्त कर दिया।

बर्लिन की दीवार, जिसने बर्लिन नगर को दो भागों में विभाजित किया हुआ था, वह भी नवम्बर 1989 में गिरा दी गई। अगले वर्ष साम्यवादी पूर्वी जर्मनी और पूँजीवादी पश्चिमी जर्मनी का एकीकरण हो गया। इस नई जर्मनी ने खुले बाजार पर आधारित पूँजीवादी व्यवस्था को अपनाया। साथ ही पूर्वी यूरोप के अनेक साम्यवादी देशों ने साम्यवादी व्यवस्था को तिलांजलि दे दी। अंततः दिसम्बर 1991 में सोवियत संघ का विघटन हो गया। ये देश (मद्देह गणराज्य) संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य बने और रूस को सोवियत संघ का उत्तराधिकारी मान लिया गया।

रूस को सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता भी मिल गई। अब संसार में केवल एक महाशक्ति अमेरिका ही शेष रह गया। काफी समय तक ऐसा प्रतीत होता रहा कि संसार एकध्रुवीय हो गया है, परंतु जिस गति से चीन और भारत तेजी से आर्थिक शक्तियों के रूप में उभर रहे हैं उससे यह आशा की जा सकती है कि वे अमेरिका को कभी भी चुनौती दे सकते हैं। संसार शायद बहुध्रुवीय व्यवस्था की ओर धीरे-धीरे बढ़ रहा है।

भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति की प्रासंगिकता अब क्या रह गयी है? यह प्रश्न नई विश्व व्यवस्था के संदर्भ में विचारणीय है। गुटनिरपेक्षता का जन्म शीतयुद्ध के कारण मानने वाले विचारकों की दृष्टि में शीतयुद्ध के समाप्त होने के बाद इसकी कोई उपयोगिता नहीं रह गई है। ऐसा कहा जाता था कि गुटनिरपेक्षता दो शक्ति गुटों की विशेष परिस्थिति का विशेष उत्तर थी। जिस समय संसार के अधिकतर देश दो में से किसी एक गुट में शामिल हो रहे थे उस समय भारत को यह निर्णय कि वह तीसरा मार्ग चुनेगा, साहस और प्रगति का प्रतीक था। प्रथमतः नेहरू और भारत की विदेश नीति के अनेक समर्थकों के अनुसार गुटनिरपेक्षता व्यवहार में स्वतंत्र रूप से विदेश संबंधों के निर्णय करने की नीति थी। इसका अर्थ हुआ कि भारत अपनी विदेश नीति स्वतंत्र रूप से नई दिल्ली में बनाता था। वह इस विषय पर लंदन, वाशिंगटन या मास्को से संचालित नहीं होता था। दूसरे, इस नीति ने कहीं से भी आर्थिक विकास के लिए सहायता लेने की संभावनाएं खुली रखी थी। तीसरे, गुटनिरपेक्षता का उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय शांति और विवादों का शांतिपूर्ण समाधान करना था। निष्कर्षतः जहाँ तक गुटनिरपेक्षता की प्रासंगिकता की बात है तो यह कहीं से भी कम नहीं हुई है। जब उद्देश्य ज्यों के त्यों अस्तित्वमान है तो उपयोगिता पर तो प्रश्नचिह्न लगाया ही नहीं जा सकता।

जून 1991 में जब पी. वी. नरसिंह राव ने प्रधानमंत्री का पद संभाला। तब तक सोवियत संघ का विघटन नहीं हुआ था, पर शीतयुद्ध समाप्त हो चुका था। प्रधानमंत्री राव ने इस बात को दोहराया कि भारत गुटनिरपेक्षता की नीति पर पहले की तरह चलता रहेगा। टोकियो में 1992 में नरसिंह राव ने एक भाषण में स्पष्ट किया कि- "गुटनिरपेक्षता की विदेश नीति पर चलना आज पहले से भी अधिक प्रासंगिक हो गया है। गुटनिरपेक्षता का मूल आधार राष्ट्रों की स्वतंत्रता और उनके विकास का अधिकार है। चाहे गुटों की स्थिति कुछ भी क्यों न हो, चाहे किसी समय एक गुट हो या अनेक, गुटनिरपेक्ष देशों की यह इच्छा है कि वे अपनी स्वतंत्रता बनाए रखें और उसी के आधार पर किसी अन्य देश के साथ जुड़े बिना स्वयं अपने निर्णय कर सकें।" उन्होंने यह जोर देकर कहा था कि अब किसी भी देश के प्रभुत्व का समय नहीं रह गया है। विश्व एकध्रुवीय, द्विध्रुवीय या बहुध्रुवीय कैसा भी हो, छोटे और कमजोर देशों की विदेश नीति के विकल्प के रूप में गुटनिरपेक्षता सदा ही वैध और प्रासंगिक रहेगी। गुटनिरपेक्ष आंदोलन आज भी उतना ही उपयोगी है, जितना 1960 में था। ऐसा इसलिए है क्योंकि हम आज भी बड़ी शक्तियों के प्रभुत्व का शिकार हैं। इन्द्र कुमार गुजराल ने भी विदेश मंत्री के रूप में, 1996 में गुटनिरपेक्षता की नीति में भारत के विश्वास की संपुष्टि की थी। इस प्रकार गुटनिरपेक्षता की उपयोगिता व अस्तित्व पर कोई सवालिया निशान नहीं लगाए जा सकते क्योंकि यह केवल शीतयुद्ध तक केंद्रित नहीं था बल्कि यह बहुउद्देश्यीय था।

राजनीतिक सिद्धांत के रूप में गुटनिरपेक्षता की प्रासंगिकता कम हुई है क्योंकि प्रत्येक देश स्वतंत्र रूप से विदेश नीति का

निर्धारण कर रहा है और शीतयुद्ध भी समाप्त हो चुका है। उदाहरण के लिए 1996 में निःशस्त्रीकरण सम्मेलन में जिस तरह भारत ने व्यापक परमाणु परीक्षण निषेध संधि (Comprehensive Nuclear Test Ban Treaty – CTBT) का विरोध करके निषेधाधिकार का प्रयोग किया और फिर महासभा में भी उसके विरुद्ध मतदान किया, उससे यह स्पष्ट है कि कोई गुटनिरपेक्ष देश चाहे तो किसी भी प्रश्न को ही गुट निरपेक्ष की श्रेणी में रखा जा सकता है, से निर्णय लेकर कार्य कर सकता है। अनेक दबावों के बावजूद भारत ने व्यापक परीक्षण निषेध संधि (Comprehensive Nuclear Test Ban Treaty – CTBT) पर हस्ताक्षर नहीं किए। परंतु आर्थिक विकास और सामाजिक परिवर्तन के लिए गुटनिरपेक्षता आज भी उतनी ही उपयोगी है, जितनी अपने जन्म के समय थी।

गुटनिरपेक्ष आंदोलन का विश्लेषणात्मक अध्ययन (Analytical Study of Non-Alignment Movement)

अपने हितों के अनुसार जहाँ तक संभव हो विदेशी प्रभाव के बिना निर्णय करने की स्वतंत्रता, इसमें विदेश और रक्षा नीतियों के संचालन की स्वतंत्रता भी निहित है। कुछ प्रश्नों जैसे- उपनिवेशवाद का उन्मूलन, साम्राज्यवाद का विरोध, जातिभेद के विरुद्ध संघर्ष और फिलिस्तीन का प्रश्न ने गुटनिरपेक्ष देशों को एक आंदोलन के मंच पर एकत्र किया था।

वास्तव में शीतयुद्ध के दौरान भी इन प्रश्नों पर गुटनिरपेक्ष आंदोलन की भूमिका बहुत सीमित थी क्योंकि आंदोलन के मंच पर तो संपूर्ण विश्व का ध्यान आकर्षित किया जाता था और सामान्य राजनीतिक एवं नैतिक समर्थन दिया जाता था ताकि समस्याओं का निवारण हो सके। स्वयं गुटनिरपेक्ष आंदोलन ने किसी समस्या का उपचार नहीं किया। इस प्रकार प्रथम तीन मुद्दे अब महत्वहीन हो गए हैं। आज फिलिस्तीन की समस्या गुटनिरपेक्ष आंदोलन के बाहर सुलझाई जा रही है।

शीतयुद्ध के बाद विश्व की सुरक्षा का प्रश्न अब उतने गंभीर नहीं रह गया है जितना 1989 तक था। इसलिए गुटनिरपेक्ष आंदोलन को चाहिए कि अब वह समकालीन विषयों के समाधान पर जोर दे। संसार में हिंसा, आतंकवाद, आर्थिक असमानताएँ, पारिस्थितिकीय मुद्दे और मानवाधिकार आज की समस्याएँ हैं। दूसरी ओर, गुटनिरपेक्ष आंदोलन के कई उद्देश्यों को तो आज क्षेत्रीय संगठनों ने अपना लिया है। तीसरी दुनिया के देशों में जो तकनीकी और आर्थिक परिवर्तन हुए हैं वे एक जैसे नहीं हैं। परिणामस्वरूप गुटनिरपेक्ष देशों में समृद्धि और जीवन के स्तर पर असमानताओं व विषमताओं को दृष्टिगत रखते हुए यह कहा जा सकता है कि यदि भविष्य में इस आंदोलन को कोई भूमिका होनी है तो उसे बार-बार दोहराए गए घोषणा पत्र जारी करने के स्थातृपर नई चुनौतियों का सामना करना होगा। इन विकासशील देशों के लिए तकनीकी ज्ञान और पूँजी निवेश, स्वास्थ्य और शिक्षा संबंधी प्रश्न, मानव अधिकार और संसार में नए उभरते आर्थिक संबंध शामिल हैं। आर्थिक असमानताओं को दूर करने के प्रयास भी इन चुनौतियों का हिस्सा हैं जिसे दूर करना होगा।

उसको अब नशीले पदार्थों की समस्या, महिलाओं का शोषण, निधनता, बीमारी और पर्यावरण प्रदूषण जैसी समस्याओं पर अपनी पूरी ऊर्जा केंद्रित करनी होगी। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि गुटनिरपेक्ष आंदोलन के कार्यक्षेत्र में परिवर्तन आज के समय की माँग है।

भारत की आर्थिक कूटनीति (India's Economic Diplomacy)

समय-समय पर इस शब्द की परिभाषाओं पर चर्चा होती रही है और उनकी विश्लेषण भी किया जाता रहा है। कूटनीति अपनी प्रकृति में राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और वाणिज्यिक हो सकती है। परंपरागत अर्थों में कूटनीति प्रकृति में राजनीतिक है, लेकिन वैश्वीकरण के साथ इसमें आर्थिक संबंधों को सम्मिलित करने के लिए इसके क्षेत्र का विस्तार किया गया है। इसका मुख्य कारण यह है कि वाणिज्यिक संबंध राष्ट्रों के बीच मजबूत रिश्तों को बनाने और उन्हें बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

यह सर्वमान्य तथ्य है कि समकालीन विश्व में आर्थिक कूटनीति अन्य राष्ट्रों के साथ किसी राष्ट्र के राजनीतिक संबंधों को बहुत हद तक प्रभावित करती है। किसी राष्ट्र के राजनीतिक और आर्थिक संबंधों को आज एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। इसलिए, अगर कोई राष्ट्र बाकी दुनिया से सुदृढ़ संबंध स्थापित करना चाहता है, तो उसके राजनीतिक और आर्थिक रिश्तों में सामंजस्य होना अनिवार्य हो गया है क्योंकि दोनों ही एक-दूसरे के पूरक हैं।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि आर्थिक कूटनीति के तहत, ऐसी नीतियाँ बनाई जाती हैं, जो उत्पादन, माल के विनिमय, सेवाओं और सीमा-पार निवेश के विकल्पों को नियंत्रित करती हैं। दूरदर्शितापूर्ण दृष्टि से देखने में यह स्पष्ट हो जाता है कि आर्थिक कूटनीति इच्छुक राष्ट्रों के बीच वार्ताओं के जरिए व्यापार और निवेश के अवरोधों में कमी लाकर अर्थात् प्रशुल्क और गैर-प्रशुल्क अवरोधों को हटाकर व्यापार और निवेश को सुगम बनाती है। बाजार, कच्चे माल, संसाधनों और पूँजी तक पहुँच बनाना भी ऐसी वार्ताओं का उद्देश्य हो सकता है।

विकसित राष्ट्रों के साथ-साथ विकासशील राष्ट्रों के लिए भी आर्थिक कूटनीति अत्यधिक महत्वपूर्ण नीतिगत पहल बन चुकी है। ज्यादातर विकासशील राष्ट्र आर्थिक कूटनीति का प्रयोग अपनी वैश्विक उपस्थिति दर्ज कराने और अन्य राष्ट्रों के साथ अपने संबंधों को बढ़ाने के लिए कर रहे हैं। केवल वे विकसित राष्ट्रों तक ही नए संबंध नहीं बना रहे बल्कि वे अपने संबंधों का विस्तार विकासशील और अल्प-विकसित राष्ट्रों तक भी कर रहे हैं। व्यापार और निवेश संबंधों को बढ़ाना मुख्य रूप से आर्थिक कूटनीति के अंतर्गत आता है। व्यापार और निवेश समझौते के अतिरिक्त राष्ट्र जरूरतमंद अर्थव्यवस्थाओं को सहायता और ऋण दे सकते हैं।

भारत के घरेलू आर्थिक परिदृश्य पर एक नजर डालने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि विकासशील राष्ट्रों में, भारत तेजी से बढ़ती हुई अर्थव्यवस्थाओं में से एक है। 90 के दशक के शुरू में नई आर्थिक नीति अपनाने के कारण भारतीय अर्थव्यवस्था को खोलने का रास्ता साफ हुआ। अर्थव्यवस्था के विकास ने न केवल नीति-निर्माताओं और अर्थशास्त्रियों का ध्यान आकर्षित किया है, बल्कि उन पूँजीपतियों को भी आकर्षित किया है जो अब भारतीय अर्थव्यवस्था में निवेश के लिए इच्छुक हैं। विश्व के दूसरे राष्ट्रों और बाजारों के साथ भारत के बढ़ते व्यापार और निवेश संबंधों से भारतीय और विदेशी दोनों कंपनियों के लिए एक-दूसरे के अनुभवों को बाँटने और उनसे सीखने की सहभागितापूर्ण पृष्ठभूमि बननी आरंभ हो गई है। ऐसी स्थिति में उज्ज्वल आर्थिक संभावनाओं और लाभ के साथ भारत की आर्थिक कूटनीति के विकास, उसकी वर्तमान प्रक्रियाओं और भावी संभावनाओं को समझना नितान्त आवश्यक हो गया है।

अंग्रेजी पराधीनता से मुक्ति के बाद भारतीय नीति-निर्माताओं ने पूर्व-सोवियत संघ से प्रभावित विकास का 'समाजवादी' मॉडल अपनाया। 'महालनोबिस मॉडल' नामक एक आर्थिक योजना प्रणाली तैयार की गई और संतुलित विकास सुनिश्चित करने के लिए पंचवर्षीय योजनाओं का भी सूत्रीकरण किया गया। आयेजनों का मुख्य उद्देश्य आर्थिक तौर पर देश की आत्मनिर्भर स्वरूप प्रदान करना था।

प्रारंभिक नीतियाँ प्रकृति से संरक्षणवादी थीं, जिनमें राज्य का हस्तक्षेप, केंद्रीय नियोजन और कारोबार नियंत्रण शामिल थे। इनके कारण राष्ट्र में व्यापार करने के लिए कई तरह के लाइसेंसों की जरूरत पड़ती थी। हालाँकि विकास नीति को शुरू में तो सफलता मिली, लेकिन प्रणाली के निष्प्रभावी सिद्ध होने के कारण इसका प्रभाव धीरे-धीरे समाप्त होता चला गया। अर्थव्यवस्था को सन् 1991 में भुगतान संतुलन की भयावह समस्या से जूझना पड़ा। इसके बाद भारत ने अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (International Monetary Fund - IMF) द्वारा प्रस्तावित ढाँचागत सुधार कार्यक्रम (Structural Adjustment Programme - SAP) को अंगीकार किया।

आर्थिक सुधारों की दृष्टि से वर्ष 1991 के आर्थिक सुधारों का अपना विशेष महत्व है। इसके तहत लाइसेंस राज जैसी पिछली योजना रणनीति की खाँियों को और सरकारी एकाधिपत्य को खत्म कर दिया गया। इन सुधारों के कारण कई क्षेत्रों में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की स्वीकृति अपने आप मिलने लगी। विदेशी प्रत्यक्ष निवेश का दौरा समय-समय पर बढ़ाया जा रहा है। सन् 1990 से भारत मुक्त बाजार अर्थव्यवस्था के रूप में उभरा है और दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्थाओं में इसकी गणना होने लगी है। प्रभावशाली एवं सतत आर्थिक वृद्धि, अन्य सामाजिक एवं आर्थिक संकेतकों में सुधार और बहुपक्षीय पंचों पर भागीदारी ने भारतीय अर्थव्यवस्था को पिछले दो दशकों में नई दिशा दी है। साथ ही साथ इसकी नई तस्वीर उभर कर विश्व के सामने आई है।

व्यापार समझौता वार्ताओं के साथ उदारीकरण के कारण इस्तेमाल से भारत को अपने आर्थिक संबंधों के नेटवर्क के विस्तार में मदद मिली है। पिछले कुछ वर्षों में भारत में सेवा क्षेत्र वृद्धि का मुख्य उत्प्रेरक रहा है। राष्ट्र के सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product - GDP) में सेवा सेक्टर का योगदान 50 प्रतिशत से अधिक है और इसका मुख्य बाजार अमेरिका है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि भारत धीरे-धीरे विश्व अर्थव्यवस्था का केंद्र बनता जा रहा है।

भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश समय के साथ बढ़ता रहा है। यद्यपि वैश्विक आर्थिक संकट के कारण भारत में आने वाले प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (Foreign Direct Investment) की वृद्धि दर प्रभावित हुई लेकिन निरपेक्ष एफडीआई अंतर्वाह के क्वार्टर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। मॉरिशस भारत में सबसे बड़ा निवेशक रहा है। इस सिलसिले में मॉरिशस के साथ दोहरा कर अपवचन समझौता (Double Tax Avoidance Agreement - DTAA) कारगर साबित हुआ है। इसके बाद सिंगापुर और अमेरिका का स्थान आता है।

भारत के ज्यादातर अर्थशास्त्री भारत को उभरती आर्थिक महाशक्ति के रूप में देख रहे हैं। इसका मुख्य कारण अच्छा आर्थिक विकास एवं निवेश संबंधों में विस्तार है। माना जा रहा है कि भारत 21वीं सदी में वैश्विक अर्थव्यवस्था में प्रमुख भूमिका निभाएगा। लेकिन महज अच्छे आर्थिक प्रोफाइल का अर्थ यह नहीं है कि इससे बड़े लाभ मिलेंगे। इसके लिए उपयुक्त अन्य नीतियों, खासकर आर्थिक कूटनीति से संबंधित नीतियों की भी आवश्यकता है। वैश्वीकृत दुनिया में तेजी से विकसित होती अर्थव्यवस्था के कारण पैदा होने वाली चुनौतियों से निपटने के लिए भारत की विदेश नीति में आर्थिक कूटनीति एक महत्वपूर्ण युक्ति है जिसके साथ हम अच्छे आर्थिक भविष्य के प्रति भी आशावान रह सकते हैं।

भारत के लिए एक प्रभावी आर्थिक कूटनीति की आवश्यकता क्यों?

(Why India needs an Effective Economic Diplomacy)

आर्थिक कूटनीति किसी भी देश की अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण कारक होता है। भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास एवं आर्थिक वैश्वीकरण (Economic Globalisation) के संदर्भ में भी इसका महत्व उतना ही प्रासंगिक है। खुली अर्थव्यवस्था में भावी घरेलू आर्थिक प्रगति और समृद्धि बहुत हद तक दूसरे राष्ट्रों के साथ संबंधों पर निर्भर करती है। इसके अतिरिक्त, घरेलू बाजार को खोलने से वह वैश्विक उत्पादन और निवेश (Global Production and Investment) नेटवर्क का हिस्सा बन जाती है। इस नेटवर्क से अलग-थलग रहने से भारत का विकास बाधित हो सकता है। इस बात की भी आशंका रहती है कि वैश्विक मुद्दे घरेलू मुद्दों और प्रक्रियाओं को बहुत प्रभावित करते हैं, जिससे कारगर आर्थिक कूटनीति की जरूरत बढ़ जाती है। वैसे भी यह भावी व्यापार और निवेश के अच्छे परिणामों के लिए अपरिहार्य है। चूंकि भारत की महत्वाकांक्षा अपनी आर्थिक वृद्धि दर को बढ़ाने की है, इसलिए इस पहलू को महत्वपूर्ण माना जा रहा है। विदेश मंत्रालय पिछले साल से आर्थिक कूटनीति के लिए एक अलग बजट निर्धारित करता आ रहा है, जिसमें क्रेता-विक्रेता की बैठकें आयोजित करना और विदेशों में 'ब्रांड इंडिया' को प्रोत्साहन देना शामिल है। 16 राष्ट्र वाले 'पूर्व एशिया सम्मेलन' और पाँच राष्ट्रों वाले 'दक्षिण अफ्रीकी कस्टम्स संघ' (South African Customs Union – SACU) सखी क्षेत्रीय संगठनों के साथ मुक्त व्यापार समझौतों (Free Trade Agreements) की दिशा में भारत आगे बढ़ रहा है। आसियान, दक्षिण कोरिया, सिंगापुर, श्रीलंका, नेपाल और भूटान के साथ एफटीए पर पहले ही दस्तखत किए जा चुके हैं। आसियान के साथ वस्तु (Goods) संबंधी मुक्त व्यापार समझौता किया गया है।

वैश्वीकरण के कारण, भारतीय कंपनियाँ विलय एवं अधिग्रहण तथा संयुक्त उद्यमों के माध्यम से तेजी से अपना विस्तार करती रही हैं। उन्होंने घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय नीतियों को अपने पक्ष में करने के लिए हर संभव प्रयास किए हैं। इसके अच्छे नतीजे निकल सकते हैं। भारत के व्यापार और सीमा पार निवेश में निरंतर वृद्धि होती रही है। इक्विटी और विदेशी प्रत्यक्ष निवेश क्षेत्रों के रूप में निर्गामी और बहिर्गामी पूँजी प्रवाह में वृद्धि हुई है। अर्थव्यवस्था का सेवा क्षेत्र सीमा पार निवेश और व्यापार के इस मामले में महत्वपूर्ण रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी संबंधित सेवाओं (Information Technology Enabled Services – ITES) के क्षेत्र में असीम संभावनाएँ नजर आ रही हैं।

घरेलू आर्थिक नीतियों को आर्थिक कूटनीति से अलग नहीं किया जा सकता। वैश्विक अर्थव्यवस्था या व्यापार-संबंधी मुद्दे जटिल हैं, इसलिए वार्ताओं के दौरान अधिकतम लोच लेने और कारगर समझौते का प्रारूप तैयार करने के लिए ऐसे दक्ष लोगों की आवश्यकता है, जो विश्व व्यापार संगठन (WTO) जैसे बहुपक्षीय संगठनों के ढाँचे के भीतर प्रभावशाली तरीके से अपनी बात रख सकें। यह भी कि वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप आर्थिक कूटनीति के दायरे में आने वाले राष्ट्रों की संख्या तेजी से बढ़ी है। बहुपक्षीय और क्षेत्रीय संघों में राष्ट्रों की बढ़ती संख्या को देखते हुए आर्थिक राजनयिकों के कौशल को और भी निखारने की जरूरत है।

लगभग यह स्पष्ट हो चुका है कि आने वाले दशकों में एशिया और विश्व में भारत प्रमुख अर्थव्यवस्था के रूप में उभरेगा। अतः उसे दीर्घकालिक, प्रभावोत्पादक आर्थिक नीतियाँ अपनानी होंगी। सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product – GDP) में सतत वृद्धि के लिए भारत ने आर्थिक कूटनीति पर अधिक जोर देने का फैसला किया है। लिहाजा वह कई राष्ट्रों और क्षेत्रीय संगठनों के साथ व्यापार और निवेश संबंधी समझौतों के लिए अपनी वार्ता में तेजी ला रहा है। जनसांख्यिकी प्रोफाइल, मानवीय कौशल और बाजार के बड़े एवं बढ़ते आकार को दृष्टिगत रखते हुए राष्ट्र के विकास के लिए सक्षम आर्थिक कूटनीति और आर्थिक नीतियाँ बहुत महत्वपूर्ण हैं।

भारत की आर्थिक कूटनीतिक की समीक्षा

(Review of India's Economic Diplomacy)

सतत वृद्धि, विदेशी मुद्रा भंडार में बढ़ोतरी, निर्यात में वृद्धि, बढ़ते विदेशी निवेश और सभी वृहत (Macro) आर्थिक संकेतकों को भारतीय अर्थव्यवस्था का मूल तत्व समझा जाता है। इनमें पिछले कुछ वर्षों से अनवरत दृढ़ता देखने में आई है। आने वाले वर्षों में भारत के लिए आर्थिक भविष्यवाणियाँ इन रुझानों के जारी रहने की ओर संकेत करती हैं। प्रारंभ में भारत की आर्थिक नीति राजनीतिक उद्देश्य से प्रेरित थी, जिसे सन् 1990 के दशक में अपनी विदेश नीति में बदलाव लाते हुए भारत ने अपनी अर्थव्यवस्था को खोल दिया और इस तरह, वह आर्थिक कूटनीति की ओर बढ़ने लगा। यही नहीं, वह राष्ट्रों का विश्वास हासिल करने के लिए सर्वोत्तम प्रक्रियाओं का प्रयोग कर रहा है। इससे उसकी घरेलू नीति का अंतर्राष्ट्रीयकरण हुआ है।

अन्य राष्ट्रों और क्षेत्रों के साथ भारत के बढ़ते समझौतों से स्पष्ट है कि मौजूदा और भावी आर्थिक संभावनाओं के साथ, भारत आर्थिक कूटनीति पर बहुत ध्यान देता रहा है। फलतः भारत के आर्थिक संबंध अब किसी विशेष समूह के समान आर्थिक परिस्थितियों वाले राष्ट्रों तक सीमित नहीं रहे। इसने अपने पड़ोसी राष्ट्रों से लेकर छोटे और बड़े राष्ट्रों तक सभी के साथ आर्थिक संबंध स्थापित किए हैं। इन कदमों से राष्ट्र को न केवल आर्थिक रूप से फायदा हुआ, बल्कि अन्य राष्ट्रों में भारत की साझा भी बढ़ी है। भारत को इस तरह के व्यापार और निवेश संबंधन समझौतों से बहुत लाभ हो सकता है। इन समझौतों से भारत के निर्यात बाजार का न केवल विविधीकरण होगा बल्कि भारतीय कंपनियों के लिए निवेश के नए अवसर मिलने की भी प्रबल संभावना है।

आर्थिक कूटनीति ही एक ऐसा तत्व है जो भारत को वैश्विक वित्तीय मंदी की स्थिति में मददगार सिद्ध हो सकता है। एक बार व्यापार और निवेश समझौतों के प्रभावी हो जाने पर आर्थिक वृद्धि दर बढ़ेगी, प्रत्यक्ष एवं परोक्ष नए रोजगारों का सृजन होगा और लोगों का जीवन स्तर ऊँचा होगा। विभिन्न राष्ट्रों के साथ कारगर आर्थिक समझौते आर्थिक महाशक्ति के रूप में भारत के उभरने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे। इस संभावना से भी इनकार नहीं किया जा सकता।

आर्थिक कूटनीति का भविष्य (Future of Economic Diplomacy)

संचार क्रांति के इस युग में आर्थिक कूटनीति के पहलू उसके किसी भी अन्य रूप की तुलना में अधिक चुनौतीपूर्ण हैं। दरअसल, वाणिज्यिक और आर्थिक कूटनीति किसी राष्ट्र-राज्य की राजनीतिक अर्थव्यवस्था से प्रत्यक्षतः जुड़ी होती है जो वैश्वीकरण के इस युग में बहुत महत्वपूर्ण है। अतः भारत के आर्थिक कूटनीति के मिशन की आग बढ़ाने और नीतियों तथा समझौतों को कारगर बनाने के लिए प्रशिक्षित, विशिष्ट और सुविज्ञ विशेषज्ञों की जरूरत है क्योंकि बिना निपुण व चातुर्यपूर्ण लोगों के आर्थिक कूटनीति को प्रभावी नहीं बनाया जा सकता। विशेषज्ञों के बाद दूसरी जरूरत सर्वोत्तम संभव चयन और विकल्पों की खोज के लिए आर्थिक फैसलों को आर्थिक शोध से जोड़ने की है। अपनी आर्थिक कूटनीति की सफलता के लिए भारत को व्यापार, प्रौद्योगिकी और निवेश के प्रवाह में सतत वृद्धि करनी होगी। साथ ही साथ उसे प्रस्तावित समझौते की व्यवहार्यता के अध्ययन के साथ-साथ विश्लेषण, पैरोकारी तथा विवाद निपटारे के लिए शीर्ष व्यापार एवं उद्योग संगठनों से जुड़ना होगा। भारत की ब्रांड छवि निर्माण में निजी क्षेत्र को प्रोत्साहन देने से अंतराष्ट्रीय संबंधों को बढ़ाने में बहुत मदद मिल सकती है।

इनके अतिरिक्त एक अन्य आवश्यकता समन्वयन की है। कार्यक्रमों व विकास सहयोग नीतियों के बेहतर समन्वयन के बिना आर्थिक कूटनीति को सभी लक्ष्यों से उहाँ जोड़ा जा सकता। प्रवासी संबंधों को बढ़ावा महत्वपूर्ण साबित हो सकता है क्योंकि आयुर्विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी जैसे क्षेत्रों में भारतीय प्रवासियों के योगदान को व्यापक रूप से स्वीकार किया जा रहा है। यही नहीं इससे ज्ञान के आदान-प्रदान में तो वृद्धि होगी ही साथ ही साथ प्रौद्योगिकी हस्तांतरण को भी बढ़ावा मिलेगा।

प्रत्यक्ष एवं परोक्ष व्यापार संबंधों को बढ़ाने के साथ-साथ बाजार में पैठ बनाने की रणनीति के विकास तथा परामर्श एवं प्रोजेक्ट निर्यात के अवसर के सृजन में प्रवासी भारतीय भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। बेहतर शासन, बेहतर विश्व के निर्माण में भागीदारी और व्यापारिक एवं वित्तीय हितों के परस्पर जुड़ने से भारत को लाभ होगा। विश्व व्यापार संगठन (World Trade Organisation) जैसे बहुपक्षीय संगठनों में आर्थिक कूटनीति के कारगर प्रयोग के अतिरिक्त भारत, 'संयुक्त राष्ट्र व्यापार एवं विकास सम्मेलन' (UNCTAD) और 'विश्व बौद्धिक संपदा संगठन' (World Intellectual Property Organization - WIPO) जैसे संगठनों के जरिए भी अपने लाभ में वृद्धि कर सकता है। शुल्क घटाने और व्यापार एवं निवेश-संबंधी अवरोधों को खत्म करने के लिए कारगर समझौता वार्ताओं का आयोजन भी जरूरी है।

भारत को उभरती हुई आर्थिक शक्ति तो मान लिया गया है, लेकिन उसे भ्रष्टाचार के स्तर को कम करने, सहयोग बढ़ाने और व्यापार बाधाओं को खत्म करने के लिए प्रभावी कार्यनीति बनाने की आवश्यकता है। यह भी कि राष्ट्र में बौद्धिक संपदा अधिकार के संरक्षण के लिए कारगर व्यवस्था की जरूरत है। चूँकि ज्ञान का आदान-प्रदान, नवीन प्रक्रियाएँ, प्रौद्योगिकीय हस्तांतरण, अंतरिक्ष एवं ऊर्जा शोध कार्यक्रम, सभी अच्छी एवं सक्रिय आर्थिक कूटनीति से जुड़े हुए हैं इसलिए भारत की आर्थिक कूटनीति की भूमिका संकीर्ण नहीं होनी चाहिए। समझौता वार्ता और सहयोग का ढाँचा क्षेत्रीय और अंतराष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्र के संबंधों पर केंद्रित होना चाहिए। आर्थिक कूटनीति के पारस्परिक लाभ राजनीतिक कूटनीति और अर्थव्यवस्था के लिए भी उपयोगी हैं, यह ध्यान में रखना अनिवार्य है।

भारत-भूटान संबंध (India-Bhutan Relations)

*** (इस टॉपिक का संबंध मुख्य परीक्षा के प्रश्नपत्र-2 के विषय संख्या 17 से है। 'इष्टि' द्वारा वर्गीकृत पाठ्यक्रम के 15 खंडों में से इसका संबंध भाग-7 से है।)

भूटान : एक परिचय (Bhutan : An Introduction)

ऐतिहासिक संदर्भ (Historical Perspective)

भारत के पड़ोस में स्थित भूटान एक स्थलरुद्ध (Land Locked) एवं पर्वतीय देश है, जिसके साथ भारत के ठोस संबंध ऐतिहासिक कालक्रम में रहे हैं। भूटान के प्राचीन इतिहास की बहुत ही कम जानकारी है। पुरातात्विक साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि भूटान सम्भवतः ई. पू. 2000 में बसा था। बौद्ध धर्म यहाँ सम्भवतः दूसरी शताब्दी में आया था। यद्यपि परम्परागत रूप से ऐसा माना जाता है कि 8वीं सदी में भारतीय संत एवं गुरु पद्मसम्भव (Padma Sambhava) जिन्हें गुरु रिम्पोचे (Guru Rimpochey) भी कहा जाता है, के भूटान आगमन पर इस देश में बौद्ध धर्म ने पहले से प्रचलित धार्मिक प्रवृत्ति का स्थान ले लिया। गुरु रिम्पोचे भूटानी इतिहास के सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति हैं, जिन्हें 'द्वितीय बुद्ध' (Second Buddha) के रूप में मान्यता प्राप्त है।

16वीं शताब्दी से पूर्व अनेक वंशज एवं परिवार भूटान की विभिन्न घाटियों में शासन करते थे। वे आपस में एवं तिब्बत के साथ लड़ते रहते थे। इस स्थिति में उस समय परिवर्तन आया जब 1616 ई. में न्गावांग नमग्याल (Ngawang Namgyal) का आगमन हुआ। वे तिब्बत के द्रुकपा (Drukpa) बौद्ध भिक्षु थे। उन्होंने सम्पूर्ण क्षेत्र को शिक्षा दी और स्वयं को शब्द्रुंग रिम्पोचे (Shabdrung Rimpochey) की उपाधि से भूटान के धार्मिक शासक के रूप में स्थापित कर लिया। उन्होंने प्रतिद्वन्द्वी लामा और तिब्बती बलों को लड़ाई में पछाड़ दिया और दक्षिणी घाटी को एक एकीकृत देश, ड्रुक यूल (Land of the Thunder Dragon) के नाँव से रूपान्तरित कर दिया। भूटान को 'ड्रुक यूल' भी कहा जाता है। उन्होंने भूटान के सभी लोगों के लिए एक ही राजधर्म 'द्रुकपा काग्यु' (Drukpa Kagyu) की स्थापना की। उनके द्वारा स्थापित राजनैतिक प्रणाली बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक काल तक ही चली। 1705 ई. में शब्द्रुंग के निधन की घोषणा के बाद 200 वर्षों तक आंतरिक संघर्ष एवं राजनैतिक प्रतिद्वंद्विता चलती रही। उसी समय तिब्बत और कूच बिहार के शासकों के बीच भी संघर्ष चल रहा था। ब्रिटिश (ईस्ट इण्डिया कंपनी) कूच बिहार और भूटान के बीच चल रहे संघर्ष के बीच में कूच पड़े और बाद में भूटान के साथ कुछ लड़ाईयाँ भी लड़ीं और भूटान के कुछ क्षेत्र अपने क्षेत्र में मिला लिया।

यह अस्थिरता 1907 तक चलती रही, जब तक उग्येन वांगचुक (Ugyen Wangchuck) को भूटान के मुख्य लामाओं द्वारा सर्वानुमति से भूटान का वंशानुगत शासक नहीं चुन लिया गया। भारत की ब्रिटिश सरकार द्वारा उन्हें इसी रूप में मान्यता प्रदान कर दी गयी। अतः प्रथम राजा का राज्याभिषेक 1907 में हुआ और तभी से वांगचुक राजवंश की शुरुआत हुई। अगले चार दशकों में उन्होंने और उनके उत्तराधिकारी महाराजा जिग्मे वांगचुक (Jigme Wangchuck) ने सम्पूर्ण भूटान को सीधे राजतंत्र के नियंत्रण में रखा। 1947 में स्वाधीनता प्राप्ति के समय भारत ने भूटान को एक प्रभुतासंपन्न देश के रूप में मान्यता प्रदान कर दी थी। भारत ने भूटान की सीमा से लगे लगभग 82 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र जिसे ब्रिटिश शासन द्वारा अपने साथ मिला लिया गया था, को भी वापस कर दिया था।

भूटान के तृतीय महाराजा जिग्मे दोरजी वांगचुक (Jigme Dorji Wangchuck) को आधुनिक भूटान का जनक माना जाता है क्योंकि उन्होंने अनेक विकास योजनाओं की शुरुआत की थी। 1971 में भूटान को औपचारिक रूप से संयुक्त राष्ट्र में सम्मिलित किया गया था। चौथे महाराजा जिग्मे सिंग्ये वांगचुक (Jigme Singye Wangchuck) का राज्याभिषेक जुलाई 1972 में हुआ था। उन्होंने विशेष रूप से भूटान की संस्कृति और पर्यावरण के संरक्षण पर केंद्रित 'नियंत्रित विकास की नीति' को जारी रखा। उनके आर्थिक स्वावलंबन के आदर्शों में 'सकल राष्ट्रीय खुशहाली' (Gross National Happiness) बहुत ही चर्चित रहा है। उसके बाद उन्होंने अपने सिंहासन का त्याग कर उस पर युवराज को आसीन कर दिया था। शाही युवराज जिग्मे खेसर नमग्याल वांगचुक (Jigme Khesar Namgyel Wangchuck) ने दिसम्बर 2006 में चतुर्थ महाराजा द्वारा राजसिंहासन त्यागने पर राजा के दायित्वों को ग्रहण किया। उनका औपचारिक राज्याभिषेक 6 नवम्बर, 2008 को किया गया।

क्षेत्रफल और जनसंख्या: (Area and Population)

भूटान के पास 38,394 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र है और इसकी जनसंख्या लगभग 7 लाख है। स्वास्थ्य सुविधाओं के विकास के साथ भूटान की जीवन संभावना में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है और यह 1984 के 47.5 वर्ष से बढ़कर 2010 में लगभग 66 वर्ष हो गयी है।

उत्तरी भूटान में ऊँची पर्वत शृंखलाएँ हैं जो बर्फ से ढकी रहती हैं। इन शृंखलाओं में पर्वत चोटियाँ 7300 मीटर तक ऊँची हैं। इसके अतिरिक्त ब्लैक माउन्टेन है जो उत्तर से दक्षिण की ओर भूटान को भौगोलिक और भाषाई दोनों रूपों में दो भागों में विभाजित करती है। मध्य भूटान में सुन्दर घाटियाँ हैं जिनकी ऊँचाई 1880 मीटर से 2400 मीटर तक है।

पारिस्थितिकी (Ecology)

भूटान की पारिस्थितिकी प्रणाली वस्तुतः अपने मौलिक रूप में विद्यमान है। भूटान विविधतापूर्ण प्राकृतिक सौन्दर्य, वन्य प्राणियों और पौधों की विभिन्न प्रजातियों से सम्पन्न प्राकृतिक स्थल है। भूटान के कानून के अनुसार भूटान में 60 प्रतिशत वन क्षेत्र हमेशा के लिए बना रहेगा। वर्तमान में इसका 72.5 प्रतिशत भाग वनाच्छादित है और 5000 से अधिक पौधों की विभिन्न प्रजातियाँ यहाँ विद्यमान हैं।

प्राकृतिक संसाधन (Natural Resources)

भूटान के पास लकड़ी (Timber), स्लेट, खडिया मिट्टी, डोलोमाइट, काला शीशा, तांबा, चूना पत्थर, कोयला और टंगस्टन आदि का विपुल भण्डार है। भूटान में पन बिजली विकास को प्रोत्साहित संभावनाएँ विद्यमान हैं। तीव्र गति से बहती गहरी सकरी नदियाँ (जो हिमालय के पिघले हुए बर्फ के पानी का वहन करती हैं) जल विद्युत ऊर्जा को अपार क्षमता अपने अंदर समेटे हुए हैं। यहाँ की 72.5% वनाच्छादित भूमि भी जैव विविधता की दृष्टि से एक प्रमुख प्राकृतिक संसाधन है।

धर्म (Religion)

भूटान में अधिकांश लोग महायान बौद्ध हैं जो दुपका काग्य बौद्ध सम्प्रदाय के हैं। नेपाली मूल के लोग जो प्रमुख रूप से दक्षिणी भूटान के गर्म और नम दुआर (Duars) क्षेत्र में बसे हैं, उसमें हिन्दुत्व का पूर्ण वर्चस्व है। केन्द्रीय बौद्ध मठ प्रमुख संगठन है जिसमें 5000 बौद्ध भिक्षु सम्मिलित हैं। इनका प्रमुख एक निर्वाचित अब्बोट (Abbot) होता है जो राष्ट्र का धर्माध्यक्ष है। इन सभी परम्पराओं को भूटान के धार्मिक नृत्य समारोह जिन्हे त्चेचु (Tshechu) कहा जाता है में देखा जा सकता है।

संविधान और शासन प्रणाली (Constitution and Government System)

परम्परागत रूप से भूटान के राजतंत्र में सम्पूर्ण शक्तियाँ निहित थीं फिर भी तृतीय भूटान नरेश जिग्मे दोरजी वांगचुक ने गतिशील कदम बढ़ाकर देश की राजनैतिक संरचना को उदार बनाते हुए देश के कार्यभार के संचालन में लोगों की भागीदारी सुनिश्चित करने के उद्देश्य से एक संस्था स्थापित करने का निर्णय लिया। इसके लिए उन्होंने सन् 1953 में 'तशोगदु (Tshogdu)' अथवा राष्ट्रीय सभा (संसद) की स्थापना की।

संवैधानिक प्रगति के उद्देश्य से चतुर्थ महाराजा ने 2001 में प्रथम संविधान के मसौदे को तैयार करने के लिए एक संविधान मसौदा समिति का गठन किया था। प्रधान न्यायाधीश लियोपो को संविधान मसौदा समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया गया था। संविधान के मसौदे को संपूर्ण राष्ट्र में वितरित किया गया और 26 मार्च, 2005 को इण्टरनेट पर डाला गया। संविधान मसौदे के अंतिम स्वरूप को 1 अगस्त, 2007 को सार्वजनिक किया गया था।

भूटान में सरकार की प्रणाली लोकतांत्रिक-संवैधानिक राजतंत्र (Democratic-Constitutional Monarchy) है। विधायी शक्तियाँ संसद में निहित हैं जिसमें— महाराजा, एक राष्ट्रीय सभा और एक राष्ट्रीय परिषद हैं। राष्ट्रीय सभा में 47 सदस्य हैं। राष्ट्रीय परिषद में 25 सदस्य होते हैं। चुनावों के प्राथमिक दौर का आयोजन दो प्रमुख राजनैतिक दलों को चयनित करने के लिए किया गया था। दो राजनैतिक दल जिन्हें प्राथमिक दौर में सबसे अधिक मत प्राप्त हुए थे, को निर्वाचन क्षेत्र पर आधारित आम चुनाव लड़ने के लिए पात्र माना गया।

निर्वाचन क्षेत्रों पर आधारित संसद के चुनावों का आयोजन 24 मार्च, 2008 को किया गया था। चूँकि मैदान में मात्र दो राजनैतिक दल थे, एक 'पीपुल्स डेमोक्रेटिक पार्टी' (People's Democratic Party – PDP) और दूसरा 'ड्रुक फ्युन्सम तशोगपा' (Druk Phuensum Tshogpa – DPT) जिसे भूटान पीस एण्ड प्रॉस्पेरिटी पार्टी (Bhutan Peace and Prosperity Party) भी कहा जाता है। ड्रुक फ्युन्सम तशोगपा (DPT) 43 सीटों पर विजयी हुई। यह राजतंत्र समर्थक पार्टी है। इस चुनाव के माध्यम से भूटान ने लोकतंत्र

की ओर अपना कदम बढ़ाया है। चुनाव के पश्चात् ल्योनपो जिग्मे थिनले (Lyonpo Jigme Thinley) प्रधानमंत्री बने। संविधान मसौदे पर सभी 20 जनपदों में सार्वजनिक माध्यम से बहस कराई गयी थी। मई 2008 में नई संसद के संयुक्त सत्र में संविधान पर चर्चाएं कराई गयीं और 18 जुलाई, 2008 को उस पर हस्ताक्षर किये गये। जुलाई 2008 में एक नया संविधान लागू हुआ। सार्वभौमिक व्यवस्था (Universal Suffrage) को नये संविधान में लागू किया गया। भूटान में राजा (Monarch) राजप्रमुख (Head of State) होता है जबकि प्रधानमंत्री शासन प्रमुख (Head of Government) होता है। मंत्रिपरिषद् की नियुक्ति राजा द्वारा की जाती है जिसे संसद द्वारा अनुमोदित किया जाता है। नेशनल असेम्बली को यह अधिकार प्राप्त है कि वह दो-तिहाई बहुमत से राजा को पद से हटा सके।

अर्थव्यवस्था (Economy)

भूटान में कृषि क्षेत्र लगभग 40 प्रतिशत से ज्यादा लोगों को रोजगार देकर उन्हें जीविकोपार्जन का साधन प्रदान करता है। इसका सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में 18 प्रतिशत का योगदान है। कृषि कार्य अभी भी श्रमिकों पर आश्रित है। पशुपालन ग्रामीण अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण घटक है। अभी हाल के वर्षों तक भूटान की अर्थव्यवस्था में औद्योगिक क्षेत्र की भूमिका अपेक्षाकृत कम थी। उद्योग तुलनात्मक रूप से अभी भी कम विकसित हैं। अर्थव्यवस्था का मौद्रिकीकरण अभी तक सीमित है और भारतीय रुपया वहाँ पर प्रचलित है। 'भूटान के शाही मुद्रा प्राधिकरण' (Royal Monetary Authority of Bhutan) की स्थापना 1982 में केन्द्रीय बैंकिंग सेवा प्रदान करने के लिए की गयी थी।

विद्युत और ऊर्जा आधारित उत्पादों, सोमेट और केलिशियम काइनाइड आदि की निर्यात में बढावागत आर्थिक परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त किया है। कृषि की तुलना में जलविद्युत उत्पादन एवं खनन (Mining) आदि की त्वरित गति से सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की संरचना में उल्लेखनीय परिवर्तन आया है।

विदेशी सम्बन्ध (External Affairs)

1962 में कोलम्बो योजना में सम्मिलित होने के साथ ही भूटान ने संधियाँ, संधि और एकान्त वास से उबरना शुरू किया है। भूटान 1971 में संयुक्त राष्ट्र संघ, 1973 में निर्गुट सम्मेलन और 1985 में सांक्रामिक सम्मेलन में सम्मिलित हुआ। भूटान के राजनयिक सम्बन्ध 38 देशों और यूरोपीय संघ के साथ हैं। यद्यपि इसके औपचारिक राजनयिक सम्बन्ध संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के किसी भी स्थायी सदस्य देश के साथ नहीं हैं। 2012 में भूटान ने चीन से औपचारिक तौर पर अपने राजनयिक सम्बन्ध (Diplomatic ties) स्थापित करने की बात कही है। भूटान एवं चीन के बीच सरकार के स्तर पर हुए प्रथम बैठक (रियो+20 सम्मेलन, ब्राजील) के दौरान यह इच्छा व्यक्त की गई है।

यद्यपि भारत लगातार भूटान का सबसे बड़ा विकास भागीदार बना हुआ है परन्तु भूटान संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) तथा अन्य बहुराष्ट्रीय अभिकरणों जैसे यूनीसेफ, विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO), अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF), आई बी आर डी और एशियाई विकास बैंक (ADB) इत्यादि से भी सहायता प्राप्त कर रहा है। इसके साथ ही जापान, डेन्मार्क, ऑस्ट्रेलिया, यू के, स्विटजरलैण्ड, ऑस्ट्रिया और नीदरलैण्ड इत्यादि भी इसे सहायता प्रदान कर रहे हैं। भूटान 1981 में अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष और विश्व बैंक का सदस्य बना था। भूटान ने विश्व व्यापार संगठन (WTO) की सदस्यता हेतु प्रार्थना पत्र दिया है और बिस्मटेक (BIMSTEC) में सदस्य के रूप में शामिल हो गया है। यह विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय खेल संगठनों का भी सदस्य है।

भारत के साथ सम्बन्ध (Relations with India)

भारत और भूटान के बीच 1949 में एक मैत्री संधि हुई थी जिसके अंतर्गत भारत इस बात पर सहमत हुआ कि विदेश नीति के मामलों में वह भूटान की मदद करेगा। 2007 में अद्यतन (Updated) भारत-भूटान संधि न केवल समकालीन मैत्री को प्रदर्शित करती है अपितु 21वीं सदी में विकास की आधारशिला भी रखती है। अन्य प्रावधानों के साथ-साथ यह सन्धि सतत शान्ति और मैत्री, मुक्त व्यापार एवं वाणिज्य तथा एक दूसरे के नागरिकों को समान न्याय आदि भी प्रदान करती है। भूटान के साथ भारत के राजनैतिक सम्बन्ध वर्षों से प्रगाढ़ हैं और इनकी पहचान परस्पर आत्मोपयतापूर्ण विश्वास, आपसी समझ-बूझ तथा आर्थिक विकास के अनेक क्षेत्रों में चल रहे निरन्तर सहयोग विशेष रूप से पारस्परिक लाभ हेतु जलविद्युत ऊर्जा (Hydropower) आदि से की जा सकती है।

भूटान में विकास कार्य और भारतीय सहयोग (Development Works in Bhutan and Indian Assistance)

भूटान का विकास 1960 के दशक में भारतीय सहायता से शुरू हुआ था। अभी तक भूटान की नौ पंचवर्षीय योजनाएँ पूरी हो चुकी हैं। उनमें से दो का सम्पूर्ण वित्तीय पोषण भारत द्वारा किया गया था। भारत सरकार से भूटान की जल-विद्युत परियोजनाओं में सहायता प्रदान करने और 2020 तक कम से कम 10,000 मेगावाट ऊर्जा भूटान से क्रय करने के लिए सहमति व्यक्त की है। इस उद्देश्य से दोनों देशों के बीच जलविद्युत परियोजनाओं के निर्माण पर सहमति हुई है।

मानव संसाधन विकास सहायता (Human Resource Development Assistance)

भारत और भूटान के बीच शिक्षा और संस्कृति के क्षेत्र में ठोस द्विपक्षीय सहयोग है। भारत, भूटान को विभिन्न क्षेत्रों में तकनीकी विशेषज्ञता और विशेषज्ञों की सेवाएँ प्रदान करता है। भारत सरकार भूटानी छात्रों को स्नातक और स्नातकोत्तर दोनों स्तरों के पाठ्यक्रमों में भारत के उच्च शिक्षा संस्थानों में शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रति वर्ष छात्रवृत्ति प्रदान करती है। प्रति वर्ष दस भूटानी छात्रों को भारत के सैनिक स्कूलों में प्रवेश दिया जाता है और उनके समस्त खर्चों का वहन भारत सरकार द्वारा किया जाता है। भारत ने प्रतिष्ठा प्राप्त भारतीय विश्वविद्यालयों एवं अन्य संस्थानों में अध्ययन के लिए भूटानी छात्रों को प्रोत्साहित करने के लिए 'नेहरू बॉगचुक छात्रवृत्ति योजना' की शुरुआत की है। इसका क्रियान्वयन इसी शैक्षिक सत्र से शुरू हो गया है।

भारतीय समुदाय (Indian Community)

भूटान में रहने वाले विदेशियों की अनुमानित संख्या लगभग 37,000 है, जिसमें अधिकांश संख्या भारतीय नागरिकों की है। इनमें अधिकांश संख्या छोटे व्यापारियों और श्रमिकों की है। इसके अतिरिक्त भारत सरकार एवं राज्य सरकारों से अनेक लोग भूटान सरकार की सेवा में प्रतिनियुक्ति (Deputation) पर आते हैं।

भारत-भूटान मैत्री संधि-1949 में संशोधन के मुद्दे (Issues of Amendment in Indo-Bhutanese Friendship Treaty-1949)

भूटान को प्राप्त होने वाली कुल विदेशी सहायता का 80 प्रतिशत भारत से प्राप्त होता है। साथ ही भारत भूटान की सेना को सैन्य प्रशिक्षण भी देता है। भारत 1949 की भारत-भूटान मैत्री-संधि में स्थायी बदलाव करने पर राजी हो गया है। इन बदलावों से भूटान सरकार को विदेश नीति के मामले में सैन्य और अधिक स्वतंत्रता प्राप्त हो सकेगी। संधि की धारा-2 के अनुसार भारत ने स्वीकार किया है कि वह भूटान के आंतरिक प्रशासन में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेगा। धारा-2 में यह प्रावधान था कि भूटान विदेश संबंधों मामलों में भारत द्वारा दी गई राय के अनुसार चलेगा। संधि की धारा-2 में 'विदेश संबंधों में भारत सरकार की राय के अनुसार मार्गदर्शित' (Guided by the advice of the Government of India in regard to its external relations) के स्थान पर 'सहयोग की भाषा' (Language of Cooperation) जगह लेगा। इस बदलाव से भूटान को विदेशी मामलों में और अधिक स्वतंत्रता मिल जाएगी। भूटान को यह ध्यान रखना होगा कि विदेशी संबंध निर्धारित करते समय भारत के हितों को चोट न पहुँचे।

भूटान सरकार धारा-2 में संशोधन के साथ-साथ धारा-6 में भी बदलाव करना चाहेगी। धारा-6 भूटान को यह अनुमति देती है कि वह "अस्त्र-शस्त्र, गोला-बारूद, मशीन, सैन्य सामग्री या भंडारण (Stores) आदि का अपनी शक्ति बढ़ाने या कल्याण कार्य के लिए आयात कर सकता है लेकिन ऐसा वह भारत की अनुमति और सहयोग से ही कर सकता है। भूटान अब बिना भारत की अनुमति लिए गैर-प्राणघातक (Non-Lethal) हथियारों की खरीद कर सकेगा। भारत यह संदेश देना चाहता है कि वह भूटान के हथियारों पर नियंत्रण नहीं रखना चाहता है। संधि की धारा-4 को रद्द कर दिया जाएगा क्योंकि जिस देवानगिरि (Dewangiri) क्षेत्र को लौटाने की बात इसमें की गई है उस पर पहले ही कार्यवाही हो चुकी है। इस संधि पर हस्ताक्षर पारस्परिक लाभों के लिए हुए थे तब भारत को यह देखना था कि भूटान चीन के प्रभाव में नहीं चला जाए, जबकि भूटान भारत से अपनी रक्षा करवाना चाहता था। मैत्री और सहयोग संधि (1949) ने दोनों देशों के हितों की रक्षा की है।

भारत-भूटान मुक्त व्यापार समझौता-2006 (India-Bhutan Free Trade Agreement-2006)

28 जुलाई, 2006 को नई दिल्ली में भारत-भूटान के बीच मुक्त व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर किए गए थे। यह समझौता 10 वर्षों के लिए प्रभावी है। इस समझौते के अंतर्गत भारत, भूटान को तीसरे देशों के साथ उसके व्यापार संचालन तथा भारतीय भू-क्षेत्र के माध्यम से भूटान के एक हिस्से से दूसरे हिस्से में वस्तुओं के आवागमन को सुगम बनाने के लिए पारगमन सुविधाएँ (Transit Facilities) भी प्रदान करता है। भूटान की आवश्यकताएँ मुख्यतः भारत से आयात के जरिए पूरी की जाती हैं। वाणिज्यिक लेन-देन (Commercial Transactions) भारतीय रुपये तथा भूटानी न्गुल्ट्रम (India Rupees and Bhutanese Ngultrum) में किए जाते हैं। भारत, भूटान का सबसे बड़ा व्यापारिक सहयोगी है। दोनों पक्षों ने यह महसूस किया है कि द्विपक्षीय व्यापार बढ़ाने की अभी बहुत संभावनाएँ हैं। भारत, भूटान को मुख्यतः मशीनरी, यांत्रिक उपकरण, खनिज पदार्थ, परिवहन सामग्री और रासायनिक उत्पाद निर्यात करता है जबकि आयात की जाने वाली प्रमुख वस्तुओं में बिजली, जिप्सम, सिलिकॉन और पोर्टलैंड सीमेंट इत्यादि सम्मिलित हैं।

भारत-भूटान सम्बन्धों में सकारात्मक बिन्दु (Positive Points in India-Bhutan Relations)

- ❖ भारत एवं भूटान के बीच पारंपरिक रूप से सौहार्दपूर्ण एवं मित्रवत संबंध रहे हैं। दोनों पड़ोसी देश हैं तथा इनमें गहरे सांस्कृतिक संबंध हैं। बौद्ध धर्म का जन्म भारत में हुआ परन्तु भूटान की ज्यादातर जनसंख्या बौद्ध धर्म को मानती है। दोनों देशों ने 1949 में मित्रता एवं सहयोग संधि (Treaty of Friendship and Cooperation) पर हस्ताक्षर किए थे। इस संधि में दीर्घकालीन शांति एवं मित्रता (Perpetual Peace and Friendship), मुक्त व्यापार एवं वाणिज्य और एक-दूसरे देश के नागरिकों के लिए समान न्याय (Equal Justice to each Others Citizens) का प्रावधान किया गया था। इस संधि में हाल ही में कुछ परिवर्तन किए गए हैं। इसके तहत भूटान की विदेश एवं रक्षा नीति के संदर्भ में भारत पर निर्भरता कम हुई है।
- ❖ भूटान की आधारभूत संरचना के विकास में भारत सक्रिय रूप से सहभागी रहा है। सीमा सड़क संगठन द्वारा 1961 में दंतक (Dantak) परियोजना शुरू की गई थी। यह सड़क, बाँध, टेलीकम्युनिकेशन, हेलीपैड (Helipads), ब्रॉडकास्टिंग स्टेशन (Broadcasting Station), कॉलेज, स्कूल, विद्युत स्टेशन, पेट्रोलियम भण्डारण केन्द्र और जल विद्युत आदि निर्माण परियोजनाओं से संबंधित है।
- ❖ भूटान के विकास के लिए भारत भारी मात्रा में वित्तीय सहायता उपलब्ध कराता है। भारत ने भूटान की दसवीं पंचवर्षीय योजना (2008-13) में 3400 करोड़ रुपये की मदद देने का लक्ष्य रखा है।
- ❖ भारत की भू-वैज्ञानिक सर्वेक्षण (Geological Survey of India - GSI) संस्था ने भूटान के खनिज भंडारों की खोज में सहायता की है। जीएसआई (GSI) ने भूटान में सीमेंट उद्योग के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। 2003 से जीएसआई की भूटान स्थित इकाई ने काम करना बंद कर दिया है।
- ❖ भारत-भूटान जल संसाधन के क्षेत्र में एक-दूसरे का सहयोग करते हैं। भारत का केंद्रीय जल आयोग (Central Water Commission) भूटान में अनेक परियोजनाएँ चला रहा है।
- ❖ भूटान सरकार द्वारा भारत विरोधी संगठनों जैसे उल्फा आदि के विरुद्ध की गई कार्रवाई से भारत प्रसन्न है। भूटान के इस कदम से दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय संबंध और भी मजबूत हुए हैं।
- ❖ भारत महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय मामलों में भूटान का समर्थन करता रहा है। भारत ने वर्ष 1971 में भूटान की संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता के लिए सक्रिय प्रयास किया था।
- ❖ भारत प्रशिक्षण क्षेत्र में भी भूटान का सहयोगी है। भारत रॉयल भूटानी सेना को सुसज्जित करने के साथ-साथ प्रशिक्षण भी देता है।
- ❖ भारत-भूटान को जोड़ने वाली पहली रेल लाइन के निर्माण हेतु भारतीय प्रधानमंत्री डॉ॰ मनमोहन सिंह ने अपनी भूटान यात्रा (2010) के दौरान घोषणा की है। इस रेल लाइन का नाम 'गोल्डन जुबली रेल लाइन' (Golden Jubilee Rail Line) होगा।

मुख्य चुनौतियाँ (Major Challenges)

- ❖ चीन हमेशा से भूटान के लिए खतरा रहा है। चीन ने भूटान के क्षेत्रों पर अपना दावा प्रस्तुत किया था। भूटान को अभी भी चीन से खतरा बना हुआ है। भारत एवं भूटान दोनों को अपने आपसी संबंधों को निर्धारित करते समय इस तथ्य को ध्यान में रखना होगा।
- ❖ भूटान हमेशा आर्थिक रूप से भारत पर निर्भर रहा है। उदारीकरण और वैश्वीकरण के दौर में भारतीय अर्थव्यवस्था में होने वाले परिवर्तनों के प्रतिप्रेक्ष्य में भारत-भूटान संबंधों को भी परिवर्तित करना होगा।

भारत-भूटान सम्बन्धों का भविष्य (Future of India-Bhutan Relations)

- ❖ भूटान के नरेश देश में लोकतांत्रिक प्रणाली शुरू किए जाने के संदर्भ में भूटान, भारत के लोकतांत्रिक अनुभवों का लाभ उठा सकता है। भूटान में होने वाले आगामी चुनावों में भारत सहायता कर सकता है।
- ❖ दोनों देशों के बीच जल विद्युत उत्पादन तथा जल संसाधन प्रबंधन के क्षेत्र में भी सहयोग की व्यापक संभावनाएँ हैं, जैसे बाढ़ पूर्वानुमान, नदी जल के संदर्भ में सूचनाओं का आदान-प्रदान तथा जल संसाधन प्रबंधन आदि।
- ❖ भूटान में पर्यटन एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें आपसी सहयोग की व्यापक संभावनाएँ निहित हैं।
- ❖ यह आशा की जा रही है कि आने वाले दिनों में भूटान भी वैश्वीकरण की लहर से बच नहीं पाएगा। यदि आने वाले दिनों में भूटान अपनी बंद अर्थव्यवस्था को खोलता है तो भारत के लिए भूटान में निवेश के व्यापक अवसर उपलब्ध होंगे। इस प्रकार का निवेश आपसी व्यापार की दृष्टि से उत्तम होगा और इससे भूटान को भी लाभ मिलेगा।
- ❖ वर्तमान वैश्वीकरण के युग में भारत, भूटान को प्रौद्योगिकी क्षेत्र में भी सहायता उपलब्ध करा सकता है।

भारत-भूटान संबंधों में चीन की भूमिका (Role of China in India-Bhutan Relations)

भारत-चीन-भूटान: चीन एवं भूटान के बीच विवाद का मुख्य कारण वर्षों पुराना अनसुलझा सीमा विवाद है। वास्तव में तिब्बत के साथ भूटान के पारंपरिक संबंध रहे थे किन्तु भूटान ने वर्ष 1960 में बड़ी संख्या में तिब्बती शरणार्थियों के आने के बाद चीन के साथ अपनी उत्तरी सीमाओं को बंद कर दिया था। वर्ष 1998 में भूटान एवं चीन के बीच भूटान-चीन सीमा पर शांति बनाए रखने के लिए एक समझौते पर हस्ताक्षर किये गये थे परन्तु आज तक इसका कोई महत्वपूर्ण परिणाम नहीं निकल सका। इसके बदले भूटान को कई बार चीनी घुसपैठ का सामना करना पड़ा जो रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण चुम्बी घाटी (भारत, भूटान एवं चीन के मध्य एक महत्वपूर्ण स्थल) के करीब हुई थी। चुम्बी घाटी (Chumbi Valley) दो कारणों से महत्वपूर्ण है। पहला यह भूटान, भारत एवं चीन की सीमाओं के मध्य एक महत्वपूर्ण स्थल है। यह स्थल सिलिगुड़ी गलियारा (Siliguri Corridor) जो भारतीय मुख्य भूमि को उत्तर-पूर्व भारत और नेपाल को भूटान से जोड़ता है, से मात्र 5 किमी. दूर है और दूसरा तिब्बत एवं सिक्किम के साथ इसकी सीमाएं जुड़ी होने के कारण यह चीन के लिए भू-रणनीतिक (Geostrategic) महत्व का है। ऐसा लगता है कि भूटान में चीन की बढ़ती घुसपैठ भूटान की बजाय भारत के विरुद्ध लक्षित है। ऐसा माना जाता है कि भारत-चीन सीमा विवाद हल हो जाने से भूटान के साथ चीन की सीमा समस्या का स्वतः ही समाधान हो जाएगा।

चीनी सुरक्षा बलों ने 2007 में कई भूटानी सुरक्षा चौकियों को ध्वस्त कर दिया था। ये चौकियाँ भूटान की दोलम घाटी (Dolam Valley) में स्थित थीं। भूटानी इस बात से नाराज थे कि उन्हें भारतीयों के साथ अनिष्टता की कोमत चुकानी पड़ी है। इससे भूटानियों में यह धारणा पैदा हो गयी कि भारत एवं चीन के मध्य भूटान एक बफर राज्य बन गया है।

भूटान एवं चीन ने सीमा विवाद हल करने संबंधी बातों का 19वाँ दौर जनवरी 2010 को पूरा किया। दोनों पक्ष उत्तर में विवादित भूमि के संयुक्त भूमि सर्वेक्षण (Joint Field Survey) पर सहमत हुए। इसके अंतर्गत कुल 764 वर्ग कि.मी. क्षेत्र आता है। चीन ने जिन क्षेत्रों पर दावा किया है उनमें भूटान के उत्तर-पश्चिम में 269 वर्ग कि.मी. और मध्य भूटान में 495 वर्ग कि.मी. क्षेत्र शामिल है। उत्तर-पश्चिम भाग के अंतर्गत सप्तरी, हा एवं पारो जिलों में स्थित डोकलाम, सिंचुलुम्पा और शखोताओ नामक स्थान आते हैं। जबकि मध्य भाग के अंतर्गत वांगदुए फोड्रंग (Wangdue Phodrang) जिले में स्थित पसामलुंग एवं जकारलुंग घाटी नामक स्थान हैं। भूटान सरकार 'एक-चीन नीति' के प्रति दृढ़ता से प्रतिबद्ध है। भू-रणनीति को ध्यान में रखते हुए भूटान को सीमा निगरानी के लिए अधिक आत्मनिर्भर होना चाहिए ताकि भारत के साथ सुरक्षा सहयोग को अधिक सुदृढ़ बनाया जा सके।

भारत-भूटान-चीन के बीच सामरिक स्थायित्व कायम करने के लिए यह जरूरी है कि इसके लिए उच्च स्तरीय राजनीतिक प्रयास किया जाए। यह सामरिक स्थायित्व (Strategic Stability) इस बात पर निर्भर करेगा कि तीनों देश और विशेषकर भारत-चीन किस प्रकार भूटान की संप्रभुता एवं स्वायत्तता (Sovereignty and Autonomy) को निश्चित करते हुए इसके लिए प्रयास करते हैं। फिलहाल भारत ने चीन-भूटान संबंधों की औपचारिक बहाली संबंधी रिपोर्टों पर अति-प्रतिक्रिया (Over-reaction) न देकर परिपक्वता का ही परिचय दिया है। भारत एवं भूटान दोनों को ही यह ध्यान रखना होगा कि वे चीन के साथ अपने संबंधों को सद्भावनापूर्ण बनाते समय राष्ट्रीय हितों का बलिदान न करें।

भारत-मालदीव संबंध (India-Maldives Relations)

*** (इस टॉपिक का संबंध मुख्य परीक्षा के प्रश्नपत्र-2 के विषय संख्या 17 से है। 'दृष्टि' द्वारा वर्गीकृत पाठ्यक्रम के 15 खंडों में से इसका संबंध भाग-7 से है।)

द्विपक्षीय संबंधों का ऐतिहासिक संदर्भ

(Historical Perspective of Bilateral Relations)

मालदीव हिंद महासागर में अवस्थित कई द्वीपों का समूह है। समुद्र से घिरे इस देश की प्राकृतिक छटा अत्यंत निराली है। इसका क्षेत्रफल केवल 298 वर्ग किमी. है। आबादी अनुमानतः साढ़े तीन लाख से कम ही है। इसकी राजधानी माले है। दिवहेही (Divehi) यहाँ की प्रमुख भाषा है। मुद्रा के रूप में मालदीवियन रूफिया (Rufiyaa) का प्रचलन है। भौगोलिक रूप से इसके उत्तर में भारत का लक्षद्वीप है और पूर्व में श्रीलंका है। भारत-मालदीव राजनयिक संबंधों की स्थापना वर्ष 1965 में ही हो गई थी और इसी वर्ष मालदीव स्वतंत्र भी हुआ था।

मालदीव की सामाजिक-सांस्कृतिक परम्परा एवं धरोहर भारत से मूल-खादी है। वहाँ की परम्परागत वेश-भूषा, खान-पान की आदतें और फिल्मों आदि पर भारतीयता का प्रभाव है। यह कूटनीति अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि सांस्कृतिक एकता को दोनों देशों ने महसूस किया है। आर्थिक-हो-या-सैन्य-सभी-मात्रों पर भारत ने मालदीव की सहायता किया है। जब भी जलदस्सु और आतंकवादियों ने इस देश पर जुल्म डाला तो सहायता की माँग होते ही भारतीय सेना ने तत्काल इसकी मदद तैयार रखी की है।

भारत इस सबसे छोटे पड़ोसी देश की अनदेखी नहीं कर सकता क्योंकि भूविज्ञानतः पुरम से लगभग 550 किलोमीटर दक्षिण-पश्चिम में स्थित मालदीव हिंद महासागर का राजनीतिक-रणनीतिक प्रवेश द्वार है। भारत ने हमेशा से मालदीव पर निगाह रखी है और इसके विकास के लिए उदार दिल से वित्तीय सहायता दी है। यहाँ तक कि 1998 में मालदीव बागियों का विद्रोह कुचलने के लिए भारत ने सशस्त्र सैन्य भी भेजा। कुछ समय से चीन ने भी मालदीव पर प्रभाव डालना शुरू कर दिया है। वह पूँजी निवेश से इसकी मदद कर रहा है। इसके जवाब में भारत ने मालदीव की विकास सहायता बढ़ा दी है।

मालदीव का रणनीतिक महत्व (Strategic Importance of Maldives)

- ♦ मालदीव की भू-रणनीतिक अवस्थिति समुद्री मार्गों के माध्यम से आतंकवाद, अकम्पनीय कठिनायतों को नियंत्रित करने और समुद्री डाकूओं से निपटने में भारत को व्यापक रूप से सहायता कर सकती है। अलावा डाला मूल्य का खनिज एवं ऊर्जा व्यापार मालदीव के निकट से होकर गुजरता है।
- ♦ भारत को मालदीव के साथ संबंधों को जीवित रखने के लिए कठिन प्रयास करने चाहिए ताकि म्यांमार, पाकिस्तान एवं बांग्लादेश सहित भारत के पड़ोसी देशों से करीबी रणनीतिक संबंध स्थापित करने के चीनी प्रयासों के प्रभाव को बेअसर किया जा सके। वर्ष 2010 में 1,20,000 चीनी पर्यटक मालदीव घूमने गए। चीन मालदीव के लिए सबसे बड़ा पर्यटक स्रोत बन गया है। भारत के लिए यह एक चौकाने वाला तथ्य है। इसके अतिरिक्त वर्ष 2010 में दोनों देशों में मध्य द्विपक्षीय व्यापार 64 मिलियन डॉलर के स्तर पर पहुँच गया जो कि वर्ष 2009 से लगभग 56 प्रतिशत वृद्धि को इंगित करता है। चीन द्वारा 1000 मकान इकाइयों की निर्माण परियोजना सहित विभिन्न परियोजनाओं के लिए रियायती ऋण दिये जाने से दोनों देशों के मध्य सद्भावना एवं सहयोग को और प्रोत्साहन मिला है। वर्ष 2012 में चीन एवं मालदीव दोनों कूटनीतिक संबंधों की 40वीं वर्षगांठ मनाएंगे। चीन एवं मालदीव ने 14 अक्टूबर, 1972 में कूटनीतिक संबंधों की स्थापना की थी। मालदीव ने चीन के प्रति सदैव एक सैद्धांतिक स्थिति को बनाए रखा है और एक-चीन नीति (One China Policy) का समर्थन किया है।
- ♦ 26/11 के मुम्बई हमलों के आलोक में मालदीव की लक्षद्वीप से निकटता इसे तटीय सुरक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण बनाती है। मालदीव के 1192 द्वीपों में से मात्र 200 द्वीप ही बसे हुए हैं। इसके सबसे दक्षिणी द्वीप से लेकर सबसे उत्तरी द्वीप के मध्य करीब 400 मील की दूरी है। भारत द्वारा अपने तटीय क्षेत्रों पर हमले की किसी संगठित योजना से बचने के लिए इन क्षेत्रों की सुरक्षा सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है।
- ♦ मालदीव के 1100 से अधिक द्वीप भारत को रसद सहायता एवं सैन्य अभियानों के लिए आधार प्रदान कर सकते हैं जिससे भारतीय नौसैन्य क्षमता बढ़ सकती है। मालदीव सरकार अपने सभी चुनावी वायदों को पूरा करने के लिए कृत संकल्प है और

देश के सैकड़ों द्वीपों को नावों के माध्यम से जोड़ने एवं लोगों के लिए किफायती मकान बनाने के लिए व्यापक प्रयास कर रही है। भारत को इन अवसरों का लाभ उठाना चाहिए।

मालदीव पर है ड्रैगन (चीन) की नजर [Dragon's (China) Eye on Maldives]

चीन की मालदीव के 17 द्वीपों पर 1.4 अरब डॉलर के निवेश की योजना थी जो यदि मंजूर हो जाती तो वहाँ चीन के 30 हजार लोग बस जाते। चीन ने वहाँ पर्यटन के इरादे से होटल आदि में निवेश करने का प्रस्ताव पूर्व राष्ट्रपति मोहम्मद नशीद के सामने रखा था। जिसका खुलासा अप्रैल 2012 में भारत के निजी दौर पर आए मालदीव के पूर्व राष्ट्रपति मोहम्मद नशीद ने किया। नशीद के मुताबिक मालदीव की कुल आबादी ही तीन लाख की है और अगर इसका 10 प्रतिशत चीन से आकर बस जाता तो यह मालदीव के लिए ठीक नहीं होता। उन्होंने कहा कि मालदीव में भारत के भी लगभग 30 हजार लोग रहते हैं लेकिन भारत मालदीव का पड़ोसी है और मालदीव को भारतीयों से कोई शिकायत नहीं है। परंतु चीन की ओर से पर्यटन क्षेत्र में भारी निवेश से मालदीव की आबादी में असंतुलन पैदा हो जाता। राष्ट्रपति पद से हटाए जाने के बाद नशीद ने यह खुलासा भी किया था कि चीन के साथ रक्षा सहयोग समझौते का एक प्रस्ताव उनके पास आया था जिसे उन्होंने मंजूर नहीं किया।

भारत-मालदीव संबंधों का हालिया संदर्भ (Current Status of India-Maldives Relations)

भारत के प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने 11-12 नवंबर 2011 को मालदीव का दौरा किया और 12 नवंबर 2011 को पीपुल्स मजलिस (संसद) को संबोधित किया। पीपुल्स मजलिस के अध्यक्ष श्री अब्दुल्ला शहीद ने प्रधानमंत्री को स्वागत करते हुए इस बात को रेखांकित किया कि भारत के प्रधानमंत्री पीपुल्स मजलिस के 78 वर्षों के इतिहास में यहाँ संबोधित करने वाले पहले विदेशी राज्याध्यक्ष अथवा शासनाध्यक्ष हैं। प्रधानमंत्री ने दोनों पड़ोसी देशों के लोगों के बीच घनिष्ठ स्नेह और सहोदर के प्रतीक के रूप में पीपुल्स मजलिस द्वारा उन्हें प्रदान किए गए इस सम्मान के महत्व को स्वीकार किया।

दोनों देशों ने भौगोलिक निकटता तथा जातीय ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक संपर्कों का स्मरण करते हुए लोकतंत्र, विकास तथा शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के प्रति अपने विश्वास और प्रतिबद्धता को दोहराया। दोनों देश इस बात के प्रति आश्वस्त हैं कि द्विपक्षीय एवं क्षेत्रीय स्तरों पर किए जाने वाले सहयोग से दोनों देश अपनी विकास आकांक्षाओं को पूरा कर सकते हैं और हिंद महासागर क्षेत्र तथा दक्षिण एशिया में शांति, समृद्धि एवं सुरक्षा में योगदान दे सकते हैं।

प्रधानमंत्री ने मालदीव के लोकतंत्र में शांतिपूर्ण एवं सफल बदलाव के लिए वहाँ के लोगों को शुभकामनाएँ दीं। अन्य बातों के साथ-साथ उन्होंने समुद्रीय लोकतंत्र के अनुभवों का आदान-प्रदान और मालदीव में लोकतांत्रिक प्रक्रिया के जरिए अर्जित लाभों को सुदृढ़ बनाने हेतु पूर्ण समर्थन दिए जाने की बात कही। दोनों देश सांसदों और विभिन्न संस्थानों के बीच सहयोग को संवर्धित और सुविधाजनक बनाने पर सहमत हैं।

यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच निम्नलिखित दस्तावेजों (Documents) पर हस्ताक्षर किए गए:

1. विकास के लिए सहयोग की रूपरेखा।
2. अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद, अंतर्राष्ट्रीय अपराध (Transnational Crime), मादक द्रव्यों की तस्करी पर प्रतिबंध, क्षमता निर्माण, आपदा प्रबंधन एवं तटीय सुरक्षा (Coastal Security) हेतु द्विपक्षीय सहयोग को बढ़ावा देने से संबंधित समझौता ज्ञापन।
3. सजायाप्राप्त कैदियों के हस्तांतरण (Transfer of Sentenced Persons) पर समझौता।
4. 100 मिलियन अमेरिकी डॉलर की सुरक्षित साख (Stand-by Credit) सुविधा से संबंधित करार।
5. मालदीव में इंदिरा गांधी स्मारक अस्पताल के नवीनीकरण हेतु समझौता ज्ञापन।
6. वर्ष 2012-2015 के लिए सांस्कृतिक सहयोग कार्यक्रम।

दोनों देश आतंकवाद के सभी स्वरूपों एवं अभिव्यक्तियों के विरुद्ध हैं। दोनों के सुरक्षा हित इस क्षेत्र में एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। दोनों एक-दूसरे की चिंताओं के प्रति संवेदनशील हैं और यह मानते हैं कि भू-क्षेत्रों का उपयोग किसी भी हाल में एक-दूसरे के विरुद्ध चलाई जाने वाली शत्रुतापूर्ण गतिविधियों के लिए नहीं करने दिया जाएगा।

जल दस्युता, आतंकवाद, संगठित अपराध, मादक औषधियों की तस्करी एवं मानव तस्करी सहित साझे हित के सभी मुद्दों पर द्विपक्षीय सहयोग में वृद्धि करने पर सहमति है। पुलिस तथा सुरक्षा बलों के प्रशिक्षण एवं क्षमता निर्माण के क्षेत्रों में सहयोग को और गहन बनाने की प्रक्रिया जारी है।

दोनों देश समन्वित गश्ती तथा हवाई निगरानी, सूचनाओं के आदान-प्रदान, क्षमता निर्माण एवं जल दस्युता के विरुद्ध एक प्रभावी

कानूनी रूपरेखा का विकास कर हिंद महासागर क्षेत्र में समुद्री सुरक्षा को बढ़ावा देने के लिए सहयोग कर रहे हैं। द्विपक्षीय व्यापार और निवेश संबंधों को बढ़ावा देने के विभिन्न प्रयासों को बढ़ावा दिया जा रहा है। खाद्य सुरक्षा, मत्स्य पालन, पर्यटन, परिवहन, सूचना प्रौद्योगिकी, नई एवं नवीकरणीय ऊर्जा एवं संचार जैसे क्षेत्रों में घनिष्ठ आर्थिक सहयोग करने पर भी सहमति हुई है।

ऋण एवं बीमा सुविधाओं में सुधार तथा विकास वित्त संस्थाओं की स्थापना में सहायता करने सहित अन्य तरीकों से बैंकिंग एवं वित्तीय क्षेत्रों में संपर्कों को सुदृढ़ बनाने के उपायों पर विचार किया जा रहा है। मालदीव की अनिवार्य वित्तीय जरूरतों को पूरा करने के लिए संस्थागत प्रबंधों की समीक्षा करने के लिए भारत पहले ही आश्वासन दे चुका है। मालदीव वर्ष 2008 में दी गई 100 मिलियन अमेरिकी डॉलर की सुरक्षित साख सुविधा तथा वर्ष 2009 में मालदीव मौद्रिक प्राधिकरण द्वारा जारी 100 मिलियन अमेरिकी डॉलर के ट्रेजरी बॉण्ड्स में पूर्ण अंशदान करने सहित अन्य तरीकों से भारत द्वारा दी जाने वाली सहायता के लिए भारत के प्रति आभारी है। मालदीव में आवास ईकाइयों के निर्माण हेतु 40 मिलियन अमेरिकी डॉलर की ऋण शृंखलाओं (Line of Credit) पर अगस्त 2011 में दोनों देशों के बीच हस्ताक्षर किये गये हैं। भारत द्वारा दी गई 100 मिलियन अमेरिकी डॉलर की नई सुरक्षित साख से मालदीव में अवसंरचना एवं क्षमताओं का पर्याप्त उन्नयन होगा। मालदीव पुलिस अकादमी की स्थापना और माले में स्थापित इंदिरा गांधी स्मारक अस्पताल सहित अन्य विकास परियोजनाओं के लिए मालदीव को भारत द्वारा वित्तीय सहायता दिया गया है। अवसंरचना विकास के जरिए दोनों देशों के बीच संपर्क व्यवस्था में सुधार लाया जा रहा है ताकि सामानों, सेवाओं, सूचनाओं, विचारों, संस्कृतियों एवं लोगों के बीच आदान-प्रदान को बढ़ावा मिल सके।

दोनों देशों के बीच हवाई एवं समुद्री संपर्कों को बढ़ावा दिया जा रहा है। इस संदर्भ में कोचीन (भारत) और माले (मालदीव) के अतिरिक्त अन्य स्थानों से भी नियमित संचारों सह कार्गो-फर्री सेवा आदि किए जाने की दिशा में तेजी से कार्य करने का आदेश संबंधित अधिकारियों को दिया गया है। भारत ने घोषणा की है कि वह कुलदुक्का (Kuludukku) (मालदीव का उत्तरी प्रांत) में एक क्षेत्रीय बंदरगाह का शीघ्रातिशीघ्र निर्माण किए जाने के संबंध में व्यवहार्यता का अध्ययन करेगा। मुंबई/दिल्ली-माले सेक्टर में शीघ्रातिशीघ्र सीधी उड़ान संचालित की जाने की योजना है।

एक-दूसरे देश में उच्चयोगों का निर्माण किए जाने हेतु माले और नई दिल्ली में पारस्परिक आधार पर मुखड़े आवंटित किया गया है। क्षेत्रीय सहयोग को बढ़ावा देने में साक के महत्व को दोनों देश समझते हैं। साक संस्थाओं की सक्रिय बनाने हेतु मालदीव के साथ मिलकर कार्य करते हुए साक की सभी वर्तमान परियोजनाओं एवं समझौतों का पूर्ण कार्यान्वयन करने सहित अन्य तरीकों से साक को और सुदृढ़ बनाए जाने पर भारत एवं मालदीव सहमत हैं। इस संबंध में मालदीव ने साक के अध्यक्ष के रूप में मालदीव को भारत द्वारा निरंतर दी जा रही सहायता विशिष्टकर माले में साक क्षेत्रीय क्षेत्र प्रबंधन केंद्र (SAARC Coastal Zone Management Centre) को सुदृढ़ बनाए जाने हेतु दिए जा रहे समर्थन की सहायता की है।

भारत-मालदीव एक संयुक्त राष्ट्र (United Nations) जो वैश्विक चुनौतियों का मुकाबला करने में सक्षम हो सके, पर आधारित बहुपक्षीय प्रणाली के पक्ष में है। इस संदर्भ में दोनों देशों ने संयुक्त राष्ट्र के प्रमुख निकायों जिनमें संयुक्त राष्ट्र महासभा (UN General Assembly) की सक्रिय बनाने और संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (UN Security Council) की विस्तार प्रक्रिया को आगे बढ़ाने की आवश्यकता को भी स्वीकार किया है। मालदीव ने संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता की भारत की उम्मीदवारी का समर्थन किया है। अतिसूक्ष्म समस्याओं को सुदृढ़ बनाए जाने तथा अंतरराष्ट्रीय माध्यमों से निर्णय प्रक्रिया में विकासशील देशों की भागीदारी को बढ़ाने की आवश्यकता भारत और मालदीव दोनों को समझते हैं। जलवायु परिवर्तन आज विश्व के समक्ष विद्यमान सबसे महत्वपूर्ण चुनौतियों में से एक है। साझे परंतु भिन्न दायित्वों (Common but Differentiated Responsibilities) सहित जलवायु परिवर्तन से संबद्ध संयुक्त राष्ट्र रूपरेखा अभिसमय (United Nations Framework Convention on Climate Change - UNFCCC) के अन्य उपबंधों एवं सिद्धांतों के प्रति दोनों देशों के दृष्टिकोण में समानता है। दोनों देश पारितंत्र (Eco-system) को सुरक्षित रखने, जलवायु परिवर्तन के प्रति लघु द्वीपीय राज्यों की संवेदनशीलता की समस्या का समाधान करने तथा तटीय अनुसंधान को सुदृढ़ बनाने हेतु साझे हित की परियोजनाओं में सहयोग कर रहे हैं। मालदीव के राष्ट्रपति डॉ. मोहम्मद वहीद ने 10-14 मई, 2012 के बीच भारत की यात्रा की। फरवरी 2012 में मालदीव के राष्ट्रपति का पदभार ग्रहण करने के बाद यह डॉ. मोहम्मद वहीद की पहली विदेश यात्रा थी। मालदीव के राष्ट्रपति ने राष्ट्रपति श्रीमति प्रतिभा देवीसिंह पाटिल एवं प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के साथ बातचीत की।

भारत यह बात जानता है कि मालदीव में शांति और स्थायित्व भारत के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। भारत एक स्थिर, शांतिपूर्ण एवं समृद्ध देश का निर्माण करने में मालदीव की सहायता करना चाहता है। लोकतांत्रिक प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से मालदीव में सभी भागीदारों द्वारा मिलकर कार्य करने की आवश्यकता है। मालदीव, राष्ट्रीय सुलह और सभी मामलों का समाधान शांतिपूर्ण एवं लोकतांत्रिक तरीके से करने के लिए लगातार प्रयास कर रहा है। भारत द्वारा इस कार्य में मालदीव की मदद की जा रही है। दोनों देशों को सुरक्षा और समृद्धि के लिए मिलकर कार्य करने की आवश्यकता है।

नवंबर 2011 में भारत के प्रधानमंत्री की मालदीव यात्रा के दौरान सम्पन्न किए गए सभी समझौतों को बनाए रखने के प्रति दोनों देश प्रतिबद्ध हैं। विभिन्न क्षेत्रों में घनिष्ठ और बहुआयामी सहयोग को आगे बढ़ाने तथा इन्हें और सुदृढ़ बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है। इस संदर्भ में भारत की अनुदान सहायता से माले स्थित इंदिरा गांधी स्मारक अस्पताल का नवनीकरण और राष्ट्रीय पुलिस अकादमी की स्थापना की जा रही है। 500 आवास इकाइयों का निर्माण किए जाने के लिए पिछले वर्ष भारत द्वारा 40 मिलियन अमेरिकी डॉलर की सहायता दी गई थी।

मालदीव ने फरवरी 2012 में भारत द्वारा दी गई स्थायी साख सहायता सुविधा की एक किस्त 20 मिलियन अमेरिकी डॉलर जारी किए जाने और 50 मिलियन अमेरिकी डॉलर के ट्रेजरी बॉन्ड को जारी करने की सराहना की है। मालदीव के राष्ट्रपति ने स्थायी साख सुविधा के तहत मालदीव को 25 मिलियन अमेरिकी डॉलर की अतिरिक्त राशि जारी करने के लिए भारत की सराहना की है।

रक्षा संबंधों के अंतर्गत अप्रैल 2012 में माले (मालदीव) तट पर दोस्ती नामक भारत-मालदीव-श्रीलंका संयुक्त तट रक्षक अभ्यास (India-Maldives-Srilanka Joint Coast Guard Exercise; Dosti) का सफल संचालन किया गया था। मालदीव ने सैन्य अस्पताल के निर्माण में भारत के सहयोग की सराहना भी की है।

भारत ने मालदीव के राष्ट्रपति के उस विचार की सराहना की जिसमें उन्होंने मालदीव में भारतीय निवेश को आकर्षित करने के उद्देश्य से अपनी यात्रा के दौरान भारतीय व्यवसायिक समुदाय से मिलने की इच्छा व्यक्त की थी। भारत ने आशा जताई है कि मालदीव सरकार निवेश के लिए अनुकूल वातावरण सुनिश्चित करेगी और मौजूदा परियोजनाएँ, जिनमें माले अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा परियोजना भी शामिल है, संतोषजनक रूप से आगे बढ़ सकेंगी। भारत ने मालदीव के विकास के लिए आर्थिक एवं तकनीकी सहायता जारी रखने का फैसला किया है। दोनों देश अर्थव्यवस्थाओं के एकीकरण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सहयोग कर रहे हैं जिसमें मालदीव में विशेष कौशल विकास कार्यक्रम (Special Skills Development Programme) भी शामिल है।

मालदीव में सत्ता परिवर्तन: भारतीय विदेश नीति के समक्ष उत्पन्न चुनौती (Power Conversion in Maldives: A Challenge for Indian Foreign Policy)

मालदीव में शांतिपूर्ण तरीके से सत्ता परिवर्तन हुआ है। मोहम्मद नशीद (Mohamed Nasheed) ने राष्ट्रपति पद से इस्तीफा दे दिया तथा उपराष्ट्रपति मोहम्मद वाहिद हसन (Mohammed Waheed Hassan) राष्ट्रपति बन गए हैं। कुछ दिनों से चल रहा राजनीतिक संकट समाप्त होता दिखाई दे रहा है। लेकिन मोहम्मद नशीद का इस्तीफा देना, सत्ता परिवर्तन को राष्ट्रहित में घोषित किया जाना, वर्तमान राष्ट्रपति का यह कहना कि उन्हें पुलिस और सेना का समर्थन हासिल है, भारत द्वारा वहाँ की परिस्थितियों पर नजर रखने के लिए अपना विशेष दूत भेजना, अमेरिका का बयान कि मालदीव अभी भी अस्थिर है, एवं राष्ट्रपति मोहम्मद नशीद का यह कहना कि उन्होंने अपनी मर्जी से सत्ता का त्याग नहीं किया, ये बल्लि बंदूक की शोक पर उठे इस्तीफा देने के लिए बाध्य किया गया है और मोहम्मद नशीद का चुनावीका मांग करना, इस आलोचना करने के हैं कि मालदीव में सब कुछ ठीक नहीं है। वहाँ की स्थिति बाहरी तौर पर जितनी शांत और स्थिर दिखाने पर प्रयास, आंतरिक तौर पर उतनी ही अस्थिर है।

चूँकि भारत, मालदीव का निकटतम पड़ोसी है, इसलिए वहाँ की स्थिति पर उसका निगरान रखना भारत के लिए काफी महत्वपूर्ण है। मालदीव में लगभग तीस हजार भारतीय नागरिक काम करते हैं। न केवल आर्थिक बल्कि सामरिक दृष्टि से भी मालदीव, भारत के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। इसलिए यह जरूरी है कि इस सत्ता परिवर्तन की परिस्थितियों को समझा जाए तथा मालदीव में भारत को किस तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है इस पर भी गौर किया जाए। गौरतलब है कि मोहम्मद नशीद लोकतांत्रिक तरीके से चुनकर आए थे उन्होंने चुनाव में अपने प्रतिद्वंद्वी ममून अब्दुल गयूम को पराजित किया था। 2008 में हुए राष्ट्रपति चुनाव में मोहम्मद नशीद को 54 फीसदी मत मिले थे जबकि ममून अब्दुल गयूम को 46 फीसदी मत प्राप्त हुए थे। अब्दुल गयूम 1978 से मालदीव के राष्ट्रपति थे।

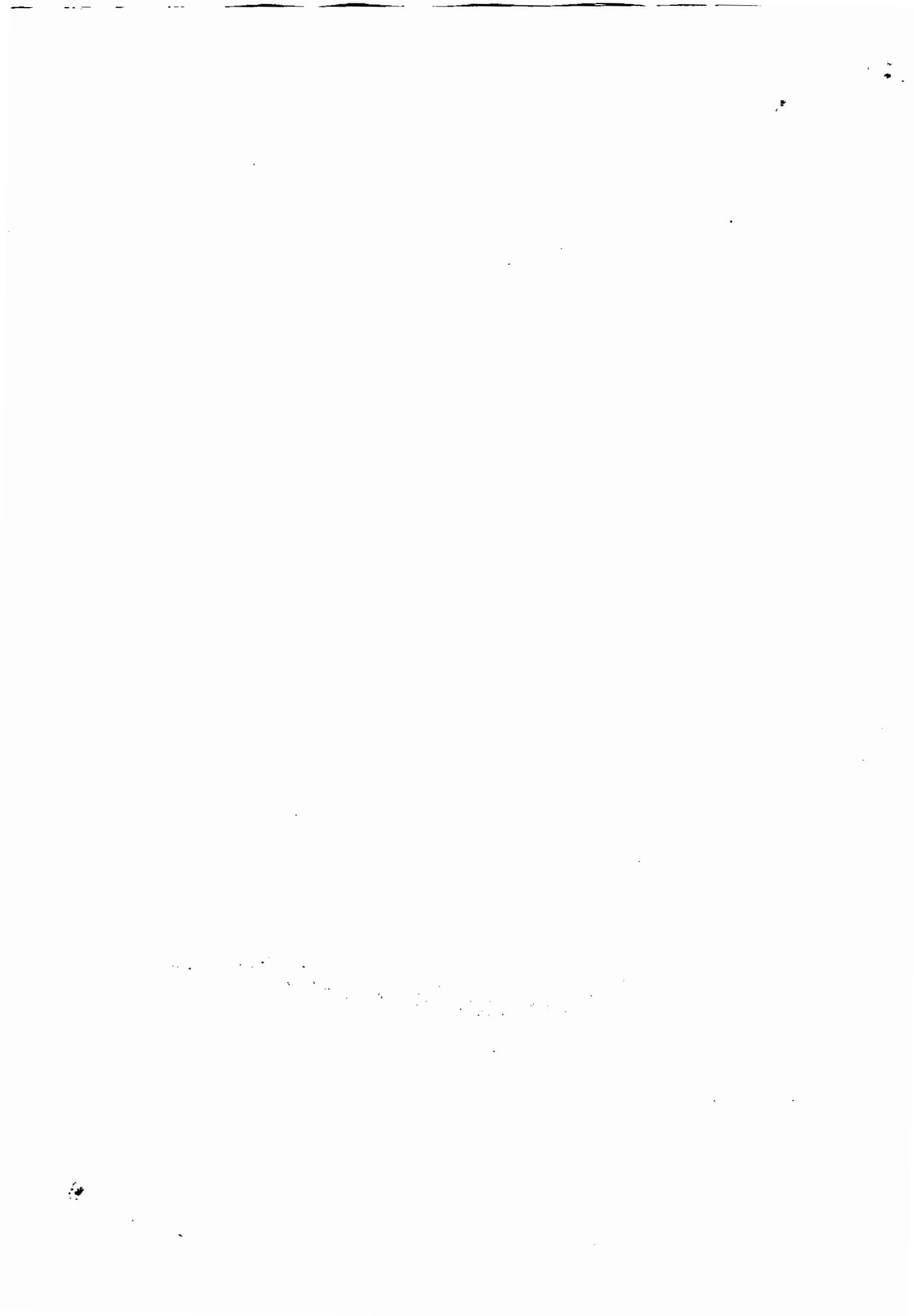
मालदीव में 1978 के बाद 6 बार राष्ट्रपति का चुनाव हुआ लेकिन कोई भी व्यक्ति गयूम के खिलाफ चुनाव में खड़ा नहीं हुआ। इसके कारण तीस सालों तक अब्दुल गयूम ही मालदीव के राष्ट्रपति बने रहे। उन पर अपने विपक्षियों को दबाने का आरोप लगाता रहा। मानवाधिकार कार्यकर्ता मोहम्मद नशीद को भी गयूम का विरोध करने के कारण जेल जाना पड़ा था लेकिन अखिरकार नशीद ने गयूम को लोकतांत्रिक तरीके से चुनौती दी तथा उन्हें चुनाव में भी हरा दिया। पूर्व राष्ट्रपति गयूम की स्थिति बहुत कमजोर नहीं हुई है। सरकार में अभी तक उनके समर्थक मजबूत स्थिति में हैं। मोहम्मद नशीद लोकतंत्र के समर्थक रहे हैं तथा सामाजिक-राजनीतिक और धार्मिक क्षेत्र में अनेक सुधार किए जिसके कारण उनके दुश्मनों की संख्या बढ़ गई। चूँकि मालदीव एक इस्लामिक राष्ट्र है और नशीद एक उदारवादी लोकतांत्रिक राष्ट्रपति थे। इस कारण कट्टरपंथियों ने कभी उन्हें पसंद नहीं किया। मौजूदा विवाद का कारण भी न्यायपालिका में सुधार की कोशिश ही है। न्यायपालिका ने कट्टरता तथा आतंकवाद से जुड़े कतिपय मामलों में धार्मिक

आग्रहों के प्रति सहानुभूति दिखाई थी। मोहम्मद नशीद ने एक वरिष्ठ न्यायाधीश को भ्रष्टाचार और विपक्ष से सहानुभूति रखने के आरोप में पद से हटाने तथा गिरफ्तार करने का आदेश दिया।

इसके बाद पहले मानवाधिकार कार्यकर्ताओं ने और बाद में अन्य लोगों ने प्रदर्शन किया। लेकिन मुख्य वजह कुछ और ही थी। ग़रूम समर्थक नशीद को पदच्युत करना चाहते थे। हालांकि राष्ट्रपति वाहिद हसन ने राष्ट्रीय सरकार बनाने की बात कही है और सैन्य तख्तापलट की संभावना से इंकार किया है। लेकिन आगे उनकी रणनीति क्या होगी इस पर नज़र रखना भारत के लिए ज़रूरी है। अगर मालदीव कट्टरपंथियों के नियंत्रण में जाता है तो हमारे पड़ोसी देश इसका फायदा उठा सकते हैं। भारत ने वहाँ की घटनाओं पर नज़र न रखकर पहले ही गलती कर दी है अब आगे भी गलती करता रहा तो एक और पड़ोसी देश में इसके हितों के विरुद्ध आवाज़ उठने लगेगी। मालदीव की राजनीतिक स्थिरता और सत्ता का उदारवादी दृष्टिकोण भारत के लिए ज़रूरी है। भारत के समक्ष एक चुनौती आ गई है जिससे निपटना ही होगा।

चीन, मालदीव में एक पनडुब्बी अड्डा (Submarine Base) बनाना चाहता है। पाकिस्तान, चीन की इस योजना को वास्तविक रूप देने के लिए मालदीव पर दबाव डालता रहा है। चीन ने मालदीव के सन्दर्भ में पाकिस्तान का इस्तेमाल इस्लामिक कार्ड (Islamic Card) की तरह किया है। यह एक सच्चाई है कि चीन आज मालदीव का एक मजबूत आर्थिक भागीदार देश बन गया है। आने वाले दिनों में मालदीव, चीनी निवेश, व्यापार एवं सद्भाव पर निर्भर बना रहेगा भले ही भारत ने निवेश, व्यापार या आर्थिक सहायता बढ़ाने का निर्णय लिया हो।





भारत-अफगानिस्तान संबंध (India-Afghanistan Relations)

*** (इस टॉपिक का संबंध मुख्य परीक्षा के प्रश्नपत्र-2 के विषय संख्या 17 से है। 'दृष्टि' द्वारा वर्गीकृत पाठ्यक्रम के 15 खंडों में से इसका संबंध भाग-7 से है।)

द्विपक्षीय संबंधों का ऐतिहासिक संदर्भ (Historical Perspective of Bilateral Relations)

प्राचीन काल से ही भारत के अफगानिस्तान के साथ आर्थिक-सांस्कृतिक संबंध रहे हैं परन्तु 1996 से 2001 के बीच तालिबान शासन के दौरान संबंधों में शिथिलता विद्यमान रही। नेपाल से IC-814 विमान का अपहरण और इसके पश्चात कुछ कुख्यात आतंकवादियों को छुड़वाने की तालिबान शासन की माँग इसका ज्वलंत उदाहरण है। तालिबान शासन की समाप्ति के बाद भारत ने अफगानिस्तान से अपने संबंधों को प्रगाढ़ करना शुरू किया। 1979 में सोवियत संघ ने अफगानिस्तान को वैश्विक स्तर पर भू-राजनीतिक महत्व प्रदान किया। आर्थिक रूप से भी इसका महत्व लोगों को महसूस हुआ। अफगानिस्तान की सीमाएँ उत्तर में तेल एवं खनिज में समृद्ध मध्य एशियाई गणराज्यों तथा पूर्व में पाकिस्तान के साथ, पश्चिम में ईरान के साथ उत्तर-पूर्व में चीन के साथ लगती हैं। अफगानिस्तान को महत्व भारत के लिए आर्थिक एवं रणनीतिक दृष्टिकोण से है। 2001 में अफगानिस्तान से तालिबान शासन की समाप्ति के उपरान्त भारत ने अफगानिस्तान को कई तरह की मदद दी है। बस-एक विमान की आपूर्ति की तथा पुलिस, सेना और नौकरशाही आदि को प्रशिक्षण दिया है। इसके अतिरिक्त भारत ने वहाँ स्कूल, अस्पताल और संचार नेटवर्क स्थापित करने में मदद की है।

अफगानिस्तान के संदर्भ में भारत की विदेश नीति कई कारकों से निर्धारित होती है, जिसमें इस क्षेत्र में पाकिस्तान के प्रभाव को कम करना सबसे प्रमुख है। भारत मध्य एशियाई गणराज्यों के तेल भण्डारों व बाजारों तक पहुंचने के लिए अफगानिस्तान को एक मुख्य व्यवसायिक मार्ग के रूप में देखता है। इस्लामाबाद और तालिबान के बीच संबंधों ने भारत को अत्यधिक परेशान किया है। तालिबान शासन ने कश्मीर में भारत-विरोधी अलगाववादी तत्वों को समर्थन प्रदान किया था।

भारत अफगानिस्तान के संबंध 2005 में उच्च स्तर पर पहुंच गया। उसी वर्ष भारत के प्रधानमंत्री डॉ॰ मनमोहन सिंह एवं अफगानिस्तान के राष्ट्रपति हमिद करजई ने क्रमशः एक-दूसरे देश की यात्रा की तथा दोनों देशों के बीच नियमित तौर से राजनीतिक आदान-प्रदान पर सहमति व्यक्त की गई। दोनों नेताओं ने इस बात पर बल दिया कि इस क्षेत्र में शांति व स्थिरता बनाए रखने के लिए एक प्रभुत्वसंपन्न स्थिर लोकतांत्रिक व समृद्ध अफगानिस्तान आवश्यक है। उन्होंने आतंकवाद को लोकतंत्र के लिए खतरा बताया तथा यह घोषणा की कि ऐसे देशों के साथ कोई समझौता नहीं किया जाएगा जो आतंकवाद को शरण एवं प्रोत्साहन दे रहे हैं। भारत के प्रधानमंत्री ने अफगानिस्तान के पुनर्निर्माण (Reconstruction) के प्रति भारत की प्रतिबद्धता स्पष्ट की।

भारत ने अफगानिस्तान सरकार एवं वहाँ की जनता का इस बात के लिए आभार व्यक्त किया कि वे वहाँ पुनर्निर्माण एवं आर्थिक विकास की चुनौतियों का सामना करते हुए लोकतंत्र एवं शांति स्थापित करने का प्रयास कर रहे हैं। राष्ट्रपति हमिद करजई ने मूलभूत संरचना, मानवतावादी सहायता, संस्थात्मक एवं मानव संसाधन विकास के लिए 500 करोड़ डॉलर से भी अधिक धनराशि की सहायता के लिए भारत के प्रति आभार प्रकट किया है।

भारत-अफगानिस्तान के बीच कृषि एवं स्वास्थ्य से संबंधित समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए। अफगानिस्तान विकास कार्यक्रमों में स्थानीय समुदायों की भागीदारी के लिए लघु विकास परियोजनाओं (Small Development Projects – SDPs) की शुरुआत की गई है। दोनों देशों ने काफेडरेशन ऑफ इण्डियन इंडस्ट्री (Confederation of Indian Industry – CII) तथा संयुक्त राष्ट्र की सोझेदारी के साथ अफगानिस्तान में कौशल निर्माण अभिक्रम (Skill Building Initiative) की शुरुआत करने पर खुशी व्यक्त की। भारत, अफगानिस्तान के 100 गाँवों में एकीकृत ग्रामीण विकास को बढ़ावा देने के लिए भारत में पूर्ण रूप से विकसित सौर विद्युतीकरण (Solar Electrification) एवं वर्षा जल उपयोग (Rain Water Harvesting) तकनीक का आरंभ करेगा। भारत ने महिलाओं के लिए 1000 सिलाई मशीनों को भेंट करने के साथ ही महिलाओं के लिए व्यवसायिक केंद्र खोलने में मदद करने का आश्वासन दिया है।

अफगानिस्तानी सेना एवं अधिकारियों के प्रशिक्षण के लिए भारतीय संस्थाओं के प्रयोग करने संबंधी हामिद करजई के विचार का भारत ने स्वागत किया। मानव संसाधन विकास की प्रक्रिया को तेज करने के लिए भारत ने विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा प्राप्ति हेतु अफगानिस्तानी छात्रों के लिए 500 छात्रवृत्तियों की घोषणा की और इसके अलावा अफगानिस्तानी पुरुषों एवं महिलाओं के लिए भारतीय तकनीकी एवं आर्थिक सहयोग (Indian Technical and Economic Cooperation – ITEC) कार्यक्रम के अन्तर्गत 500 अल्पकालीन प्रशिक्षण अध्येतावृत्तियों (Fellowships) की घोषणा की। शिक्षा क्षेत्र दोनों देशों के बीच दीर्घकालीन सहयोग का उदाहरण है। युद्ध में छतिग्रस्त 102 वर्ष पुराने हबीबिया स्कूल के पुनर्निर्माण में भारत ने भागीदारी की है।

अफगानिस्तान की लोकतान्त्रिक व्यवस्था को मजबूती प्रदान करने के लिए लोकतान्त्रिक संस्थाओं के निर्माण एवं उनकी मजबूती के लिए साथ मिलकर कार्य करने हेतु दोनों देशों ने सहमति व्यक्त की। भारत ने अफगानिस्तान में लोकतान्त्रिक चुनावों का स्वागत किया है। इस हेतु सरकारी अधिकारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई है। नई संसद के निर्माण हेतु भारत ने 25 मिलियन अमेरिकी डॉलर की सहायता की है।

भारत-अफगानिस्तान के शांतिप्रयत्नों की बैठक के दौरान (2005) अफगानिस्तान के राष्ट्रपति ने मध्य एशिया एवं भारतीय उपमहाद्वीप के बीच अफगानिस्तान से होकर जाने वाले सड़क मार्ग के ऐतिहासिक महत्व को स्पष्ट किया। प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने इस दृष्टिकोण को दोनों देशों के मध्य व्यापार और जनता के बीच संपर्क कायम करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना है। इसी संदर्भ में राष्ट्रपति हामिद करजई ने दक्षिण एशिया के साथ अफगानिस्तान के आर्थिक एकीकरण के लिए सार्क (SAARC) की सदस्यता प्राप्त करने में रुचि दिखाई और तापी गैस पाइपलाइन (Turkmenistan-Afghanistan-Pakistan-India Gas Pipeline – TAPI) परियोजना के लिए परामर्श और सहयोग की आवश्यकता पर बल दिया। पुराने संबंधों को मजबूती देने और इक्कीसवीं सदी में नई साझेदारी का विकास करने में दोनों देशों के सामान्य हित शामिल हैं। इस बात को दोनों देशों ने समझा है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि 9/11 के पश्चात् भारत-अफगानिस्तान संबंधों में काफी सुधार हुआ है। अफगानिस्तान के पुनर्निर्माण में भारत ने कई तरह से योगदान किया है। जनवरी 2007 में भारत के विदेशमंत्री प्रणव मुखर्जी ने अफगानिस्तान की दो दिवसीय यात्रा के दौरान कहा कि भारत-अफगानिस्तान संबंध तीव्र गति से प्रगति कर रहे हैं और भारत को इस बात की खुशी है कि वह अफगानिस्तान के पुनर्निर्माण में सहयोग कर रहा है। इस अवसर पर दोनों देशों ने कई महत्वपूर्ण समझौते किए। भारत ने अफगानिस्तान को आधारभूत संरचना, संचार, कर्मचारियों के प्रशिक्षण, आर्थिक विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं समाज कल्याण के क्षेत्र में सहयोग करने का आश्वासन दिया। इसके अलावा भारत ने सड़क, पुल व रेल निर्माण तथा लगभग 500 करोड़ की लागत वाली सलमा डैम जलविद्युत परियोजना (Salma Dam Hydro Power Project) में भी निवेश का वादा किया। उल्लेखनीय है कि 2007 में अफगानिस्तान को सार्क (South Asian Association for Regional Cooperation – SAARC) की सदस्यता प्रदान कर दी गई। अब सार्क में 8 सदस्य देश हैं। इससे भारत-अफगानिस्तान संबंधों को बल मिला है। अगस्त 2008 में अफगानिस्तान के राष्ट्रपति हामिद करजई भारत आए और भारत के प्रधानमंत्री के साथ वार्ता की। इस वार्तालाप में द्विपक्षीय सहयोग को बढ़ाने तथा अफगानिस्तान के पुनर्निर्माण हेतु आर्थिक मदद की बात शामिल थी। अगस्त 2009 में अफगानिस्तान में राष्ट्रीय चुनाव हुए। इस विवादास्पद चुनाव में हामिद करजई विजयी रहे। देश के अंदर एवं बाहर इस चुनाव प्रक्रिया की निंदा की गई। संतोष की बात यह रही कि इस चुनाव से भारत-अफगानिस्तान संबंध प्रभावित नहीं हुए।

भारतीय विदेश नीति के समक्ष प्रमुख चुनौतियाँ

(Major Challenges before Indian Foreign Policy)

- ♦ सुरक्षा (Security) – अफगानिस्तान में कार्य कर रहे भारतीयों की सुरक्षा सुनिश्चित करना भारतीय विदेशी नीति की सबसे बड़ी चुनौती है। आतंकवादी आत्मघाती बम-विस्फोट निरंतर करते रहते हैं। वहाँ कार्यरत भारतीयों पर इनका विपरीत प्रभाव पड़ता है और इससे वे हतोत्साहित हो जाते हैं। अफगानिस्तान में कार्यरत भारतीयों के अगवा किये जाने और उनकी हत्याओं के अलावा जुलाई 2008 में भारतीय दूतावास पर हुए आत्मघाती हमले ने भारतीयों की चिंता बढ़ा दी। विश्वसनीय सुरक्षा के अभाव में विकास कार्यों में अवरोध पैदा हो रहा है तथा परियोजनाओं के खर्च में बढ़ोतरी भी हो रही है।
- ♦ परिवहन सुविधाओं की कमी (Lack of Transport Facilities) – अफगानिस्तान तक श्रमिकों और सामग्रियों को पहुँचाना काफी कठिन रहा है। पाकिस्तान के रास्ते इन्हें पहुँचाना काफी सरल हो सकता है लेकिन वर्तमान राजनीतिक स्थितियों में ऐसा सोचना व्यर्थ है। परिवहन सुविधाओं की कमी से योजनाओं को पूरा करना काफी खर्चीला और कठिन साबित हो रहा है।
- ♦ ड्रग ट्रेड (Drug Trade) – अव्यवस्थित कानून व्यवस्था के बीच ड्रग ट्रेड ने स्थिति को और अधिक दयनीय बना दिया है। इससे भ्रष्टाचार और अराजकता की संस्कृति अपने पैर जमाती जा रही है।
- ♦ मानव विकास एवं क्षमता निर्माण (Human Development and Capacity Building) – अफगानिस्तान की कार्यकारी क्षमता बहुत कम है। ऐसा वर्षों से मानव विकास और क्षमता निर्माण की कमी के चलते है। भारत द्वारा किये जा रहे विकास

कार्यों की देखरेख करने के लिए समुचित और योग्य अफगान नागरिकों की कमी है।

- ❖ पाकिस्तानी तत्व (Pakistani Elements) – तत्कालीन तालिबान सरकार के साथ पाकिस्तान के संबंध काफी अच्छे थे। अफगानिस्तान और भारत के बीच अच्छे संबंध पाकिस्तान को अच्छे नहीं लगते हैं। इसी कारण पाकिस्तान अपनी भूमि से होकर जाने के लिए भारत को मार्ग उपलब्ध नहीं करवाता है। ऐसा सबूत भी पाया गया है कि अफगानिस्तान में भारतीय हितों से जुड़े स्थलों पर हमलों के पीछे पाकिस्तान का पूरा सहयोग है।

अफगानिस्तान का भारत के लिए महत्त्व (Importance of Afghanistan for India)

इस बात में संदेह नहीं है कि भारत को अफगानिस्तान के अंदर विकास कार्यों को पूरा करने में अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है लेकिन साथ ही यह भी सत्य है कि अफगानिस्तान के साथ कार्य करने से भारत को इस क्षेत्र में अपने प्रभाव का विस्तार करने का भी मौका मिला है। इसके अलावा अफगान सरकार के साथ अपने मैत्रीपूर्ण संबंधों का लाभ उठाकर भारत-तालिबान सरकार के समय में हुए नुकसान की क्षतिपूर्ति भी कर सकता है।

- ❖ सामरिक हित (Strategic Interest) – सामरिक दृष्टिकोण से अफगानिस्तान, भारत के लिए काफी महत्वपूर्ण है। दक्षिण-पश्चिम और मध्य-एशिया में अपनी भू-सामरिक अवस्थिति के चलते अफगानिस्तान का महत्व बढ़ जाता है। अफगानिस्तान में भारत की प्रभावी उपस्थिति मध्य-एशिया और दक्षिण एशिया में चीन और अमेरिका के प्रभाव को कम कर सकती है। साथ ही भारत उस आतंकवाद का सामना करने में समर्थ होगा जो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से भारत के हितों को क्षति पहुंचा रहा है। अफगानिस्तान के साथ सहयोग कर भारत इस क्षेत्र में पाकिस्तानी प्रभाव को नियंत्रित कर सकता है।

- ❖ मध्य-एशिया पर प्रभाव (Effect on Central Asia) – भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए तेल और खनिज से सम्पन्न मध्य-एशिया काफी महत्व रखता है ऐसी स्थिति में अफगानिस्तान मध्य-एशिया और भारत के बीच सेतु (Bridge) का काम कर सकता है। भारत, तापी (TAPI) गैस पाइप लाइन परियोजना में शामिल होकर मध्य-एशिया में सक्रिय होना चाहता है। भारत ने अफगानिस्तान-ताजिकिस्तान सीमा पर फरखोर (Farkhor) में एक अस्पताल की स्थापना की है और उजबेकिस्तान से काबुल (अफगानिस्तान) तक विद्युत ऊर्जा लाने के लिये पुल-ए-खुमरी (Pul-E-Khumri) से काबुल तक ट्रांसमिशन लाइन का निर्माण कर रहा है। आयनी में सैनिक अड्डे की स्थापना के साथ ही भारत रूस, जर्मनी, अमेरिका के अलावा मध्य-एशिया में सैनिक अड्डा रखने

भारत-अफगानिस्तान संबंधों में सकारात्मक बिंदु

(Positive Points in India-Afghanistan Relations)

1. भारत एवं अफगानिस्तान के बीच प्राचीन काल से ही ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक संबंध रहे हैं। अफगानिस्तान में तालिबान के सत्ता में आने के बाद दोनों देशों के आपसी संबंधों में शिथिलता आ गयी थी। इंडियन एयरलाइंस के आईसी-814 विमान को अपहृत कर कंधार ले जाने के बाद दोनों देशों के मध्य संबंध निम्नस्तर पर आ गए थे।
2. अफगानिस्तान पर अमेरिकी आक्रमण के दौरान भी भारत ने अफगानिस्तान में उत्तरी गठजोड़ (Northern Alliance) को समर्थन दिया। भारत ने तालिबान के पतन का स्वागत किया तथा हामिद करज़ई सरकार को समर्थन दिया। भारत एक स्थिर, शांतिपूर्ण एवं लोकतांत्रिक अफगानिस्तान के हक में है। ऐसा ही भारत के हित में भी है क्योंकि अस्थिरता से आतंकवाद को बढ़ावा मिलेगा जो अंततः भारत के लिए हानिकारक होगा।
3. अफगानिस्तान में भारत अनेक विकास परियोजनाएँ चला रहा है। इनमें जल विद्युत, सड़क निर्माण, कृषि, उद्योग, दूरसंचार, शिक्षा और स्वास्थ्य आदि से संबंधित परियोजनाएँ शामिल हैं। भारत ने अफगानिस्तान की ससुर को बनाने में भी मदद की है। भारत ने अफगानिस्तान के 1100 गांवों को गाँव लेकर वहाँ एकीकृत ग्रामीण विकास (Integrated Rural Development) की घोषणा की है। भारत ने अफगानिस्तानी महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के लिए अफगानिस्तान को 10,000 सिलाई मशीनें उपलब्ध कराई है।
4. यातायात संबंधों को बेहतर बनाने के लिए नागरिक विमानन (Civil Aviation) के क्षेत्र में एक समझौता किया गया है। इसके अलावा मोडिया एवं सुबानो के क्षेत्र में सहयोग करने के लिए भी एक मसौदे पर हस्ताक्षर किए गए हैं। इस मसौदे की दोनों देशों के मोडिया कमिश्नरी, टीवी तथा रेडियो संगठनों के बीच काफी विचार-विमर्श के बाद अंतिम रूप दिया गया है।
5. आम अफगानिस्तानी भारतीयों की सम्पत्ति को दूष्ि से देखता है। भारत का पुनर्रचना उद्योग विशेषकर टीवी, सीरियल तथा हिन्दी सिनेमा अफगानिस्तान में बहुत लोकप्रिय है।
6. अनेक भारतीय अफगानिस्तान की विकास परियोजना में कार्यरत हैं। भारतीय संगठन जैसे सीमा सड़क संगठन (Border Road Organisation - BRO) अफगानिस्तान की सड़क निर्माण परियोजनाओं में शामिल है।
7. अफगानिस्तान की सार्क (SAARC) सदस्यता का भी भारत ने स्वागत किया था। अफगानिस्तान की सार्क में उपस्थिति भारत के लिए फायदेमंद होगी क्योंकि भारत के पास एक ऐसा सहयोगी हो जाएगा जो संभवतः किसी भी मुद्दे पर भारत का साथ देगा। आतंकवाद के मुद्दे पर भी अफगानिस्तान, भारत के दृष्टिकोण का समर्थन करता है।
8. विशेषकर पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवाद से दोनों ही देश पीड़ित हैं और यह मानते हैं कि पाकिस्तान को अपनी भूमि से आतंकवाद को मिटाने के सार्थक प्रयास करने चाहिए।
9. शिक्षा के क्षेत्र में भी बेहतर सहयोग किया जा रहा है। भारत ने हबीबिया स्कूल (Habibia School) के पुनर्निर्माण में अफगानिस्तान की सहायता की है। इसके अलावा अफगानिस्तान के छात्रों के लिए भारत ने 1000 छात्रवृत्तियाँ प्रदान करने की घोषणा की है।

वाला चौथा देश बन गया है।

- ❖ **पाकिस्तान पर नियंत्रण (Control on Pakistan)**— अफगानिस्तान में पाकिस्तान के सामरिक हित हैं। उसने हमेशा तालिबान को संरक्षण प्रदान किया है और अफगानिस्तान का उपयोग भारत के विरुद्ध करता रहा है। अफगानिस्तान में भारत के प्रभाव में वृद्धि से भारत के प्रति दुर्भावनापूर्ण गतिविधियों पर रोक लगेगी।

भारत, अफगानिस्तान में उल्लेखनीय भूमिका अदा कर रहा है। यद्यपि अफगानिस्तान में काम करना भारत के लिये चुनौतियों से भरा हुआ है लेकिन यहाँ कार्य करके भारत को जो अवसर प्राप्त हो रहे हैं भारत उन्हें नजरअंदाज नहीं कर सकता। भारत को समक्ष अपने सामरिक लक्ष्यों को पूरा करने का एक अच्छा अवसर है। भारत का भविष्य में एक क्षेत्रीय और वैश्विक शक्ति के रूप में उभरना इस बात पर भी निर्भर करता है कि वह अफगान क्षेत्र में अपनी भूमिका का निर्वहन किस प्रकार करता है।

भारत अफगानिस्तान संबंधों का हालिया परिदृश्य (Current Perspective of India-Afghanistan Relation)

(i) भारत-अफगानिस्तान सामरिक भागीदारी समझौता (India-Afghanistan Strategic Partnership Agreement)

भारत तथा अफगानिस्तान के बीच ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक संबंध रहे हैं। भारत एवं अफगानिस्तान के बीच जनवरी 1950 में मैत्री सन्धि की गई थी। विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग की समृद्ध एवं सार्थक परम्परा (Rich and Fruitful Tradition of Cooperation) का पालन करते हुए एवं इनका और विस्तार करने के लिए दोनों देशों ने 4 अक्टूबर, 2011 को सामरिक भागीदारी समझौते पर हस्ताक्षर किये। दोनों देश शांति, लोकतंत्र, विधि के शासन, अहिंसा, मानवाधिकार, स्वतंत्रता, अंतर्राष्ट्रीय कानून एवं संयुक्त राष्ट्र चार्टर के सिद्धान्तों के प्रति वचनबद्ध हैं। इस सामरिक समझौते से यह माना जा रहा है कि दोनों देशों के बीच आने वाले वर्षों में राजनैतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में संबंध और गहरे होंगे। सामरिक समझौते में निम्नलिखित प्रावधान किए गए हैं।

सामान्य सिद्धांत (General Principles)

- आपसी समझ तथा दीर्घवधिक विश्वास पर आधारित इस समझौते में दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय तथा अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में बहुआयामी संबंधों (Multifaceted Ties) को उच्चतर स्तर पर ले जाने की परिकल्पना की गई है।
- दोनों देशों के बीच रणनीतिक सहभागिता दोनों राष्ट्रों की संप्रभुता, समानता एवं क्षेत्रीय अखंडता, एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में अहस्तक्षेप, पारस्परिक सम्मान तथा आपसी लाभ के सिद्धांतों पर आधारित है।
- दोनों देशों के बीच रणनीतिक सहभागिता किसी अन्य राष्ट्र अथवा राष्ट्रों के समूह के विरुद्ध निर्देशित नहीं है।

राजनैतिक एवं सुरक्षा सहयोग (Political and Security Cooperation)

- दोनों देश राजनैतिक सहयोग तथा नियमित द्विपक्षीय राजनैतिक एवं विदेश मंत्रालय स्तरीय परामर्शों के लिए तंत्र (Mechanism) स्थापित करेंगे। राजनैतिक परामर्श दोनों देशों के विदेश मंत्रियों के नेतृत्व में किया जाएगा और वर्ष में कम से कम एक बार विदेश मंत्री स्तरीय परामर्श बैठक आयोजित की जाएगी।
- दोनों देश संयुक्त राष्ट्र संधि तथा अन्य अंतर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय मंचों पर परामर्श एवं सहयोग करने के लिए सहमत हुए हैं। ऐसे सहयोग का उद्देश्य इन मंचों पर दोनों देशों के हित में निर्णय लेने को प्रोत्साहित करना है। संयुक्त राष्ट्र एवं अंतर्राष्ट्रीय सहयोग में निम्नलिखित प्रावधान शामिल होंगे।

(क) मुख्य क्षेत्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर संयुक्त पहल (Joint Initiative),

(ख) सुरक्षा परिषद में भारत की स्थायी सदस्यता सहित संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधार एवं विस्तार के लिए समर्थन।

- दोनों देश राष्ट्रीय सुरक्षा के क्षेत्र में सहयोग के लिए संरचना (Framework for Cooperation) विकसित करने हेतु रणनीतिक वार्ता (Strategic Dialogue) करने के लिए सहमत हैं। यह वार्ता राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकारों (National Security Advisors - NSAs) के नेतृत्व में होगी। इसमें क्षेत्रीय शांति एवं सुरक्षा को मजबूत बनाने के लिए आपसी प्रयास तेज करने के उद्देश्य से नियमित परामर्श (Regular Consultations) शामिल है।

- दोनों देशों के बीच सुरक्षा सहयोग का आशय अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद (International Terrorism), संगठित अपराध (Organized Crime), नशीले पदार्थों की अवैध तस्करी (Illegal Trafficking of Narcotics) तथा पनी लॉन्डिंग (Money Laundering) इत्यादि पर रोक लगाने के लिए आपसी प्रयासों में सहायता करना है।
- भारत, अफगान राष्ट्रीय सुरक्षा बलों (Afghan National Security Forces) के प्रशिक्षण, शस्त्रबद्ध एवं क्षमता निर्माण कार्यक्रमों (Training, Equipping and Capacity Building Programmes) के लिए सहायता करने हेतु सहमत हुआ है।

व्यापार एवं आर्थिक सहयोग (Trade and Economic Cooperation):

- दोनों देशों ने व्यापारिक, आर्थिक, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकीय सहयोग के साथ व्यापार एवं आर्थिक संबंधों का विस्तार करने के लिए व्यापार एवं उद्योग प्रतिनिधियों के अन्य निकायों (Other Bodies of Business and Industry Representatives) के बीच सहयोग को मजबूत बनाने के लिए प्रतिबद्धता प्रकट की है।
- अफगानिस्तान के सतत विकास के हित में तथा दोनों देशों के बीच आर्थिक अंतर्निर्भरता को बढ़ावा देने के लिए दोनों पक्ष कृषि, ग्रामीण विकास, खनन, उद्योग, ऊर्जा, सूचना प्रौद्योगिकी, संचार और परिवहन जैसे क्षेत्रों में सहयोग को मजबूत करने एवं विविधीकरण (Deepening and Diversifying Cooperation) करने के लिए वचनबद्ध हैं जिसमें नागर विमानन (Civil Aviation) तथा दोनों देशों की सहमति से निर्धारित किए जाने वाले अन्य क्षेत्र भी शामिल हैं।
- दोनों देश व्यापार एवं निवेश को संवर्धित करने के लिए (To Promote Trade and Investment) अनुकूल परिवेश (Favourable Environment) स्थापित करने हेतु प्रभावशाली उपाय करने के लिए सहमत हैं। इन उपायों में अन्य बातों के अलावा निम्नलिखित शामिल होंगे:
 - (क) निवेश सुरक्षा संवर्धित करना;
 - (ख) सीमा शुल्क एवं अन्य प्रक्रियाओं को सरल बनाना तथा गैर-शुल्क अवरोध (Non-tariff Barriers) को दूर करने के लिए प्रोत्साहित करना तथा धीरे-धीरे प्रशुल्क अवरोध (Tariff Barriers) को कम करना;
 - (ग) वाणिज्यिक आदान-प्रदान के संवर्धन के लिए एयर कर्गो सुविधाएँ (Air Cargo Facilities) विकसित करने के लिए कार्य करना;
 - (घ) बैंकिंग एवं वित्त के क्षेत्रों में सहयोग करना तथा ऋण एवं बीमा सुविधाओं (Credit and Insurance Facilities) में सुधार करना; और
 - (ङ) अंतर्राष्ट्रीय व्यापार (International Trade) आर्थिक एवं वित्तीय निकायों (Economic and Financial Bodies) में सहयोग एवं समन्वय संवर्धित करना।
- द्विपक्षीय व्यापार एवं आर्थिक संबंधों में सतत विकास करने के लिए दोनों देश भारतीय एवं अफगानी निकायों के बीच आदान-प्रदान के लिए प्रभावशाली संरचना स्थापित करने पर राजी हुए। विशेष उपायों में निम्नलिखित शामिल होंगे:
 - (क) दोनों देशों के बीच व्यापारिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक सहयोग संवर्धित करने के लिए क्षेत्र/प्रान्तों के बीच सम्पर्क बढ़ाना।
 - (ख) दोनों देशों के संबन्धित निकायों को अन्य देशों के साथ क्षेत्रीय व्यापार समझौतों की सुभावनाओं का संयुक्त रूप से पता लगाने के लिए आदेश दिया गया है।
 - (ग) गुणवत्ता आश्वासन एवं मानकीकरण संस्थानों (Institutions of Quality Assurance and Standardization) तथा नई प्रौद्योगिकी से संबन्धित संस्थानों के बीच सहयोग संवर्धित करके अपनी वस्तुओं की गुणवत्ता तथा अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा (International Competitiveness) को और संवर्धित करना।
 - (घ) दोनों देशों के वाणिज्य और उद्योग संघों के बीच अधिक से अधिक सहयोग को प्रोत्साहित करना।
- इस बात को स्वीकार करते हुए कि क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग प्रत्येक राष्ट्र की भावी आर्थिक समृद्धि के लिए महत्वपूर्ण है, दोनों देश क्षेत्रीय संगठनों के माध्यम से क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग करने के लिए सहमत हुए हैं। क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग में निम्नलिखित पहलु शामिल होंगे:
 - (क) मध्य एवं दक्षिण एशिया (Central and South Asia) को जोड़ने वाले व्यापार, परिवहन एवं ऊर्जा केन्द्र (Trade Transportation and Energy Hub) के रूप में उभरने में अफगानिस्तान की सहायता करना तथा परिवहन एवं पारगमन संपर्कों (Transport and Transit Linkages) को और मजबूत बनाने में सहायता करना।
 - (ख) क्षेत्रीय अवसंरचना परियोजनाओं (Regional Infrastructure Projects) के विकास पर ध्यान केन्द्रित करना।
 - (ग) आपसी लाभ के लिए अफगानी एवं भारतीय उत्पादों के लिए बाजार खोलकर दक्षिण एशियाई एवं वैश्विक अर्थव्यवस्थाओं के साथ अफगानी अर्थव्यवस्था के एकीकरण को सुविधाजनक बनाने में सहायता करना।

(घ) सार्क (SAARC) के सदस्य के नाते क्षेत्रीय सहयोग को मजबूत बनाना।

क्षमता विकास और शिक्षा (Capacity Development and Education):

- अफगानिस्तान के स्थायी विकास के हित में एवं अफगानिस्तान में भारत द्वारा चलाये जा रहे मौजूदा सहायता कार्यक्रम से लाभ उठाने के मद्देनजर भारत ने अफगानिस्तान में विकास एवं क्षमता निर्माण (Development and Capacity Building) प्रयासों में अपनी सहायता जारी रखने के लिए प्रतिबद्धता व्यक्त की है।
- (क) अफगानिस्तान की प्राथमिकताओं के अनुरूप महत्वपूर्ण क्षेत्रों के अतिरिक्त कृषि, खनन (Mining) और स्वास्थ्य क्षेत्रों में भी सहयोग किया जाएगा।
- (ख) भारत सुदूर एवं ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी स्तर पर विकास (Grass-root Level Development) के लिए निर्माणाधीन लघु विकास परियोजनाओं (Small Development Projects – SDPs) का विस्तार करने के लिए भी राजी है।
- दोनों पक्ष दोनों देशों के मंत्रालयों/एजेंसियों के बीच सहयोग बढ़ाकर संस्थागत संपर्कों की स्थापना करने पर भी सहमत हुए हैं। उदाहरण के लिए भारत ने अपनी संस्थागत प्रशासनिक, राजनीतिक एवं आर्थिक प्रणालियों का अनुभव प्रस्तुत किया है जिसका अफगानिस्तान अध्ययन कर सकता है और अपनी आवश्यकताओं एवं वास्तविकताओं (Needs and Realities) के परिप्रेक्ष्य में लाभ उठा सकता है।
- भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् (Indian Council for Cultural Relations – ICCR) के वार्षिक छात्रवृत्ति कार्यक्रम और अफगानिस्तान के लिए उच्च शिक्षा को बढ़ावा देने की व्यापक कार्यनीति के भाग के रूप में भारत, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् (Indian Council for Cultural Relations – ICCR) एवं भारतीय आर्थिक एवं तकनीकी सहयोग (Indian Technical and Economic Cooperation – ITEC) छात्रवृत्ति एवं बहुपक्षीय वित्तपोषण कार्यक्रमों (Multilateral Funded Programmes) के माध्यम से अफगानिस्तान में शिक्षा और प्रशिक्षण अवसरों को बढ़ाना जारी रखेगा।
- (क) भारत अफगानिस्तान की आवश्यकताओं के अनुरूप भारत में चिकित्सा, इंजीनियरी और प्रबंधन संस्थानों में छात्रवृत्तियों की संख्या बढ़ाने पर सहमत हुआ है।
- (ख) दोनों देश स्कूल और विश्वविद्यालय स्तर पर छात्रों के वार्षिक आवागमन कार्यक्रमों को बढ़ावा देंगे।
- अफगान सरकार के लिए क्षमता निर्माण सहायता के भाग के रूप में भारत कार्यपालिका, न्यायपालिका एवं विधायिका के विभिन्न विभागों को तकनीकी, प्रशिक्षण एवं अन्य प्रकार से क्षमता निर्माण सहायता जारी रखेगा।
- राष्ट्रीय और उप-राष्ट्रीय स्तरों पर प्रशासन को सुदृढ़ करने की अफगानिस्तान की आवश्यकताओं को देखते हुए भारत ने राष्ट्रीय, राज्य, जिला एवं स्थानीय निकाय स्तरों पर शासन संचालन का अनुभव एवं अफगानिस्तान की वास्तविकताओं के अनुकूल एक स्थायी कैरियर आधारित सिविल सर्विस सेवा (Permanent, Career-based Civil Service) स्थापित करने में तकनीकी सहायता देने पर सहमति व्यक्त की है।

सामाजिक, सांस्कृतिक, सिविल सोसाइटी एवं लोगों के बीच संबंध

(Social, Cultural, Civil Society and People to People Relations):

- दोनों देशों के बीच विद्यमान संबंधों को आगे बढ़ाने के लिए संसद, मीडिया, खेल, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, बौद्धिक एवं धार्मिक हस्तियों के बीच आदान-प्रदान की परिकल्पना की गई है।
- भारत-अफगानिस्तान फाउंडेशन (India-Afghanistan Foundation) के माध्यम से दोनों देश कला, साहित्य, कविता और इसी प्रकार के क्रियाकलापों पर जोर देते हुए सामाजिक एवं सांस्कृतिक संबंधों को बढ़ावा देने और एक-दूसरे की सांस्कृतिक विरासत एवं उपलब्धियों को और उजागर करने पर राजी हुए।
- दोनों देश मीडिया संगठनों के बीच अधिक से अधिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देने पर राजी हुए।
- दोनों देश महिलाओं तथा समाज के गरीब एवं कमजोर वर्गों के उत्थान के लिए कार्य करने के लिए प्रतिबद्ध हैं।
- दोनों देशों ने लोगों के बीच अंतर्क्रिया (Interaction) एवं वैध आवागमन (Legitimate Movement) को प्रोत्साहित करने के लिए यात्रा नियमों एवं प्रक्रियाओं को सरल बनाने पर सहमति जतायी है।
- एक देश के नागरिकों के दूसरे देश में चलने वाले विधिक मामलों (Legal Affairs) को सुविधाजनक बनाने के लिए दोनों देश सिविल एवं फौजदारी मामलों में परस्पर विधिक सहायता हेतु समझौता करने पर सहमत हुए हैं।
- नागरिक समाजों (Civil Societies) के बीच संबंधों को बढ़ावा देने के लिए और विशेषकर बौद्धिक आदान-प्रदान के लिए

दोनों देश विभिन्न क्षेत्रों के छाति-प्राप्त व्यक्तियों को एक-दूसरे के यहाँ आमंत्रित करेंगे।

- दोनों देश खेल के क्षेत्र में सहयोग एवं आदान-प्रदान को बढ़ावा देने पर सहमत हैं।
- दोनों देश केंद्र और प्रांतों के बीच सहभागिता, शक्तियों के विकेंद्रीकरण तथा प्रजातांत्रिक मूल्यों एवं संस्थाओं के संबंध में एक दूसरे के अनुभव से सीख लेने पर सहमत हैं।
- दोनों देश संसदीय शिष्टमंडलों का दौरा आयोजित करने पर सहमत हैं तथा संसदीय मैत्री समूह (Parliamentary Friendship Groups) स्थापित करते हुए संसदीय आदान-प्रदान पर भी सहमत हैं।

कार्यान्वयन तंत्र (Implementation Mechanism):

- यह रणनीतिक भागीदारी एक सहभागिता परिषद (Partnership Council) की देखरेख में कार्यान्वित की जाएगी। दोनों देशों के विदेश मंत्री इसकी अध्यक्षता करेंगे। यह परिषद वार्षिक बैठकें आयोजित करेंगी।
- इस परिषद में संबंधित मंत्रालयों/प्राधिकरणों के उच्च स्तरीय प्रतिनिधियों सहित राजनीतिक एवं सुरक्षा सलाहकार (Political and Security Consultations) व्यापार एवं आर्थिक सहयोग (Trade and Economic Cooperation), क्षमता विकास और शिक्षा (Capacity Building and Education), सामाजिक, सांस्कृतिक एवं सिविल सोसाइटी अंतर्क्रिया (Social, Cultural and Civil Society Interactions) संबंधी चार पृथक संयुक्त कार्यकारी दल शामिल होंगे।
- दोनों पक्षों के बीच मौजूदा वार्ता तंत्र (Consultation Mechanism) इस परिषद के अंग बन जाएंगे।

भारत और अफगानिस्तान 4 जनवरी, 1950 को संपन्न मैत्री संधि की बुनियादी एवं चिरस्थायी भावना को ध्यान में रखते हुए इस सहभागिता को आगे बढ़ाएंगे। इस संधि में उल्लेख है कि दोनों सरकारों के बीच चिरस्थायी शांति एवं मित्रता होगी और दोनों सरकारें अपने-अपने देश के लोगों के बीच विद्यमान मैत्रीपूर्ण संबंधों को बनाये रखने एवं सुदृढ़ करने के लिए प्रयास करेंगी।

(ii) प्रधानमंत्री की अफगानिस्तान यात्रा- 2011 (Prime Minister's Afghanistan Visit - 2011)

12 मई, 2011 को अपनी अफगानिस्तान यात्रा के दौरान डॉ. मनमोहन सिंह ने राष्ट्रपति हमिद करजई के साथ पारस्परिक हित के विभिन्न द्विपक्षीय, क्षेत्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर विस्तृत चर्चा की। दोनों नेताओं ने सदियों से दोनों देशों के बीच विद्यमान ऐतिहासिक और पारस्परिक संबंधों तथा पारस्परिक लाभ के लिए इन संपर्कों को दृढ़िष्ठ एवं विकसित करने हेतु इच्छा जताई।

- दोनों देशों ने अपने बहुआयामी द्विपक्षीय संबंधों को दीर्घाधिक स्वरूप प्रदान करने और आगामी वर्षों में इनका सक्रिय विकास करने पर सहमति व्यक्त की। भारत और अफगानिस्तान ने शांति, लोकतंत्र, समावेशी विकास, विधिसम्मत शासन, अहिंसा, मानवाधिकार एवं स्वतंत्रता के साझे आदर्शों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को पुष्टि की साथ ही दोनों देशों के साथ-साथ इस क्षेत्र और संपूर्ण विश्व की समृद्ध विधिमूर्त आतंकवाद के खतरों को खत्म करने के लिए आपसी प्रतिबद्धता व्यक्त की। दोनों नेताओं ने एक स्वतंत्र, लोकतांत्रिक, स्थिर तथा समृद्ध अफगानिस्तान के संबंध में विचार साझा किए।
- संयुक्त राष्ट्र चार्टर के उद्देश्यों और सिद्धांतों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को पुष्टि करते हुए भारत और अफगानिस्तान ने एक ऐसा सामरिक भागीदारी समझौता करने का निर्णय लिया जिसमें आपसी हित के सभी क्षेत्रों को शामिल किया गया हो। एक दूसरे के प्रति समझ और विश्वास के आधार पर निर्मित इस भागीदारी को द्विपक्षीय और अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में उच्च स्तर पर ले जाने की परिकल्पना की गई है। दोनों देशों के बीच सामरिक भागीदारी संप्रभुता, समानता, क्षेत्रीय अखण्डता, आंतरिक मामलों में अहस्तक्षेप, पारस्परिक सम्मान तथा आपसी लाभ के सिद्धांतों पर आधारित है।
- दोनों देशों ने निकट भविष्य में एक सामरिक भागीदारी दस्तावेज तैयार करने के संबंध में चर्चा करने का निर्णय लिया गया। सामरिक भागीदारी का कार्यान्वयन भागीदारी परिषद (Partnership Council) की देखरेख में किया जाएगा। इस परिषद की सह-अध्यक्षता दोनों देशों के विदेश मंत्रियों द्वारा की जाएगी और इसकी बैठक प्रतिवर्ष होगी। इसमें साझे हित से जुड़े मुद्दों पर अलग से संयुक्त कार्यकारी दल भी होंगे। भारत और अफगानिस्तान के बीच सामरिक भागीदारी में द्विपक्षीय संबंध के विविध पहलू शामिल होंगे। राजनैतिक क्षेत्र में दोनों देशों ने नियमित रूप से शिखर वार्ता, विभिन्न स्तरों पर संस्थागत संवादों, शांति एवं सुरक्षा पर नियमित विचार-विमर्श तथा संयुक्त राष्ट्र और अन्य अंतर्राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय मंचों पर घनिष्ठ सहयोग एवं समन्वय स्थापित करने पर भी सहमति व्यक्त की।
- अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में दोनों पक्षों ने आर्थिक एकीकरण के लाभों को स्वीकार करते हुए आर्थिक भागीदारी करने का निर्णय लिया। दोनों देशों ने दक्षिण एशियाई बाजार विकसित करने पर बल दिया। उन्होंने खनन, ऊर्जा, सूचना प्रौद्योगिकी, संचार एवं परिवहन जैसे क्षेत्रों में बेहतर सहयोग करने और अन्य देशों के साथ क्षेत्रीय व्यापार व्यवस्थाओं की संभावनाओं का संयुक्त रूप से पता लगाने पर सहमति व्यक्त की। दोनों देशों ने क्षेत्रीय एकीकरण को बढ़ावा देने में तापी गैस पाइपलाइन (TAPI Gas Pipeline) जैसी क्षेत्रीय परियोजनाओं के महत्व पर भी बल दिया।

- भारत ने अफगानिस्तानी छात्रों की शिक्षा और प्रशिक्षण के अवसरों को बढ़ावा देने और शिक्षा एवं मानव संसाधन विकास में सहयोग को बढ़ावा देने पर सहमति व्यक्त की। इसके अंतर्गत अफगानिस्तान के सभी क्षेत्रों विशेषकर दूरस्थ एवं ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत संरचना विकास हेतु चलाई जा रही लघु विकास परियोजनाओं का विस्तार करना और अफगानिस्तानी महिलाओं एवं छात्रों का कल्याण सुनिश्चित करना शामिल है। ऐसी परियोजनाओं के लिए भारत ने 500 मिलियन अमेरिकी डॉलर के अतिरिक्त व्यय की घोषणा की जिसके फलस्वरूप अफगानिस्तान के विकास के लिए भारत की कुल प्रतिबद्धता दो बिलियन अमेरिकी डॉलर हो जाएगी। अफगानिस्तान ने पुनर्निर्माण तथा विकास के लिए पिछले 10 वर्षों के दौरान दी गई उदार सहायता के लिए भारत के प्रति गहरा आभार व्यक्त किया।
- संसदीय आदान-प्रदान, मीडिया, सांस्कृतिक गतिविधियों, युवाओं, सभ्य समाज और लोगों के बीच संबंधों को मजबूत करने पर भी बल दिया गया। इसका उद्देश्य दोनों देशों के बीच विद्यमान सामरिक भागीदारी को अतिरिक्त सार्थकता प्रदान करना है।
- दोनों देशों का मानना है कि व्यापार, परिवहन एवं ऊर्जा केंद्र के रूप में और मध्य एवं दक्षिण एशिया को जोड़ने वाले सम्पर्क देश के रूप में अफगानिस्तान को बढ़ावा देने के लिए मुक्त एवं अबाध परिवहन और पारगमन संपर्कों (Free and Unfettered Transport and Transit Linkages) की व्यवस्था न सिर्फ अफगानिस्तान के हित में बल्कि इस पूरे क्षेत्र के हित में होगी।
- दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (SAARC) की रूपरेखा के अंतर्गत क्षेत्रीय सहयोग को और मजबूत बनाने की आवश्यकता पर सहमति व्यक्त की गई।
- दोनों पक्ष इस बात पर भी सहमत हुए कि अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद, संगठित अपराध तथा नशीले पदार्थों की तस्करी तथा मनी लॉन्ड्रिंग (Money Laundering) के विरुद्ध लड़ाई में सहयोग के साथ-साथ सुरक्षा, कानून प्रवर्तन एवं न्याय के क्षेत्र में सहयोग किया जाना सामरिक भागीदारी का महत्वपूर्ण अंग होगा।

(iii) अफगानिस्तान में निवेश हेतु दिल्ली सम्मेलन-2012

(Delhi Summit on Investment Afghanistan-2012)

अफगानिस्तान में निवेश से संबद्ध दिल्ली सम्मेलन का आयोजन (28 जून, 2012) करने पर भारत ने प्रसन्नता जाहिर की और विश्वास व्यक्त किया कि इस आयोजन से रणनीतिक भागीदारी करार के कार्यान्वयन को प्रोत्साहन मिलेगा।

उक्त सम्मेलन के दो प्रमुख उद्देश्यों में एक, ऐसे संप्रभु राष्ट्र के रूप में अफगानिस्तान की सहायता करना जो अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के साथ भागीदारियों की सहायता से अपने पैरों पर खड़ा हो सके। इसमें व्यवसाय और निवेश की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।

उल्लेखनीय है कि भारत में किसी अन्य देश के लिए आयोजित किया जाने वाला यह पहला शिखर सम्मेलन है। इस कार्यक्रम के प्रति भारतीय व्यावसायिक समुदाय की सकारात्मक प्रतिक्रिया अपने एक ऐसे पड़ोसी देश के साथ हमारी घनिष्ठता और एकजुटता का प्रतीक है जिसके साथ हमारे लंबे ऐतिहासिक एवं सभ्यतामूलक संबंध रहे हैं। भारत ने आशा व्यक्त की कि वह व्यापार और निवेश के जरिए अफगानिस्तान की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से भारत और अन्य देशों द्वारा आयोजित किए जाने वाले इसी प्रकार के सम्मेलनों में भागीदारी करता रहेगा।

निकटता और संबद्धता के बल पर इस क्षेत्र के देश अफगानिस्तान की सुरक्षा, स्थायित्व एवं समृद्धि में विशेष योगदान दे सकते हैं विशेषकर उस स्थिति में जब नाटों के सैनिकों की युद्धक (Combatant) भूमिका प्रशिक्षण, परामर्श एवं सहायता के रूप में परिवर्तित होने वाली है। भारत ने अफगानिस्तान में स्वस्थ आर्थिक प्रतिस्पर्धा का सृजन करके पारस्परिक लाभ प्राप्त करने हेतु विशेष रूप से इस क्षेत्र की कंपनियों से अफगानिस्तान में निवेश करने का आह्वान किया है।

वर्ष 2014 में नाटों के सैनिकों की वापसी और आतंकवाद के कारण हो रही जीवन हानि के आलोक में अफगानिस्तान पर एक बड़े निवेश सम्मेलन का आयोजन करना कुछ लोगों की नजर में एक दिखावटी कार्य भी हो सकता है। आमतौर पर अफगानिस्तान किसी निवेशक के लिए आसान गंतव्य प्रतीत नहीं होता है परंतु भारत ने ऐसा सम्मेलन आयोजित करने का साहस दिखाया है। यह निर्णय कतिपय मौलिक समझ पर आधारित है-

- पहली बात यह है कि अफगानिस्तान पिछले तीन दशक से संघर्ष और हिंसा का दश झेलता आ रहा है जिससे राज्य का ढांचा अस्त-व्यस्त हो गया है। 11 वर्षों तक अंतर्राष्ट्रीय समुदाय का ध्यान आकर्षित करते रहने और विदेशी सहायता प्राप्त करने के बावजूद अफगानिस्तान विकास और तकनीकी सहायता हेतु विशेष केंद्रबिंदु बना हुआ है।
- दूसरी बात यह है कि यह सहायता न सिर्फ अफगानिस्तान की भलाई के लिए बल्कि हमारी अपनी तथा हमारे पड़ोसी देशों और संपूर्ण विश्व की सुरक्षा के लिए भी आवश्यक है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि वर्ष 2001 में अफगानिस्तान ने दोबारा विश्व का ध्यान आकर्षित क्यों किया?

- तीसरी बात यह है कि विकास, सुरक्षा तथा तकनीकी सहायता ही पर्याप्त नहीं है। बॉन, शिकागो तथा टोकियो सम्मेलन और क्षेत्रीय विश्वास बहाली पर इस्तांबुल प्रक्रिया अफगानिस्तान को सहयोग करने की अंतराष्ट्रीय समुदाय की सकारात्मक इच्छा को प्रदर्शित करती है परंतु सैनिक हस्तक्षेप और विदेशी सहायता दोनों ही काफी हद तक लोकमत और आर्थिक परिस्थितियों पर निर्भर करती हैं। हमें उदारता प्रदर्शन की जगह स्थायी हित की बातें सोचनी होंगी जिनके आधार पर अफगानिस्तान आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर हो सके।
- चौथी बात यह है कि नाटो सैनिकों की वापसी से ऐसा राजनैतिक अथवा सैन्य निर्वत न उत्पन्न हो जाए जिसमें उग्रवादी एक बार फिर सक्रिय हो सकें। इसके स्थान पर कुछ वैकल्पिक व्यवस्था होनी चाहिए।

अंततः भारत का मानना है कि विदेशी निवेश और निजी क्षेत्र का विकास इस संदर्भ में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। अब समय आ गया है कि सैनिकों का स्थान कंपनियों के कार्यपालक और जनरलों का स्थान मुख्य कार्यकारी अधिकारी लें। वे भी अफगानिस्तान में स्थिरता लाने में बड़ी भूमिका निभा सकते हैं।

किसी देश के भविष्य के लिए निवेश अत्यावश्यक होता है और देश की सुरक्षा एवं स्थायित्व में भी उसकी भागीदारी होती है। यह सुरक्षा, सैन्य अभियानों से उत्पन्न सुरक्षा नहीं होगी बल्कि साझे दित एवं साझी राजनैतिक प्रतिबद्धता से उत्पन्न सुरक्षा होगी। यदि विभिन्न कंपनियाँ मिलजुलकर अथवा बड़ी संख्या में निवेश करती हैं तो एक साथ कार्य करने की सामूहिक प्रतिबद्धता से उन्हें लाभ होगा। सार्क (SAARC) के अल्प अल्पतम विकसित देशों के लिए की गई पहल के भाग के रूप में भारत ने अफगानिस्तान के निर्यातों पर सीमा शुल्क से छूट प्रदान की है।

अफगानिस्तान के खनिज संसाधन, कृषि उत्पाद एवं मानव संसाधन मध्य एशिया, ईरान तथा खाड़ी क्षेत्र के ऊर्जा संसाधनों तथा क्षेत्रीय आर्थिक प्रगति के ऐसे समाहित प्रेरक बल हो सकते हैं जो पश्चिम में तुर्की, उत्तर में रूस, पूर्व में चीन और भारत तथा दक्षिण में अरब सागर और हिंद महासागर को व्यापार, पारगमन और ऊर्जा मार्ग जैसे आर्थिक सहयोग के सूत्र में बांध सकते हैं। इसके लिए संस्थागत वित्त और निवेश के लिए अंतराष्ट्रीय सहायता की आवश्यकता है। भारत इस कार्यक्रम में विश्व बैंक, एशियाई विकास बैंक तथा अन्य अंतराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं की भूमिका की सहायता करता है।

भारतीय वाणिज्य परिषद (Confederation of Indian Industry - CII) तथा अन्य भारतीय एवं क्षेत्रीय वाणिज्य परिषदों से अपेक्षा है कि वे इस क्षेत्र में व्यापार और निवेश के समक्ष आने वाली बाधाओं को पहचान कर जिससे कि अफगानिस्तान के साथ व्यापार संबंध प्रयासों को बढ़ावा मिले और एशिया तथा यूरेशिया के विभिन्न भागों और विशेषकर दक्षिण एशिया के विशाल बाजारों को जोड़ने वाले जमीनी सेतु के रूप में अफगानिस्तान की पूर्ण संभावनाओं का उपयोग किया जा सके।



भारत-बांग्लादेश संबंध (India-Bangladesh Relations)

*** (इस टॉपिक का संबंध मुख्य परीक्षा के प्रश्नपत्र-2 के विषय संख्या 17 से है। 'दृष्टि' द्वारा वर्गीकृत पाठ्यक्रम के 15 खंडों में से इसका संबंध भाग-7 से है।)

संबंधों की सामान्य पृष्ठभूमि (General Background of Relations)

बांग्लादेश जनसंख्या की दृष्टि से संसार का आठवाँ सबसे बड़ा देश है। इसका कुल क्षेत्रफल 1,43,998 वर्ग किलोमीटर है। बांग्लादेश के साथ भारत की सीमा 4,096 किमी. के आसपास है जो भारत के अपने पड़ोसी देशों के साथ की सीमाओं में सबसे लम्बी है। बांग्लादेश का जन्म दिसम्बर 1971 में भारत-पाकिस्तान युद्ध में पाकिस्तान की पराजय का परिणाम था। तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) में पाकिस्तानी सेनापति-लेफ्टिनेंट जनरल नियाजी ने भारतीय सेना की पूर्वी कमान के सेनापति लेफ्टिनेंट जनरल जगजीत सिंह अरोड़ा के समक्ष बिना शर्त आत्मसमर्पण करके पाकिस्तान की पराजय स्वीकार की थी।

दिसम्बर 1971 का युद्ध पाकिस्तान के आतंकपूर्ण शासन के विरुद्ध बांग्लादेशी विद्रोह का चरमसोम था। यह विद्रोह मार्च 1971 में तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान में आरम्भ हुआ था क्योंकि प्रान्त के सबसे लोकप्रिय नेता शेख मुजीबुर्रहमान को बंदी बनाकर पश्चिमी पाकिस्तान की एक जेल में डाल दिया गया था। पूर्वी पाकिस्तान की जनता के स्वतंत्रता सङ्घ में भारत की पूरी सहानुभूति उनके साथ थी। मार्च 1971 में विद्रोह आरंभ होने के साथ ही बांग्लादेश में एक अन्तरिम सरकार की स्थापना की गई थी। हालांकि भारत ने उसे उस समय मान्यता प्रदान नहीं की थी क्योंकि हो सकता था कि इस मान्यता को बहाना बनाकर पाकिस्तान भारत के विरुद्ध युद्ध आरम्भ कर देता। परन्तु जब 3 दिसम्बर 1971 को बांग्लादेश के प्रश्न पर भारत-पाक युद्ध आरम्भ हो ही जाया तो भारत द्वारा 6 दिसम्बर 1971 को बांग्लादेश को एक स्वतंत्र देश के रूप में मान्यता प्रदान कर दी गई। इसके बाद 16 दिसम्बर 1971 को पाकिस्तान ने अपनी पराजय स्वीकार करते हुए आत्मसमर्पण कर दिया। तैरह दिन के भारत-पाक युद्ध में लगभग 20,000 भारतीय जवान वीरगति को प्राप्त हुए। जहाँ एक ओर बांग्लादेश की जनता के लिए यह आतंकवाद और यातना का अन्त और देश के स्वतंत्र अस्तित्व की घोषणा थी, वहीं दूसरी ओर भारत के लिए यह लोकतान्त्रिक समाजवाद और धर्मनिरपेक्षता की विजय थी। पूर्व विदेश मंत्री जसवंत सिंह के अनुसार बांग्लादेश युद्ध एक अनोखा युद्ध था क्योंकि इस युद्ध के दौरान न केवल अमेरिका ने अपना परमाणु बमों से लैस सातवाँ बड़ा भारतीय जल सीमा की ओर भेजा बल्कि इस दौरान दारणनीतिक संबंधों की भी प्रहृर्षव हुआ। ये थे— चीन और अमेरिका के मध्य भागीदारी तथा भारत और सोवियत सङ्घ की संधि।

भारत को मार्च और दिसम्बर 1971 के बीच की अवधि में एक विचित्र स्थिति का सामना उस समय करना पड़ा जब लगभग एक करोड़ यातना-पीड़ित बांग्लादेशी शरणार्थी भारत में आ गए। भारत सरकार द्वारा इन वापस भेजने के लिए किए गए समस्त प्रयास असफल रहे। वैसे इन प्रयासों का उद्देश्य पूर्वी पाकिस्तान की समस्या का शांतिपूर्ण समाधान करना भी था। पाकिस्तान के सैनिक राष्ट्रपति याह्या ख़ाँ ने युद्ध का मार्ग चुना और सोचा कि विजय उनकी ही होगी। वास्तव में हुआ इसके विपरीत। विजय भारत की हुई और याह्या ख़ाँ को पद त्यागना पड़ा तथा जुल्फिकार अली भुट्टो को सत्ता सौंपनी पड़ी। इस प्रकार स्वतंत्र बांग्लादेश के जन्म के साथ ही शेष पाकिस्तान की सत्ता भुट्टो के हाथ में आ गई।

द्विपक्षीय संबंधों का ऐतिहासिक विकास क्रम (Historical Development of Bilateral Relations)

भारत द्वारा बांग्लादेश को मान्यता दिए जाने के तुरन्त बाद 10 दिसम्बर, 1971 को भारत-बांग्लादेश के बीच एक संधि पर हस्ताक्षर किए गए। उस समय पाकिस्तान के विरुद्ध बांग्ला युवकों द्वारा गठित मुक्तिवाहिनी सेना युद्ध कर रही थी। तत्कालीन प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी तथा बांग्लादेश के कार्यवाहक राष्ट्रपति नजरूल इस्लाम द्वारा हस्ताक्षरित संधि में यह व्यवस्था की गई कि बांग्लादेश को पाकिस्तान से स्वतंत्र करवाने के लिए संयुक्त रूप से भारत-मुक्तिवाहिनी-कमान स्थापित की जाएगी जो एक भारतीय सेनापति के अधीन होगी। यहाँ भारत ने यह वचन दिया कि जैसे ही बांग्लादेश में स्थिति सामान्य होगी, भारतीय सैनिक स्वदेश लौट आएँगे। भारत ने बांग्लादेश की प्रादेशिक अखंडता की सुरक्षा का वचन दिया और यह आश्वासन दिया कि नए बांग्लादेश के आर्थिक पुनर्निर्माण के लिए जरूरी सहायता उपलब्ध कराई जाएगी। साथ ही भारत से बांग्लादेशी शरणार्थियों की वापसी की योजना भी बनाई गई।

शीघ्र ही भारत ने अमेरिका जैसे प्रमुख देशों से आग्रह किया कि वे पाकिस्तान पर दबाव डालकर शेख मुजीबुर्रहमान को पाकिस्तानी जेल से स्वतंत्र करवाएँ। अन्ततः शेख मुजीबुर्रहमान को 8 जनवरी, 1972 को जेल से मुक्त कर दिया गया और 10 जनवरी को स्वदेश जाते हुए वे दिल्ली पहुँचे। उन्होंने विशेषकर उन बलिदानों के लिये भारत का हार्दिक धन्यवाद किया, जो बांग्लादेश

की स्वतन्त्रता के लिए भारतीय वीरों ने दिए थे। ढाका जाकर उन्होंने औपचारिक रूप से बांग्लादेश के प्रधानमंत्री का पदभार संभाला। उसके पश्चात् भारत ने उन्हें राजकीय यात्रा के लिए आमन्त्रित किया। शेख मुजीब ने 16-18 फरवरी, 1972 को कलकत्ता की यात्रा की जहाँ प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी के साथ उनकी औपचारिक वार्ता हुई। दोनों प्रधानमंत्रियों ने यह घोषणा की कि भारत-बांग्लादेश संबंध जिन सिद्धान्तों पर आधारित होंगे वे हैं— लोकतन्त्र, समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता, गुटनिरपेक्षता आदि। इसके अतिरिक्त जातिवाद और उपनिवेशवाद के सभी रूपों का विरोध।

इसी क्रम में आगे भारत ने बांग्लादेश को विश्वास दिलाया कि वह उसके आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा। भारत ने यह भी घोषणा की कि निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार 25 मार्च, 1972 तक भारत की सेनाएँ बांग्लादेश से वापस आ जाएँगी। श्रीमती गाँधी और शेख मुजीबुर्रहमान ने पारस्परिक रूप से यह भी निश्चय किया कि जहाँ तक सम्भव होगा दोनों देशों के बीच व्यापार केवल सरकारी माध्यमों से नियन्त्रित किया जाएगा। इससे असामाजिक तत्व तस्करी जैसे अपराधों का सहारा नहीं ले सकेंगे।

भारत-बांग्लादेश मैत्री, सहयोग व शांति संधि-1972

(India-Bangladesh Treaty of Friendship, Cooperation and Peace-1972)

भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी मार्च-1972 में ढाका गईं। भारत-बांग्लादेश शिखर वार्ता के अन्त में 19 मार्च, 1972 को भारत-बांग्लादेश मैत्री और शांति संधि पर हस्ताक्षर किए गए। दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों ने एक संयुक्त वक्तव्य में कहा कि विचारों, आदर्शों और हितों की समानता को अभिव्यक्ति प्रदान करते के उद्देश्य से ही दोनों देश इस संधि पर हस्ताक्षर कर रहे हैं और शांति, लोकतन्त्र, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद तथा राष्ट्रवाद के आदर्शों से इस संधि के लिए प्रेरणा प्राप्त हुई।

संयुक्त राष्ट्र में बांग्लादेश की सदस्यता सुनिश्चित करवाने के लिए श्रीमती गाँधी ने भारत के समर्थन और सहयोग का आश्वासन दिया। दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों ने यह भी कहा कि हिन्द महासागर (Indian Ocean) की बड़ी शक्तियाँ की प्रतिद्वन्द्विता से मुक्त रखा जाएगा और यह भी कहा कि भारत और बांग्लादेश हिन्द महासागर को परमाणु-मुक्त क्षेत्र (Nuclear-Free Zone) घोषित करवाने के प्रयत्न करेंगे। इन्दिरा गाँधी और शेख मुजीबुर्रहमान ने यह भी तय किया कि एक संयुक्त नदी आयोग (Joint Rivers Commission) नियुक्त किया जाएगा। यह आयोग उन नदियों का सर्वेक्षण करेगा जिससे दोनों देशों को लाभ होता है। यह आयोग दोनों देशों में बाढ़ नियन्त्रण के लिए परियोजनाएँ भी तैयार करेगा। सामाजिक और आर्थिक विकास को अविलम्ब प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से दोनों देशों ने एक-दूसरे को परामर्श देते रहने का वादा भी किया।

भारत और बांग्लादेश के बीच मैत्री और शांति संधि की अवधि 25 वर्ष निश्चित की गई थी। यद्यपि बांग्लादेश से भारतीय सेनाएँ 25 मार्च, 1972 तक वापस बुलाई जानी थीं लेकिन भारत ने अपनी सेनाएँ संधि पर हस्ताक्षर होने से पूर्व ही हटा लीं। भारत यह नहीं चाहता था कि उसके आलोचक यह कहे कि भारतीय सेना के दबाव में बांग्लादेश ने इस संधि पर हस्ताक्षर किए। इस संधि में प्रावधान किया गया कि दोनों देश एक-दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे और एक-दूसरे की प्रादेशिक अखण्डता का सम्मान करेंगे। संधि की प्रस्तावना (Preamble) में वर्णित किया गया कि भारत-बांग्लादेश मैत्री का आधार बांग्लादेश की स्वतन्त्रता के लिए दोनों देशों द्वारा किया गया बलिदान है। दोनों देशों ने अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा को प्रोत्साहन देने तथा साम्राज्यवाद एवं जातिवाद के विरुद्ध मिलकर संघर्ष जारी रखने का भी वचन दिया। यह तय किया गया कि दोनों देश अपने विवादों का समाधान संघर्ष के द्वारा नहीं वरन् सहयोग के द्वारा करेंगे।

उक्त संधि में यह भी प्रावधान किया गया कि यदि भारत या बांग्लादेश के विरुद्ध आक्रमण होता है या दोनों में से किसी को आक्रमण का संदेह होता है तो वे पारस्परिक परामर्श करके दोनों देशों की सुरक्षा सुनिश्चित करेंगे। दोनों देश एक-दूसरे पर कभी आक्रमण नहीं करेंगे और एक-दूसरे पर आक्रमण करने में किसी अन्य देश की सहायता भी नहीं करेंगे। दोनों में से कोई भी देश किसी तीसरे देश के साथ ऐसा कोई समझौता नहीं करेगा जो दूसरे पक्ष के हितों के विरुद्ध हो। शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के सिद्धान्त में दोनों देशों ने अपनी आस्था व्यक्त की। दोनों देशों ने आर्थिक, वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में सहयोग करने पर भी सहमति जताई। भारत-बांग्लादेश मैत्री संधि में द्विपक्षीय संबंधों के अनेक मुद्दों और क्षेत्रों के लिए प्रावधान किए गए। वस्तुतः यह एक वृहद् संधि थी जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की प्रतिबद्धता पर जोर दिया गया था।

भारत-बांग्लादेश संधि के सम्पन्न होने पर पाकिस्तान ने अपनी चिन्ता व्यक्त करते हुए इसे एक सैनिक गठबन्धन की संज्ञा दे डाली परन्तु मैत्री संधि के प्रावधानों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस संधि पर हस्ताक्षर द्विपक्षीय संबंधों को मजबूत करने, क्षेत्रीय शान्ति एवं अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से ही किए गए थे।

भारत-बांग्लादेश व्यापार समझौता-1972 (India-Bangladesh Trade Agreement-1972)

भारत और बांग्लादेश के बीच मैत्री और शांति संधि के पश्चात् 28 मार्च, 1972 को एक व्यापार समझौता सम्पन्न हुआ। इस अल्पकालीन समझौते में यह प्रावधान किया गया था कि भारत-बांग्लादेश सीमा के दोनों ओर 16 किलोमीटर तक के क्षेत्र को

कर-मुक्त क्षेत्र (Duty-Free Zone) घोषित किया जाएगा। सीमा के दोनों ओर कर-मुक्त क्षेत्र में लोग दिन में जा सकते थे ताकि दैनिक आवश्यकता की वस्तुएँ खरीद सकें। इस व्यापार समझौते के दूसरे भाग में वर्णित था कि प्रत्येक वर्ष 50 करोड़ रुपये तक व्यापार किया जा सकेगा। इस व्यवस्था से बांग्लादेश को अपने कुछ उत्पादों जैसे मछली, जूट, अखबारी कागज तथा खालें इत्यादि के लिए बाजार मिल सकता था। दूसरी ओर बांग्लादेश की आवश्यकता के लिए तम्बाकू, सीमेंट, खनिज पदार्थ, मशीनरी आदि भारत द्वारा उपलब्ध कराए जाने थे। समझौते के तीसरे भाग का संबंध विदेशी मुद्रा में किए जाने वाले व्यापार से था। इस समझौते के तहत दोनों देश बेचो जाने वाली वस्तुओं को एक-दूसरे से विदेशी मुद्रा में खरीद-बेच सकते थे।

चूँकि दोनों देशों के बीच मैत्री संधि और व्यापार समझौता समानता, मित्रता और पारस्परिक लाभ की भावना से संपन्न किये गये थे। अतः बांग्लादेश की स्थापना के तुरन्त बाद दोनों देशों के बीच मित्रता और सहयोग की भावना विद्यमान थी। यह सोचा भी नहीं गया था कि कभी कोई विवाद हो सकता है। भारत और पाकिस्तान के बीच 1972 में होने वाले शिमला समझौते (Shimla Agreements) में भाग लेने जाने से पूर्व श्रीमती गाँधी ने शेख मुजीबुर्रहमान से विस्तार से बातचीत की, जिसमें 1971 के युद्ध से संबंधित उन सभी विषयों पर विचार हुआ जिनकी भारत-पाक वार्ता में उठने की सम्भावना थी। भारत ने पाकिस्तान को यह स्पष्ट कर दिया था कि युद्धबन्धियों (Prisoners of War) से संबंधित कोई भी बातचीत परस्पर सहमति पर निर्भर करेगी। बांग्लादेश की इच्छा थी कि उन सभी युद्धबन्धियों पर आपराधिक मुकदमे चलाए जाएँ जिन पर यातनाएँ देने के आरोप थे। दूसरी ओर, जुल्फिकार अली भुट्टो की इच्छा थी कि उन सभी 90,000 युद्धबन्धियों को रिहा किया जाए जो भारत में तजरबन्द थे।

अन्ततः 1973 में हुए एक अन्य समझौते के अधीन 195 को छोड़कर शेष सभी युद्धबन्धियों को पाकिस्तान वापस भेज दिया गया। पाकिस्तान ने तब तक बांग्लादेश को मान्यता देने से इनकार कर दिया जब तक कि सभी युद्धबन्दी वापस नहीं किए गए। चीन ने 1971 के युद्ध में और उसके बाद भी पाकिस्तान का समर्थन किया था। अतः चीन ने न केवल बांग्लादेश को मान्यता देने से इनकार किया बल्कि 1972 में संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में अपने निषेधाधिकार का प्रयोग करके संयुक्त राष्ट्र सभ में बांग्लादेश की सदस्यता को भी बाधित करने की प्रयास किया।

22 फरवरी 1974 को पाकिस्तान ने बांग्लादेश को मान्यता प्रदान की। उससे पूर्व पाकिस्तान ने लाहौर में उसी वर्ष होने वाले इस्लामी देशों के सम्मेलन में भाग लेने के लिए बांग्लादेश को आमन्त्रित किया था। अन्ततः जब पाकिस्तान ने बांग्लादेश को मान्यता प्रदान कर दी तो यह उम्मीद की गई कि इससे इस्लामी देशों की एकता के साथ-साथ बांग्लादेश में पाकिस्तान समर्थक तत्वों की भी ताकत बढ़ेगी। शेख मुजीबुर्रहमान ने इस इस्लामी देशों के सम्मेलन में भाग लिया। इसका लाभ उठाकर पाकिस्तान ने बांग्लादेश में भारत-विरोधी तथा इस्लाम समर्थक पंचार आरम्भ कर दिया। वर्ष 1975 के आरम्भ में भारत और बांग्लादेश ने गंगा के पानी के बँटवारे के संबंध में एक समझौते पर हस्ताक्षर किए। इससे पाकिस्तान का धक्का लगा और उसने बांग्लादेश में भारत के प्रभाव को कमजोर करने की कोशिश शुरू कर दी।

शीघ्र ही पाकिस्तान ने भारत के नए साम्राज्यवादी दृष्टिकोण और बांग्लादेश की अधिनिता (Subservience) की बात कहनी शुरू कर दी। पाकिस्तान के तत्कालीन प्रधानमंत्री जुल्फिकार अली भुट्टो ने बांग्लादेश की आर्थिक सहायता देने की पेशकश भी की। इस प्रकार पाकिस्तान द्वारा भारत और बांग्लादेश के बीच मनमुटाव उत्पन्न करने के अनेक विफल प्रयास किए गए।

शेख मुजीबुर्रहमान की हत्या और तत्कालीन भारत-बांग्लादेश संबंध (Assassination of Sheikh Mujeeb Ur Rehman and India-Bangladesh Relations)

बांग्लादेश में अनेक भारत-विरोधी शक्तियाँ आरम्भ से ही सक्रिय थीं। दूसरी ओर ऐसा अनुमान था कि मुजीब सरकार आर्थिक और राजनीतिक दोनों प्रकार से लड़खड़ा रही थी। वस्तुओं के मूल्य निरन्तर बढ़ रहे थे। यद्यपि स्थिति से निपटने के लिए मुजीबुर्रहमान ने 28 दिसम्बर, 1974 को आपात्काल (Emergency) की घोषणा करके समस्त शक्तियाँ अपने हाथ में ले लीं। वे जमाखोरी और भ्रष्टाचार रोकने में पूरी तरह असफल रहे। साथ ही मुजीबुर्रहमान ने गुप्तचरों की विद्रोह संबंधी रिपोर्टों में विश्वास नहीं किया और यह कह कर टाल दिया कि उनके बच्चे उनको कोई हानि नहीं पहुँचा सकते। परन्तु 15 अगस्त, 1975 को सेना के कुछ मध्य-स्तरीय अधिकारियों (Majors etc.) ने एक सैनिक विद्रोह करके बांग्लादेश के संस्थापक बंगबन्धु शेख मुजीबुर्रहमान तथा उनके परिवार के सदस्यों की हत्या कर दी। उस समय तक बांग्लादेश में भारत-विरोधी प्रवृत्तियाँ स्पष्ट दिखाई देने लगी थीं। धार्मिक कट्टरता (Religious Fundamentalism) सिर उठा रही थी और धर्मनिरपेक्षता (Secularism) को नई सैनिक व्यवस्था में गहरा धक्का लगा था।

शेख मुजीबुर्रहमान की हत्या के कुछ समय बाद तक चले शक्ति-संघर्ष के पश्चात् लेफ्टिनेन्ट जनरल जियाउर्रहमान के हाथ में सत्ता आ गई। भारत कुछ समय तक दोनों देशों के संबंधों को लेकर चिंतित था परन्तु जब एक बार बेगम खालिदा जिया ने सत्ता पर अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया तब भारत-बांग्लादेश संबंधों में सामान्य प्रक्रिया फिर से शुरू हो गई।

मुजीबुर्रहमान का बांग्लादेश निश्चय ही धर्मनिरपेक्ष लोकतान्त्रिक गणतन्त्र था। सैनिक शासन में वह न तो लोकतान्त्रिक रहा और न ही व्यवहार में धर्मनिरपेक्ष। बाद में बांग्लादेश ने पाकिस्तान की भाँति अपने को इस्लामी देश घोषित कर दिया। वहाँ की संसद (जातीय संगसद) ने 1988 में निर्मित एक कानून के द्वारा इस्लाम (Islam) को देश का राजधर्म (State Religion) घोषित कर दिया।

अतः जियाउरहमान द्वारा आरम्भ की गई इस्लामीकरण की प्रक्रिया को इरशाद शासन के काल में सम्पन्न कर लिया गया। जियाउरहमान ने बांग्लादेश पर मई 1981 तक शासन किया और मई 1981 में उनकी हत्या कर दी गई।

जियाउरहमान के उत्तराधिकारी राष्ट्रपति को रक्तहीन क्रांति (Bloodless Coup) के द्वारा अपदस्थ कर दिया गया। इस क्रांति या विद्रोह के परिणामस्वरूप लेफ्टिनेन्ट जनरल एच. एम. इरशाद सत्ता में आए और उन्होंने देश को इस्लामी आधार पर चलाने का प्रयास किया। भारत के प्रति जिया शासन की नीति स्पष्ट नहीं थी। उनके समय में फरक्का बाँध और गंगाजल के बँटवारे के प्रश्न विवाद के प्रमुख मुद्दे बने ही रहे। 1982 में राष्ट्रपति इरशाद ने कहा— समस्त उत्तरी बांगाल भले ही रेगिस्तान बन जाए, बांग्लादेश फरक्का के प्रश्न पर कभी नहीं झुकेगा।

भारत-बांग्लादेश द्विपक्षीय संबंधों में तनाव के कारण

(Causes of Tension in India-Bangladesh Bilateral Relations)

(i) गंगाजल बँटवारे पर विवाद (Dispute on Sharing of Ganga Water)

गंगा जल के बँटवारे का प्रश्न भारत और बांग्लादेश के पारस्परिक संबंधों में तनाव का मुख्य कारण रहा है। गंगोत्री से निकल कर गंगा नदी बांग्लादेश पहुँचती है। पश्चिम बांगाल के मुर्शिदाबाद जिले में फरक्का से 30 किलोमीटर दक्षिण में गंगा की मुख्य धारा दो धाराओं में विभक्त हो जाती है। इनमें से एक धारा हुगली नदी के नाम से पश्चिम बांगाल के निचले भागों में चली जाती है, जबकि दूसरी 'पद्मा' के नाम से भारत-बांग्लादेश सीमा के साथ-साथ बहती हुई ब्रह्मपुत्र में मिल जाती है। बांगाल की खाड़ी में गिरने से पूर्व यह मेघना नदी के साथ एकाकार हो जाती है।

इस संदर्भ में भारत-बांग्लादेश विवाद का मूल संबंध पानी की कमी के मौसम (Lean Season) में पानी के बँटवारे या उसमें हिस्सा प्राप्त करने से जुड़ा है। पानी की कमी का मौसम प्रति वर्ष जनवरी से मई विशेषकर मार्च से मध्य मई तक होता है। उस अवधि में गंगा का प्रवाह घटकर 55,000 क्यूसेक तक आ जाता है। कोलकाता बन्दरगाह के सुचारु रूप से कार्य करने के लिए उसे न्यूनतम 40,000 क्यूसेक पानी की आवश्यकता होती है। कोलकाता बन्दरगाह को बचाने के लिए हुगली में कम से कम 40,000 क्यूसेक पानी अवश्य चाहिए। समस्या का सार यह है कि यदि भारत कोलकाता बन्दरगाह के लिए 40,000 क्यूसेक पानी स्वयं ले लेता है तो कमी के मौसम में बांग्लादेश को मात्र 15,000 क्यूसेक पानी ही मिल जाता है। इतनी मात्रा उस देश के लिए अपर्याप्त है। अतः समस्या यह है कि पानी की कमी के मौसम में दोनों देशों को उचित मात्रा में पानी कैसे मिले? फरक्का बाँध का निर्माण भारत ने 1961-75 में किया था। तब बांग्लादेश पूर्वी पाकिस्तान था। यह बाँध (Barrage) कोलकाता से लगभग 400 किलोमीटर उत्तर में गंगा नदी पर बंगाल-बिहार (झारखंड) सीमा के निकट फरक्का नामक स्थान पर है। इस बाँध के निर्माण का मुख्य उद्देश्य कोलकाता बन्दरगाह का रखरखाव तथा भागीरथी-हुगली में आवागमन (Navigation) सुगम बनाना था।

कई अध्ययन किए गए, सभी का निष्कर्ष यही था कि कोलकाता बन्दरगाह की सुरक्षा हुगली में पानी की आपूर्ति बढ़ाकर ही सुनिश्चित की जा सकती है। इसके लिए पानी के प्रवाह को मोड़ना आवश्यक था जो कि एक बाँध (Barrage) के द्वारा ही सम्भव हो सकता था। अतः कोलकाता बन्दरगाह की सुरक्षा और भारत के राष्ट्रीय हित में यही था कि फरक्का बाँध के द्वारा पानी का उचित उपयोग किया जाए। कोलकाता बन्दरगाह केवल भारत के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए ही आवश्यक नहीं है बल्कि यह नेपाल और भूटान के विदेशी व्यापार के लिए 1990 के दशक से पूर्व एकमात्र बन्दरगाह था। यद्यपि बाँध का निर्माण होने और पानी के प्रवाह को मोड़ने से हुगली के लिए उचित मात्रा में पानी उपलब्ध हो गया और कोलकाता बन्दरगाह की सुरक्षा सुनिश्चित हो गई। फिर भी यह बाँध अन्तर्राष्ट्रीय विवाद का एक प्रमुख कारण बन गया।

वर्ष 1972 में नदी आयोग का गठन मुजीब-इन्दिरा समझौते के अनुसार किया गया था। इस आयोग ने विस्तृत सर्वेक्षण करके उन कमजोर स्थलों का पता लगाया जिनको नदी तट पर बाँध बनाकर सुदृढ़ किया जा सकता था। शेख मुजीब की सन् 1974 की नई दिल्ली यात्रा के फलस्वरूप एक समझौते पर हस्ताक्षर किये गये जिसके द्वारा अस्थाई तौर पर गंगा के पानी के बँटवारे का निश्चय हुआ। इसे एक महत्वपूर्ण कदम माना गया। इसके तहत भारत ने कमी वाले मौसम (Lean Season) के छह सप्ताह में गंगा जल का 80 प्रतिशत बांग्लादेश को देना स्वीकार किया। भारत की ओर से यह सौहार्दपूर्ण व्यवहार का संकेत था परन्तु शेख मुजीब-इन्दिरा की हत्या और भारत-विरोधी तत्वों के शक्तिशाली होने से भारत के दृष्टिकोण में परिवर्तन स्वाभाविक था। भारत ने कड़ा दृष्टिकोण अपनाया। चूँकि मई 1975 में अस्थाई समझौते की अवधि समाप्त हो गई थी, गंगा जल बँटवारा संबंधी नया समझौता दो वर्ष बाद 1977 में हुआ। इस मध्यवर्ती अवधि में भारत कमी के मौसम में भी अपनी आवश्यकतानुसार 40,000 क्यूसेक पानी लेता रहा। इससे बांग्लादेश को काफी परेशानी हुई। इस बीच बांग्लादेश के मौलाना भाषानी (Maulana Bhashani) ने भारत-विरोधी जनमत को तूल देते हुए कहा कि गंगा जल के बहाव में कमी के कारण बांग्लादेश में भयंकर संकट आ रहा है और उसका मरुस्थलीकरण (Desertification) होता जा रहा है। मई 1976 में मौलाना भाषानी ने फरक्का के लिए एक शांति यात्रा (Peace March) का नेतृत्व किया। कालांतर में बांग्लादेश पानी के प्रश्न को अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर भी समय-समय पर उठाता रहा।

गंगा जल संधि-1977 (Ganges Waters Treaty-1977)

पड़ोसी देशों के साथ संबंध सुधारना मोरार जी देसाई सरकार की उच्च प्राथमिकता थी। साथ ही बांग्लादेश से जल-बँटवारा संबंधित मुद्दे को भी उच्च प्राथमिकता प्रदान की। बांग्लादेश के साथ गंगा जल बँटवारे पर हुई बातचीत के फलस्वरूप नवम्बर 1977 में पाँच वर्ष के लिए एक नए 'गंगाजल समझौते' (Ganga Water Treaty) पर हस्ताक्षर किए गए। यह द्विपक्षीय समझौता उस समय संपन्न हुआ जब बांग्लादेशी राष्ट्रपति जियाउर्रहमान अपने देश में स्थिरता और दक्षिण एशिया में सहयोग के लिए कार्य कर रहे थे। इस समझौते से समस्या के केवल आंशिक समाधान का प्रयास किया गया था क्योंकि इसमें केवल कमी के मौसम में जल बँटवारे पर समझौता हुआ था। इस समझौते के अंतर्गत साल के पाँच महीने जनवरी से मई तक के लिए पानी के प्रवाह को नियंत्रित करने की व्यवस्था की गई थी।

इस समझौते को तत्कालीन प्रधानमंत्री मोरार जी देसाई ने भारतीय कूटनीति की विजय बताया। उन्होंने कहा कि यह समझौता इस बात का प्रमाण है कि विकासशील देश अपनी द्विपक्षीय समस्याओं का समाधान बातचीत से कर सकते हैं। परन्तु श्रीमती इन्दिरा गाँधी, जो उस समय विपक्ष में थीं उन्होंने कहा कि यह समझौता देश हित में नहीं है। आलोचकों का विचार था कि फरक्का बाँध मुख्य रूप से कोलकाता बन्दरगाह की सुरक्षा के लिए बनाया गया है। अतः किसी भी समय 40,000 क्यूसेक से कम पानी की आपूर्ति भारत के हितों के विरुद्ध है। इसी संदर्भ में पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री श्री ज्योति बसु ने प्रधानमंत्री से आग्रह किया कि हुगली के लिए 40,000 क्यूसेक पानी की आपूर्ति सुनिश्चित की जाए। उन्होंने फरक्का में पानी के प्रवाह को बढ़ाने की आवश्यकता पर भी बल दिया। वर्ष 1977 के नदी जल समझौते की अवधि मई 1982 को समाप्त हो गई। अतः एक नया समझौता करना आवश्यक हो गया। तत्कालीन प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी और तत्कालीन बांग्लादेशी राष्ट्रपति इरशद के मध्य हुई बातों ने द्विपक्षीय संबंधों में एक नया अध्याय जोड़ने का प्रयास किया।

उक्त बातों के अनुसार 1977 के समझौते की अवधि 18 महीने और बढ़ा दी गई और इस नए समझौते में पानी के प्रवाह की वृद्धि पर भी बल दिया गया ताकि समस्या का दीर्घकालीन समाधान किया जा सके। 1977 के समझौते का न्यूनतम जल आपूर्ति प्रावधान हटा दिया गया। अब 1982 में यह व्यवस्था की गई कि यदि पानी की उपलब्धि अधिक थी कम होगी तो आपूर्ति भी उसी अनुपात में तय की जाएगी। इस समझौते का 1985 में नवीनीकरण किया गया। यह समझौता 3 वर्ष के लिए किया गया था। इसकी अवधि समाप्त होने के बाद भारत ने स्वेच्छा से पानी उपलब्ध कराना आरम्भ कर दिया। शीघ्र ही दोनों देशों ने यह अनुभव किया कि समस्या के स्थायी समाधान के लिए पानी की आपूर्ति को बढ़ाना आवश्यक है। भारत ने यह सुझाव दिया कि ब्रह्मपुत्र नदी के पानी के प्रवाह को मोड़कर फरक्का के उत्तर में गंगा में मिलाया जाए ताकि कमी के मौसम में बांग्लादेश को कुछ और पानी उपलब्ध हो सके। प्रस्ताव था कि ब्रह्मपुत्र को गंगा से जोड़ने वाली नहर (Link Canal) के द्वारा जोड़ दिया जाए।

गंगा जल क्षेत्र (Ganga Basin) में इतना पानी नहीं है कि दोनों देशों की आवश्यकता को पूरा हो सके। इसके विपरीत मेघना और ब्रह्मपुत्र नदियों में आवश्यकता से अधिक पानी होता है जिसका सदुपयोग किया जाना चाहिए। ऐसा भारत का तर्क था। बांग्लादेश ने इस तर्क को पूरी तरह रद्द करते हुए कहा कि यह वैधानिक रूप से अनुचित तकनीकी तौर पर अव्यावहारिक, आर्थिक और परिस्थितिकी दृष्टियों से खतरा पैदा करने वाला है। बांग्लादेश ने अपना सुझाव प्रस्तुत करते हुए कहा कि वह भारत और नेपाल में गंगा के ऊपरी प्रवाह स्थलों पर जलाशय (Reservoirs) निर्मित करना चाहता है क्योंकि बांग्लादेश में पानी को इकट्ठा करने की कोई व्यवस्था नहीं है। ऐसा करने से गंगाजल के प्रश्न पर नेपाल की भूमिका भी हो जाती। सामान्यतया यह माना जाता है कि यदि दोनों देश संकीर्ण राजनीतिक भावनाओं से ऊपर उठकर इस समस्या का समाधान प्राप्त करना चाहें तो कोई बाधा नहीं होगी।

भारत समय-समय पर कहता आया है कि वह समस्या के द्विपक्षीय समाधान के लिए भारत प्रतिबद्ध है। वह आपसी बातचीत के द्वारा गंगाजल के बँटवारे के इस प्रश्न को अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर भी उठाता रहा है। अक्टूबर 1976 में बांग्लादेश ने इस मुद्दे को संयुक्त राष्ट्र महासभा (UN General Assembly) में उठाया। प्रधानमंत्री श्रीमती खालिदा जिया ने अक्टूबर 1993 में एक बार फिर गंगाजल विवाद महासभा में उठाया। बहरहाल भारत ने एक बार फिर इस समस्या को द्विपक्षीय वार्ता द्वारा सुलझाने के प्रति अपनी वचनबद्धता दोहराई। इससे पूर्व मई 1995 में नई दिल्ली में हुए 'सार्क' शिखर सम्मेलन में प्रधानमंत्री नरसिंह राव एवं बांग्लादेशी प्रधानमंत्री श्रीमती खालिदा जिया ने पानी के बँटवारे सहित अनेक द्विपक्षीय प्रश्नों पर विचार-विमर्श किया। दोनों देशों के विदेश सचिवों ने संयुक्त नदी आयोग (Joint River Commission) को पुनः सक्रिय करने का निर्णय किया। तदर्थ रूप से सन् 1988 से 1996 तक किसी समझौते के अभाव में भारत स्वेच्छा से बांग्लादेश को पानी उपलब्ध कराता रहा।

(ii) न्यू मूर द्वीप संबंधी विवाद (Dispute Regarding New Moore Islands)

कुछ सीमा संबंधी विवाद भी भारत और बांग्लादेश के मध्य उत्पन्न होते रहे हैं। इनमें न्यू मूर द्वीप संबंधी विवाद, तीन बीघा गलियारा (Teen Bigha Corridor) का विवाद तथा बेलोनिया क्षेत्र में मुहुनी चार (Muhuni Char) में संघर्ष का प्रश्न प्रमुख हैं। इन तीनों में से न्यू मूर संबंधी विवाद अनिर्णीत रहा है।

भारत और बांग्लादेश की सुरक्षा सेनाओं के मध्य 1979 के अन्त में दक्षिण त्रिपुरा के सीमावर्ती नगर बेलोनिया के निकट गोलीबारी की घटनाएँ हुईं। मुहुरी नदी बांग्लादेश और भारत के त्रिपुरा राज्य की सीमा पर बहती है। मुहुरी नदी के प्रवाह के दिशा-परिवर्तन के कारण लगभग 45 एकड़ भूमि पानी से बाहर निकल आई जो कि इस विवाद का कारण बनो। इस अल्पकालीन विवाद में दोनों की सेनाओं में झड़पें हुईं परन्तु जल्द ही शान्ति कायम हो गई।

बंगाल की खाड़ी में उभरा एक छोटा-सा टापू है— न्यू मूर द्वीप (New Moore Island)। लहरों के उतार-चढ़ाव पर निर्भर इस द्वीप का कुल क्षेत्रफल 2 से 12 वर्ग किलोमीटर है। यह भारत के सीमा तट से 5200 मीटर तथा बांग्लादेश के निकटतम सीमा तट से 7000 मीटर दूर है। यह कुछ वर्ष पूर्व सागर में उभर आया था। यह मुख्य रूप से गंगा के साथ बहकर आई लाखों टन कीचड़ और मिट्टी से बना है। भारत ने इस द्वीप को सर्वप्रथम 1971 में देखा। भारत ने इस द्वीप की ओर बांग्लादेश का ध्यान सन् 1974 में भारत-बांग्लादेश सागर संबंधी वार्ता में आकर्षित किया। हरियाभंगा (Hariabhanga) नदी के दक्षिण में स्थित इस द्वीप को भारत, न्यू मूर द्वीप (New Moore Island) जबकि बांग्लादेश दक्षिणी तलपट्टी द्वीप (South Talpatti Island) कहता है।

इस द्वीप पर भारत के स्वामित्व को बांग्लादेश ने 1979 तक कोई चुनौती नहीं दी। भारत के राष्ट्रीय ध्वज को इस द्वीप में पहली बार मार्च 1980 में फहराया गया। उस समय बांग्लादेश ने आपत्ति करते हुए कहा कि न्यू मूर भारत का नहीं, बल्कि एक विवादास्पद क्षेत्र है। इस प्रकार न्यू मूर पर बांग्लादेश ने अपना दावा पेश किया। तत्पश्चात् बांग्लादेश ने न्यू मूर पर संप्रभुता के प्रश्न को संयुक्त राष्ट्र संघ में उठाने की धमकी दी। भारतीय झण्डा फहराए जाने के विरोध में मार्च 1980 में बांग्लादेश के ढाका में भारत के उच्चायोग के सम्मुख प्रदर्शन हुए। मई 1981 में जब भारतीय नौ सेना का जहाज संध्याक (INS Sandhayak) न्यू मूर के निकट पहुँचा तब बांग्लादेश ने गम्भीर आपत्ति और विरोध किया। यद्यपि समय-समय पर विविध स्तरों पर इस प्रश्न पर विचार होता रहा है परन्तु वास्तव में इस विवाद का अभी तक कोई समाधान नहीं हो सका है।

वास्तव में भारत-बांग्लादेश सागरीय सीमा का निर्धारण हुआ ही नहीं है—अतः इस विवाद का एक कारण यह भी है कि यह द्वीप दोनों में से किसी भी देश के क्षेत्रीय जल सीमा में स्थित है ही नहीं। खाड़ी उस स्थान पर आरम्भ होती है जहाँ दोनों देशों की सीमा-रेखा मिलती है। यहाँ रेडक्लिफ सीमा-रेखा है जो 1947 में विभाजन के समय भारत-पाकिस्तान सीमा के रूप में निर्धारित की गई थी। न्यू मूर द्वीप इस रेखा से 2 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। भारत का दावा मध्यवर्ती रेखा के सिद्धान्त पर आधारित है। इस आधार पर श्रीलंका, थाइलैण्ड और इण्डोनेशिया के साथ भारत की सागरीय सीमा निर्धारित की गई है। कुल मिलाकर यह कोई गम्भीर विवाद नहीं है। यदि दोनों देश चाहें तो बातचीत के द्वारा इसका समाधान किया जा सकता है। मार्च 2010 में वैज्ञानिकों ने इसे समुद्र में ओझल घोषित कर दिया।

(iii) तीन बीघा गलियारा विवाद (Teen Bigha Corridor Dispute)

भारत-बांग्लादेश संबंधों में कटुता तीन बीघा गलियारे को लेकर भी पैदा हुई थी। बांग्लादेश के दो क्षेत्र दहाग्राम और अंगारपोता को भारत का एक छोटा-सा (एक एकड़) भूमि का टुकड़ा 'तीन बीघा' बांग्लादेश के रंगपुर जिले को अलग करता है अर्थात् दहाग्राम और अंगारपोता के लोगों को रंगपुर से इन दो छोटे क्षेत्रों में आने-जाने के लिए तीन बीघा नामक भारतीय प्रदेश से निकलना होता है। इस विवाद को 1981 में श्रीमती इन्दिरा गाँधी की राष्ट्रपति इरशाद के साथ हुई बातचीत में समझौते के द्वारा सुलझाने का प्रयास किया गया था। इन्दिरा-इरशाद समझौते-1981 में यह निर्णय हुआ कि भारत अपने तीन बीघा क्षेत्र को स्थायी पट्टे पर बांग्लादेश को दे देगा साथ ही इस भूमि का किराया नहीं लिया जाएगा।

परन्तु वास्तव में तीन बीघा को पट्टे पर देने का यह समझौता लागू नहीं किया जा सका क्योंकि देश के किसी भी प्रदेश को पट्टे पर देने के लिए भारत के संविधान में संशोधन करना आवश्यक था। इस तीन बीघा गलियारे को पट्टे पर देने के निर्णय को चुनौती देते हुए कलकत्ता उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की गई। यह तर्क दिया गया कि तीन बीघा को बांग्लादेश को पट्टे पर देने से न केवल भारत की सुरक्षा के लिए संकट उत्पन्न हो जाएगा बल्कि 28 निकटवर्ती ग्रामों के लगभग 5,000 भारतीय निवासी अपने ही देश में शरणार्थी बन जाएँगे।

(iv) बांग्लादेशियों की भारत में अवैध घुसपैठ संबंधी विवाद

(Dispute Regarding Illegal Migration of Bangladeshis into India)

आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए बांग्लादेशी बहुत बड़ी संख्या में अवैध रूप से भारत में आ गए हैं। अतः बांग्लादेश के नागरिकों से संबंधित यह अवैध प्रवासन भारत के लिए गंभीर समस्या बना हुआ है। बांग्लादेशी नागरिकों और पश्चिम बंगाल निवासियों में अंतर कर पाना बहुत कठिन है। ये बांग्लादेशी नागरिक काम की तलाश में आए और अधिकतर झुग्गी बस्तियों (Slums) में बस गए।

कभी-कभी सांप्रदायिक तनाव के कारण कुछ गैर-मुसलमान भी अवैध रूप से भारत आ गए हैं। एक अनुमान है कि अकेले दिल्ली में चार लाख से ज्यादा बांग्लादेशी नागरिक अवैध रूप से रह रहे हैं। वैध पारपत्र (Passport) इत्यादि यात्रा दस्तावेजों के बिना बांग्लादेशी निवासियों का भारत में आना आसान होता है क्योंकि दोनों देशों के बीच कोई प्राकृतिक सीमा नहीं है।

अवैध आवागमन को रोकने के लिए भारत-बांग्लादेश सीमा पर काँटेदार तार लगा दिए जाने संबंधी भारत के प्रस्ताव को बांग्लादेश ने स्वीकार तो कर लिया परंतु तार नहीं लगाए जा सके। भारत ने बांग्लादेश को यह स्पष्ट कर दिया था कि काँटेदार तार लगाना कोई बांग्लादेश-विरोधी कार्य नहीं होगा। यह तो अवैध आवागमन को रोकने तथा भारत की सुरक्षा के लिए आवश्यक है। यह 1975 को भारत-बांग्लादेश मैत्री संधि की भावना के विपरीत नहीं है। फिर भी बांग्लादेश राइफलस द्वारा तार लगा रहे भारतीय कर्मचारियों पर गोलियाँ बरसाने से अप्रैल 1984 में भारत-बांग्लादेश सीमा पर तनाव बढ़ गया था।

भारत-बांग्लादेश नदी जल समझौता (India-Bangladesh River Water Agreement)

नदी जल समझौता-1996 (River Water Agreement-1996)

पंचवर्षीय गंगा नदी जल समझौता भारत और बांग्लादेश के मध्य 1977 में हुआ था। इस समझौते की अवधि सन् 1982 में समाप्त हो गई थी। उसके पश्चात् समझौते के बिना तदर्थ-आधार पर भारत पानी देता रहा। फिर भी 1988 से 1996 की अवधि में पाकिस्तान-समर्थक तत्वों द्वारा भारत-विरोधी भावनाएँ भड़काने के कारण भारत-बांग्लादेश संबंधों में कई बार तनाव उत्पन्न हुए। शेख हसीना के 1996 में बांग्लादेशी प्रधानमंत्री बनने से वातावरण में परिवर्तन तो हुआ लेकिन स्थिति सामान्य नहीं हुई। तत्पश्चात् शेख हसीना वाजेद सरकार ने भारत के साथ गंगा जल का बँटवारा विषय पर एक 30 वर्षीय समझौता किया।

इस समझौते पर 12 दिसम्बर 1996 को नई दिल्ली में बांग्लादेश की प्रधानमंत्री शेख हसीना और तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री एच.डी. देवगौड़ा ने हस्ताक्षर किए। इस समझौते में यह व्यवस्था है कि प्रत्येक पाँच वर्ष के पश्चात् इसका पुनरावलोकन किया जाएगा। यह पुनरावलोकन यदि आवश्यक हो तो दो वर्ष के पश्चात् भी हो सकता है। तीस वर्ष के पश्चात् दोनों देशों की सहमति से इस समझौते का नवीनीकरण किया जा सकेगा। श्री देवगौड़ा ने इस समझौते को भारत-बांग्लादेश संबंधों की ऐतिहासिक मोड़ बताया। उन्होंने लोक सभा में कहा कि यह हमारे विशेष संबंधों की उचित प्रशंसा है। हालाँकि इस समझौते पर हस्ताक्षर के बाद भी भारत-विरोधी भावनाओं में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। वस्तुतः बांग्लादेश के अंदर भारत की सकारात्मक छवि तभी संभव होगी जब शेख हसीना अपने देश की जनता को यह विश्वास दिला देंगी कि भारत में बांग्लादेश के विरुद्ध कोई भावनाएँ नहीं हैं।

भारत-बांग्लादेश समझौता-1996 में पानी की कमी वाले मौसम (Lean Season) को प्रति वर्ष 1 जनवरी से 31 मई तक की अवधि को ही स्वीकार किया गया। इसमें भी 21 से 30 अप्रैल सबसे अधिक कमी की अवधि होती है। 1977 की संधि के अनुसार 1 से 10 जनवरी के समय में कुल उपलब्ध 98,000 क्यूसेक पानी में से भारत 40,000 क्यूसेक अपने लिए रखकर बांग्लादेश को शेष 58,000 क्यूसेक उपलब्ध करा देता था। परंतु 21 से 30 अप्रैल के सबसे ज्यादा कमी के समय में भारत केवल 20,500 क्यूसेक का उपयोग करता था शेष 34,500 क्यूसेक बांग्लादेश के हिस्से में आता था। इस प्रकार भारत की अपेक्षा बांग्लादेश के लिए अधिक पानी का प्रावधान था हालाँकि हुगली को साफ करने लिए न्यूनतम 40,000 क्यूसेक पानी की आवश्यकता होती है।

वर्ष 1996 के नए समझौते के अनुसार सबसे कमी वाली अवधि में बांग्लादेश को तो 35,000 क्यूसेक पानी मिल जाएगा, परंतु भारत को मात्र 25,992 क्यूसेक से संतुष्ट होना पड़ेगा। इसके अलावा इस समझौते के अनुसार 30 वर्ष तक प्रतिवर्ष 1 जनवरी से 31 मई तक 10-10 दिन की 15 अवधियों के लिए फरक्का से गंगाजल के निश्चित बँटवारे की व्यवस्था की गई है। इस समझौते के प्रावधानों के अनुसार, जनवरी और फरवरी के दो महीनों में भारत को 40,000 क्यूसेक की दर से पानी मिलता रहेगा। इसी अवधि में बांग्लादेश का हिस्सा 67,516 क्यूसेक से क्रमशः घटते हुए 39,106 क्यूसेक तक आ जाएगा।

इस समझौते के अनुसार यदि फरक्का से पानी की आपूर्ति 70,000 क्यूसेक या उस से कम हो तब दोनों देशों को उपलब्ध पानी का पचास-पचास प्रतिशत मिलेगा। यदि जल का प्रवाह 70,000 से 75,000 क्यूसेक होगा तो बांग्लादेश को 35,000 क्यूसेक और शेष पानी भारत के पास रहेगा। यदि फरक्का से पानी का प्रवाह 75,000 क्यूसेक से अधिक होगा तो भारत 40,000 क्यूसेक अपने लिए रखकर शेष बांग्लादेश को दे देगा।

शेख हसीना और एच.डी. देवगौड़ा दोनों ने इस तीस-वर्षीय समझौते को दोनों देशों के लिए न्यायोचित और प्रासंगिक बताया। नए समझौते पर टिप्पणी करते हुए विदेश मंत्रालय के एक अधिकारी ने यह स्पष्ट किया कि यदि जनवरी-फरवरी में फरक्का में फालतू पानी होता है तो कलकत्ता बंदरगाह ले सकता है परंतु यदि पानी की उपलब्धता 70,000 क्यूसेक से कम हो जाती है तो दोनों को बराबर हिस्सा लेना होगा। समझौते के दौरान बांग्लादेश को प्रधानमंत्री को एक कठिन सौदेबाज (Tough Bargainer) कहा गया क्योंकि उन्होंने भारत को कोई रियायत नहीं दी। वास्तव में उनके देश को पानी की कमी वाले ब्लॉक में 1977 की अपेक्षा 500 क्यूसेक अतिरिक्त पानी मिलने की व्यवस्था समझौते में की गई थी। आलोचकों ने कहा कि जहाँ 1977 की संधि में पानी की आपूर्ति में वृद्धि (Augmentation) का प्रावधान था, वैसा इस समझौते में कुछ भी नहीं है। भारत द्वारा उस प्रावधान के बिना समझौते पर हस्ताक्षर करने को देश के राष्ट्रीय हितों में विरुद्ध माना जा सकता है।

शेख हसीना के भारत आगमन से कुछ ही समय पूर्व पश्चिम बंगाल के तत्कालीन मुख्यमंत्री ज्योति बसु ढाका गए थे। आरंभ में वे इस प्रस्तावित समझौते से प्रसन्न नहीं थे परंतु जब समझौते में कलकत्ता बंदरगाह के लिए समुचित पानी की व्यवस्था करा दी गई तो उन्होंने संतोष व्यक्त किया। उन्होंने कहा कि 10 दिवसीय 15 ब्लॉकों में से सात में कलकत्ता बंदरगाह के लिए 40,000 क्यूसेक पानी मिलेगा। बसु के अनुसार इस समझौते से भारत और बांग्लादेश दोनों को लाभ होगा। साथ ही इससे व्यापारिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में सहयोग का मार्ग प्रशस्त होगा। उन्होंने यह आशा भी व्यक्त की कि इस समझौते से चटगाँव बंदरगाह के दोनों देशों के उद्यमियों द्वारा प्रयोग की संभावना भी बढ़ेगी।

भारत के साथ मैत्री को और गहरा बनाने के लिए शेख हसीना की सरकार ने अनेक प्रयास किए। फिर भी असम तथा मेघालय से लगने वाली बांग्लादेश की सीमा पर अचानक अप्रैल 2001 में तनाव उत्पन्न हो गया। एक गाँव पर बांग्लादेशी सैनिकों (Bangladesh Rifles) ने कब्जा कर लिया। भारत के सीमा सुरक्षा बल (Border Security Force - BSF) के 18 सैनिकों को पकड़ लिया गया। इनमें से 16 की नृशंस हत्या करके उनके क्षत-विक्षत शव वापस भेज दिए गए। इस घटना ने भारत सरकार और जनता को हिलाकर रख दिया। शेख हसीना ने तत्कालीन प्रधानमंत्री वाजपेयी को आश्वासन दिया कि ऐसी घटना फिर नहीं होगी तथा जाँच करके दोषी व्यक्तियों को दंड दिया जाएगा।

भारत-बांग्लादेश संबंधों की हालिया अवस्था (Current Situation of India-Bangladesh Relations)

अन्य दक्षिण एशियाई पड़ोसियों की तरह भारत और बांग्लादेश के संबंध भी सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक तौर पर जुड़े हैं। इसके अतिरिक्त भी बहुत कुछ है जो दोनों देशों को एक सूत्र में बाँधता है जैसे-साझा इतिहास, भाषा, संस्कृति, साहित्य, संगीत और कला आदि। भारत के साथ बांग्लादेश की न केवल स्वाधीनता के लिए संघर्ष और मुक्ति की साझी विरासत है अपितु दोनों एक-दूसरे के प्रति भातृ-भाव अनुभव करते हैं। यही भाव बांग्लादेश के साथ बहुआयामी संबंधों में भी झलकता है। उच्च स्तरीय आदान-प्रदान, यात्राएँ, बैठकें आदि भी नियमित रूप से चलती रहती हैं। साथ ही साथ लोगों के बीच भी व्यापक स्तर पर क्रियाकलापों का संचालन होता रहता है। बांग्लादेश स्थित भारतीय उच्चायोग प्रति वर्ष लगभग पाँच लाख बीजा जारी करता है और हजारों बांग्लादेशी छात्र स्वयं के खर्च पर तथा 100 से अधिक भारत सरकार की वार्षिक छात्रवृत्ति पर भारत में शिक्षा प्राप्त करते हैं। ये आदान-प्रदान और अन्तर्-क्रियाकलाप राजकीय स्तर के क्रियाकलापों के लिए एक महत्वपूर्ण सहायक का कार्य करते हैं।

फरवरी, 2013 में भारत के विदेश मंत्री सुलमान खुर्रैद बांग्लादेश की यात्रा पर गए थे तथा बांग्लादेश की विदेश मंत्री दीपू मोनी से इनकी मुलाकात हुई थी। यह बैठक आपसी संबंधों को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से संयुक्त परामर्शकारी आयोग (Joint Consultative Commission - JCC) के तहत हुई थी। संयुक्त परामर्शकारी आयोग ने व्यापार एवं वाणिज्य, बिजली, जल संसाधन, सुरक्षा, सीमा प्रबंधन, आधारभूत संरचना, लोगों के बीच संपर्क, संस्कृति पर्यावरण तथा शिक्षा के क्षेत्र में हो रहे सहयोग की समीक्षा की थी। भारतीय विदेश मंत्री की इस यात्रा के दौरान अखौस-अगतरत्ना रेल संपर्क का निर्माण तथा भारत-बांग्लादेश फाउंडेशन नाम के एक विचार मंच (Think Tank) की स्थापना हेतु समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर भी किया गया था। दोनों विदेश मंत्रियों के बीच तीस्ता नदी जल बँटवारा समझौता तथा भूमि सीमा समझौता (Land Boundary Agreement) की संपुष्टि से संबंधित बातचीत भी हुई।

भारत की यह पुरानी शिकायत रही है कि भारत के उत्तर-पूर्वी भाग में सक्रिय आतंकवादी तत्व बांग्लादेश में शरण लेते रहे हैं। लेकिन वर्तमान शेख हसीना सरकार ने यह माना है कि ऐसे तत्व केवल भारत के लिए खतरनाक नहीं हैं बल्कि स्वयं बांग्लादेश की सुरक्षा के लिए भी खतरनाक हैं जो कुल मिलाकर बांग्लादेश के सामाजिक विकास के लिए भी नुकसानदायक है। बांग्लादेश ने इन आतंकवादी समूहों के प्रति शून्य सहनशीलता (Zero Tolerance) की नीति अपना ली है। दोनों देशों के बीच जनवरी, 2013 में प्रत्यर्पण संधि की गई है। जुलाई, 2013 में बांग्लादेश की विदेश मंत्री दीपू मोनी भूमि सीमा समझौता पर भारत के विपक्षी दलों का समर्थन प्राप्त करने के प्रयास में भारत आई थीं।

भारत में कुछ विपक्षी दल इस समझौते का विरोध कर रहे हैं। तीस्ता जल समझौते के संदर्भ में भारत कुछ कदम पीछे हट गया है। इसका मुख्य कारण पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी द्वारा इस समझौते का विरोध करना है। उनका कहना है कि जब तक उत्तरी बंगाल के लोग इसके लिए सहमति नहीं देते तब तक वे इस समझौते का समर्थन नहीं करेंगे। ममता बनर्जी का यह मानना है कि वर्तमान स्वरूप में इस समझौते को लागू करने से उत्तरी बंगाल में जल की कमी हो जाएगी।

भारत-बांग्लादेश के बीच पिछले कुछ वर्षों में व्यापार बढ़ाने के प्रयास किए जा रहे हैं। बांग्लादेश के बड़े उद्यमियों का यह मानना है कि अगले तीन वर्षों में भारत से बांग्लादेश में 2.5 बिलियन डॉलर का निवेश किया जाएगा। उनका यह मानना है कि बांग्लादेश को उच्च आर्थिक विकास की दर प्राप्ति में भारत की महत्वपूर्ण भूमिका है। जून, 2013 में बांग्लादेश का एक व्यापारिक प्रतिनिधिमंडल 23 परियोजनाओं के लिए 186.5 मिलियन डॉलर का निवेश आकर्षित करने के उद्देश्य से भारत की यात्रा पर आया।

था। बांग्लादेश 13 महत्वपूर्ण क्षेत्रों जैसे कृषि प्रसंस्करण, ऑटोमोबाइल, अस्पताल एवं चिकित्सा सामग्री, कपड़ा, रसायन, प्लास्टिक, हल्के अभियांत्रिकी, सूचना एवं संचार तकनीक, औषधि, पर्यटन, व्यावसायिक सेवाएँ तथा रत्न एवं आभूषण जैसे क्षेत्रों के लिए भारत में सहभागियों की तलाश कर रहा है। बांग्लादेश के इस कार्य में भारतीय उद्योग परिसंघ (The Confederation of Indian Industry) मदद कर रहा है। भारत-बांग्लादेश के बीच व्यापार एवं उससे संबंधित संयोजकता मुद्दे की निगरानी के लिए भारतीय विदेश मंत्री सलमान खुरशीद की ढाका यात्रा के दौरान एक संयुक्त कार्यकारी समूह का गठन किया गया था।

भारत-बांग्लादेश के बीच जनवरी, 2013 में प्रत्यर्पण सन्धि तथा संशोधित यात्रा प्रावधान (Revised Travel Arrangements - RTA) समझौते पर हस्ताक्षर किया गया। प्रत्यर्पण सन्धि से जहाँ अपराधियों एवं आतंकवादियों को एक-दूसरे देश में प्रत्यर्पित किया जा सकेगा वहीं भारत-बांग्लादेश के बीच हस्ताक्षरित इस प्रत्यर्पण सन्धि में इनकार संबंधी प्रावधान (Refusal Provisions) को भी शामिल किया गया है। यदि किसी व्यक्ति के प्रत्यर्पण से राष्ट्रीय सुरक्षा को किसी प्रकार का खतरा पहुँचने का अंदेशा हो तो ऐसी स्थिति में प्रत्यर्पण से इनकार किया जा सकता है। इस सन्धि के अंतर्गत किसी राजनीतिक बंदी को प्रत्यर्पित नहीं किया जा सकेगा। अधिकारियों के अनुसार प्रत्यर्पण प्रक्रिया के दौरान यदि किसी प्रकार का विवाद उत्पन्न होता है तो इस मामले को संबंधित देश के कानून के अनुसार निपटारा जा सकेगा।

संशोधित यात्रा प्रावधान के अंतर्गत बांग्लादेश के निवासियों के लिए उदार वीजा नीति की घोषणा की गई है। व्यापारियों को पाँच वर्ष के लिए बहुल प्रवेश-वीजा (Multiple-Entry Visa) वीजा मिल सकेगा जिस एक अतिरिक्त वर्ष के लिए बढ़ाया जा सकेगा। जो लोग चिकित्सा या उपचार के आधार पर यात्रा करना चाहेंगे उन्हें दो वर्षों के लिए बहुल प्रवेश वीजा प्राप्त हो सकेगा। इसे भी एक अतिरिक्त वर्ष के लिए बढ़ाया जा सकेगा। अब बीमार व्यक्ति के साथ तीन अन्य व्यक्ति सहायक के रूप में वीजा प्राप्त कर सकेंगे। अब तक भारत-बांग्लादेशी नागरिकों को छह महीने के लिए पर्यटक वीजा तथा बीमार व्यक्ति के साथ सहायक के रूप में एक व्यक्ति को वीजा जारी करता रहा है।

पहली बार बांग्लादेश भारत से 500 मेगावाट बिजली खरीदेगा। इसके लिए दोनों देशों से संबंधित ग्रिडों के बीच संपर्क स्थापित करना जरूरी होगा। दोनों देशों के बीच बिजली क्षेत्र में संयुक्त उत्पादन तथा इसके विनिमय को बढ़ावा देने के लिए एक संयुक्त कार्यकारी समूह (Joint Working Group) का गठन किया गया है। बांग्लादेश भारत के त्रिपुरा-मेघालय एवं असम में स्थित ग्रिडों से संपर्क स्थापित करने पर सहमत हो गया है। यदि ऐसा होता है तो भारत अरुणाचल प्रदेश में व्यापक जल-विद्युत क्षमता का उपयोग करने में सक्षम हो सकेगा। एक अनुमान के मुताबिक अरुणाचल प्रदेश में 50-90 हजार मेगावाट बिजली उत्पादन का क्षमता है। यह भारत के लिए आर्थिक रूप से लाभदायक है क्योंकि उत्पन्न बिजली को बांग्लादेश के सभी भागों तक पहुँचाया जा सकता है। कुछ वर्ष पहले तक दोनों देशों के बीच इस प्रकार के सहयोग की कल्पना तक नहीं की जाती थी। भारत-बांग्लादेश के बीच गुवाहाटी-शिलांग-सिलहट-ढाका के बीच बस सेवा शुरू करने हेतु बातें जारी हैं। बांग्लादेश ने पहली बार भारत के उत्तरी-पूर्वी राज्यों को भारत के मुख्य भूमि से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की बात स्वीकार की है। इससे दक्षिण एशिया को दक्षिण-पूर्व एशिया एवं उससे आगे भी जोड़ना संभव हो सकेगा जो आर्थिक रूप से काफी महत्वपूर्ण होगा। बांग्लादेश ने व्यापारिक गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए भारत के साथ-साथ भू-आबद्ध नेपाल एवं भूटान को भी अपने चिटगांव (Chittagong) तथा मोंगला बंदरगाह के प्रयोग की अनुमति प्रदान कर दी है।

दोनों देशों के बीच अंतरदेशीय जल परिवहन एवं पायगमन समझौता के अंतर्गत कुछ पोर्ट ऑफ कॉल्स (Port of Calls) को शामिल किया गया है तथा कुछ और पोर्ट को शामिल करने के लिए बातचीत जारी है। बंगाल की खाड़ी से जुड़े सभी पत्तनों को एक-दूसरे से जोड़ने के लिए समुद्रतटीय जलपोत परिवहन समझौता (Coastal Shipping Agreement) के लिए बातचीत की जा रही है। इसके लिए आवश्यक आधारभूत संरचना तैयार किया जा रहा है। भारत ने इस महत्वाकांक्षी परियोजना को पूरा करने के लिए 1 बिलियन डॉलर की ऋण सहायता उपलब्ध करायी है। बाद में भारत ने इसमें से 200 मिलियन डॉलर को अनुदान के रूप में बदल दिया है।

जुलाई, 2013 में भारत के प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने भारत की यात्रा पर आयीं बांग्लादेश की विदेशमंत्री दीपू मोनी को तिपाईमुख जल विद्युत परियोजना से जुड़े विवाद को सुलझाने के लिए बांग्लादेश को इसमें भागीदारी करने का प्रस्ताव दिया है। तिपाईमुख जल विद्युत परियोजना निर्माण की बात 1980 के दशक से ही की जा रही है और तभी से इस परियोजना के संबंध में दोनों देशों के बीच विवाद जारी है। भारत ने इस संबंध में बांग्लादेश को आश्वस्त किया है कि भारत ऐसा कुछ भी नहीं करेगा जिससे बांग्लादेश के राष्ट्रीय हितों को नुकसान हो। भारत द्वारा इस परियोजना के संबंध में बांग्लादेश को आर्थिक-तकनीकी व्यवहार्यता रिपोर्ट उपलब्ध कराने, और अधिक सर्वेक्षण कराने तथा बाँध की ऊँचाई कम करने के साथ अन्य सभी प्रकार के सदेहों को दूर करने के बावजूद इस परियोजना का बांग्लादेश में विरोध किया जा रहा है। भारत का यह मानना है कि यदि बांग्लादेश तिपाईमुख जल विद्युत परियोजना में भागीदारी करता है तो इससे भारत-बांग्लादेश के बीच निर्माणाधीन तिस्ता-III, IV तथा सुबान सीरी (Suban Siri) जल विद्युत परियोजनाओं में भी भागीदारी सुनिश्चित की जा सकेगी।

फरवरी 2013 में भारत-बांग्लादेश के बीच संयुक्त परामर्श आयोग (Joint Consultative Commission) की द्वितीय बैठक के दौरान दोनों देशों के बीच आयात से सम्बद्ध प्रभावी सूचना विनिमय के संबंध में राजकोषीय अपवर्जन की रोकथाम तथा दोहरे कराधान का परिहार संबंधी संधि में सुधार के लिए प्रस्तावित प्रोटोकॉल की महत्ता को दोनों देशों ने स्वीकार किया।

भारत-बांग्लादेश दोनों देशों ने आशा व्यक्त की है कि भारतीय मानक ब्यूरो तथा बांग्लादेश मानक एवं परीक्षण संस्थान (Bangladesh Standards and Testing Institute) के बीच सहयोग के लिए जल्द ही समझौता हो जाएगा। भारतीय विदेश मंत्री सलमान खुरशीद ने बांग्लादेश मानक एवं परीक्षण संस्थान के सुधार कार्य हेतु भारत सरकार द्वारा 800 मिलियन डॉलर की ऋण सहायता स्वीकृत किए जाने की बात कही है।

भारत-बांग्लादेश ने अखौरा एवं अगरतला के बीच रेल संपर्क स्थापित करने हेतु समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किया है। दोनों देशों ने यह आशा व्यक्त की है कि शाहबाजपुर-महिषाशन (Shahbajpur-Mahishashan) तथा चिलहाटी-हल्दीबारी (Chilahati-Haldibari) रेल संपर्क निर्माण कार्य को जल्द से जल्द पूरा कर लिया जाएगा। भारत ने बांग्लादेश को इस बात के प्रति भी आश्वस्त किया है कि वह अपने प्रस्तावित नदी संपर्क योजना के तहत ऐसा कोई कार्य नहीं करेगा जिससे कि बांग्लादेश के हितों को नुकसान पहुँचे। बांग्लादेश-भारत मैत्री ऊर्जा कंपनी द्वारा रामपाल में 1320 मेगावाट के बिजली संयंत्र की स्थापना का कार्य किया जा रहा है। भारत-बांग्लादेश नवीकरणीय ऊर्जा क्षेत्र में भी सहयोग के लिए सहमत हैं।

भारत के राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने राष्ट्रपति बनने के बाद अपनी पहली विदेश यात्रा के रूप में मार्च, 2013 में बांग्लादेश की यात्रा की थी। इसके पहले राष्ट्रपति के रूप में 1974 में बी.बी. गिरि ने बांग्लादेश की यात्रा की थी। बांग्लादेश यात्रा के दौरान भारतीय राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी को बांग्लादेश के स्वाधीनता संग्राम में उनके योगदान को देखते हुए उन्हें बांग्लादेश मुक्ति जुद्धो सम्मानना (Bangladesh Muktiuddho Sammanana) या बांग्लादेश स्वाधीनता संग्राम सम्मान पुरस्कार (Bangladesh Liberation War Honor Award) तथा ढाका विश्वविद्यालय द्वारा डॉक्टरेट ऑफ लॉ (Doctorate of Law) की पदवी उपाधि से सम्मानित किया गया। अपनी यात्रा के दौरान प्रणब मुखर्जी ने ढाका विश्वविद्यालय के छात्रों को संबोधित किया था। उन्होंने कहा कि भारत बांग्लादेश के विकास तथा वहाँ के लोगों की आकांक्षाओं को पूरा करने के प्रति समर्पित है। उन्होंने कहा कि हमें ऐसे विकास को सुनिश्चित करना चाहिए जिससे दोनों देशों के लोगों को लाभ पहुँचे।

आर्थिक क्षेत्र में भारत ने बांग्लादेश से होने वाले आयातों पर केवल 25 प्रकार की वस्तुओं को छोड़कर सभी पर से कोटा एवं प्रशुल्क समाप्त कर दिया है। भारत बांग्लादेश के साथ शेष वस्तुओं पर गैर-प्रशुल्क बाधाओं की समाप्ति सीमा पर और अधिक हाटों (बाजार) की व्यवस्था तथा संबंधित मानकों को उदार बनाने के लिए बातचीत कर रहा है।

भारत-बांग्लादेश सीमा पर हत्या जैसी घटनाओं को रोकने के लिए भारत के गृहमंत्री श्री. सुशील शिंदे की जनवरी, 2013 की बांग्लादेश यात्रा के दौरान एक समझौता किया गया था। इस समझौते के अंतर्गत हत्या जैसी घटनाओं को शून्य स्तर (Zero Level) पर लाने की बात कही गई है। इस संबंध में तत्कालीन जैसी घटनाओं को रोकने के लिए भारतीय सीमा सुरक्षा बलों को रबड़ की गोलियाँ चलाने का आदेश दिया गया है। गृहमंत्री की इस बांग्लादेश यात्रा के दौरान दोनों देशों ने समन्वित सीमा प्रबंधन योजना (Coordinated Border Management Plan - CBMP) के सहज कार्य संचालन पर संतोष ज़ाहिर किया। दोनों देश सीमा पर आपराधिक गतिविधियों की रोकथाम के संदर्भ में संयुक्त गश्ती (Joint Patrolling) को संख्या बढ़ाने पर भी सहमत हुए। दोनों देश शून्य रेखा (Zero Line) के 150 यार्ड के अंदर विकास कार्यों को अनुमति देने पर भी सहमत हुए। दोनों देश बेहतर सीमा प्रबंधन अनुमति देने पर भी सहमत हुए थे। बेहतर सीमा प्रबंधन के एक अतिरिक्त कदम के रूप में स्थानीय मुद्दों के समाधान के लिए सीमाई जिलों के जिला आयुक्तों तथा जिलाधिकारियों के बीच जल्द से जल्द बातचीत शुरू करने पर भी सहमति हुई थी। दोनों देश मानव दुर्व्यवहार, नशीले पदार्थों की तस्करी तथा इंटरपोल जैसे सहयोग के विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित केन्द्रीय स्थलों (Nodal Points) की गतिविधियों को विस्तृत करने पर भी सहमत हुए।

बांग्लादेश की प्रधानमंत्री श्रीमती शेख हसीना के नेतृत्व में एक प्रतिनिधिमण्डल भारत की राजकीय यात्रा पर 10 से 13 जनवरी, 2010 के बीच आया था। यह एक सफल यात्रा थी जिसने दोनों देशों को अपने संबंधों को आगे बढ़ाने और इसे नया आयाम देने के लिए एक ऐतिहासिक अवसर प्रदान किया। 12 जनवरी, 2010 को श्रीमती शेख हसीना को राष्ट्रपति भवन में वर्ष 2009 के लिए 'इन्दिरा गाँधी शान्ति, निरस्त्रीकरण एवं विकास पुरस्कार' से सम्मानित किया गया था।

आपराधिक मामलों में परस्पर कानूनी सहायता करने, सजायाफ्ता (Convicted) व्यक्तियों के स्थानांतरण और आतंकवाद, संगठित अपराध एवं नशीले पदार्थों की तस्करी रोकने से संबंधित तीन समझौतों और ऊर्जा क्षेत्र में सहयोग तथा सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम संबंधी एक संयुक्त विज्ञप्ति पर हस्ताक्षर किये गये। दोनों देशों के प्रधानमंत्री साझे दृष्टिकोण के आधार पर विकास के लिए एक व्यापक सहयोग संरचना पर सहमत हुए। विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग के लिए एक संयुक्त वक्तव्य जारी किया गया। भारत ने बांग्लादेशी परियोजनाओं जिसमें रेल, बस और नदियों के तटबंध आदि सम्मिलित हैं, के लिए 1 बिलियन अमेरिकी डॉलर की ऋण सहायता प्रदान करने की घोषणा की है। भारत ने बांग्लादेश को सहायता प्रदान करने हेतु अपने ग्रिड से 250 मेगावाट विद्युत की आपूर्ति पर अपनी सहमति प्रदान की है। नेपाल को जोड़ने के लिए एक कड़ी के रूप में भारत ने रोहनपुर (बांग्लादेश)-सिंगाबाद (भारत) बड़ी रेल लाइन बनाने के लिए सहमति प्रदान की है। दोनों देश आशुगंज और सिलघाट को ठहराव

वंदरगाह बनाने, सावरूप-रागढ़ तथा डेमामिरी-धेगामुख सीमाशुल्क केंद्र का संचालन शुरू करने आदि पर सहमत हुए थे। संयुक्त सीमा कार्यकारी समूह (Joint Boundary Working Group – JBWG) की चौथी बैठक का आयोजन 10-11 नवम्बर, 2010 को नई दिल्ली में किया गया था। इसके बाद 6 सितंबर, 2011 को भारतीय प्रधानमंत्री डा० मनमोहन सिंह की यात्रा की अवधि में भारत के उच्चायोग और बांग्लादेश के गृह सचिव के बीच तीन समझौतों के अनुमोदन-प्रपत्रों तथा प्रोटोकॉल का आदान-प्रदान किया गया।

विदेश मंत्री श्री प्रणब मुखर्जी बांग्लादेश की राजकीय यात्रा पर 9 फरवरी, 2009 को ढाका पहुँचे। वहाँ 'व्यापार' और 'द्विपक्षीय निवेश संवर्धन एवं संरक्षण' संबंधी दो समझौतों पर हस्ताक्षर किये गये। भूतपूर्व लोक सभा अध्यक्ष श्री सोमनाथ चटर्जी, बांग्लादेशी संसद जातीय संगसद (Jatiya Sangsad) के प्रारम्भिक प्रशिक्षण कार्यक्रम समारोह में सांसदों को संबोधित करने के लिए 21-23 फरवरी, 2009 के बीच बांग्लादेश गये थे।

बांग्लादेश की प्रधानमंत्री सुश्री शेख हसीना के साथ प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह की द्विपक्षीय बैठक शर्म एल शेख (Egypt) में आयोजित गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन (NAM Summit) में 15 जुलाई, 2009 को हुई थी। दोनों नेताओं ने 29 अप्रैल, 2010 को 16वें सार्क शिखर सम्मेलन (SAARC Summit) थिम्फू में पुनः भुलाकांत की और पारस्परिक सरोकारों पर वार्ता की। इससे पूर्व बांग्लादेश के विदेश मंत्री डॉ. दीपू मोनी अपने नई दिल्ली प्रवास की अवधि में 9 जुलाई, 2009 को भारतीय विदेश मंत्री एवं वित्त मंत्री से मिले और द्विपक्षीय विषयों पर वार्ता की। बांग्लादेश के विदेश मंत्री डॉ. दीपू मोनी 7-10 सितम्बर, 2009 के दौरान भारत आये थे। इस यात्रा के दौरान जल, आधारभूत संरचना विकास, ऊर्जा, व्यापार, सुरक्षा और भू-भागीय सीमा आदि विषयों से संबंधित अनेक निर्णय लिए गये थे। तत्कालीन विदेश सचिव श्रीमती निरूपमा राव की ढाका यात्रा 14-15 नवम्बर, 2009 को हुई थी। उन्होंने बांग्लादेश के प्रतिनिधि के साथ वार्ता की थी। भारत-बांग्लादेश संबंधों में निरंतर प्रगति आज भी जारी है।

नदी जल भागीदारी (River Water Sharing)

भारत और बांग्लादेश के बीच 12 दिसम्बर, 1996 को गंगा नदी के जल की भागीदारी से संबंधित एक समझौते पर हस्ताक्षर किये गये थे। 54 साझा नदियों की जल भागीदारी से संबंधित 'जल बंटवारा संधि' समानता पर आधारित है तथा लगातार सतृप्तजनक कार्य कर रहा है। दोनों देशों के बीच एक द्विपक्षीय संयुक्त नदी आयोग (Joint River Commission – JRC) विद्यमान है जिसकी स्थापना जून 1972 में दोनों देशों के बीच साझा प्रणाली का विकास अधिकाधिक लाभ प्राप्त करने, निकट संपर्क बनाये रखने, बाढ़ नियंत्रण कार्यों की व्यवस्था, अग्रिम बाढ़ चेतावनी की व्यवस्था, बाढ़ और समुद्री तूफानों की भविष्यवाणी और साथ ही साथ बाढ़ नियंत्रण के अध्ययन के लिए की गई थी। सिंचन परियोजनाओं आदि के लिए तिस्ता और फेनी नदियों तथा 6 अन्य साझा नदियों के संबंध में 'अंतरिम जल भागीदारी प्रबंधन' किया गया था। संयुक्त नदी आयोग की 37वीं बैठक का आयोजन नई दिल्ली में 17-20 मार्च, 2010 की अवधि में किया गया था।

महत्वपूर्ण द्विपक्षीय मंच (Important Bilateral Forum)

भारत और बांग्लादेश से जुड़े संयुक्त नदी आयोग (Joint Rivers Commission – JRC) और संयुक्त आर्थिक आयोग (Joint Economic Commission – JEC) (मंत्री-स्तरीय), विदेश कार्यालय के स्तर पर परामर्श, गृह, वाणिज्य, जल संसाधन, सचिव स्तरीय वार्ताएँ, महानिदेशक सीमा सुरक्षा बल, महानिदेशक बांग्लादेश राइफल्स के स्तर पर सीमा समन्वय वार्ता, सुरक्षा पर संयुक्त कार्य दल (Joint Working Group – JWG), संयुक्त सीमा कार्यदल (Joint Boundary Working Group – JBWG), सीमा-शुल्क अधिकारियों का संयुक्त कार्यदल और अन्तर्देशीय जल परिवहन एवं व्यापार के क्रियान्वयन की समीक्षा हेतु स्थायी समिति आदि कुछ महत्वपूर्ण द्विपक्षीय मंच हैं जो द्विपक्षीय विषयों पर समय-समय पर वार्ता करते रहते हैं।

द्विपक्षीय व्यापार (Bilateral Trade)

वित्त वर्ष 2001-12 में बांग्लादेश द्वारा भारत से किया गया आयात 4,743 बिलियन अमेरिकी डॉलर तथा भारत को किया गया निर्यात 0,498 मिलियन अमेरिकी डॉलर का था। कुल द्विपक्षीय व्यापार वर्ष 2011-12 की अवधि में 5,242 बिलियन अमेरिकी डॉलर का था। इस प्रकार बांग्लादेश भारत के लिए एक महत्वपूर्ण व्यापार भागीदार है।

दो गई तालिका में भारत और बांग्लादेश के बीच वाणिज्यिक वस्तुओं के व्यापार से संबंधित आकड़े दिए गए हैं।

	05-06	06-07	07-08	08-09	09-10	10-11	2011-12
बांग्लादेश से भारत को निर्यात	241.96	289.42	358.08	276.58	304.653	512.5	498.4
भारत से बांग्लादेश को निर्यात	1,864.70	2268.00	3364.00	2841.06	3202.1	4586.8	4743.3

व्यापार और आर्थिक सहयोग की सुविधा हेतु महत्वपूर्ण समझौते/संयुक्त विज्ञप्तियाँ (Important Agreements/Joint Releases to Ease Trade and Economic Cooperation)

भारत और बांग्लादेश के बीच प्रथम व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर 28 मार्च, 1972 को किये गये थे। अन्य समझौते और संयुक्त-विज्ञप्तियाँ जो व्यापारिक एवं आर्थिक सम्बद्धता की सुविधा के लिए किये गये हैं, उनमें शामिल हैं :

1. व्यापार तथा अंतर्देशीय जल मार्ग पर प्रोटोकॉल
2. भारत और बांग्लादेश के बीच विमान सेवाओं पर समझौता
3. संयुक्त आर्थिक आयोग (Joint Economic Commission – JEC) की स्थापना पर द्विपक्षीय समझौता
4. भारत और बांग्लादेश के बीच दोहरे कर से बचने संबंधी समझौता
5. भारत और बांग्लादेश के बीच यात्री, यातायात के नियमन संबंधी समझौता
6. भारत और बांग्लादेश के बीच पारगमन मार्ग हेतु समझौता
7. भारतीय मानक ब्यूरो (Bureau of Indian Standards – BIS) और बांग्लादेश मानक एवं परीक्षण संस्थान (Bangladesh Standard and Testing Institution – BSTI) के बीच मानक संचालन पर संयुक्त विज्ञप्ति
8. कृषि क्षेत्र में सहयोग पर संयुक्त विज्ञप्ति
9. विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी क्षेत्र में सहयोग में संयुक्त विज्ञप्ति
10. ढाका-कलकत्ता तथा ढाका-अगरतला के बीच यात्री बसों के संचालन पर प्रोटोकॉल
11. द्विपक्षीय निवेश संरक्षण एवं संवर्धन समझौता (Bilateral Investment Protection & Promotion Agreement – BIPPA)
12. भारत के पावर ग्रिड कॉर्पोरेशन लि. और बांग्लादेश के ऊर्जा विकास बोर्ड के बीच विशाल ऊर्जा सहयोग पर समझौता, यात्री और कारों वाहनों के यातायात विनियमन समझौते को अंतिम रूप दिया जाने के लिए समझौता वार्ता चल रही है।
13. फुलबारी-बांग्लाबन्धा भूमि सीमा-सुल्क स्टेशन (Land Custom Station – LCS) होकर गुजरने वाले नेपाली वाहनों के प्रवेश एवं विकास बिन्दुओं की निगरानी के लिए संचालन प्रक्रिया के मानक पर संयुक्त विज्ञप्ति
14. कुरीग्राम जनपद (बांग्लादेश) में स्थित बलियामारी-कलाई चार (मेघालय) और सुनामगंज जनपद (बांग्लादेश) के लाउबधार-बलात (मेघालय) आदि भारत-बांग्लादेश सीमा पर बाजार आरम्भ करने के तौर तरीकों पर संयुक्त विज्ञप्ति।

तकनीकी सहयोग (Technical Cooperation)

बांग्लादेश, भारतीय तकनीकी एवं आर्थिक सहयोग (Indian Technical & Economic Co-operation – ITEC) कार्यक्रम के तहत एक महत्वपूर्ण भागीदार देश है और बांग्लादेश के विभिन्न मण्डलों में इस कार्यक्रम के अंतर्गत प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों का लाभ उठाया है। भारत बांग्लादेश को प्रतिवर्ष इस कार्यक्रम के अंतर्गत 185 सीटों (Slots) और कोलम्बो योजना के तकनीकी सहयोग योजना के अंतर्गत, 35 सीटों (Slots) का आवंटन करता है। भारत द्वारा बांग्लादेशी छात्रों के लिए मुक्तिजोद्धा छात्रवृत्ति योजना (Muktijoddha Scholarship Scheme) चलाई गई है। इसके अंतर्गत उच्च माध्यमिक स्तर पर 200 तथा स्नातक स्तर पर 500 छात्रवृत्तियाँ उपलब्ध कराई जाती हैं। 2012 से भारत द्वारा भारतीय तकनीकी एवं आर्थिक सहायता कार्यक्रम के अंतर्गत विशेष रूप से बांग्लादेशी सिविल सेवकों को 90 सीटें उपलब्ध कराई जा रही हैं। लोगों के बीच आदान-प्रदान को बढ़ावा देने के लिए भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद द्वारा बांग्लादेशी छात्रों को भारत में कला, विज्ञान, इंजीनियरिंग, तथा संस्कृति से सम्बद्ध विशिष्ट पाठ्यक्रमों जैसे नाटक, संगीत, ललितकला तथा खेल सम्बद्ध पाठ्यक्रमों को पूरा करने के लिए 480 छात्रवृत्तियाँ प्रदान की जाती हैं।

शैक्षिक एवं सांस्कृतिक सहयोग (Educational and Cultural Relations)

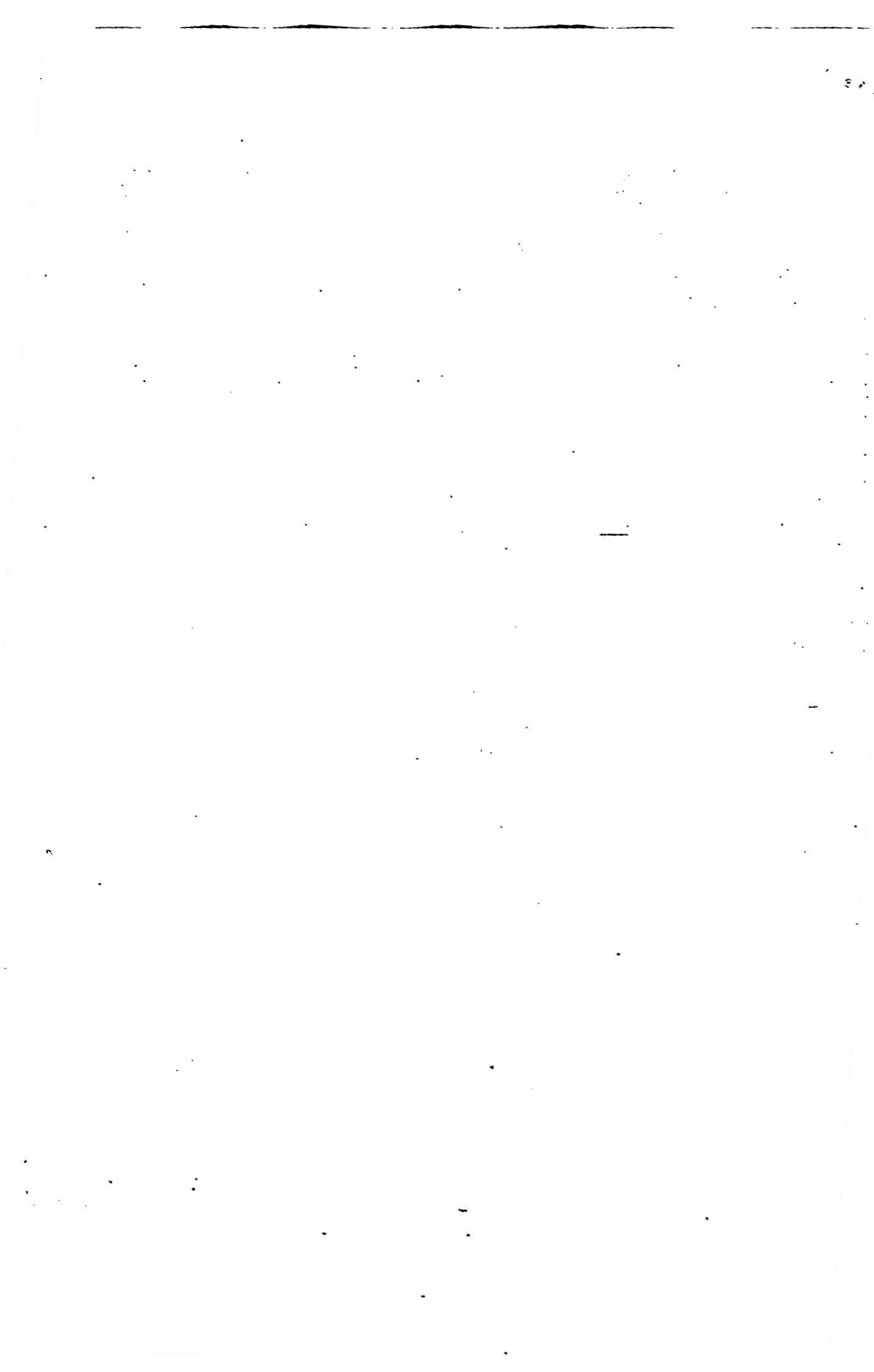
दोनों देशों के लोगों के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम मैत्री की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। सरकार ने संगीत, रंगमंच, कला, चित्रकला इत्यादि के आदान-प्रदान पर विशेष जोर दिया है। इस संदर्भ में भारतीय सांस्कृतिक सम्बंध परिषद (Indian Council for Cultural Relations – ICCR) भारत से कलाकारों की यात्राओं को प्रायोजित कर एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। 'सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम (Cultural Exchange Programme – CEP) 2009-2012' ऐसे आदान-प्रदान को एक संरचना प्रदान करता है। सांस्कृतिक आदान-प्रदान के संवर्धनार्थ भारतीय सांस्कृतिक सम्बंध परिषद (Indian Council for Cultural Relations – ICCR) के इन्दिरा गाँधी सांस्कृतिक केन्द्र (IGCC) ढाका, का उद्घाटन 11 मार्च, 2010 को परिषद के अध्यक्ष डॉ. कर्ण सिंह द्वारा किया गया था। संस्कृति सचिव के नेतृत्व में एक 8 सदस्यीय प्रतिनिधिमण्डल बांग्लादेश की यात्रा पर 19-22 दिसम्बर, 2010 की अवधि में रवीन्द्रनाथ टैगोर की 150वीं जयंती के संयुक्त आयोजन पर वार्ता के लिए गया था।

उक्त परिषद द्वारा लोगों के बीच आदान-प्रदान को बढ़ाने के लिए 100 छात्रवृत्तियाँ प्रतिवर्ष बांग्लादेश के छात्रों के लिए भारत में कला, विज्ञान, अभियांत्रिकी जैसे विषयों में सामान्य पाठ्यक्रमों के लिए और संस्कृति, नाटक, संगीत, ललित कला और खेल इत्यादि में विशेष पाठ्यक्रमों के लिए प्रदान किया जाता है। बांग्लादेश की प्रधानमंत्री शेख हसीना की भारत यात्रा जनवरी 2010 के दौरान यहाँ के विश्वविद्यालयों और प्रशिक्षण संस्थानों में अध्ययन करने अथवा प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए पाँच वर्षों के लिए 300 अतिरिक्त छात्रवृत्तियाँ प्रतिवर्ष बांग्लादेश के छात्रों के लिए प्रदान करने की घोषणा की गयी थी।

शिक्षा के क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने के लिए शांति निकेतन स्थित विश्वभारती विश्वविद्यालय अपने कैम्पस में बांग्लादेश को एक ई-बांग्लादेश भवन (E-Bangladesh Bhaban) बनाने के लिए ज़मीन उपलब्ध कराएगा। यह विश्व भारती में ई-बांग्लादेश अध्ययन कार्यक्रम के अंतर्गत अनुसंधान एवं प्रलेखन (Documentation) के क्षेत्र में मुख्य केंद्र का कार्य करेगा। भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद ने ढाका विश्वविद्यालय में टैगोर एवं हिन्दी अध्ययन संस्थान की स्थापना की है। इससे भारत एवं बांग्लादेश के बीच वृहद शैक्षिक विनिमय को बढ़ावा मिल सकेगा।

भारतीय विदेश मंत्री सलमान खुरशीद की फरवरी, 2013 की बांग्लादेश यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच आर्थिक, वैज्ञानिक, शैक्षिक, तकनीकी एवं सांस्कृतिक सहयोग द्वारा आपसी संबंध सुदृढ़ करने के उद्देश्य से भारत-बांग्लादेश फाउंडेशन की स्थापना की गई थी। यह दोनों देशों के लोगों के बीच व्यापक समझ विकसित करने का कार्य करेगा। इस फाउंडेशन का वित्तीयन दोनों देशों के अनुदान से गठित न्यास कोष (Trust Fund) के द्वारा किया जाएगा। फाउंडेशन द्वारा गठित न्यास कोष द्वारा उच्चतर अध्ययन (Higher Education) अनुसंधान तथा अन्य शैक्षिक गतिविधियों का वित्तीयन तथा भारत एवं बांग्लादेश के सेवारत कर्मचारियों को प्रशिक्षित किया जाएगा।





भारत-म्यांमार संबंध (India-Myanmar Relations)

*** (इस टॉपिक का संबंध मुख्य परीक्षा के प्रश्नपत्र-2 के विषय संख्या 17 से है। 'दृष्टि' द्वारा वर्गीकृत पाठ्यक्रम के 15 खंडों में से इसका संबंध भाग-7 से है।)

भारत एवं म्यांमार के बीच ऐतिहासिक तौर पर सांस्कृतिक एवं धार्मिक संबंध रहे हैं। बुद्ध की जन्मभूमि के रूप में भारत हमेशा से म्यांमार के लोगों के लिए आकर्षण का केंद्र रहा है। म्यांमार के लोग तीर्थयात्री के रूप में सदियों से भारत आते रहे हैं। भारत एवं म्यांमार की सीमा लगभग 1600 किलोमीटर लम्बी है। म्यांमार में लगभग 2.5 मिलियन भारतीय मूल के लोग रहते हैं।

1951 में भारत एवं म्यांमार ने एक मैत्री सन्धि पर हस्ताक्षर किये थे। भारत एवं म्यांमार के संबंध विविधतापूर्ण एवं संतोषजनक हैं। द्विपक्षीय संबंधों को व्यापक बनाने के लिए अनेक समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए हैं। वर्ष 2002 में म्यांमार के माण्डले (Mandalay) में भारतीय महावाणिज्य दूतावास को पुनः खोला गया है। मई 2008 में आये नर्गिस तूफान से प्रभावित म्यांमार को रहत सामग्री और अन्य आवश्यक सहायता प्रदान करने वालों में भारत पहला देश था। मार्च 2011 में म्यांमार के शान प्रांत (Shan Province) में आये गम्भीर भूकम्प से प्रभावित क्षेत्रों में राहत एवं पुनर्वास कार्यों के लिए भारत ने 1 मिलियन अमेरिकी डॉलर की मानवीय सहायता राशि की घोषणा की थी।

म्यांमार में प्रमुख भारतीय परियोजनाएँ (Major Indian Projects in Myanmar)

भारत, म्यांमार को एक दर्जन से ज्यादा परियोजनाओं के निर्माण में संलग्न है। इसमें 160 किलोमीटर लम्बी तामू-कलेवा-कलेमयो के बीच सड़क निर्माण एवं उन्नयन (Upgradation) शामिल है। रही-तिदिम और रही-फालम सड़कों का निर्माण कलादान परिवहन परियोजना आदि अन्य परियोजनाएँ हैं। ओएनजीसी विदेश लिमिटेड (ओवीएल) (ONGC Videsh Limited - OVL), गैस (Gas Authority of India Limited - GAIL) एवं एस्सार म्यांमार के ऊर्जा क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं। राइट्स (RITES) रेल परिवहन प्रणाली के विकास में संलग्न है। यह रेल डिब्बों, इंजनों एवं अन्य पुर्जों की भी आपूर्ति कर रहा है। म्यांमार में भारत सरकार की मदद से टाटा मोटर्स द्वारा टैक असम्बली संयंत्र की स्थापना की गई है। इसका उद्घाटन 31 दिसम्बर 2011 को किया गया। एच एम टी (इण्डिया) द्वारा भारत सरकार की मदद से एक औद्योगिक प्रशिक्षण केंद्र की स्थापना की जा रही है। इसके अलावा म्यांमार-भारत उद्यमिता विकास केंद्र (Myanmar-India Entrepreneurship Development Centre - MIEDC), भारत-म्यांमार सूचना प्रौद्योगिकी कोशल विकास केंद्र (India-Myanmar Centre for Enhancement of IT Skills - IMCEITS) संचालन की अवस्था में है। अन्य परियोजनाओं में बागान (Bagan) के आनंदमन्दिर का जीडीएल (Yangon) का जाल निक्षेपालय आदि शामिल हैं।

वाणिज्यिक और आर्थिक संबंध (Commercial and Economic Relations)

भारत और म्यांमार के बीच द्विपक्षीय व्यापार वर्ष 1980-81 के 12.4 मिलियन अमेरिकी डॉलर से बढ़कर वर्ष 2009-10 में 1497.77 मिलियन अमेरिकी डॉलर हो गया है। म्यांमार से किये गये आयात में कृषि वस्तुओं (फलियों, दालों और वनों पर आधारित उत्पाद) का वर्चस्व है। कुल आयात में इनका हिस्सेदारी 90 प्रतिशत है। भारत द्वारा म्यांमार को किये जा रहे निर्यात की प्रमुख वस्तुओं में प्राथमिक और अर्द्ध निर्मित इस्पात (Primary and Semi Finished Steel) तथा औषधि उत्पाद (Pharmaceuticals) आदि सम्मिलित हैं।

संस्थागत स्तर पर भारतीय उद्योग महासंघ (Confederation of Indian Industry - CII) और म्यांमार वाणिज्य संघ एवं उद्योग सदन महासंघ (Union of Myanmar Federation of Chambers of Commerce and Industry - UMFCFI) ने फरवरी 2000 में एक संयुक्त विज्ञप्ति में प्रवेश किया था। भारतीय उद्योग महासंघ (CII) और म्यांमार कंप्यूटर फेडरेशन (Myanmar Computer Federation - MCF) के बीच 2001 में एक संयुक्त विज्ञप्ति पर हस्ताक्षर किये गये थे। इसी प्रकार म्यांमार-भारत व्यवसाय क्लब (Myanmar-India Business Club - MIBC) और उत्तर-पूर्वी क्षेत्र वाणिज्य एवं उद्योग महासंघ (Federation of Commerce and Industries of North-Eastern Region) के बीच एक संयुक्त विज्ञप्ति पर हस्ताक्षर किये गये थे। वर्ष 2008 में भारत एवं म्यांमार के बीच तृतीय संयुक्त व्यापार समिति की बैठक में व्यापार की सुविधा के लिए यूनाइटेड बैंक ऑफ इण्डिया एवं म्यांमार की तीन राष्ट्रीय बैंकों के बीच संयुक्त विज्ञप्ति पर हस्ताक्षर किए गए थे। इसके अतिरिक्त वर्ष 2008 में द्विपक्षीय निवेश संवर्धन समझौते (Bilateral Investment Promotion and Protection Agreement - BIPA) और दोहरे करारोपण से बचाव संबंधी समझौते

(Double Taxation Avoidance Agreement – DTAA) पर भी हस्ताक्षर किये गये थे। भारत और म्यांमार अगस्त 2009 में हुये भारत-म्यांमार व्यापार समझौते के हस्ताक्षरकर्ता हैं। म्यांमार भारत की सबसे कम विकसित देशों (Least Developed Countries – LDCs) के लिए शुल्क मुक्त टैरिफ वरीयता योजना (India's Duty Free Tariff Preference Scheme for LDCs) का भी लाभार्थी है। संयुक्त व्यापार समिति (Joint Trade Committee) की चौथी द्विपक्षीय व्यापार एवं निवेश समीक्षा बैठक में 2015 तक द्विपक्षीय व्यापार 3 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुँचाने का निर्णय किया गया।

सीमा व्यापार (Border Trade)

भारत और म्यांमार ने 1994 में सीमा व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर किये थे और इनके दो सीमा व्यापार केन्द्र, मोरेह-तामु (Moreh-Tamu) और जोवखतर-रिही (Zowkhatar-Rhi) 1643 किलोमीटर लम्बी सीमा पर अवस्थित हैं। एक तीसरे सीमा व्यापार केन्द्र, अवाखुंग-पानसत/सोमराई (Avakhung-Pansat/Somrai) की स्थापना संबंधी समझौते पर भी सहमति हुई है। तीसरी म्यांमार संयुक्त व्यापार समिति की अक्टूबर 2008 की बैठक के दौरान सहमति हुई थी कि सीमा व्यापार के वर्तमान केन्द्रों का सामान्य व्यापार केन्द्रों के रूप में उन्नयन कर दिया जायेगा ताकि दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय व्यापार का संवर्धन हो सके। इस हेतु अधिसूचना दोनों पक्षों द्वारा जारी कर दी गयी है।

व्यापार मेले और बाजार संवर्धन (Trade Fairs and Market Promotion)

अभी हाल में आयोजित किये गये भारत-फार्मास्यूटिकल एक्सपो-2011 जिसका आयोजन यंगून में फार्मेक्सिल (Pharmexcil) और म्यांमार चिकित्सा संघ की सहायता से किया गया था, आदि व्यापार संवर्धन आयोजनों में सम्मिलित हैं। उत्तर-पूर्व भारत सम्मेलन (North-East India Conclave) का आयोजन सितम्बर 2010 में यंगून और माण्डले में भारतीय वाणिज्य सदन, कोलकाता और यूएमएफसीसीआई (UMFCCI) आई द्वारा किया गया था। भारत-म्यांमार वाणिज्य एवं उद्योग सदन (Indo-Myanmar Chambers of Commerce and Industry – IMCCI) जनवरी 2010 में मुंबई से म्यांमार की यात्रा पर गया था।

प्रशिक्षण कार्यक्रम (Training Programme)

म्यांमार, इण्डियन टेक्निकल एण्ड इकोनॉमिक कोऑपरेशन (Indian Technical and Economic Cooperation – ITEC) और कोलम्बो योजना के अंतर्गत टेक्निकल कोऑपरेशन स्कीम (Technical Cooperation Scheme – TCS) तथा जनरल कल्चरल स्कॉलरशिप स्कीम (General Cultural Scholarship Scheme – GCSS) आदि योजनाओं के अंतर्गत प्रदान किये जा रहे प्रशिक्षण कार्यक्रमों का लाभार्थी है। पत्रकारों के दो समूहों को नई दिल्ली के 'इण्डियन इंस्टीट्यूट ऑफ़ मास कम्युनिकेशन' (Indian Institute of Mass Communication – IIMC) द्वारा प्रशिक्षण के अवसर दिये गये थे।

सांस्कृतिक आदान-प्रदान (Cultural Exchange)

भारतीय सांस्कृतिक संगठनों द्वारा म्यांमार में 1997 से सांस्कृतिक प्रदर्शन नियमित तौर पर आयोजित किये जा रहे हैं। विभिन्न सांस्कृतिक संगठनों की यात्राओं का आदान-प्रदान हुआ है और दोनों देशों में परस्पर प्रदर्शन आयोजित किये गये हैं। नवम्बर, 2009 में म्यांमार से 13 छात्रों का एक समूह 'सांस्कृतिक एवं (SAARC Cultural Festival) में भाग लेने के लिए भारत की यात्रा पर आया था। जनवरी 2010 में भारतीयदूतावास (Embassy) द्वारा यंगून में वार्षिक फिल्म समारोह का आयोजन किया गया था। मार्च 2010 में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद (Indian Council for Cultural Relations) और भारतीय नाट्य विद्यालय (National School of Drama – NSD) द्वारा आयोजित 'दक्षिण एशियाई रंगमंच पर्व' (South Asian Theatre Festival) में भाग लेने के लिए एक 15 सदस्यीय रंगमंच समूह भारत की यात्रा पर आया था। 'अबियोजेनेसिस' (Abiogenesis) नामक बैण्ड ने यंगून और माण्डले में मई 2010 के अंतिम सप्ताह में अपने प्रदर्शन किये थे।

आईसीसीआर के समर्थन से भारतीयदूतावास में दिसंबर 2010 से भरतनाट्यम एवं योग की कक्षाओं की भी शुरुआत की गई।

म्यांमार में भारतीय समुदाय (Indian Diaspora in Myanmar)

म्यांमार में भारतीय समुदाय की उपस्थिति का साक्ष्य ब्रिटिश शासनकाल की शुरुआत से ही मिलता है। म्यांमार के दो शहरों यंगून (पूर्व में रंगून) और माण्डले में ब्रिटिश शासनकाल के दौरान भारतीयों की उपस्थिति थी। म्यांमार की सरकारी जनगणना 1983 के अनुसार म्यांमार में रह रहे भारतीय मूल के लोगों की संख्या 428428 थी। विशाल संख्या में भारतीय समुदाय (लगभग 1,50,000) बागो (ज्यावादी और क्यावाटांग) में रहता है। भारतीय समुदाय मोन (Mon) और तनिनथारई (Tanintharyi) क्षेत्र में प्राथमिक रूप से कृषि कार्य में संलग्न हैं। प्रवासी भारतीय म्यांमार में प्रमुख रूप से यंगून (Yangon) में रहते हैं और आयात-निर्यात के व्यवसाय में संलग्न हैं। इसके अतिरिक्त भारत, सिंगापुर और थाईलैंड आधारित बहुराष्ट्रीय कंपनियों के कर्मियों के रूप में कार्यरत हैं।

भारत और म्यांमार के बीच क्षेत्रीय और उप-क्षेत्रीय संदर्भों में सहयोग के बिंदु (Cooperation Between India and Myanmar in the Regional/Subregional Context)

आसियान (Association of South East Asian Nations – ASEAN): जुलाई 1997 में म्यांमार, आसियान का सदस्य बना था। म्यांमार, भारत और आसियान के बीच सेतु का कार्य करता है। अभी तक सहयोग के कुछ प्रस्तावों का क्रियान्वयन हो चुका है और कुछ पर म्यांमार के साथ आसियान के इनीशिएटिव फॉर आसियान इंटीग्रेशन (Initiative for ASEAN Integration – IAI) कार्यक्रम की संरचना के अंतर्गत वार्ता चल रही है।

बिमस्टेक (BIMSTEC – Bay of Bengal Initiative for Multi Sectoral Technical & Economic Cooperation)

दिसम्बर 1997 में म्यांमार बिमस्टेक का सदस्य बना था। म्यांमार, बिमस्टेक के मुक्त व्यापार समझौते (BIMSTEC Free Trade Agreement) का हस्ताक्षरकर्ता है। म्यांमार, ऊर्जा क्षेत्र का अग्रणी देश है। म्यांमार का अधिकांश व्यापार, थाईलैंड और भारत के साथ (बिमस्टेक क्षेत्र में) है। म्यांमार द्वारा भारत को निर्यात की जाने वाली प्रमुख वस्तुओं में कृषि उत्पाद (जैसे फलियाँ, दाल, मक्का) एवं वन उत्पाद (जैसे सागौन एवं कड़ी लकड़ी) शामिल रहे हैं। भारत से इसके आयात में रासायनिक उत्पाद, औषध उत्पाद, विद्युत उपकरण और परिवहन उपकरण आदि सम्मिलित हैं। 13वाँ बिमस्टेक भू-विस्तारीय बैठक का आयोजन म्यांमार में जनवरी 2011 में किया गया था।

मेकांग गंगा सहयोग (Mekong Ganga Cooperation – MGC)

म्यांमार, मेकांग गंगा सहयोग (एमजीसी) का सदस्य नवम्बर 2000 में इसकी स्थापना के समय से ही है। एमजीसी 6 देशों द्वारा की गयी एक पहल है जिसमें भारत और अन्य पांच आसियान देश कंबोडिया, लाओस, म्यांमार, थाईलैंड और वियतनाम पर्यटन, शिक्षा, संस्कृति, परिवहन और संचार आदि क्षेत्रों में सहयोग के लिए सम्मिलित हैं। एमजीसी की अध्यक्षता सदस्य देशों द्वारा वर्णाक्षर क्रम से की जाती है।

साक (South Asian Association for Regional Cooperation – SAARC): म्यांमार को साक में पर्यवेक्षक का दर्जा अगस्त 2008 में प्रदान किया गया था।

भारत म्यांमार संबंधों का हालिया संदर्भ (Recent Developments in India-Myanmar Relations)

भारत के प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह म्यांमार के राष्ट्रपति के निमंत्रण पर 27-29 मई 2012 तक म्यांमार की यात्रा पर रहे। प्रधानमंत्री स्तर की यह यात्रा 25 वर्षों के अंतराल पर हुई। यह यात्रा भारत और म्यांमार के बीच संबंधों का एक महत्वपूर्ण घटनाक्रम है। दोनों नेताओं के बीच पारस्परिक हित के द्विपक्षीय, क्षेत्रीय एवं अंतराष्ट्रीय मुद्दों पर प्रतिनिधिमण्डल स्तरीय वार्ता हुई। वार्ताएं अत्यंत ही सौहार्दपूर्ण एवं रचनात्मक माहौल में हुईं जो दोनों पड़ोसी देशों एवं यहां के लोगों के बीच विद्यमान घनिष्ठ और मैत्रीपूर्ण संबंधों को प्रतिबिम्बित करती हैं। भारत के प्रधानमंत्री और म्यांमार के राष्ट्रपति ने विभिन्न क्षेत्रों में द्विपक्षीय संबंधों की व्यापक समीक्षा की और अक्टूबर 2011 में राष्ट्रपति यू थीन सीत (U Thein Sein) की भारत की सफल यात्रा के बाद के घटनाक्रमों का जायजा लिया। उन्होंने उत्तरोत्तर बढ़ते आधिकारिक आदान-प्रदानों तथा नित्य संबंधित हो रहे आर्थिक, व्यापारिक एवं सांस्कृतिक संपर्कों और दोनों देशों के लोगों के बीच होने वाले आदान-प्रदानों पर संतोष व्यक्त किया।

दोनों नेताओं ने द्विपक्षीय, क्षेत्रीय एवं वैश्विक स्तर पर साझे हित के लिए भविष्य में एक समान दृष्टिकोण अपनाने पर अपनी सहमति व्यक्त की। उन्होंने सीमा क्षेत्रों में विकास, परिवहन, संपर्क व्यवस्था, कृषि, व्यापार और निवेश, मैत्रीपूर्ण आदान-प्रदानों का संवर्धन एवं मानव संसाधन विकास जैसे क्षेत्र में सहयोग करने पर अपनी सहमति व्यक्त की। भारतीय प्रधानमंत्री ने स्वीकार किया कि दोनों देशों के विकास एवं लोगों के कल्याण के लिए इस क्षेत्र में शांति एवं स्थायित्व जरूरी है। इस संदर्भ में उन्होंने भारत और म्यांमार के बीच घनिष्ठ सहयोग करने एवं दोनों देशों की जनता के हित में दोनों देशों के संसाधनों का प्रभावी उपयोग किए जाने की आवश्यकता पर बल दिया।

भारत के प्रधानमंत्री ने बेहतर लोकतंत्रीकरण एवं राष्ट्रीय सुलह की दिशा में म्यांमार सरकार द्वारा किए गए उल्लेखनीय सुधार उपायों पर म्यांमार के राष्ट्रपति को शुभकामना दी। उन्होंने राजनैतिक, आर्थिक एवं सामाजिक सुधार की दिशा में किए जा रहे प्रयासों की सराहना की जिसमें अनेक जातीय समूहों के साथ शांति समझौता करने से संबंधित वार्ताएं और आंग सान सू की (Aung San Suu Kyi) के नेतृत्व में राष्ट्रीय लोकतांत्रिक लीग (National League for Democracy) सहित अन्य लोकतांत्रिक राजनैतिक पार्टियों के साथ वार्ता आरंभ करना शामिल है। उन्होंने हाल में स्वतंत्र, पारदर्शी एवं शांतिपूर्ण चुनाव आयोजित किए जाने की भी सराहना की।

भारत के प्रधानमंत्री ने म्यांमार में लोकतांत्रिक परिवर्तन की गति में तेजी लाने और संसद, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग एवं

मीडिया जैसी लोकतांत्रिक संस्थाओं की क्षमताओं का विकास करने में भारत द्वारा सभी प्रकार की सहायता दिए जाने की भारत की इच्छा दोहराई। दिसंबर 2011 में पिथु हलुताव (Pyithu Hluttaw) के अध्यक्ष थुरा यू श्वे मान (Thura U Shwe Mann) के नेतृत्व में संसदीय प्रतिनिधिमण्डल की सफल यात्रा का जिक्र करते हुए भारतीय प्रधानमंत्री ने म्यांमार के सांसदों एवं कर्मचारियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किए जाने की इच्छा भी व्यक्त की। पिथु हलुताव म्यांमार का निम्न सदन (Lower House) है। यात्रा के दौरान द्विपक्षीय सहयोग के लिए निम्नलिखित दस्तावेजों पर हस्ताक्षर किए गए:

- 500 मिलियन अमेरिकी डॉलर की ऋण श्रृंखला (Line of Credit) से संबंधित समझौता ज्ञापन
- भारत और म्यांमार के बीच हवाई सेवा शुरू करने से संबंधित समझौता
- भारत एवं म्यांमार के सीमावर्ती क्षेत्रों का विकास करने संबंधी समझौता ज्ञापन (Memorandum of Understanding)
- संयुक्त व्यापार और निवेश मंच (Joint Trade and Investment Forum) की स्थापना पर समझौता ज्ञापन
- उच्च स्तरीय कृषि अनुसंधान एवं शिक्षा केन्द्र (Advance Centre for Agricultural Research and Education – ACARE) की स्थापना पर समझौता ज्ञापन
- नाई पि टाउ (Nay Pyi Taw), म्यांमार में कृषि अनुसंधान विभाग में चावल जैव पार्क (Rice Bio Park) की स्थापना पर समझौता ज्ञापन
- म्यांमार में सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान की स्थापना हेतु समझौता ज्ञापन
- कलकत्ता विश्वविद्यालय (कोलकाता) और डागोन विश्वविद्यालय (Dagon University) (यंगून) के बीच समझौता ज्ञापन
- भारतीय विश्व कार्य परिषद (Indian Council of World Affairs – ICWA) और म्यांमार सामरिक एवं अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन संस्थान (Myanmar Institute of Strategic and International Studies – MISIS) के बीच सहयोग पर समझौता ज्ञापन
- रक्षा अध्ययन एवं विश्लेषण संस्थान (Institute for Defence Studies and Analysis – IDSA) तथा म्यांमार सामरिक एवं अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन संस्थान के बीच सहयोग करार
- सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम-2012-15 (Cultural Exchange Programmes)
- भारत और म्यांमार के सीमावर्ती क्षेत्रों में बाजारों (Haats) की स्थापना पर समझौता ज्ञापन

भारत और म्यांमार के बीच के द्विपक्षीय संबंध साझे इतिहास, भूगोल, संस्कृति तथा सभ्यता पर आधारित हैं। मार्च 2011 में म्यांमार में लोकतांत्रिक बदलाव के बाद से दोनों देशों के बीच संबंधों में महत्वपूर्ण गहनता आई है। उन्होंने आदान-प्रदान कार्यक्रमों को और संवर्धित करने की प्रतिबद्धता व्यक्त की जिससे कि द्विपक्षीय सहयोग को उच्च स्तर तक ले जाया जा सके। दोनों पक्षों ने सर्वोच्च स्तर पर यात्राओं के आदान-प्रदान को जारी रखने पर अपनी सहमति व्यक्त की।

भारत एवं म्यांमार ने आतंकवाद एवं उग्रवाद के सभी स्वरूपों एवं अभिव्यक्तियों का मुकाबला करने और इसका उन्मूलन करने संबंधी अपनी प्रतिबद्धताओं को पुष्टि की। दोनों देशों ने सीमावर्ती क्षेत्रों में शांति, सुरक्षा तथा स्थायित्व बनाए रखने के उद्देश्य से सीमा सुरक्षा बलों एवं सुरक्षा एजेंसियों के बीच सहयोग बढ़ाए जाने की आवश्यकता पर बल दिया।

इस संदर्भ में दोनों नेताओं ने द्विपक्षीय क्षेत्रीय सीमा समिति (Bilateral Regional Border Committee) की पहली बैठक आहूत किए जाने का स्वागत किया जिसमें किए गए विचार-विमर्श सहयोग को बढ़ावा देने और बेहतर सीमा प्रबंधन को समझने में उपयोगी साबित हुए हैं। दोनों देशों ने आश्वासन दिया कि एक दूसरे देश के भू-क्षेत्रों का उपयोग आतंकवादियों एवं उग्रवादियों के प्रशिक्षण, संरक्षण जैसी शत्रुतापूर्ण गतिविधियों के लिए करने की अनुमति नहीं देंगे।

दोनों नेताओं ने सीमाओं की सुरक्षा बनाए रखने के लिए ठोस सीमा प्रबंधन (Sound Border Management) के महत्व पर बल दिया।

संपर्क व्यवस्था (Connectivity)

दोनों देशों ने वाणिज्यिक, सांस्कृतिक, पर्यटन तथा दोनों देशों के लोगों के बीच आदान-प्रदान को बढ़ावा देने के साधन के रूप में दोनों देशों के बीच संपर्क व्यवस्था का उन्नयन किए जाने के महत्व पर विशेष बल दिया। उन्होंने कलादन मल्टी-मॉडल पारगमन परिवहन परियोजना (Kaladan Multi-modal Transit Transport Project) एवं ट्रांस एशियन रेलवे (Trans Asian Railways) परियोजना में हो रही सतत प्रगति पर संतोष व्यक्त किया। दोनों नेताओं ने अप्रैल 2012 में भारतीय और म्यांमारी प्रतिनिधिमण्डलों द्वारा संयुक्त निरीक्षण किए जाने के बाद जोरिनपुई (मिजोरम) में सीमा शुल्क स्टेशन के लिए स्थान को अंतिम रूप दिए जाने का स्वागत किया। इन परियोजनाओं के पूर्ण होने से द्विपक्षीय व्यापार तथा लोगों के बीच संपर्कों का उन्नयन होगा और साथ ही भारत के भू-आबद्ध (Land Locked) पूर्वांचल क्षेत्र में रहने वाले लोगों के विकास और समृद्धि में योगदान मिलेगा।

भारत के प्रधानमंत्री डा० मनमोहन सिंह ने घोषणा की कि भारत, तामू-कलेवा (Tamu-Kalewa) मैत्री सड़क पर अवस्थित 71 बाँधों (Bridges) का मरम्मत/उन्नयन का कार्य करेगा। दोनों नेताओं ने निर्णय लिया कि भारत कलेवा-यारंगई सड़क खंड को

राजमार्ग के स्तर तक उन्नयित करने का कार्य करेगा, जबकि म्यांमार वर्ष 2016 तक यारगई (Yargyi)-मोनयावा (Monywa) सड़क को राजमार्ग के स्तर तक बनाने का कार्य करेगा। इस राजमार्ग परियोजना (Highway Project) से भारत में मोरेह (Moreh) से लेकर थाईलैंड के माए सोत (Mae Sot) तक त्रिपक्षीय संपर्क व्यवस्था स्थापित करने में मदद मिलेगी। दोनों नेताओं ने भारत-म्यांमार-थाईलैंड के बीच त्रिपक्षीय राजमार्ग से संबंधित संयुक्त कार्यदल को ब्रह्माल किए जाने का स्वागत किया।

लोगों के बीच संपर्कों को बढ़ाने के लिए दोनों पक्षों ने भारत के इंपाल से माण्डले (Mandalay) तक अंतर्राष्ट्रीय बस सेवा आरंभ करने पर अपनी सहमति व्यक्त की। दोनों नेताओं ने संबंधित अधिकारियों को विभिन्न तौर तरीकों को अंतिम रूप देने के निर्देश दिए जिससे कि इसका प्रचालन शीघ्रातिशीघ्र आरंभ हो जाए।

नए हवाई सेवा शुरू करने संबंधी समझौते पर हस्ताक्षर किए जाने का भी स्वागत किया गया। इससे हवाई सेवा संपर्कों में वृद्धि होगी और व्यापारिक कार्यकलाप, पर्यटन और लोगों के बीच आदान-प्रदान सुविधाजनक बनेगा। दोनों नेताओं ने सीमा पार रेल संपर्कों की तकनीकी एवं वाणिज्यिक व्यवहार्यता और दोनों देशों के बीच प्रत्यक्ष नौवहन संपर्कों की वाणिज्यिक व्यवहार्यता का निर्धारण करने के लिए एक संयुक्त कार्यकारी दल (Joint Working Group) गठित करने का निर्णय लिया। म्यांमार में दावेई (Dawei) बंदरगाह जैसी महत्वपूर्ण अवसंरचना परियोजनाओं के विकास में भारत की भागीदारी की व्यवहार्यता पर भी चर्चा की गयी।

विकास सहयोग (Development Cooperation)

दोनों नेताओं ने दोनों देशों के बीच विकासीय सहयोग के बढ़ते आयामों पर संतोष व्यक्त किया जिसका वित्त पोषण अब तक दिए गए 1.2 बिलियन अमेरिकी डॉलर के अनुदानों एवं ऋणों के आधार पर किया जा रहा है। अवसंरचना (Infrastructure), कृषि, मानव संसाधन विकास, औद्योगिक विकास, विद्युत, स्वास्थ्य इत्यादि क्षेत्रों में चल रही परियोजनाओं का जायजा लेते हुए दोनों नेताओं ने भावी में म्यांमार के लोगों के लाभार्थ अन्य परियोजनाओं की पहचान करने पर भी अपनी सहमति व्यक्त की। दोनों देशों ने म्यांमार सरकार को भारत द्वारा दी जाने वाली 500 मिलियन अमेरिकी डॉलर की ऋण श्रृंखलाओं (Line of Credit) से संबंधित समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए जाने का स्वागत किया जिससे इसका शीघ्र प्रचालन का मार्ग प्रशस्त होगा। इन ऋण श्रृंखलाओं का उपयोग म्यांमार में कृषि एवं सिंचाई, रेल परिवहन एवं विद्युत ऊर्जा जैसे विभिन्न क्षेत्रों की अवसंरचना विकास परियोजनाओं के लिए किया जाएगा।

सीमावर्ती क्षेत्रों में लोगों के विकास और समृद्धि पर विशेष बल दिए जाने की आवश्यकता को स्वीकार करते हुए दोनों नेताओं ने इस यात्रा के दौरान हस्ताक्षरित भारत-म्यांमार सीमा क्षेत्र विकास (India-Myanmar Border Area Development) से संबद्ध समझौता ज्ञापन के अनुरूप सड़कों के उन्नयन एवं स्कूलों के निर्माण, स्वास्थ्य सेवाओं और पुलों के निर्माण, कृषि तथा अन्य संबद्ध प्रशिक्षण गतिविधियों के संवर्धन सहित अवसंरचना विकास और अन्य लघु आर्थिक परियोजनाओं में भागीदारी करते हुए सीमावर्ती क्षेत्रों में समग्र आर्थिक विकास लाने में सहयोग करने पर अपनी सहमति व्यक्त की।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने के प्रति अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त करते हुए दोनों नेताओं ने इस बात पर संतोष व्यक्त किया कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी से संबद्ध भारत-म्यांमार संयुक्त कार्यकारी दल की पहली बैठक का आयोजन 3 अप्रैल, 2012 को किया गया। इस संयुक्त कार्यकारी दल ने कृषि जैव प्रौद्योगिकी (Agricultural Biotechnology), फसल कटाई पश्चात् प्रौद्योगिकी (Post Harvest Technology), चिकित्सा अनुसंधान (Medical Research), चिकित्सा जैव प्रौद्योगिकी (Medical Biotechnology) एवं नवीकरणीय ऊर्जा (Renewable Energy) जैसे कुछ प्राथमिकता वाले क्षेत्रों की भावी सहयोग के लिए पहचान की है।

म्यांमार अपनी कुछ प्राथमिक परियोजनाओं (Priority Projects) के संबंध में विशेष प्रस्ताव तैयार करेगा जिससे कि इन्हें कार्यान्वयन के लिए आगे बढ़ाया जा सकेगा।

इस यात्रा के दौरान हस्ताक्षरित समझौता ज्ञापन के तहत दोनों नेताओं ने भारत की वित्तीय एवं तकनीकी सहायता से म्यांमार सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान (Myanmar Institute of Information Technology) की स्थापना करने का निर्णय लिया। भारत के प्रधानमंत्री ने यंगून में स्थापित सूचना प्रौद्योगिकी कौशल से संबद्ध भारत-म्यांमार केन्द्र (India-Myanmar Centre for Enhancement of IT Skills) के उन्नयन के लिए निरंतर दी जा रही तकनीकी एवं वित्तीय सहायता को अगले पांच वर्ष की अवधि के लिए बढ़ाने की घोषणा की। इसी दौरान इसका प्रौद्योगिकी उन्नयन भी किया जाएगा।

भारत के प्रधानमंत्री ने भारतीय विश्वविद्यालयों एवं अनुसंधान संस्थानों में कार्य करने के लिए म्यांमार के शोधकर्ताओं के लिए एक अध्येतावृत्ति (Fellowship) की घोषणा की जिसके अंतर्गत प्रति वर्ष 10 सीटें आरक्षित होंगी। प्रत्येक अध्येतावृत्ति (Fellowship) 4-6 माह की अवधि की होगी और ये 'वातावरणीय एवं भू-विज्ञान' (Atmospheric and Earth Sciences), रसायन विज्ञान, अभियांत्रिकी विज्ञान (Engineering Sciences), जैव विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, गणितीय एवं कंप्यूटर विज्ञान (Mathematical and Computational Sciences) तथा भौतिक विज्ञान (Physical Sciences) इत्यादि जैसे विषयों से संबंधित होगी।

भारत ने घोषणा की कि म्यांमार में मानव संसाधन क्षमता का विकास करने की भारत की प्रतिबद्धता को ध्यान में रखते हुए

भारतीय आर्थिक एवं तकनीकी सहयोग (Indian Technical and Economic Cooperation – ITEC) सहित अन्य कार्यक्रमों के अंतर्गत प्रदत्त सीटों की संख्या (Slots) 250 से बढ़ाकर 500 कर दी जाएगी। म्यांमार के राष्ट्रपति ने इस महत्वपूर्ण निर्णय का स्वागत किया। म्यांमार के राष्ट्रपति ने 'सम्मेलन प्रबंधन' (Conference Management) में म्यांमार के राजनयिकों को प्रशिक्षित करने और नाई पि टाउ (Nay Pyi Taw) तथा यंगून (Yangon) में भाषा प्रयोगशालाओं (Language Laboratories) एवं सम्मेलन कक्षों (Conference Rooms) की स्थापना और साथ ही विदेश मंत्रालय के लिए नाई पि टाउ में ई-अनुसंधान केंद्र (e-research Centre) की स्थापना में सहायता का प्रस्ताव रखने के लिए भारत को धन्यवाद दिया।

दोनों पक्षों ने कृषि क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने की अपनी प्रतिबद्धता भी स्पष्ट की। म्यांमार के राष्ट्रपति ने 10 मिलियन अमेरिकी डॉलर के अनुदान के तहत म्यांमार को उपहारस्वरूप दी गई कृषि मशीनों के लिए भारत को धन्यवाद दिया और कहा कि इन मशीनों को म्यांमार के विभिन्न क्षेत्रों में वितरित किया गया है और इनका उपयोग म्यांमार के खेतिहर समुदाय के लाभार्थ किया जा रहा है। इस यात्रा के दौरान हस्ताक्षरित समझौता ज्ञापन के तहत दोनों नेताओं ने कृषि अनुसंधान एवं शिक्षा से संबद्ध उन्नत केंद्र (Advanced Centre for Agricultural Research and Education) की स्थापना किए जाने का निर्णय लिया जिसमें पारंपरिक के साथ-साथ आधुनिकतम प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जाएगा और जिसके लिए भारत द्वारा वित्तीय एवं तकनीकी सहायता दी जाएगी।

उन्होंने सतत चावल बायोमास उपयोग (Sustainable Rice Biomass Utilisation) के संबंध में उपलब्ध तकनीकों का प्रदर्शन करने के उद्देश्य से नाई पि टाउ के येजिन (Yezin) में कृषि अनुसंधान विभाग के अंतर्गत एक चावल जैव पार्क (Rice Bio Park) की स्थापना करने पर भी अपनी सहमति व्यक्त की। इन दोनों संस्थाओं से म्यांमार के खेतिहर, शैक्षणिक एवं व्यावसायिक समुदायों को सभी प्रकार की प्रौद्योगिक एवं अनुसंधान संबंधी सूचना सामग्रियाँ मुहैया कराई जा सकेंगी। म्यांमार के राष्ट्रपति नाई पि टाउ के मॉडल समन्वित फार्म (Model Integrated Farm) के अंतर्गत एक आधुनिक और चक्रवात-से-अभेद चावल भण्डार गृह (Cyclone-Proof Rice Silo) के निर्माण में भारत द्वारा दिए जाने वाले समर्थन के लिए धन्यवाद दिया।

म्यांमार ने डेयरी विकास, पशु प्रजनन (Cattle Breeding), टीकाकरण प्रौद्योगिकी (Vaccine Technology) तथा शान राज्य (Shan State) में एक दुग्ध तथा दुग्ध उत्पाद कारखाने (Milk and Milk Product Factory) की स्थापना में सहायता दिए जाने के संदर्भ में प्रशिक्षण कार्यक्रमों/अध्ययनवृत्तियों की व्यवस्था करने में भारत को सहायता का अनुरोध किया। भारतीय पक्ष ने इस प्रस्ताव पर सकारात्मक रूप से विचार करने पर अपनी सहमति व्यक्त की।

व्यापार एवं निवेश (Trade and Investment)

वर्ष 2015 तक द्विपक्षीय व्यापार को दोगुना करने के लक्ष्य को सराहना करते हुए दोनों नेताओं ने इस बात पर बल दिया कि दोनों देशों में बेहतर व्यापार की अपार संभावनाएँ मौजूद हैं और उन्होंने व्यावसायिक समुदाय से इन संभावनाओं का उपयोग करने का आह्वान किया। वस्त्र, कृषि, तेल एवं गैस, वीथ रोपण (Plantation), विनिर्माण (Manufacturing), आतिथ्य-सत्कार (Hospitality) एवं सूचना एवं संचार तकनीकी (Information and Communication Technology – ICT) जैसे क्षेत्रों में भारतीय कंपनियों द्वारा निवेश को विशेष रूप से प्रोत्साहित किया जाएगा। इस संदर्भ में दोनों नेताओं ने समय से तथा सही-सही (Timely and Accurate) सूचनाओं एवं विचारों का आदान-प्रदान करने की प्रक्रिया को समर्थ बनाने में नव-सृजित व्यापार एवं निवेश मंच (Newly Created Trade and Investment Forum) के महत्व को रेखांकित किया।

दोनों देश द्विपक्षीय व्यापार के मार्ग में आने वाली विभिन्न बाधाओं की पहचान करने और उन्हें समाप्त करने की दिशा में कार्य करेंगे। इस संदर्भ में दोनों देशों के बीच व्यवसाय-हितोप-वैकिक कारोबार (Business-Friendly Banking Transaction) को सुविधाजनक बनाने के लिए यूनाइटेड बैंक ऑफ इण्डिया का एक प्रतिनिधि कार्यालय यंगून में स्थापित किया गया है। म्यांमार ने भारतीय बैंकों द्वारा म्यांमार के बैंक अधिकारियों को प्रशिक्षित किए जाने और कृषि बैंकिंग क्षेत्र में सहयोग करने संबंधी प्रस्तावों का स्वागत किया।

दोनों देशों के बीच व्यापार की असीम संभावनाओं पर विचार करते हुए दोनों देशों ने इस बात पर अपनी सहमति व्यक्त की कि भारतीय रिजर्व बैंक निकट भविष्य में भारत और म्यांमार के बीच मुद्रा व्यवस्थाओं (Currency Arrangements) के संबंध में म्यांमार के केन्द्रीय बैंक के साथ एक समझौता ज्ञापन (MOU) संपन्न करेगा। इसके अतिरिक्त भारतीय रिजर्व बैंक (RBI) म्यांमार के केन्द्रीय बैंक के साथ एक अन्य समझौता ज्ञापन भी संपन्न करेगा जो पारस्परिक हित के विभिन्न मुद्दों पर विचार-विनिमय के लिए एक मंच के रूप में कार्य करेगा। दोनों देशों ने भारतीय स्टेट बैंक अथवा पारस्परिक रूप से सहमत किसी अन्य बैंक से बैंकिंग अनुभवों एवं तकनीकी जानकारी का आदान-प्रदान किए जाने पर भी सहमति व्यक्त की।

दोनों नेताओं ने व्यावसायिक समुदाय से एक-दूसरे देश में आयोजित होने वाले व्यापार मेलों (Trade Fairs) में उत्साहजनक भागीदारी करने और पारस्परिक हित के विशिष्ट क्षेत्रों में सेमिनारों और व्यापार से जुड़े कार्यक्रमों का आयोजन करने के जरिए वर्तमान व्यापार एवं निवेश नीतियों से संबंधित सूचनाओं का आदान-प्रदान करने का भी आह्वान किया। इस संदर्भ में उन्होंने नवंबर 2011 में भारतीय उद्योग परिषद (Confederation of Indian Industry – CII) तथा यूनियन ऑफ म्यांमार फेडरेशन ऑफ चैम्बर्स ऑफ

कामर्स एण्ड इण्डस्ट्री (Union of Myanmar Federation of Chambers of Commerce and Industry – UMFCOI) द्वारा यंगून में प्रथम एंटरप्राइज इण्डिया शो (Enterprise India Show) आयोजित किए जाने तथा इसे एक वार्षिक कार्यक्रम बनाने के संबंध में लिए गए निर्णय का स्वागत किया।

सीमावर्ती क्षेत्रों में रहने वाले समुदायों की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए दोनों नेताओं ने सीमा पर सीमावर्ती बाजार (Border Haats) स्थापित किए जाने तथा इस प्रयोजनार्थ समझौता ज्ञापन संपन्न किए जाने पर भी अपनी सहमति व्यक्त की। उन्होंने यह भी टिप्पणी की कि सीमा व्यापार स्थलों पर बैंकिंग अवसंरचना को उन्नत करने के निर्णय से इन क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के बीच व्यापार बेहतर एवं सुविधाजनक बन सकेगा। दोनों नेताओं ने तामू-मोरेह (Tamu-Moreh) और री-जोखाथार (Rhi-Zowkhatthar) में सीमा व्यापार अधिकारियों (Border Trade Officials) एवं व्यवसायियों के बीच नियमित मुलाकातों का आयोजन करने संबंधी पूर्व में लिए गए निर्णयों को कार्यान्वित करने के लिए एक द्विपक्षीय सीमा व्यापार समिति (Bilateral Border Trade Committee) के गठन का निर्देश दिया।

विद्युत एवं ऊर्जा (Power and Energy)

दोनों देशों ने ऊर्जा सुरक्षा को बढ़ावा देने के लिए घनिष्ठ सहयोग करने की आवश्यकता पर बल दिया है। इस संदर्भ में म्यांमार सरकार तथा भारत के जुबिलेंट एनर्जी (Jubilant Energy of India) के बीच साझा उत्पादन करने संबंधी समझौते (Production Sharing Contract) पर हस्ताक्षर किये गये हैं। म्यांमार ने तेल एवं गैस क्षेत्र में उपलब्ध ब्लॉक्स (Blocks) सहित तेल और गैस क्षेत्र में भारतीय कंपनियों के निवेश को प्रोत्साहित किया। पेट्रोलिएम क्षेत्र की अधोगामी (Downstream) परियोजनाओं में भारतीय कंपनियों द्वारा निवेश को प्रोत्साहित किया जा रहा है।

म्यांमार के राष्ट्रपति ने तामाथी (Tamanthi) एवं श्वेजाए (Shwezaye) जल विद्युत परियोजनाओं के संबंध में विस्तृत परियोजना रिपोर्ट (Detailed Project Reports) तैयार करने के लिए भारत को सराहना की। दोनों देशों ने अधिकारियों को विस्तृत परियोजना रिपोर्टों की विषय-वस्तुओं का अध्ययन करने और तकनीकी, व्यावसायिक एवं सामाजिक-पर्यावरणीय तथ्यों को ध्यान में रखते हुए किए जाने वाले कार्यों की भावी योजना का अंतिम रूप देने के निर्देश दिए हैं।

सांस्कृतिक तथा लोगों के बीच सम्पर्क (Cultural and People to People Contact)

दोनों देशों ने भारत और म्यांमार के लोगों के बीच विद्यमान मैत्रीपूर्ण संबंधों की ओर गहन बल देने में संस्कृति की केन्द्रीय भूमिका को समझा है और वर्ष 2012-15 की अवधि के लिए सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम (Cultural Exchange Programme – CEP) पर हस्ताक्षर किये हैं। इस सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम से भारत के पूर्वोत्तर राज्यों एवं म्यांमार के सीमावर्ती क्षेत्रों के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ावा मिलेगा। भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद (Indian Council for Cultural Relations), म्यांमार के धार्मिक मंत्रालय और सितांग विश्व बुद्ध संघ (Sitagu World Buddhist Association) के सहयोग से दिसंबर 2012 में म्यांमार में अंतराष्ट्रीय बुद्ध विरासत सम्मेलन (International Conference on Buddhist Heritage) का आयोजन करेगा।

म्यांमार भारत द्वारा सारनाथ बुद्ध (Sarnath Buddha) की एक 16 फुट लंबी बालूकाश्म प्रतिमूर्ति (Sand Stone Replica) उपहार स्वरूप दिए जाने के निर्णय का स्वागत किया है। म्यांमार ने भारत आने वाले म्यांमार के तीर्थयात्रियों को दी जा रही सुविधाओं एवं सहयोग के लिए भी भारत को सराहना की है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (Archaeological Survey of India) द्वारा म्यांमार के बगान में आनंद मंदिर (Ananda Temple in Bagan) के संरक्षण एवं जीर्णोद्धार से संबंधित परियोजना पर कार्य किया जा रहा है। भारत एवं म्यांमार के विचार मंचों (Think Tanks) और शैक्षणिक संस्थाओं के बीच अनुबंधों (Contacts) को औपचारिक रूप दिया गया है और दोनों देशों में आयोजित किए जाने वाले शैक्षणिक कार्यक्रमों में विद्वानों की सक्रिय भागीदारी तथा विचार-विनिमय पर बल दिया जा रहा है।

क्षेत्रीय एवं बहुपक्षीय सहयोग (Regional and Multilateral Cooperation)

दोनों देशों ने पारस्परिक हित के विभिन्न क्षेत्रीय एवं अंतराष्ट्रीय मुद्दों पर चर्चा की है। अंतराष्ट्रीय कार्यसूची (International Agenda) में साझे हित के मुद्दों पर समन्वय जारी रखने पर भी अपनी सहमति व्यक्त की।

क्षेत्रीय सहयोग के संबंध में घनिष्ठ सहयोग किए जाने के महत्व पर बल दिया गया है। भारत ने बिमस्टेक (BIMSTEC) के अध्यक्ष के रूप में सफलतापूर्वक कार्यकाल पूरा करने के लिए म्यांमार को शुभकामनाएँ दीं। उल्लेखनीय है कि म्यांमार ने बिमस्टेक की अगली शिखर बैठक की मेजबानी करने का भी प्रस्ताव किया है। वर्ष 2014 में म्यांमार के आसियान की अध्यक्षता काल के दौरान आसियान-भारत सहयोग को और गहन बनने की संभावना है। भारत की पूर्वोन्मुख नीति (Look East Policy) और आसियान एकीकरण पहल (Initiative for ASEAN Integration – IAI) के तहत आसियान देशों के साथ इसके सहयोग की प्रक्रिया में म्यांमार का महत्वपूर्ण स्थान है। आसियान-भारत स्मारक शिखर सम्मेलन (ASEAN-India Commemorative Summit) से दोनों देशों के संबंध और भी ज्यादा प्रगाढ़ होने की संभावना है।

भारत-अफगानिस्तान संबंध (India-Afghanistan Relations)

*** (इस टॉपिक का संबंध मुख्य परीक्षा के प्रश्नपत्र-2 के विषय संख्या 17 से है। 'दृष्टि' द्वारा वर्गीकृत पाठ्यक्रम के 15 खंडों में से इसका संबंध भाग-7 से है।)

द्विपक्षीय संबंधों का ऐतिहासिक संदर्भ

(Historical Perspective of Bilateral Relations)

प्राचीन काल से ही भारत के अफगानिस्तान के साथ आर्थिक-सांस्कृतिक संबंध रहे हैं परन्तु 1996 से 2001 के बीच तालिबान शासन के दौरान संबंधों में शिथिलता विद्यमान रही। नेपाल से IC-814 विमान का अपहरण और इसके पश्चात कुछ कुख्यात आतंकवादियों को छुड़वाने की तालिबान शासन की माँग इसका ज्वलंत उदाहरण है। तालिबान शासन की समाप्ति के बाद भारत ने अफगानिस्तान से अपने संबंधों को प्रगाढ़ करना शुरू किया। 1979 में सोवियत दखल ने अफगानिस्तान को वैश्विक स्तर पर भू-राजनीतिक महत्व प्रदान किया। आर्थिक रूप से भी इसका महत्व लोगों की महसूस हुआ। अफगानिस्तान की सीमाएँ उत्तर में तेल एवं खनिजों में समृद्ध मध्य एशियाई गणराज्यों तथा पूर्व में पाकिस्तान के साथ, पश्चिम में ईरान के साथ उत्तर-पूर्व में चीन के साथ लगती हैं। अफगानिस्तान का महत्व भारत के लिए आर्थिक एवं रणनीतिक दृष्टिकोण से है। 2001 में अफगानिस्तान से तालिबान शासन की समाप्ति के उपरान्त भारत ने अफगानिस्तान को कई तरह की मदद दी है। बस एवं विमान की आपूर्ति की तथा पुलिस, सेना और नौकरशाही आदि को प्रशिक्षण दिया है। इसके अतिरिक्त भारत ने वहाँ स्कूल, अस्पताल और संचार नेटवर्क स्थापित करने में मदद की है।

अफगानिस्तान के संदर्भ में भारत की विदेश नीति कई कारकों से निर्धारित होती है, जिसमें इस क्षेत्र में पाकिस्तान के प्रभाव को कम करना सबसे प्रमुख है। भारत मध्य एशियाई गणराज्यों के तेल भण्डारों व बाजारों तक पहुँचने के लिए अफगानिस्तान को एक मुख्य व्यवसायिक मार्ग के रूप में देखता है। इस्लामाबाद और तालिबान के बीच संबंधों ने भारत को अत्यधिक परेशान किया है। तालिबान शासन ने कश्मीर में भारत-विरोधी अलगाववादी तत्वों को समर्थन प्रदान किया था।

भारत-अफगानिस्तान के संबंध 2005 में उच्च स्तर पर पहुँच गए। उसी वर्ष भारत के प्रधानमंत्री डॉ॰ मनमोहन सिंह एवं अफगानिस्तान के राष्ट्रपति हमिद करजई ने क्रमशः एक-दूसरे देश की यात्रा की तथा दोनों देशों के बीच नियमित तौर से राजनीतिक आदान-प्रदान पर सहमति व्यक्त की गई। दोनों नेताओं ने इस बात पर बल दिया कि इस क्षेत्र में शांति व स्थिरता बनाए रखने के लिए एक प्रभुत्वसंपन्न, स्थिर, लोकतांत्रिक व समृद्ध अफगानिस्तान आवश्यक है। उन्होंने आतंकवाद को लोकतंत्र के लिए खतरा बताया तथा यह घोषणा की कि ऐसे देशों के साथ कोई समझौता नहीं किया जाएगा जो आतंकवाद को शरण एवं प्रोत्साहन दे रहे हैं। भारत के प्रधानमंत्री ने अफगानिस्तान के पुनर्निर्माण (Reconstruction) के प्रति भारत की प्रतिबद्धता स्पष्ट की।

भारत ने अफगानिस्तान सरकार एवं वहाँ की जनता का इस बात के लिए आभार व्यक्त किया कि वे वहाँ पुनर्निर्माण एवं आर्थिक विकास की चुनौतियों का सामना करते हुए लोकतंत्र एवं शांति स्थापित करने का प्रयास कर रहे हैं। राष्ट्रपति हमिद करजई ने मूलभूत संरचना, मानवतावादी सहायता, संस्थात्मक एवं मानव संसाधन विकास के लिए 500 करोड़ डॉलर से भी अधिक धनराशि की सहायता के लिए भारत के प्रति आभार प्रकट किया है।

भारत-अफगानिस्तान के बीच कृषि एवं स्वास्थ्य से संबंधित समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए। अफगानिस्तान विकास कार्यक्रमों में स्थानीय समुदायों की भागीदारी के लिए लघु विकास परियोजनाओं (Small Development Projects – SDPs) की शुरुआत की गई है। दोनों देशों ने काफेडरेशन ऑफ इण्डियन इंडस्ट्री (Confederation of Indian Industry – CII) तथा संयुक्त राष्ट्र की साझेदारी के साथ अफगानिस्तान में कौशल निर्माण अभिक्रम (Skill Building Initiative) की शुरुआत करने पर खुशी व्यक्त की। भारत, अफगानिस्तान के 100 गाँवों में एकीकृत ग्रामीण विकास को बढ़ावा देने के लिए भारत में पूर्ण रूप से विकसित सौर विद्युतीकरण (Solar Electrification) एवं वर्षा जल उपयोग (Rain Water Harvesting) तकनीक का आरंभ करेगा। भारत ने महिलाओं के लिए 1000 सिलाई मशीनों को भेंट करने के साथ ही महिलाओं के लिए व्यवसायिक केंद्र खोलने में मदद करने का आश्वासन दिया है।

अफगानिस्तानी सेना एवं अधिकारियों के प्रशिक्षण के लिए भारतीय संस्थाओं के प्रयोग करने संबंधी हामिद करजई के विचार का भारत ने स्वागत किया। मानव संसाधन विकास की प्रक्रिया को तेज करने के लिए भारत ने विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा प्राप्ति हेतु अफगानिस्तानी छात्रों के लिए 500 छात्रवृत्तियों की घोषणा की और इसके अलावा अफगानिस्तानी पुरुषों एवं महिलाओं के लिए भारतीय तकनीकी एवं आर्थिक सहयोग (Indian Technical and Economic Cooperation – ITEC) कार्यक्रम के अन्तर्गत 500 अल्पकालीन प्रशिक्षण अध्येतावृत्तियों (Fellowships) की घोषणा की। शिक्षा क्षेत्र दोनों देशों के बीच दीर्घकालीन सहयोग का उदाहरण है। युद्ध में छतिप्रस्त 102 वर्ष पुराने हबीबिया स्कूल के पुनर्निर्माण में भारत ने भागीदारी की है।

अफगानिस्तान की लोकतान्त्रिक व्यवस्था को मजबूती प्रदान करने के लिए लोकतांत्रिक संस्थाओं के निर्माण एवं उनकी मजबूती के लिए साथ मिलकर कार्य करने हेतु दोनों देशों ने सहमति व्यक्त की। भारत ने अफगानिस्तान में लोकतांत्रिक चुनावों का स्वागत किया है। इस हेतु सरकारी अधिकारियों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई है। नई संसद के निर्माण हेतु भारत ने 25 मिलियन अमेरिकी डॉलर की सहायता की है।

भारत-अफगानिस्तान के शासनाध्यक्षों की बैठक के दौरान (2005) अफगानिस्तान के राष्ट्रपति ने मध्य एशिया एवं भारतीय उपमहाद्वीप के बीच अफगानिस्तान से होकर जाने वाले सड़क मार्ग के ऐतिहासिक महत्व को स्पष्ट किया। प्रधानमंत्री डॉ॰ मनमोहन सिंह ने इस दृष्टिकोण को दोनों देशों के मध्य व्यापार और जनता के बीच संपर्क कायम करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम माना है। इसी संदर्भ में राष्ट्रपति हामिद करजई ने दक्षिण एशिया के साथ अफगानिस्तान के आर्थिक एकीकरण के लिए सार्क (SAARC) की सदस्यता प्राप्त करने में रुचि दिखाई और तापी गैस पाइपलाइन (Turkmenistan-Afghanistan-Pakistan-India Gas Pipeline – TAPI) परियोजना के लिए परामर्श और सहयोग की आवश्यकता पर बल दिया। पुराने संबंधों को मजबूती देने और इक्कीसवीं सदी में नई साझेदारी का विकास करने में दोनों देशों के सामान्य हित शामिल हैं। इस बात को दोनों देशों ने समझा है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि 9/11 के पश्चात् भारत-अफगानिस्तान संबंधों में काफी सुधार हुआ है। अफगानिस्तान के पुनर्निर्माण में भारत ने कई तरह से योगदान किया है। जनवरी 2007 में भारत के विदेशमंत्री प्रणव मुखर्जी ने अफगानिस्तान की दो दिवसीय यात्रा के दौरान कहा कि भारत-अफगानिस्तान संबंध तीव्र गति से प्रगति कर रहे हैं और भारत को इस बात की खुशी है कि वह अफगानिस्तान के पुनर्निर्माण में सहयोग कर रहा है। इस अवसर पर दोनों देशों ने कई महत्वपूर्ण समझौते किए। भारत ने अफगानिस्तान को आधारभूत संरचना, संचार, कर्मचारियों के प्रशिक्षण, आर्थिक विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं समाज कल्याण के क्षेत्र में सहयोग करने का आश्वासन दिया। इसके अलावा भारत ने सड़क, पुल व रेल निर्माण तथा लगभग 500 करोड़ की लागत वाली सलमा डैम जलविद्युत परियोजना (Salma Dam Hydro Power Project) में भी निवेश का वादा किया। उल्लेखनीय है कि 2007 में अफगानिस्तान को सार्क (South Asian Association for Regional Cooperation – SAARC) की सदस्यता प्रदान कर दी गई। अब सार्क में 8 सदस्य देश हैं। इससे भारत-अफगानिस्तान संबंधों को बल मिला है। अगस्त 2008 में अफगानिस्तान के राष्ट्रपति हामिद करजई भारत आये और भारत के प्रधानमंत्री से साथ वार्ताएं कीं। इस वार्तालाप में द्विपक्षीय सहयोग को बढ़ाने तथा अफगानिस्तान के पुनर्निर्माण हेतु आर्थिक मदद की बात शामिल थी। अगस्त 2009 में अफगानिस्तान में राष्ट्रीय चुनाव हुए। इस विवादास्पद चुनाव में हामिद करजई विजयी रहे। देश के अंदर एवं बाहर इस चुनाव प्रक्रिया की निंदा की गई। संतोष की बात यह रही कि इस चुनाव से भारत-अफगानिस्तान संबंध प्रभावित नहीं हुए।

भारतीय विदेश नीति के समक्ष प्रमुख चुनौतियाँ (Major Challenges before Indian Foreign Policy)

- ♦ **सुरक्षा (Security)**— अफगानिस्तान में कार्य कर रहे भारतीयों की सुरक्षा सुनिश्चित करना भारतीय विदेशी नीति की सबसे बड़ी चुनौती है। आतंकवादी आत्मघाती बम-विस्फोट निरंतर करते रहते हैं। वहाँ कार्यरत भारतीयों पर इनका विपरीत प्रभाव पड़ता है और इससे वे हतोत्साहित हो जाते हैं। अफगानिस्तान में कार्यरत भारतीयों के अगवा किये जाने और उनकी हत्याओं के अलावा जुलाई 2008 में भारतीय दूतावास पर हुए आत्मघाती हमले ने भारतीयों की चिंता बढ़ा दी। विश्वसनीय सुरक्षा के अभाव में विकास कार्यों में अवरोध पैदा हो रहा है तथा परियोजनाओं के खर्च में बढ़ोतरी भी हो रही है।
- ♦ **परिवहन सुविधाओं की कमी (Lack of Transport Facilities)**— अफगानिस्तान तक श्रमिकों और सामग्रियों को पहुँचाना काफी कठिन रहा है। पाकिस्तान के रास्ते उन्हें पहुँचाना काफी सरल हो सकता है लेकिन वर्तमान राजनीतिक स्थितियों में ऐसा सोचना व्यर्थ है। परिवहन सुविधाओं की कमी से योजनाओं को पूरा करना काफी खर्चीला और कठिन साबित हो रहा है।
- ♦ **ड्रग ट्रेड (Drug Trade)**— अव्यवस्थित कानून व्यवस्था के बीच ड्रग ट्रेड ने स्थिति को और अधिक दयनीय बना दिया है। इससे भ्रष्टाचार और अराजकता की संस्कृति अपने पैर जमाती जा रही है।
- ♦ **मानव विकास एवं क्षमता निर्माण (Human Development and Capacity Building)**— अफगानिस्तान की कार्यकारी क्षमता बहुत कम है। ऐसा वर्षों से मानव विकास और क्षमता निर्माण की कमी के चलते है। भारत द्वारा किये जा रहे विकास

कार्यों को देखरेख करने के लिए समुचित और योग्य अफगान नागरिकों की कमी है।

- ♦ **पाकिस्तानी तत्व (Pakistani Elements)**— तत्कालीन तालिबान सरकार के साथ पाकिस्तान के संबंध काफी अच्छे थे। अफगानिस्तान और भारत के बीच अच्छे संबंध पाकिस्तान को अच्छे नहीं लगते हैं। इसी कारण पाकिस्तान अपनी भूमि से होकर जाने के लिए भारत को मार्ग उपलब्ध नहीं करवाता है। ऐसा सबूत भी पाया गया है कि अफगानिस्तान में भारतीय हितों से जुड़े स्थलों पर हमलों के पीछे पाकिस्तान का पूरा सहयोग है।

अफगानिस्तान का भारत के लिए महत्त्व (Importance of Afghanistan for India)

इस बात में संदेह नहीं है कि भारत को अफगानिस्तान के अंदर विकास कार्यों को पूरा करने में अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है लेकिन साथ ही यह भी सत्य है कि अफगानिस्तान के साथ कार्य करने से भारत को इस क्षेत्र में अपने प्रभाव का विस्तार करने का भी मौका मिला है। इसके अलावा अफगान सरकार के साथ अपने मैत्रीपूर्ण संबंधों का लाभ उठाकर भारत तालिबान सरकार के समय में हुए नुकसान की क्षतिपूर्ति भी कर सकता है।

- ♦ **सामरिक हित (Strategic Interest)**— सामरिक दृष्टिकोण से अफगानिस्तान, भारत के लिए काफी महत्वपूर्ण है। दक्षिण-पश्चिम और मध्य-एशिया में अपनी भू-सामरिक अवस्थिति के चलते अफगानिस्तान का महत्व बढ़ जाता है। अफगानिस्तान में भारत की प्रभावी उपस्थिति मध्य-एशिया और दक्षिण एशिया में चीन और अमेरिका के प्रभाव को कम कर सकती है। साथ ही भारत उस आतंकवाद का सामना करने में समर्थ होगा जो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से भारत के हितों को क्षति पहुंचा रहा है। अफगानिस्तान के साथ सहयोग कर भारत इस क्षेत्र में पाकिस्तानी प्रभाव को नियंत्रित कर सकेगा।
- ♦ **मध्य-एशिया पर प्रभाव (Effect on Central Asia)**— भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए तेल और खनिज से सम्पन्न मध्य-एशिया काफी महत्व रखता है ऐसी स्थिति में अफगानिस्तान मध्य-एशिया और भारत के बीच सेतु (Bridge) का काम कर सकता है। भारत, तापी (TAPI) गैस पाइप लाइन परियोजना में शामिल होकर मध्य-एशिया में सक्रिय होना चाहता है। भारत ने अफगानिस्तान-ताजिकिस्तान सीमा पर फरखोर (Farkhor) में एक अस्पताल की स्थापना की है और उजबेकिस्तान से काबुल (अफगानिस्तान) तक विद्युत ऊर्जा लाने के लिये पुल-ए-खुमरी (Pul-E-Khumri) से काबुल तक ट्रांसमिशन लाइन का निर्माण कर रहा है। आयनी में सैनिक अड्डे की स्थापना के साथ ही भारत रूस, जर्मनी, अमेरिका के अलावा मध्य-एशिया में सैनिक अड्डा रखने

भारत-अफगानिस्तान संबंधों में सकारात्मक बिंदु

(Positive Points in India-Afghanistan Relations)

1. भारत एवं अफगानिस्तान के बीच प्राचीन काल से ही ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक संबंध रहे हैं। अफगानिस्तान में तालिबान के सत्ता में आने के बाद दोनों देशों के आपसी संबंधों में शिथिलता आ गयी थी। इंडियन एयरलाइंस के आईसी-814 विमान को अपहृत कर कंधार ले जाने के बाद दोनों देशों के मध्य संबंध निम्नतर स्तर पर आ गए थे।
2. अफगानिस्तान पर अमेरिकी आक्रमण के दौरान भी भारत ने अफगानिस्तान में उत्तरी गठजोड़ (Northern Alliance) को समर्थन दिया। भारत ने तालिबान के पतन का स्वागत किया तथा हमिद करजई सरकार को समर्थन दिया। भारत एक स्थिर, शांतिपूर्ण एवं लोकतांत्रिक अफगानिस्तान के हक में है। ऐसा ही भारत के हित में भी है क्योंकि अस्थिरता से आतंकवाद को बढ़ावा मिलेगा जो अंततः भारत के लिए हानिकारक होगा।
3. अफगानिस्तान में भारत अनेक विकास परियोजनाएँ चला रहा है। इनमें जल विद्युत, सड़क निर्माण, कृषि, उद्योग, दूरसंचार, शिक्षा और स्वास्थ्य आदि से संबंधित परियोजनाएँ शामिल हैं। भारत ने अफगानिस्तान की संसद को बनाने में भी मदद की है। भारत ने अफगानिस्तान के 100 गांवों को गाँव लेकर वहाँ एकीकृत ग्रामीण विकास (Integrated Rural Development) की घोषणा की है। भारत ने अफगानिस्तानी महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के लिए अफगानिस्तान को 10,000 सिलाई मशीनें उपलब्ध करवाई है।
4. यातायात संबंधों को बेहतर बनाने के लिए नागरिक विमानन (Civil Aviation) के क्षेत्र में एक समझौता किया गया है। इसके अलावा मोडिया एवं सूचना के क्षेत्र में सहयोग करने के लिए भी एक मसौदे पर हस्ताक्षर किए गए हैं। इस मसौदे को दोनों देशों के मोडिया कमिशन टीवी तथा रेडियो संगठनों के बीच काफी विचार-विमर्श के बाद अंतिम रूप दिया गया है।
5. आज अफगानिस्तानी भारतीयों की सम्पत्ति को दुरुष्ट से देखता है। भारत का मनोरंजन उद्योग विशेषकर टीवी सीरियल तथा हिन्दी सिनेमा अफगानिस्तान में बहुत लोकप्रिय है।
6. अनेक भारतीय अफगानिस्तान की विकास परियोजना में कार्यरत हैं। भारतीय संगठन जैसे सीमा सड़क संगठन (Border Road Organisation - BRO) अफगानिस्तान की सड़क निर्माण परियोजनाओं में शामिल है।
7. अफगानिस्तान की सार्क (SAARC) सदस्यता का भी भारत ने स्वागत किया था। अफगानिस्तान की सार्क में उपस्थिति भारत के लिए फायदेमंद होगी क्योंकि भारत के पास एक ऐसा सहयोगी हो जाएगा जो संभवतः किसी भी मुद्दे पर भारत का साथ देगा। आतंकवाद के मुद्दे पर भी अफगानिस्तान, भारत के दृष्टिकोण का समर्थन करता है।
8. विशेषकर पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवाद से दोनों ही देश पीड़ित हैं और यह मानते हैं कि पाकिस्तान को अपनी भूमि से आतंकवाद को मिटाने के साथ ही प्रयास करने चाहिए।
9. शिक्षा के क्षेत्र में भी बेहतर सहयोग किया जा रहा है। भारत ने हबीबिया स्कूल (Habibia School) के पुनर्निर्माण में अफगानिस्तान की सहायता की है। इसके अलावा अफगानिस्तान के छात्रों के लिए भारत ने 1000 छात्रवृत्तियाँ प्रदान करने की घोषणा की है।

वाला चौथा देश बन गया है।

- ❖ **पाकिस्तान पर नियंत्रण (Control on Pakistan)**— अफगानिस्तान में पाकिस्तान के सामरिक हित हैं। उसने हमेशा तालिबान को संरक्षण प्रदान किया है और अफगानिस्तान का उपयोग भारत के विरुद्ध करता रहा है। अफगानिस्तान में भारत के प्रभाव में वृद्धि से भारत के प्रति दुर्भावनापूर्ण गतिविधियों पर रोक लगेगी।

भारत, अफगानिस्तान में उल्लेखनीय भूमिका अदा कर रहा है। यद्यपि अफगानिस्तान में काम करना भारत के लिये चुनौतियों से भरा हुआ है लेकिन यहाँ कार्य करके भारत को जो अवसर प्राप्त हो रहे हैं भारत उन्हें नजरअंदाज नहीं कर सकता। भारत के समक्ष अपने सामरिक लक्ष्यों को पूरा करने का एक अच्छा अवसर है। भारत का भविष्य में एक क्षेत्रीय और वैश्विक शक्ति के रूप में उभरना इस बात पर भी निर्भर करता है कि वह अफगान क्षेत्र में अपनी भूमिका का निर्वहन किस प्रकार करता है।

भारत अफगानिस्तान संबंधों का हालिया परिदृश्य **(Current Perspective of India-Afghanistan Relation)**

(i) भारत-अफगानिस्तान सामरिक भागीदारी समझौता

(India-Afghanistan Strategic Partnership Agreement)

भारत तथा अफगानिस्तान के बीच ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक संबंध रहे हैं। भारत एवं अफगानिस्तान के बीच जनवरी 1950 में मैत्री सन्धि की गई थी। विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग की समृद्ध एवं साधक परम्परा (Rich and Fruitful Tradition of Cooperation) का अंश बनते हुए एवं इनका और विस्तार करने के लिए दोनों देशों ने 4 अक्टूबर, 2011 को सामरिक भागीदारी समझौते पर हस्ताक्षर किये। दोनों देश शांति, लोकतंत्र, विधि के शासन, अहिंसा, मानवाधिकार, स्वतंत्रता, अंतर्राष्ट्रीय कानून एवं संयुक्त राष्ट्र चार्टर के सिद्धान्तों के प्रति वृत्तबद्ध हैं। इस सामरिक समझौते से यह माना जा रहा है कि दोनों देशों के बीच आने वाले वर्षों में राजनैतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में संबंध और गहरे होंगे। सामरिक समझौते में निम्नलिखित प्रावधान किए गए हैं।

सामान्य सिद्धांत (General Principles)

- आपसी समझौता तथा दोन्नीयक विश्वास पर आधारित इस समझौते में दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय तथा अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में बहुआयामी संबंधों (Multifaceted Ties) को उच्चतर स्तर पर ले जाने की परिकल्पना की गई है।
- दोनों देशों के बीच एतनीतिक सहभागिता दोनों राष्ट्रों की सुप्रभुता, समानता एवं क्षेत्रीय अखंडता एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में अहस्तक्षेप, पारस्परिक सम्मान तथा आपसी लाभ के सिद्धांतों पर आधारित है।
- दोनों देशों के बीच एतनीतिक सहभागिता किसी अन्य राष्ट्र अथवा राष्ट्रों के समूह के विरुद्ध निर्देशित नहीं है।

राजनैतिक एवं सुरक्षा सहयोग (Political and Security Cooperation)

- दोनों देश राजनैतिक सहयोग तथा नियमित द्विपक्षीय राजनैतिक एवं विदेश मंत्रालय स्तरीय परामर्शों के लिए तंत्र (Mechanism) स्थापित करेंगे। राजनैतिक परामर्श दोनों देशों के विदेश मंत्रियों के नेतृत्व में किया जाएगा और वर्ष में कम से कम एक बार विदेश मंत्री स्तरीय परामर्श बैठक आयोजित की जाएगी।
- दोनों देश संयुक्त राष्ट्र संघ तथा अन्य अंतर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय मंचों पर परामर्श एवं सहयोग करने के लिए सहमत हुए हैं। ऐसे सहयोग का उद्देश्य इन मंचों पर दोनों देशों के हित में निर्णय लेने को प्रोत्साहित करना है। संयुक्त राष्ट्र एवं अंतर्राष्ट्रीय सहयोग में निम्नलिखित प्रावधान शामिल होंगे।
 - (क) मुख्य क्षेत्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर संयुक्त पहल (Joint Initiative),
 - (ख) सुरक्षा परिषद में भारत की स्थायी सदस्यता सहित संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधार एवं विस्तार के लिए समर्थन।
- दोनों देश राष्ट्रीय सुरक्षा के क्षेत्र में सहयोग के लिए संरचना (Framework for Cooperation) विकसित करने हेतु एतनीतिक वार्ता (Strategic Dialogue) करने के लिए सहमत हैं। यह वार्ता राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकारों (National Security Advisors - NSAs) के नेतृत्व में होगी। इसमें क्षेत्रीय शांति एवं सुरक्षा को मजबूत बनाने के लिए आपसी प्रयास तेज करने के उद्देश्य से नियमित परामर्श (Regular Consultations) शामिल हैं।

- दोनों देशों के बीच सुरक्षा सहयोग का आशय अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद (International Terrorism), संगठित अपराध (Organized Crime), नशीले पदार्थों की अवैध तस्करी (Illegal Trafficking of Narcotics) तथा मनी लॉन्ड्रिंग (Money Laundering) इत्यादि पर रोक लगाने के लिए आपसी प्रयासों में सहायता करना है।
- भारत, अफगान राष्ट्रीय सुरक्षा बलों (Afghan National Security Forces) के प्रशिक्षण, शस्त्रबद्ध एवं क्षमता निर्माण कार्यक्रमों (Training, Equipping and Capacity Building Programmes) के लिए सहायता करने हेतु सहमत हुआ है।

व्यापार एवं आर्थिक सहयोग (Trade and Economic Cooperation):

- दोनों देशों ने व्यापारिक, आर्थिक, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकीय सहयोग के साथ व्यापार एवं आर्थिक संबंधों का विस्तार करने के लिए व्यापार एवं उद्योग प्रतिनिधियों के अन्य निकायों (Other Bodies of Business and Industry Representatives) के बीच सहयोग को मजबूत बनाने के लिए प्रतिबद्धता प्रकट की है।
- अफगानिस्तान के सतत विकास के हित में तथा दोनों देशों के बीच आर्थिक अंतर्निर्भरता को बढ़ावा देने के लिए दोनों पक्ष कृषि, ग्रामीण विकास, खनन, उद्योग, ऊर्जा, सूचना प्रौद्योगिकी, संचार और परिवहन जैसे क्षेत्रों में सहयोग को मजबूत करने एवं विविधीकरण (Deepening and Diversifying Cooperation) करने के लिए वचनबद्ध हैं जिसमें नागर विमानन (Civil Aviation) तथा दोनों देशों की सहमति से निर्धारित किए जाने वाले अन्य क्षेत्र भी शामिल हैं।
- दोनों देश व्यापार एवं निवेश को संवर्धित करने के लिए (To Promote Trade and Investment) अनुकूल परिवेश (Favourable Environment) स्थापित करने हेतु प्रभावशाली उपाय करने के लिए सहमत हैं। इन उपायों में अन्य बातों के अलावा निम्नलिखित शामिल होंगे:
 - (क) निवेश सुरक्षा संवर्धित करना;
 - (ख) सीमा शुल्क एवं अन्य प्रक्रियाओं को सरल बनाना तथा गैर-शुल्क अवरोधों (Non-tariff Barriers) को दूर करने के लिए प्रोत्साहित करना तथा धीरे-धीरे प्रशुल्क अवरोधों (Tariff Barriers) को कम करना;
 - (ग) वाणिज्यिक आदान-प्रदान के सुवर्धन के लिए एयर कार्गो सुविधायें (Air Cargo Facilities) विकसित करने के लिए कार्य करना;
 - (घ) बैंकिंग एवं वित्त के क्षेत्रों में सहयोग करना तथा ऋण एवं बीमा सुविधाओं (Credit and Insurance Facilities) में सुधार करना; और
 - (ङ) अंतर्राष्ट्रीय व्यापार (International Trade), आर्थिक एवं वित्तीय निकायों (Economic and Financial Bodies) में सहयोग एवं समन्वय संवर्धित करना।
- द्विपक्षीय व्यापार एवं आर्थिक संबंधों में सतत विकास करने के लिए दोनों देश भारतीय एवं अफगानी निकायों के बीच आदान-प्रदान के लिए प्रभावशाली संरचना स्थापित करने पर राजी हुए। विशेष उपायों में निम्नलिखित शामिल होंगे:
 - (क) दोनों देशों के बीच व्यापारिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक सहयोग संवर्धित करने के लिए क्षेत्रों/प्रांतों के बीच सम्पर्क बढ़ाना।
 - (ख) दोनों देशों के संबन्धित निकायों को अन्य देशों के साथ क्षेत्रीय व्यापार समझौतों की सभावेनाओं का संयुक्त रूप से पता लगाने के लिए आदेश दिया गया है।
 - (ग) गुणवत्ता आश्वासन एवं मानकीकरण संस्थाओं (Institutions of Quality Assurance and Standardization) तथा नई प्रौद्योगिकी से संबंधित संस्थानों के बीच सहयोग संवर्धित करके अपनी वस्तुओं की गुणवत्ता तथा अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्द्धा (International Competitiveness) को और संवर्धित करना।
 - (घ) दोनों देशों के वाणिज्य और उद्योग संघों के बीच अधिक से अधिक सहयोग को प्रोत्साहित करना।
- इस बात को स्वीकार करते हुए कि क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग प्रत्येक राष्ट्र की भावी आर्थिक समृद्धि के लिए महत्वपूर्ण है, दोनों देश क्षेत्रीय संगठनों के माध्यम से क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग करने के लिए सहमत हुए हैं। क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग में निम्नलिखित पहलु शामिल होंगे:
 - (क) मध्य एवं दक्षिण एशिया (Central and South Asia) को जोड़ने वाले व्यापार, परिवहन एवं ऊर्जा केन्द्र (Trade Transportation and Energy Hub) के रूप में उभरने में अफगानिस्तान की सहायता करना तथा परिवहन एवं पारगमन संपर्कों (Transport and Transit Linkages) को और मजबूत बनाने में सहायता करना।
 - (ख) क्षेत्रीय अवसंरचना परियोजनाओं (Regional Infrastructure Projects) के विकास पर ध्यान केन्द्रित करना।
 - (ग) आपसी लाभ के लिए अफगानी एवं भारतीय उत्पादों के लिए बाजार खोलकर दक्षिण एशियाई एवं वैश्विक अर्थव्यवस्थाओं के साथ अफगानी अर्थव्यवस्था के एकीकरण को सुविधाजनक बनाने में सहायता करना।

(घ) सार्क (SAARC) के सदस्य के नाते क्षेत्रीय सहयोग को मजबूत बनाना।

क्षमता विकास और शिक्षा (Capacity Development and Education):

- अफगानिस्तान के स्थायी विकास के हित में एवं अफगानिस्तान में भारत द्वारा चलाये जा रहे मौजूदा सहायता कार्यक्रम से लाभ उठाने के मद्देनजर भारत ने अफगानिस्तान में विकास एवं क्षमता निर्माण (Development and Capacity Building) प्रयासों में अपनी सहायता जारी रखने के लिए प्रतिबद्धता व्यक्त की है।
- (क) अफगानिस्तान की प्राथमिकताओं के अनुरूप महत्वपूर्ण क्षेत्रों के अतिरिक्त कृषि, खनन (Mining) और स्वास्थ्य क्षेत्रों में भी सहयोग किया जाएगा।
- (ख) भारत सुदूर एवं ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी स्तर पर विकास (Grass-root Level Development) के लिए निर्माणाधीन लघु विकास परियोजनाओं (Small Development Projects – SDPs) का विस्तार करने के लिए भी राजी है।
- दोनों पक्ष दोनों देशों के मंत्रालयों/एजेंसियों के बीच सहयोग बढ़ाकर संस्थागत संपर्कों की स्थापना करने पर भी सहमत हुए हैं। उदाहरण के लिए भारत ने अपनी संस्थागत प्रशासनिक, राजनीतिक एवं आर्थिक प्रणालियों का अनुभव प्रस्तुत किया है जिसका अफगानिस्तान अध्ययन कर सकता है और अपनी आवश्यकताओं एवं वास्तविकताओं (Needs and Realities) के परिप्रेक्ष्य में लाभ उठा सकता है।
- भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् (Indian Council for Cultural Relations – ICCR) के वार्षिक छात्रवृत्ति कार्यक्रम और अफगानिस्तान के लिए उच्च शिक्षा को बढ़ावा देने की व्यापक कार्यनीति के भाग के रूप में भारत, भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् (Indian Council for Cultural Relations – ICCR) एवं भारतीय आर्थिक एवं तकनीकी सहयोग (Indian Technical and Economic Cooperation – ITEC) छात्रवृत्ति एवं बहुपक्षीय वित्तपोषण कार्यक्रमों (Multilateral Funded Programmes) के माध्यम से अफगानिस्तान में शिक्षा और प्रशिक्षण अवसरों को बढ़ाना जारी रखेगा।
- (क) भारत अफगानिस्तान की आवश्यकताओं के अनुरूप भारत में चिकित्सा, इंजीनियरी और प्रबंधन संस्थानों में छात्रवृत्तियों को सख्या बढ़ाने पर सहमत हुआ है।
- (ख) दोनों देश स्कूल और विश्वविद्यालय स्तर पर छात्रों के वार्षिक आवागमन कार्यक्रमों को बढ़ावा देगा।
- अफगान सरकार के लिए क्षमता निर्माण सहायता के भाग के रूप में भारत कार्यपालिका, न्यायपालिका एवं विधायिका के विभिन्न विभागों को तकनीकी प्रशिक्षण एवं अन्य प्रकार से क्षमता निर्माण सहायता जारी रखेगा।
- राष्ट्रीय और उप-राष्ट्रीय स्तरों पर प्रशासन को सुदृढ़ करने की अफगानिस्तान की आवश्यकताओं की देखत हुए भारत ने राष्ट्रीय, राज्य, जिला एवं स्थानीय निकाय स्तरों पर प्रशासन सुचारु बनाने का अनुभव एवं अफगानिस्तान की वास्तविकताओं के अनुरूप एक स्थायी करियर आधारित सिविल सर्विस सेवा (Permanent Career-based Civil Service) स्थापित करने में तकनीकी सहायता देने पर सहमति व्यक्त की है।

सामाजिक, सांस्कृतिक, सिविल सोसाइटी एवं लोगों के बीच संबंध

(Social, Cultural, Civil Society and People to People Relations):

- दोनों देशों के बीच विद्यमान संबंधों को आगे बढ़ाने के लिए ससंदर्भ मोडिया, खेल, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, बौद्धिक एवं धार्मिक हस्तियों के बीच आदान-प्रदान की परिकल्पना की गई है।
- भारत-अफगानिस्तान फाउंडेशन (India-Afghanistan Foundation) के माध्यम से दोनों देश कला, साहित्य, कविता और इसी प्रकार के क्रियाकलापों पर जोर देते हुए सामाजिक एवं सांस्कृतिक संबंधों को बढ़ावा देने और एक-दूसरे की सांस्कृतिक विरासत एवं उपलब्धियों को और उजागर करने पर राजी हुए।
- दोनों देश मोडिया संगठनों के बीच अधिक से अधिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देने पर राजी हुए।
- दोनों देश महिलाओं तथा समाज के गरीब एवं कमजोर वर्गों के उत्थान के लिए कार्य करने के लिए प्रतिबद्ध हैं।
- दोनों देशों ने लोगों के बीच अंतर्क्रिया (Interaction) एवं वैध आवागमन (Legitimate Movement) को प्रोत्साहित करने के लिए यात्रा नियमों एवं प्रक्रियाओं को सरल बनाने पर सहमति जतायी है।
- एक देश के नागरिकों के दूसरे देश में चलने वाले विधिक मामलों (Legal Affairs) को सुविधाजनक बनाने के लिए दोनों देश सिविल एवं फौजदारी मामलों में परस्पर विधिक सहायता हेतु समझौता करने पर सहमत हुए हैं।
- नागरिक समाजों (Civil Societies) के बीच संबंधों को बढ़ावा देने के लिए और विशेषकर बौद्धिक आदान-प्रदान के लिए

दोनों देश विभिन्न क्षेत्रों के ख्याति-प्राप्त व्यक्तियों को एक-दूसरे के यहाँ आमंत्रित करेंगे।

- दोनों देश खेल के क्षेत्र में सहयोग एवं आदान-प्रदान को बढ़ावा देने पर सहमत हैं।
- दोनों देश केंद्र और प्रांतों के बीच सहभागिता, शक्तियों के विकेन्द्रीकरण तथा प्रजातांत्रिक मूल्यों एवं संस्थाओं के संबंध में एक दूसरे के अनुभव से सीख लेने पर सहमत हैं।
- दोनों देश संसदीय शिष्टमंडलों का दौरा आयोजित करने पर सहमत हैं तथा संसदीय मैत्री समूह (Parliamentary Friendship Groups) स्थापित करते हुए संसदीय आदान-प्रदान पर भी सहमत हैं।

कार्यान्वयन तंत्र (Implementation Mechanism):

- यह राजनीतिक भागीदारी एक सहभागिता परिषद (Partnership Council) की देखरेख में कार्यान्वित की जाएगी। दोनों देशों के विदेश मंत्री इसकी अध्यक्षता करेंगे। यह परिषद वार्षिक बैठकें आयोजित करेंगी।
- इस परिषद में संबंधित मंत्रालयों/प्राधिकरणों के उच्च स्तरीय प्रतिनिधियों सहित राजनीतिक एवं सुरक्षा सलाहकार (Political and Security Consultations) व्यापार एवं आर्थिक सहयोग (Trade and Economic Cooperation), क्षमता विकास और शिक्षा (Capacity Building and Education), सामाजिक, सांस्कृतिक एवं सिविल सोसाइटी अंतर्क्रिया (Social, Cultural and Civil Society Interactions) संबंधी चार पृथक संयुक्त कार्यकारी दल शामिल होंगे।
- दोनों पक्षों के बीच मौजूदा वार्ता तंत्र (Consultation Mechanism) इस परिषद के अंग बन जाएंगे।

भारत और अफगानिस्तान 4 जनवरी, 1950 को संपन्न मैत्री संधि की बुनियादी एवं चिरस्थायी भावना को ध्यान में रखते हुए इस सहभागिता को आगे बढ़ाएंगे। इस संधि में उल्लेख है कि दोनों सरकारों के बीच चिरस्थायी शांति एवं मित्रता होगी और दोनों सरकारें अपने-अपने देश के लोगों के बीच विद्यमान मैत्रीपूर्ण संबंधों को बनाये रखने एवं सुदृढ़ करने के लिए प्रयास करेंगी।

(ii) प्रधानमंत्री की अफगानिस्तान यात्रा- 2011 (Prime Minister's Afghanistan Visit - 2011)

12 मई, 2011 की अपनी अफगानिस्तान यात्रा के दौरान डॉ. मनमोहन सिंह ने राष्ट्रपति हमिद करजई के साथ पारस्परिक हित के विभिन्न द्विपक्षीय, क्षेत्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर विस्तृत चर्चा की। दोनों नेताओं ने सदियों से दोनों देशों के बीच विद्यमान ऐतिहासिक और पारंपरिक संबंधों तथा पारस्परिक लाभ के लिए इन संघर्षों को घनिष्ठ एवं विकसित करने हेतु इच्छा ज्ञाहिर की।

- दोनों देशों ने अपने बहुआयामी द्विपक्षीय संबंधों को दीर्घावधिक स्वरूप प्रदान करने और आगामी वर्षों में इनका सक्रिय विकास करने पर सहमति व्यक्त की। भारत और अफगानिस्तान ने शांति, लोकतंत्र, समावेशी विकास, विधिसम्मत शासन, अहिंसा, मानवाधिकार एवं स्वतंत्रता के साथ आदर्शों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की पुष्टि की साथ ही दोनों देशों के साथ-साथ इस क्षेत्र और संपूर्ण विश्व के समक्ष विद्यमान आतंकवाद के खतरे को खत्म करने के लिए आपसी प्रतिबद्धता व्यक्त की। दोनों नेताओं ने एक स्वतंत्र, लोकतांत्रिक, स्थिर तथा समृद्ध अफगानिस्तान के संबंध में विचार साझा किए।
- संयुक्त राष्ट्र चार्टर के उद्देश्यों और सिद्धांतों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की पुष्टि करते हुए भारत और अफगानिस्तान ने एक ऐसा सामरिक भागीदारी समझौता करने का निर्णय लिया जिसमें आपसी हित के सभी क्षेत्रों को शामिल किया गया हो। एक दूसरे के प्रति समझ और विश्वास के आधार पर निर्मित इस भागीदारी को द्विपक्षीय और अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में उच्च स्तर पर ले जाने की परिकल्पना की गई है। दोनों देशों के बीच सामरिक भागीदारी संप्रभुता, समानता, क्षेत्रीय अखण्डता, आंतरिक मामलों में अहस्तक्षेप, पारस्परिक सम्मान तथा आपसी लाभ के सिद्धांतों पर आधारित है।
- दोनों देशों ने निकट भविष्य में एक सामरिक भागीदारी दस्तावेज तैयार करने के संबंध में चर्चा करने का निर्णय लिया गया। सामरिक भागीदारी का कार्यान्वयन भागीदारी परिषद (Partnership Council) की देखरेख में किया जाएगा। इस परिषद की सह-अध्यक्षता दोनों देशों के विदेश मंत्रियों द्वारा की जाएगी और इसकी बैठक प्रतिवर्ष होगी। इसमें साझे हित से जुड़े मुद्दों पर अलग से संयुक्त कार्यकारी दल भी होंगे। भारत और अफगानिस्तान के बीच सामरिक भागीदारी में द्विपक्षीय संबंध के विविध पहलू शामिल होंगे। राजनैतिक क्षेत्र में दोनों देशों ने नियमित रूप से शिखर वार्ता, विभिन्न स्तरों पर संस्थागत संवादों, शांति एवं सुरक्षा पर नियमित विचार-विमर्श तथा संयुक्त राष्ट्र और अन्य अंतर्राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय मंचों पर घनिष्ठ सहयोग एवं समन्वय स्थापित करने पर भी सहमति व्यक्त की।
- अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में दोनों पक्षों ने आर्थिक एकीकरण के लाभों को स्वीकार करते हुए आर्थिक भागीदारी करने का निर्णय लिया। दोनों देशों ने दक्षिण एशियाई बाजार विकसित करने पर बल दिया। उन्होंने खनन, ऊर्जा, सूचना प्रौद्योगिकी, संचार एवं परिवहन जैसे क्षेत्रों में बेहतर सहयोग करने और अन्य देशों के साथ क्षेत्रीय व्यापार व्यवस्थाओं की संभावनाओं का संयुक्त रूप से पता लगाने पर सहमति व्यक्त की। दोनों देशों ने क्षेत्रीय एकीकरण को बढ़ावा देने में तापी गैस पाइपलाइन (TAPI Gas Pipeline) जैसी क्षेत्रीय परियोजनाओं के महत्व पर भी बल दिया।

- भारत ने अफगानिस्तानी छात्रों की शिक्षा और प्रशिक्षण के अवसरों को बढ़ावा देने और शिक्षा एवं मानव संसाधन विकास में सहयोग को बढ़ावा देने पर सहमति व्यक्त की। इसके अंतर्गत अफगानिस्तान के सभी क्षेत्रों विशेषकर दूरस्थ एवं ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत संरचना विकास हेतु चलाई जा रही लघु विकास परियोजनाओं का विस्तार करना और अफगानिस्तानी महिलाओं एवं छात्रों का कल्याण सुनिश्चित करना शामिल है। ऐसी परियोजनाओं के लिए भारत ने 500 मिलियन अमेरिकी डॉलर के अतिरिक्त व्यय की घोषणा की जिसके फलस्वरूप अफगानिस्तान के विकास के लिए भारत की कुल प्रतिबद्धता दो बिलियन अमेरिकी डॉलर हो जाएगी। अफगानिस्तान ने पुनर्निर्माण तथा विकास के लिए पिछले 10 वर्षों के दौरान दी गई उदार सहायता के लिए भारत के प्रति गहरा आभार व्यक्त किया।
- संसदीय आदान-प्रदान, मीडिया, सांस्कृतिक गतिविधियों, युवाओं, सभ्य समाज और लोगों के बीच संबंधों को मजबूत करने पर भी बल दिया गया। इसका उद्देश्य दोनों देशों के बीच विद्यमान सामरिक भागीदारी को अतिरिक्त सार्थकता प्रदान करना है।
- दोनों देशों का मानना है कि व्यापार, परिवहन एवं ऊर्जा केंद्र के रूप में और मध्य एवं दक्षिण एशिया को जोड़ने वाले सम्पर्क देश के रूप में अफगानिस्तान को बढ़ावा देने के लिए मुक्त एवं अबाध परिवहन और पारगमन संपर्कों (Free and Unfettered Transport and Transit Linkages) की व्यवस्था न सिर्फ अफगानिस्तान के हित में बल्कि इस पूरे क्षेत्र के हित में होगी।
- दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (SAARC) की रूपरेखा के अंतर्गत क्षेत्रीय सहयोग को और मजबूत बनाने की आवश्यकता पर सहमति व्यक्त की गई।
- दोनों पक्ष इस बात पर भी सहमत हुए कि अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद, संगठित अपराध तथा नशीले पदार्थों की तस्करी तथा मनी लॉन्ड्रिंग (Money Laundering) के विरुद्ध लड़ाई में सहयोग के साथ-साथ सुरक्षा, कानून प्रवर्तन एवं न्याय के क्षेत्र में सहयोग किया जाना सामरिक भागीदारी का महत्वपूर्ण अंग होगा।

(iii) अफगानिस्तान में निवेश हेतु दिल्ली सम्मेलन-2012

(Delhi Summit on Investment Afghanistan-2012)

अफगानिस्तान में निवेश से संबंधित दिल्ली सम्मेलन का आयोजन (28 जून 2012) करने पर भारत ने प्रसन्नता जाहिर की और विश्वास व्यक्त किया कि इस आयोजन से राणनीतिक भागीदारी करारों के कार्यान्वयन को प्रोत्साहन मिलेगा।

उक्त सम्मेलन के दो प्रमुख उद्देश्यों में एक ऐसे संप्रसारण के रूप में अफगानिस्तान की सहायता करना जो अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के साथ भागीदारियों की सहायता से अपने पैरों पर खड़ा हो सके। इसमें व्यवसाय और निवेश की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।

उल्लेखनीय है कि भारत में किसी अन्य देश के लिए आयोजित किया जाने वाला यह पहला शिखर सम्मेलन है। इस कार्यक्रम के प्रति भारतीय व्यावसायिक समुदाय की सकाथत्मक प्रतिक्रिया अपने एक ऐसे पड़ोसी देश के साथ हमारी घनिष्टता और एकजुटता का प्रतीक है जिसके साथ हमारे लंबे ऐतिहासिक एवं सभ्यतामूलक संबंध रहे हैं। भारत ने आशा व्यक्त की कि वह व्यापार और निवेश के जरिए अफगानिस्तान की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से भारत और अन्य देशों द्वारा आयोजित किए जाने वाले इसी प्रकार के सम्मेलनों में भागीदारी करता रहेगा।

निकटता और संबद्धता के बल पर इस क्षेत्र के देश अफगानिस्तान की सुरक्षा, स्थायित्व एवं समृद्धि में विशेष योगदान दे सकते हैं विशेषकर उस स्थिति में जब नाटों के सैनिकों की युद्धक (Combatant) भूमिका प्रशिक्षण, परामर्श एवं सहायता के रूप में परिवर्तित होने वाली है। भारत ने अफगानिस्तान में स्वस्थ आर्थिक प्रतिस्पर्धा का सृजन करके पारस्परिक लाभ प्राप्त करने हेतु विशेष रूप से इस क्षेत्र की कंपनियों से अफगानिस्तान में निवेश करने का आह्वान किया है।

वर्ष 2014 में नाटों के सैनिकों की वापसी और आतंकवाद के कारण हो रही जीवन हानि के आलोक में अफगानिस्तान पर एक बड़े निवेश सम्मेलन का आयोजन करना कुछ लोगों की नजर में एक दिखावटी कार्य भी हो सकता है। आमतौर पर अफगानिस्तान किसी निवेशक के लिए आसान गंतव्य प्रतीत नहीं होता है परंतु भारत ने ऐसा सम्मेलन आयोजित करने का साहस दिखाया है। यह निर्णय कतिपय मौलिक समझ पर आधारित है-

- पहली बात यह है कि अफगानिस्तान पिछले तीन दशक से संघर्ष और हिंसा का दंश झेलता आ रहा है जिससे राज्य का ढांचा अस्त-व्यस्त हो गया है। 11 वर्षों तक अंतर्राष्ट्रीय समुदाय का ध्यान आकर्षित करते रहने और विदेशी सहायता प्राप्त करने के बावजूद अफगानिस्तान विकास और तकनीकी सहायता हेतु विशेष केंद्रबिंदु बना हुआ है।
- दूसरी बात यह है कि यह सहायता न सिर्फ अफगानिस्तान की भलाई के लिए बल्कि हमारी अपनी तथा हमारे पड़ोसी देशों और संपूर्ण विश्व की सुरक्षा के लिए भी आवश्यक है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि वर्ष 2001 में अफगानिस्तान ने दोबारा विश्व का ध्यान आकर्षित क्यों किया?

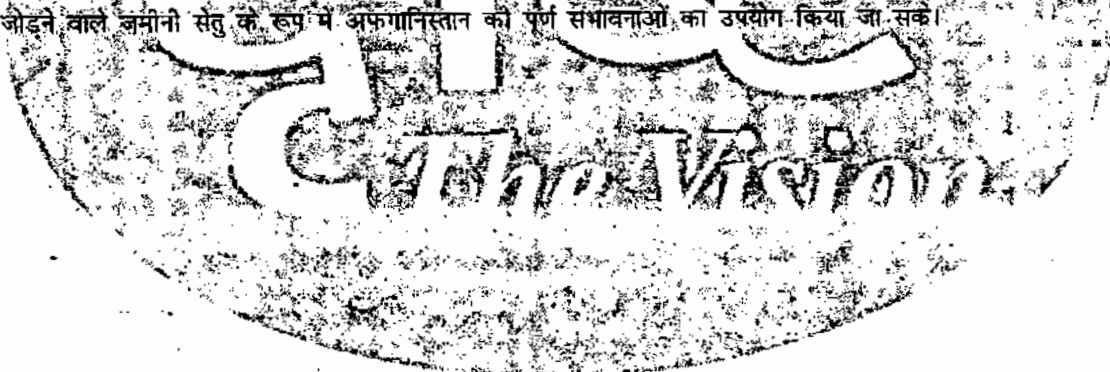
- तीसरी बात यह है कि विकास, सुरक्षा तथा तकनीकी सहायता ही पर्याप्त नहीं है। बॉन, शिकागो तथा टोकियो सम्मेलन और क्षेत्रीय विश्वास बहाली पर इस्तांबुल प्रक्रिया अफगानिस्तान को सहयोग करने की अंतर्राष्ट्रीय समुदाय की सकारात्मक इच्छा को प्रदर्शित करती है परंतु सैनिक हस्तक्षेप और विदेशी सहायता दोनों ही काफी हद तक लोकमत और आर्थिक परिस्थितियों पर निर्भर करती हैं। हमें उदारता प्रदर्शन की जगह स्थायी हित की बातें सोचनी होंगी जिनके आधार पर अफगानिस्तान आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर हो सके।
- चौथी बात यह है कि नाटो सैनिकों की वापसी से ऐसा राजनैतिक अथवा सैन्य निर्वात न उत्पन्न हो जाए जिसमें उग्रवादी एक बार फिर सक्रिय हो सकें। इसके स्थान पर कुछ वैकल्पिक व्यवस्था होनी चाहिए।

अंततः भारत का मानना है कि विदेशी निवेश और निजी क्षेत्र का विकास इस संदर्भ में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। अब समय आ गया है कि सैनिकों का स्थान कंपनियों के कार्यपालक और जनरलों का स्थान मुख्य कार्यकारी अधिकारी लें। वे भी अफगानिस्तान में स्थिरता लाने में बड़ी भूमिका निभा सकते हैं।

किसी देश के भविष्य के लिए निवेश अत्यावश्यक होता है और देश की सुरक्षा एवं स्थायित्व में भी उसकी भागीदारी होती है। यह सुरक्षा, सैन्य अभियानों से उत्पन्न सुरक्षा नहीं होगी बल्कि साझे हित एवं साझी राजनैतिक प्रतिबद्धता से-उत्पन्न सुरक्षा होगी। यदि विभिन्न कंपनियाँ मिलजुलकर अथवा बड़ी संख्या में निवेश करती हैं तो एक साथ कार्य करने की सामूहिक प्रतिबद्धता से उन्हें लाभ होगा। सार्क (SAARC) के अल्प अल्पतम विकसित देशों के लिए की गई पहल के भाग के रूप में भारत ने अफगानिस्तान के निर्यातों पर सीमा शुल्क से छूट प्रदान की है।

अफगानिस्तान के खनिज संसाधन, कृषि उत्पाद एवं मानव संसाधन मध्य एशिया, ईरान तथा खाड़ी क्षेत्र के ऊर्जा संसाधनों तथा क्षेत्रीय आर्थिक प्रगति के ऐसे सभावित प्रेरक बल हो सकते हैं जो पश्चिम में तुर्की, उत्तर में रूस, पूर्व में चीन और भारत तथा दक्षिण में अरब सागर और हिंद महासागर को व्यापार, पारगमन और ऊर्जा मार्ग जैसे आर्थिक सहयोग के सूत्र में बांध सकते हैं। इसके लिए संस्थागत वित्त और निवेश के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहायता की आवश्यकता है। भारत इस कार्यक्रम में विश्व बैंक, एशियाई विकास बैंक तथा अन्य अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं की भूमिका की सराहना करता है।

भारतीय वाणिज्य परिसंघ (Confederation of Indian Industry - CII) तथा अन्य भारतीय एवं क्षेत्रीय वाणिज्य परिसंघों से अपेक्षा है कि वे इस क्षेत्र में व्यापार और निवेश के समक्ष आने वाली बाधाओं की पहचान करें जिससे कि अफगानिस्तान के साथ व्यापार संवर्धन प्रयासों को बढ़ावा मिले और एशिया तथा यूरेशिया के विभिन्न भागों और विशेषकर दक्षिण एशिया के विशाल बाजारों को जोड़ने वाले जमीनी सेतु के रूप में अफगानिस्तान की पूर्ण सभावनाओं का उपयोग किया जा सके।



भारत-श्रीलंका द्विपक्षीय संबंध (India-Sri Lanka Bilateral Relations)

*** (इस टॉपिक का उल्लेख मुख्य परीक्षा के प्रश्नपत्र-2 के विषय संख्या 17 में 'भारत एवं उसके पड़ोसी - संबंध' के रूप में किया गया है। 'दृष्टि' द्वारा वर्गीकृत पाठ्यक्रम के 15 खंडों में से इसका संबंध भाग-7 से है।)

संबंधों की सामान्य पृष्ठभूमि (General Backgrounder on Bilateral Relations)

श्रीलंका भारत के दक्षिण में स्थित एक द्वीप है, जिसका क्षेत्रफल 25,332 वर्गमील है। इसकी जनसंख्या लगभग एक करोड़ सत्तर लाख है, जिसमें 70 प्रतिशत बौद्ध, 15 प्रतिशत हिन्दू, 7.5 प्रतिशत ईसाई व 7.5 प्रतिशत मुसलमान धर्म को मानने वाले हैं। इसके अलावा 15 प्रतिशत लोग तमिल जबकि शेष सिंहली भाषा बोलते हैं। श्रीलंका चारों ओर से सागर से घिरा हुआ एक गणराज्य है। यह हिन्द महासागर में स्थित है।

श्रीलंका 16वीं शताब्दी के प्रारंभ से ही पुर्तगाली उपनिवेशवाद के अधीन आ गया। पुर्तगाल ने श्रीलंका में अपनी बस्तियाँ बसाईं। परन्तु यहाँ सबसे पहले 543 ई. पू. के आसपास भारत में गंगा घाटी के लोग आकर बसे थे और अभी भी जनसंख्या का तीन चौथाई भाग उन्हीं के वंशज है। सन् 1656 में डच लोगों ने पुर्तगालियों से श्रीलंका को छीन लिया। उन्हें हराकर अंग्रेजों ने सन् 1796 में श्रीलंका पर अधिकार कर लिया और वह सन् 1802 में एक ब्रिटिश उपनिवेश बन गया। 4 फरवरी 1948 को श्रीलंका एक स्वतंत्र देश बना।

भारत की तरह श्रीलंका भी राष्ट्रमण्डल (Commonwealth of Nations) की सदस्यता ग्रहण की। उसने भी ब्रिटिश साम्राज्य से संबंध विच्छेद करके स्वयं को गणतन्त्र घोषित किया। भारत की भाँति श्रीलंका भी गूट-निरपेक्षता तथा शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीतियों में विश्वास करता है। छः अन्य देशों के साथ श्रीलंका भी दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन (साक) की संस्थापक सदस्य है। भारत की ही भाँति श्रीलंका की भी संयुक्त राष्ट्र संघ और विश्व शांति में पूरी आस्था है। इस प्रकार भारत और उसके इस दक्षिणी पड़ोसी में इतनी समानताएँ हैं कि यह सोचना भी कठिन है कि दोनों में कभी कोई संघर्ष भड़का सकता है। परन्तु संघर्ष तो किन्हीं भी दो देशों के संबंधों में उत्पन्न हो ही सकते हैं। प्रयास यह होना चाहिए कि गम्भीर विवादों से बचा जाए।

भारत और श्रीलंका के पारस्परिक संबंध सामान्यतया मित्रतापूर्ण और सहोदरपूर्ण रहे हैं। फिर भी कभी-कभी जातीय तनाव पैदा होते रहे हैं। तनाव प्रायः सिंहली तथा तमिल लोगों के मध्य उत्पन्न हुए हैं। प्रायः छोटे देशों को अपने बड़े पड़ोसी राष्ट्रों की ओर से शंका बनी रहती है। परन्तु भारत ने कभी भी एक अभ्युत्थानशील बड़े पड़ोसी को भूमिका निभाने का प्रयास नहीं किया है। जातीय संघर्ष के रहते भी भारत ने कभी भी अपनी इच्छा श्रीलंका से पूरी कराने का प्रयास नहीं किया। कहने का तात्पर्य यह है कि श्रीलंका और भारत के संबंध तनावपूर्ण रहे हैं लेकिन अमेठीपूर्ण नहीं हैं। दक्षिण एशिया के छोटे देश भारत के प्रभाव से स्वतंत्र रहने के लिए सचेत रहे हैं तथा श्रीलंका ने भारत के साथ सहयोग कर विकास करने की अपेक्षा उससे दूर रहने की नीति अपनाई है। भारत-पाकिस्तान और भारत-चीन विवादों में श्रीलंका तटस्थ रहा है। इस श्रीलंकाई तटस्थता ने भारत को परेशान जरूर किया है। तमिलों के साथ होने वाला भेदभाव तनाव का मुख्य कारण है।

श्रीलंका की नृजातीय समस्या (Sri Lanka's Ethnic Crisis)

तमिलों की बहुसंख्या जाफना में निवास करती है। उनकी समस्या ने उस समय गम्भीर रूप ले लिया, जब तमिलों ने श्रीलंका के उत्तरी प्रदेश में अपने लिए एक ईलम गणराज्य (Republic of Eelam) की स्थापना की माँग करनी आरम्भ की। तमिल, द्रविड़ मूल के लोग हैं। वे अधिकतर हिन्दू धर्म में विश्वास करने वाले हैं। वे कुल जनसंख्या का लगभग 15 प्रतिशत हैं। शेष जन जो सिंहली भाषा बोलते हैं, वे आर्य वंश के माने जाते हैं। उनमें से अधिकांश बौद्ध धर्मावलम्बी हैं। औपनिवेशिक काल में अंग्रेज बड़ी संख्या में तत्कालीन मद्रास प्रान्त से बागानों में काम करने के लिए श्रमिकों को श्रीलंका ले गए थे। काम की तलाश में अन्य बहुत से लोग स्वेच्छा से चले गए।

श्रीलंका में निवास कर रहे तमिल मूल के लोग दो तरह के हैं। लगभग दस लाख लोग ऐसे हैं, जिनके पूर्वज अतीत में भारत से गए थे। वे श्रीलंकाई तमिल कहलाते हैं। दूसरी तरह के वे तमिल हैं, जो 19वीं शताब्दी में श्रीलंका गए लेकिन वे श्रीलंकाई नागरिकता ग्रहण नहीं कर सके। इस दूसरी श्रेणी के लोगों की समस्या ने आरम्भिक तौर पर भारत-श्रीलंका सम्बंधों को प्रभावित किया। सिंहली लोगों को तमिलों के प्रभुत्व का भय है। दो राष्ट्रों (तमिल एवं सिंहली) की चेतना अंग्रेज शासकों द्वारा जागृत की

गई थी। उन्होंने बागानों में कार्यरत तमिलों को सिंहली राष्ट्रवाद पर अंकुश रखने के रूप में प्रयोग करने का प्रयास किया था। श्रीलंका के प्रशासन में तमिलों का प्रभुत्व था। वे उस देश के व्यापार और अन्य व्यवसायों में आगे निकल गए। इस परिप्रेक्ष्य में सिंहली राष्ट्रवाद सन् 1931 तक विकसित होने लगा था। तमिलों ने अल्पसंख्यकों के लिए पचास प्रतिशत आरक्षण की माँग करना आरम्भ किया। इस माँग को तो ठुकरा दिया गया फिर भी सन् 1946 के सोलवरी संविधान में तमिलों को संसद में कुछ प्रतिनिधित्व दिया गया और भेदभावपूर्ण कानून बनाने पर रोक लगा दिया गया।

श्रीलंका के प्रथम प्रधानमंत्री डी. एस. सेनानायके ने इस बात का प्रयास किया कि तमिलों के साथ न्याय हो। उन्होंने आश्वासन दिया कि उन्हें स्वतंत्र श्रीलंका में किसी हानि का डर नहीं होना चाहिए। परन्तु शीघ्र ही उनकी मृत्यु हो गई और तमिलों के विरुद्ध भेदभाव किया जाने लगा। सेनानायके के समय में द्विभाषा फॉर्मूले को अपनाया गया था, परन्तु सन् 1956 के सरकारी भाषा अधिनियम ने केवल सिंहली को सरकारी भाषा बना दिया। इसका तमिल लोगों ने विरोध किया और दंगे भी हुए। इसके परिणामस्वरूप सन् 1957 के भंडारनायके - चेलवानायकम समझौते के अंतर्गत तमिल भाषी प्रांतों में तमिल भाषा की आधिकारिक प्रयोग की अनुमति दे दी गई।

तमिल भाषा (विशेष प्रावधान) अधिनियम 1958 में पास किया गया। इसके तहत कुछ प्रशासनिक उद्देश्यों तथा प्राथमिक एवं उच्च शिक्षा के क्षेत्र में तमिल भाषा के प्रयोग की अनुमति दी गई। सन् 1957 के समझौते और सन् 1958 के अधिनियम पर अमल नहीं किया गया। इससे तमिलों की शिक्षा सम्बन्धी सुविधाएँ बहुत कम हो गईं। सन् 1948 में तमिलों का सरकारी नौकरियों में प्रतिशत 30 था जो 1975 तक घट कर केवल 5 रह गया। सेना और पुलिस से उनको लगभग अलग ही कर दिया गया। तमिल क्षेत्रों में उनका वर्चस्व कम करने के लिए सिंहली बस्ती बसाये गये। शिक्षा में उनके साथ भेदभाव किया गया। सन् 1948 में उनका विश्वविद्यालयों में प्रवेश प्रतिशत 31 था जो सन् 1970 में घटकर 16 रह गया। सन् 1948 एवं 1949 के नागरिकता अधिनियमों के तहत राजनीतिक अधिकार कम कर दिए गए। जबकि तमिल 19वीं शताब्दी की उत्तरीय में प्रोजेगार की खोज में आए थे।

सिंहली राष्ट्रवाद के विरुद्ध विरोध प्रकट करने के लिए तमिल राष्ट्रवाद के पिता एस. जे. वी. चेलवानायकम के नेतृत्व में फेडरल पार्टी ने सन् 1950 के दशक में अनेक अहिंसक आन्दोलन चलाये। फेडरल पार्टी ने अपना नाम बदल कर तमिल युनाइटेड लिबरेशन फ्रंट रख लिया। उनका नेता अमृतालिंगम उग्रवादी है। परन्तु उन तमिल युवकों ने, जिन्होंने अहिंसा में विश्वास छो दिया है, आतंकवाद को अपना लिया। उनके संगठन लिबरेशन टाइगर्स का लक्ष्य एक पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न ईलम या तमिल राज्य की स्थापना है। सन् 1975 से उनकी गतिविधियाँ तेज हो गई हैं। इनके निशाने पर तमिल राज्य (ईलम) विरोधी तमिल, पुलिस, सेना एवं राजनैता हैं।

नेहरू-कोतलेवाला समझौता-1954 (Nehru-Kotlewala Agreement-1954)

श्रीलंका की जातीय समस्या के समाधान के लिए प्रथम प्रयास सन् 1954 में किया गया। जब भारत एवं श्रीलंका के प्रधानमंत्रियों ने एक समझौते पर हस्ताक्षर किए। इसे समझौते के प्रमुख प्रावधान निम्न थे-

- (a) श्रीलंका की सरकार उन सभी भारतीय मूल के लोगों के नाम पंजीकृत करेगी, जो श्रीलंका में स्थायी रूप से रहने के इच्छुक हैं।
- (b) जो श्रीलंका की नागरिकता नहीं चाहते, उन्हें भारत वापस भेजा जाएगा।
- (c) नागरिकता प्राप्त करने के लिये 2 वर्षों से जो आवेदन आए हैं, उनका निर्णय सरकार जल्दी करेगी।
- (d) भारत से श्रीलंका में होने वाले अवैध अप्रवास को रोका जायेगा।
- (e) जिन भारतवासियों को श्रीलंका की नागरिकता नहीं दी जा सकेगी, उन्हें वहाँ विदेशी के रूप में रहने की सुविधा दी जायेगी।
- (f) भारतीय तमिलों के लिए श्रीलंका में एक अलग चुनाव रजिस्टर बनेगा, जिसके आधार पर वे निश्चित संख्या में अपने प्रतिनिधि चुनेंगे।

श्रीलंका की सरकार ने इस समझौते का ईमानदारी से पालन नहीं किया और भारतीय मूल के बहुत सारे लोगों को नागरिकता विहीन कर दिया गया। इसने बड़ी संख्या में लोगों को राज्यविहीन बना दिया। इससे भारत और श्रीलंका संबंधों में कटुता उत्पन्न हो गई। 1956 के भाषायी विवाद से यह कटुता और बढ़ गई। दोनों भाषायी समूहों के बीच दंगे हुए। श्रीलंका सरकार ने यह आरोप लगाया कि इन दंगों में भारत की भूमिका थी। भंडारनायके के प्रधानमंत्रित्व काल (1956-59) में भारत और श्रीलंका सम्बन्धों में सुधार आया। भंडारनायके नेहरू के प्रशंसक और मित्र थे। वे गुटनिरपेक्षता की नीति में विश्वास करते थे और भारत को श्रीलंका का एक बड़ा मित्र देश मानते थे। परन्तु 25 सितम्बर, 1959 को उन्हें गोली मार दी गई। श्रीमती भंडारनायके (1960-1965) के समय में भी भारत तथा श्रीलंका के संबंध अच्छे रहे। 1962 के भारत-चीन युद्ध के समय श्रीमती भंडारनायके ने मध्यस्थ की भूमिका निभाने की चेष्टा की परन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली।

शास्त्री-सिरिमावो समझौता-1964 (Shastri-Sirimavo Agreement-1964)

शास्त्री-सिरिमावो समझौते (1964) के तहत भारतीय प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री तथा श्रीलंका की प्रधानमंत्री श्रीमती सिरिमावो भंडारनायके ने यह तय किया कि 9 लाख 75 हजार नागरिकता विहीन तमिलों में से 3 लाख को श्रीलंकाई नागरिकता

प्रदान की जाएगी। 5 लाख 25 हजार लोगों को भारतीय नागरिकता प्रदान कर दी जाएगी। एक लाख पचास हजार लोगों का निर्णय भविष्य में होने वाले समझौते पर निर्भर करेगा। भारतीय नागरिकता प्राप्त व्यक्ति पन्द्रह वर्षों में भारत आयेंगे। जनवरी, 1974 में श्रीमती भंडारनायक भारत की यात्रा पर आई। इस दौरान तमिलों के संबंध में यह समझौता हुआ कि शेष एक लाख पचास हजार लोगों में से आधे लोगों को श्रीलंका अपनी नागरिकता दे देगा और शेष आधे को भारत अपनी नागरिकता देगा।

जातीय-संघर्ष का विस्तार (Expansion of Ethnic Conflict)

1983 में श्रीलंका में तमिलों और सिंहली जातियों के मध्य चल रहे संघर्ष ने गम्भीर रूप धारण कर लिया। बहुसंख्यक सिंहलियों और अल्पसंख्यक तमिलों के संबंध धीरे-धीरे बिगड़ते गए। दोनों सम्प्रदायों के मध्य 1956, 1958 और 1977 में गम्भीर हिंसा भड़क उठी थी। जैसे-जैसे दोनों के मध्य मनमुटाव बढ़ता गया, वैसे-वैसे हिंसा और अलगाववादी प्रवृत्तियाँ भी तीव्र होती गईं। तमिल युनाइटेड लिबरेशन फ्रंट ने 1988 में अलग राज्य, तमिल ईलम की माँग पर बल दिया। तमिल टाइगरों ने हिंसा का सहारा लेना शुरू कर दिया। सिंहली प्रतिक्रिया भी उसी अनुरूप बढ़ती गई। फरवरी 1983 में आन्दोलनकारी तमिलों के विरुद्ध सैन्य कार्रवाई की गयी। भारत ने एक प्रमुख तमिल टाइगर नेता उमा महेश्वरन को गिरफ्तार किया और तमिलनाडु पुलिस ने एक अन्य टाइगर नेता प्रभाकरन को चेन्नई में बन्दी बनाया। श्रीलंका ने भारत की इस कार्रवाई के लिए आपार प्रकट किया।

जुलाई 1983 में हिंसा ने गम्भीर रूप ले लिया। श्रीलंका में 1983-86 के दौरान हुई जातीय हिंसा में लगभग 2 लाख तमिलों को अपनी सम्पत्ति से हाथ धोना पड़ा और इस प्रकार वे शरणार्थी समान हो गए। हजारों व्यक्ति हताहत हुए। लगभग 25 हजार तमिल शरणार्थी भारत आए। अनेक विस्थापित लोगों ने दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों या पश्चिमी देशों में जाकर शरण ली। भारत की जनता स्वाभाविक रूप से तमिलों के साथ भावनात्मक सहानुभूति रखती थी। श्रीलंका में सामान्य स्थिति बहाल करने के लिए दोनों देशों ने अनेक प्रयत्न किए। श्रीमती गांधी ने राष्ट्रपति जयवर्द्धने के साथ लम्बा सन्तुष्टि की। श्री अमृतलिंगम के नेतृत्व में तमिल नेतागण भारत आए और उन्होंने प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी से बातचीत की। भारत ने तमिल नेताओं से कोलम्बो में होने वाली राजनीतिक वार्ता में भाग लेने के लिए आग्रह किया। 1984 को इस सर्वदलीय बैठक के बावजूद भी श्रीलंका में शांति स्थापित नहीं हो सकी।

राजीव-जयवर्द्धने समझौता-1987 (Rajiv-Jayawardene Pact-1987)

भारत के प्रधानमंत्री राजीव गांधी और श्रीलंका के राष्ट्रपति जयवर्द्धने के बीच कोलम्बो में 29 जुलाई 1987 को हुआ। चौक यह समझौता कोलम्बो में हुआ था इसीलिए इसे कोलम्बो समझौता भी कहते हैं।

- इस समझौते में यह प्रस्तावित था कि नया श्रीलंका के पूर्वी प्रांत की उत्तरी प्रांत के साथ एक प्रशासनिक इकाई बने रहना चाहिए या पूर्वी प्रांत को एक अलग प्रशासनिक इकाई के रूप में पुनर्गठित किया जाना चाहिए। अक्टूबर, 1988 से पूर्व जनमत संग्रह के लिए रखा जाना था। इस जनमत संग्रह का पर्यवेक्षण श्रीलंका के मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता में स्थापित एक समिति करेगी।
- भारतीय पर्यवेक्षकों की देखरेख में प्रांतीय परिषदों के चुनाव 21 दिसम्बर 1987 तक सम्पन्न करा लिए जाएंगे।
- 15 अगस्त 1987 तक उत्तरी और पूर्वी प्रांतों में आपातकाल को घोषणा वापस ले ली जाएगी।
- श्रीलंका में सार्वजनिक भेदादारी को घोषणा की जाएगी और सभी राजनीतिक दलियाँ को रिहा कर दिया जाएगा।
- भारतीय नौसेना श्रीलंका-विरोधी आतंकवादी गतिविधियों को रोकने को प्रयत्न करेगी।
- दोनों देश तमिलों और सिंहलियों की सुरक्षा के उपाय करेंगे।
- यह अपेक्षा की गई कि आतंकवादी आत्मसमर्पण कर देंगे और श्रीलंका के सैनिक वापस अपनी ठिकानों पर चले जाएंगे।
- भारत इस समझौते को लागू करवाने का आश्वासन देगा और भारत की भूमि को श्रीलंका-विरोधी किसी गतिविधि के लिए प्रयोग को अनुमति नहीं दी जाएगी।
- तमिल, सिंहली और अंग्रेजी श्रीलंका की आधिकारिक भाषाएँ होंगी।

श्रीलंका की बहुसंख्यक सिंहली जनता ने समझौते का तीव्र विरोध किया। फिर भी, यह समझौता दोनों देशों के नेताओं की सूझबूझ एवं साहस का प्रतीक था। इसने श्रीलंका विशेषकर राष्ट्रपति जयवर्द्धने का पाकिस्तान व पश्चिम की ओर झुकाव खत्म कर दिया।

श्रीलंका में भारतीय शान्ति सेना [India's Peace Keeping Force (IPKF) in Srilanka]

राजीव-जयवर्द्धने समझौते के अन्तर्गत भारतीय शान्ति सेनाएँ श्रीलंका भेजी गईं। भारतीय सेना के 50 हजार जवान जाफना में फैल गए। भारतीय शान्ति सेना का उद्देश्य तमिल मुक्ति चीतों के गढ़ जाफना को घेरकर उन्हें आत्मसमर्पण के लिए बाध्य करना था। एल टी टी ई (LTTE) ने राजीव-जयवर्द्धने समझौता स्वीकार नहीं किया। जाफना को मुक्त कराने में आयी तमाम मुश्किलों के बावजूद इस उपलब्धि को शान्ति सेना के एक अधिकारी ने इसे एक अनावश्यक लड़ाई और वह भी दूसरों के लिए लड़ी गई

बताया। भाजपा नेता जसवंत सिंह के अनुसार भारतीय फौजों को एक ऐसी कार्रवाई में लगा दिया गया, जहाँ उन्हें पता ही नहीं चल रहा था कि वे अपनी जान का जोखिम क्यों उठा रही है? लगभग 1100 जवान और अधिकारी मारे गये और तीस हजार घायल हुए। भारतीय जवानों का मानना था कि वह एक शान्ति सेना न होकर विद्रोहियों से लड़ने वाली सेना दिखलायी देने लगी थी। जयवर्द्धने ने अपनी कूटनीति से भारतीय सेना को तमिल उग्रवादियों से लड़ा दिया। श्रीलंका के सैनिक अपने ठिकानों पर आराम कर रहे थे और भारतीय सेना अपनी लड़ाई लड़ रही थी। श्रीलंका में अपनी सेनाएँ भेजकर भारत ने बहुत बड़ा राजनीतिक जोखिम उठाया। एक तरह से यह जरूरी था क्योंकि भारत पहल न करता तो भारत विरोधी ताकतें जयवर्द्धने की मदद के लिए तैयार बैठी थीं।

श्रीलंका में भेजी गई भारतीय सेनाओं की तुलना अफगानिस्तान में भेजी गयी रूसी सेनाओं से नहीं की जा सकती। भारत ने अपनी सेनाएँ द्विपक्षीय रजामन्दी के बाद भेजीं तथा भारतीय सेनाएँ श्रीलंका के राष्ट्रपति के निर्देश पर ही काम कर रही थीं। भारतीय सेनाएँ श्रीलंका में उस दिन तक रहीं, जिस दिन तक वहाँ की सरकार उनकी जरूरत समझती थी।

प्रेमदासा ने राष्ट्रपति बनने के साथ ही भारत सरकार से शान्ति सेना की हटाने का अनुरोध किया। अतः जनवरी, 1989 से भारतीय शान्ति सेना की वापसी श्रीलंका से शुरू हो गयी और 1990 तक शान्ति सेना की सभी टुकड़ियाँ भारत लौट आईं।

भारतीय शान्ति सेना तमिलों में आम सहमति का निर्माण करने में विफल रही। सर्वप्रथम भारत ने एल.टी.टी.ई. (LTTE) के विरुद्ध अन्य तमिल आतंकवादियों के संगठनों को हथियारों की आपूर्ति की। तत्पश्चात् तमिल क्षेत्रों में तमिल युनाइटेड लिबरेशन फ्रंट (TULF) तथा पीपुल्स लिबरेशन आर्गेनाइजेशन ऑफ तमिल ईलम (PLOTE) के साथ राजनीतिक प्रक्रिया पुनः प्रारंभ करने का प्रयास किया। जब भारत राजनीतिक एवं सैनिक दृष्टि से एल टी टी ई को नियन्त्रण में लाने में विफल रहा और अब उसे यह अनुमान होने लगा कि उत्तरी पूर्वी प्रांतीय परिषद के चुनाव में और अधिक मिलन होने से भारत-श्रीलंका समझौता निष्प्रभावी होता जा रहा है तो उसने ईलम् पीपुल्स रिबोल्यूशनरी फ्रंट को एल टी टी ई के विकल्प के रूप में खड़ा करने का प्रयास किया। इस प्रकार भारतीय हस्तक्षेप ने तमिल समस्या के निराकरण के स्थान पर तमिलों के विभिन्न वर्गों में विवाद को और उभार दिया। तमिल क्षेत्रों के बाहर भारतीय शान्ति सेना की उपस्थिति ने सिंहली-बौद्ध राष्ट्रवाद को उभारने में प्रमुख भूमिका निभाई।

जयवर्द्धने के पश्चात् प्रेमदासा श्रीलंका के राष्ट्रपति बने। राष्ट्रपति बनने के साथ ही उन्होंने भारतीय शान्ति सेना को श्रीलंका से बाहर करने का मन यह सोचते हुए बना लिया कि चाहे इसके लिए एल टी टी ई से समझौता ही क्या न करना पड़े। राष्ट्रपति प्रेमदासा के पास सिंहलियों को प्रसन्न करने का यही एकमात्र विकल्प था। इसी प्रयास में उन्होंने एल टी टी ई के साथ सामंजस्य स्थापित करने की प्रक्रिया आरम्भ की। भारतीय सेना को श्रीलंका की आन्तरिक समस्याओं को सुलझाने के लिए जाना चाहिए था या नहीं, इस पर विवाद हो सकते हैं लेकिन इसका इतना योगदान तो है ही कि श्रीलंका में लोकतांत्रिक प्रक्रिया शुरू हुई।

वास्तव में जातीय समस्या का हल श्रीलंका के सभी दलों को मिल-बैठकर तलाश करना चाहिए।

द्विपक्षीय संबंधों में तनाव के बिंदु (Major Irritants in Bilateral Relations)

- भारत और श्रीलंका के मध्य कच्चातीव नामक एक वाणिज्यिक द्वीप के छोट से द्वीप के स्वामित्व को लेकर 1960 के दशक के अन्त में विवाद उत्पन्न हो गया था। यह द्वीप पाक जलडमरूमध्य (Palk Straits) में जाफना तट से कुछ दूर अवस्थित है। यहाँ जनसंख्या नहीं के बराबर है। प्रतिवर्ष मार्च के महीने में स्थानीय रामनवमी यात्रा के अवसर पर चार दिवसीय उत्सव में भाग लेने के लिए भारत और श्रीलंका दोनों देशों से आस्थायात्री जाते थे। सन् 1968 में श्रीलंका सरकार ने वहाँ अपनी पुलिस भेज दी। भारत सरकार ने इसका प्रतिवाद किया। दोनों देशों ने अपने-आपके पुष्टि में प्रमाण दिए। 28 जून 1974 को दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों ने पाक जलडमरूमध्य में सामुद्रिक सीमा समझौता किया। इसके अनुसार कच्चातीव द्वीप श्रीलंका को दे दिया गया। साथ ही नौपरिवहन, तोर्थ यात्रा, मत्स्यन (Fisheries) और खनिजों का पता लगाने आदि के संबंध में व्यवस्थाएँ की गईं।
- श्रीलंका सरकार एवं एल.टी.टी.ई के बीच युद्ध समाप्त हो चुका है। श्रीलंका ने जनजातीय समस्याओं के समाधान के लिए अब तक राजनीति की जगह सैन्य कार्रवाई को महत्वपूर्ण माना है। इससे श्रीलंका की आन्तरिक समस्या जटिल हो सकती है। श्रीलंका की जातीय समस्या अभी भी भारत के लिए चिंताजनक बनी हुई है। भारत में इस बात से भी निराशा है कि युद्ध पश्चात श्रीलंका ने उसकी चिंताओं को दूर नहीं किया।
- भारत के लिए यह रहस्य की बात है कि श्रीलंका में एल.टी.टी.ई का सफाया कर दिया गया है। ऐसा माना जाता है कि एल.टी.टी.ई ने हवाई क्षमता प्राप्त कर ली थी जो निःसंदेह श्रीलंका के साथ-साथ भारत के लिए भी चिंतनीय था। यह भी कहा जाता है कि एल.टी.टी.ई, भारत के माओवादी संगठनों से भी संपर्क स्थापित कर रहा था।
- श्रीलंका एवं भारत के बीच हाल के दिनों में संबंध, श्रीलंका के अंदर मानवाधिकारों के उल्लंघन किए जाने के मसले पर बिगड़ गए मालूम पड़ते हैं। ऐसा माना जाता है कि युद्ध के दिनों में श्रीलंका सेना ने तमिलों की बेवजह हत्या की। कुछ लोग इसे युद्ध अपराध (War Crime) भी बताते हैं।

- अभी तक तमिल बहुल उत्तर-पूर्वी इलाकों में स्वायत्तता बहाल नहीं किए जाने से भारत द्वन्द्व की स्थिति में फंस गया है।
- भारत उन 24 देशों में से एक है जिसने जेनेवा में संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार परिषद (UN Human Right Council) में अमेरिकी समर्थित प्रस्ताव के पक्ष में मतदान किया है। इससे श्रीलंका असहज महसूस कर रहा है। साथ ही श्रीलंका इस बात को भी समझता है कि देश की आंतरिक राजनीति की वजह से भारत ऐसा कदम उठाने पर मजबूर हुआ।
- भारत यह भी चाहता है कि श्रीलंका लेशन्स लर्न्ड एण्ड रिकन्सिलेशन कमिशन (Lessons Learnt and Reconciliation Commission – LLRC) की संस्तुतियों को लागू करे। इस आयोग ने गैर-कानूनी हत्याओं की विश्वसनीय जाँच, बलपूर्वक लोगों को गायब करने, उत्तरी श्रीलंका को विसैन्यीकृत करने, भूमि विवाद को समाप्त करने के लिए निष्पक्ष तंत्र की व्यवस्था करने पर बल दिया है। इसके अलावा नजरबंदी संबंधी नीतियों की समीक्षा करने, नागरिक संस्थाओं की स्वतंत्रता बहाल करने, प्रांतों को अधिकार दिए जाने के लिए राजनीतिक समाधान करने, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को संरक्षण एवं प्रोत्तन तथा कानून का शासन लागू करने की संस्तुति की है।
- इसके अलावा भारत-श्रीलंका के बीच मछली पकड़ने से संबंधित जल सीमा का अतिक्रमण एवं इससे संबंधित गिरफ्तारियाँ आपसी संबंध को प्रभावित करती है। इस समस्या से निपटने के लिए एक संयुक्त कार्यदल का गठन किया गया है।
- भारत यह भी नहीं चाहता है कि श्रीलंका के अंदर पाकिस्तान या चीन का दखल हो। युद्ध के दौरान चीन और पाकिस्तान ने श्रीलंका को शस्त्रों की आपूर्ति की थी जिससे भारत परेशान हुआ जबकि दूसरी ओर भारत सरकार पर आंतरिक रूप से यह दबाव था कि वह श्रीलंका को शस्त्रों की आपूर्ति न करे।
- भारत द्वारा प्रस्तावित सेतु समुद्रम परियोजना पर भी श्रीलंका का आपत्ति है। श्रीलंका का मानना है कि इस परियोजना से पर्यावरण को क्षति पहुँचेगी। भारत का मानना है कि सेतु समुद्रम परियोजना के माध्यम से उसकी व्यापारिक एवं सुरक्षा हितों की बेहतर ढंग से पूर्ति होगी। इस संबंध में श्रीलंका के विचारों का ध्यान में रखते हुए दोनों देशों ने यह सहमति व्यक्त की है कि इस परियोजना से श्रीलंका पर पड़ने वाले पर्यावरणीय प्रभाव के संबंध में विशेषज्ञ स्तरीय विचारों का आदान-प्रदान किया जाएगा।

भारत-श्रीलंका वाणिज्यिक संबंध (India-Sri Lanka Commercial Relations)

भारत और श्रीलंका के बीच सशक्त व्यापार एवं निवेश संबंध हैं। इसका साथ ही द्विपक्षीय व्यापार पिछली दशक में तेजी के साथ बढ़ा है तथा भारत को कंपनियों श्रीलंका में निवेश करने की है और इस देश में अपनी उपस्थिति बढ़ा रही है। श्रीलंका दक्षिण एशिया में भारत का विशालतम व्यापारिक भागीदार है। जबकि भारत, श्रीलंका का विशालतम वैश्विक भागीदार है। भारत-श्रीलंका मुक्त व्यापार समझौता मार्च 2000 में प्रभाव में आ जाने के बाद दोनों देशों के बीच व्यापार बढ़ा है। अनुमान है कि आगे 8 वर्षों तक द्विपक्षीय व्यापार लगभग 5 गुना बढ़ेगा। श्रीलंका में सबसे ज्यादा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश भारत से होता है साथ ही सबसे ज्यादा पर्यटक भी भारत से ही जाते हैं। दोनों देशों ने हाल के महीने में व्यापक आर्थिक भागीदारी समझौते पर मो. खाता शुल्क की है और समझौते को अंतिम रूप दिए जाने के लिए निकट भविष्य में कदम उठाये जाने की संभावना है। श्रीलंका लम्बे समय से भारत के प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिए उच्च प्राथमिकता वाला देश रहा है।

श्रीलंका के चार विशालतम निवेशकों में भारत सम्मिलित है। हमारे प्रमुख निवेश पर्यटन, चिकित्सा, दूरसंचार, वनस्पति, ताँबा और परिसम्पत्तियाँ, दूरसंचार, पर्यटन, बीकेए एवं वित्तीय सेवाएँ, सूचना प्रौद्योगिकी एवं खाद्य प्रसंस्करण आदि क्षेत्रों में हुए हैं। वर्ष 2010 में भारत, श्रीलंका में सबसे ज्यादा निवेश करने वाला देश रहा है। भारत की प्रमुख कंपनियाँ, जैसे-भारतीय तेल निगम, टाटा, भारती एयरटेल, भारतीय जीवन बीमा निगम, अशोक लीलैण्ड, लार्सन एण्ड टुब्रो और ताज होटल इत्यादि की उपस्थिति श्रीलंका में है। विगत कुछ वर्षों में भारत में श्रीलंका द्वारा किये जा रहे निवेशों में भी वृद्धि हुई है।

भारत सरकार द्वारा दिए जाने वाले विकास ऋण का श्रीलंका एक प्रमुख प्राप्तकर्ता देश है। सुनामी में क्षतिग्रस्त हुए कोलम्बो-मतारा रेल खण्ड जो पहले ही संपूर्ण संचालन में आ चुकी है, उसके उच्चोत्थरण और मरम्मत के लिए 167.4 मिलियन अमेरिकी डॉलर की एक क्रेडिट लाइन प्रदान की गयी है। गैले-मतारा के बीच उच्चोत्थृत समुद्र तटीय रेल पटरी का उद्घाटन 16 फरवरी, 2011 को किया गया था। विदेश मंत्री श्री एस एम कृष्णा की श्रीलंका यात्रा जनवरी, 2012 की अवधि में गैले-हिवकेदुवा क्षेत्र को हस्तांतरित किया गया था। श्रीलंका के राष्ट्रपति की भारत यात्रा जून, 2010 की अवधि में उत्तरी रेल लाइन के लिए माल डिब्बों की आपूर्ति और रेल पटरी बिछाने के लिए 800 मिलियन अमेरिकी डॉलर के एक अन्य क्रेडिट लाइन की घोषणा की गयी थी। इसमें से 416.39 मिलियन अमेरिकी डॉलर की ऋण सहायता के लिए एक समझौते पर हस्ताक्षर नवम्बर, 2010 में मेदावच्चीया से मधु, मधु से तल्लाइम्नार और ओपानथाई से उत्तरी श्रीलंका के पल्लई तक के रेल लाइन निर्माण को वित्तीय समर्थन प्रदान करने के लिए किया गया था। हमारे विदेश मंत्री श्री एस एम कृष्णा की श्रीलंका यात्रा जनवरी 2012 की अवधि में उत्तरी रेल के पल्लई-कंकेसनथुराई रेल लाइन पर पटरी बिछाने, संकेतक एवं दूरसंचार प्रणाली को स्थापित करने हेतु समझौते पर हस्ताक्षर किये गये थे।

भारत द्वारा पलाली विमान पत्तन का नवीनीकरण, कंकेसनथुराई बंदरगाह, जाफना में सांस्कृतिक केन्द्र के निर्माण, दोनों देशों के बीच विद्युतीय ग्रिड्स की स्थापना, डीकोया में एक चिकित्सालय और सामपुर में राष्ट्रीय ताप ऊर्जा निगम (एन टी पी सी) तथा सिलोन विद्युत बोर्ड (सी ई बी) के बीच एक संयुक्त उद्यम के रूप में तापीय ऊर्जा से चलने वाले एक संयंत्र की स्थापना आदि प्रगति पर है। कंकेसनथुराई बंदरगाह के पुनर्वास परियोजना में मलबा हटाने का काम पूरी तरह भारत सरकार द्वारा वित्त पोषित योजना है। यह परियोजना जनवरी, 2012 में पूरी हो गयी थी। जाफना में एक सांस्कृतिक केन्द्र की स्थापना के लिए भारत द्वारा कार्य आरम्भ करने की संभावना है।

वैश्विक रूप से भारत श्रीलंका का सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार है। जबकि दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (सार्क) के अन्दर श्रीलंका भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार है। दोनों देशों के बीच 2011 में आपसी व्यापार 4.85 बिलियन डॉलर तक पहुँच गया। इसमें भारत की ओर से 4.3 बिलियन डॉलर का निर्यात किया गया। 2012 में भारत श्रीलंका आपसी व्यापार में गिरावट देखी गई। यह व्यापार 4 बिलियन डॉलर का रहा। भारत की ओर से निर्यातों में मुख्यतः पेट्रोलियम पदार्थ, चीनी, कार तथा परिवहन गाड़ियाँ शामिल हैं। जनवरी, 2013 में भारत एवं श्रीलंका ने आपसी व्यापार को अगले तीन वर्षों में 10 बिलियन डॉलर करने का लक्ष्य तय किया है। भारत के विदेश मंत्री सलमान खुरशीद ने कहा है कि भारत श्रीलंका के त्रिकोमाली में एक विशेष आर्थिक क्षेत्र (Special Economic Zone) की स्थापना करने की प्रक्रिया में है। भारत श्रीलंका में एक औषध एवं कपड़ा निर्माण क्षेत्र विकसित करने की योजना बना रहा है। विदेशमन्त्री के अनुसार भारत श्रीलंका को विज्ञान एवं तकनीकी, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा ऊर्जा से जुड़े क्षेत्रों में भी शुरू की जाने वाली नई परियोजनाओं में सहायता करने के लिए तैयार है। जुलाई, 2013 में श्रीलंका के आर्थिक विकास मंत्री बासील राजपक्षे ने कहा है कि भारत-श्रीलंका के बीच अब व्यापक आर्थिक सहयोग समझौता (सी ई पी ए) की आवश्यकता नहीं है क्योंकि भारत-श्रीलंका के बीच मजबूत आर्थिक संबंध बन गया है। ध्यान देने योग्य है कि भारत-श्रीलंका के बीच 2005 से 2008 के बीच व्यापक आर्थिक सहयोग समझौता के लिए 13 दौर की वार्ता हुई लेकिन दोनों देशों के बीच समझौता नहीं हो सका था। अब दोनों देशों ने इसकी उपयोगिता से इनकार किया है। दोनों देशों को यह मानना है कि जब इस समझौते के लिए वार्ता शुरू की गयी थी तब बाजार काफी प्रतिबन्धित था जबकि अब स्थिति में काफी बदलाव आ चुका है। भारत-श्रीलंका के बीच आर्थिक संबंधों को बढ़ावा देने के लिए श्रीलंका में भारतीय मुख्य कार्यकारी अधिकारी मंच (सी ई ओ फोरम) का गठन किया गया है।

भारत-श्रीलंका शैक्षिक एवं सांस्कृतिक संबंध (India-Sri Lanka Educational and Cultural Relations)

भारत और श्रीलंका संबंध में शिक्षा एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। राष्ट्रपति राजपक्ष की भारत यात्रा जून, 2010 के दौरान भारत और श्रीलंका दोनों देश एक ज्ञान पहल (Knowledge Initiative) शुरू करने पर सहमत हुए थे। यात्रा की अवधि में हमारे विदेश मंत्री श्री एस एम कृष्णा ने जनवरी, 2012 में श्रीलंकाई छात्रों के लिए छात्रवृत्तियों की संख्या में लगभग तीन गुना वृद्धि की घोषणा की थी। विस्तारित छात्रवृत्ति कार्यक्रम से न केवल स्नातक स्तर की नियमित शिक्षा ग्रहण कर रहे छात्र लाभान्वित होंगे बल्कि यह उच्च शिक्षा में अनुसंधान के अवसर भी बढ़ाएंगे। इसके अतिरिक्त तकनीकी एवं आर्थिक सहयोग योजना तथा कोलम्बो योजना के अंतर्गत भारत, श्रीलंका के नागरिकों के लिए अल्प एवं मध्यमकालीन तकनीकी एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए प्रतिवर्ष लगभग 200 स्लॉट प्रदान करता है।

द्विपक्षीय सम्बंधों में सांस्कृतिक सहयोग एक महत्वपूर्ण आयाम है और सांस्कृतिक सहयोग समझौते पर हस्ताक्षर भारत सरकार और श्रीलंका सरकार के बीच 29 नवम्बर 1977 को नई दिल्ली में किया गया था। इसके अनुसार समय-समय पर सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम (सी.ई.पी.) दोनों देशों के बीच किये गये हैं। राष्ट्रपति महिंदा राजपक्ष द्वारा की गयी भारत की राजकीय यात्रा के दौरान जून, 2010 में सांस्कृतिक सहयोग कार्यक्रम (पी.सी.सी) पर वर्ष-2010-13 के लिए हस्ताक्षर किये गये थे। पी.सी.सी विभिन्न क्षेत्रों जैसे प्रदर्शनी कला और दृश्य कला, पुस्तकालय, संग्रहालय, अभिलेखागार एवं सांस्कृतिक दस्तावेज, पुरातत्व, हस्तशिल्प, खेल और युवा कार्य, प्रकाशन और व्यावसायिक आदान-प्रदान तथा जन संचार माध्यम, आदि जैसे व्यापक क्षेत्रों में सहयोग में विस्तार चाहता है। कोलम्बो में स्थित भारतीय सांस्कृतिक केन्द्र सक्रियता से भारतीय संस्कृति के प्रति जागरूकता संगीत, नृत्य, योग की कक्षाओं के संचालन के माध्यम से फैला रहा है। प्रति वर्ष सांस्कृतिक दलों का आदान-प्रदान दोनों देशों के बीच होता रहता है। भारत श्रीलंका के महत्वपूर्ण सांस्कृतिक विरासत स्थलों के जीर्णोद्धार हेतु वचनबद्ध है और कैण्डी में एक अंतर्राष्ट्रीय बौद्ध संग्रहालय की स्थापना तथा मन्नार के तिरुकीतेश्वरम मंदिर का जीर्णोद्धार कर रहा है।

भारत और श्रीलंका के बीच पर्यटन भी एक महत्वपूर्ण कड़ी है और श्रीलंकाई पर्यटन के लिए भारत सबसे बड़ा माध्यम है, जो प्रतिवर्ष श्रीलंका में आने भारतीय पर्यटक भेजकर अपना योगदान करता है।

राष्ट्रपति राजपक्ष की भारत यात्रा जून, 2010 के दौरान जारी एक संयुक्त घोषणा में भारत और श्रीलंका भगवान बुद्ध द्वारा ज्ञान प्राप्त करने की 2600वीं वर्षगांठ (समबुद्धत्व जयंती) मनाने पर सहमत हुए थे, जिसके स्मृति समारोह को दोनों देशों में संयुक्त

गतिविधियों के माध्यम से मनाया जायेगा। "बौद्ध इतिहास, कला, साहित्य एवं दर्शन पर आधारित भारत और श्रीलंका के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान" की अवधारणा पर भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् (आई सी सी आर) द्वारा 19-20 मार्च, 2011 की कैंडि में आयोजित किये गये एक अंतर्राष्ट्रीय बौद्ध सम्मेलन का उद्घाटन राष्ट्रपति राजपक्षे द्वारा किया गया था। भगवान बुद्ध की एक 16 फुट ऊँची गुप्तकालीन सारनाथ शैली की बौद्ध प्रतिमा कैंडि के श्री दालादा मालीगावा में स्थित अंतर्राष्ट्रीय बौद्ध संग्रहालय परिसर के प्रवेश द्वार पर स्थापित किया गया था।

भारत-श्रीलंका फाउण्डेशन (India-SriLanka Foundation)

औपचारिक पहल के रूप में भारत-श्रीलंका फाउण्डेशन की स्थापना दिसम्बर, 1998 में की गयी थी जो दोनों देशों के लोगों के बीच व्यापक स्तर पर समझ बढ़ाने का कार्य करता है जिसमें वैज्ञानिक, तकनीकी, शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक सहयोग भी सम्मिलित हैं। फाउण्डेशन दोनों देशों के युवा पीढ़ी के बीच संपर्क विस्तार और नागरिक समाज के बीच सहयोग संवर्धन पर विशेष रूप से ध्यान देता है। इसी दृष्टिकोण से फाउण्डेशन ने अनेक छात्र आदान-प्रदान कार्यक्रमों और गतिविधियों को विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों के स्तरों पर अपना समर्थन दिया है। इसने उच्च शिक्षा के विस्तार और दोनों देशों में अनुसंधान कार्यों को भी अपना समर्थन दिया है। इसके यह अतिरिक्त सांस्कृतिक कार्यक्रमों को भी बढ़ावा देता है।

भारत-श्रीलंका संबंधों की हालिया अवस्था (Current Status of bilateral Relations)

भारत-श्रीलंका पड़ोसी हैं। दोनों देशों के बीच 2500 वर्षों से अधिक पुराने संबंध हैं और दोनों पक्षों की विरासत बौद्धिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और भाषाई-संसाधनों के आधारशिला पर निर्मित है। दोनों देशों के बीच संबंध विविध क्षेत्रों में समय के साथ परिपक्व होते चले गए जिसमें समकालीन प्रासंगिकता के सभी क्षेत्र सम्मिलित हैं। दोनों देशों की सांश्रि सांस्कृतिक एवं सभ्यतागत विरासत और उनके नागरिकों के बीच व्यापक अंतर्क्रिया बहुमुखी भागीदारी को आधार प्रदान करते हैं। हाल के वर्षों में व्यापार और निवेश में वृद्धि हो रही है। शिक्षा, संस्कृति और रक्षा के क्षेत्रों में सहयोग तथा साथ ही साथ अंतर्राष्ट्रीय हितों के प्रमुख मुद्दों पर व्यापक सहमति बनी है।

लगभग तीन दशकों तक श्रीलंका सेना और लिफ्टे के बीच चले सशस्त्र संघर्षों का अंत मई 2009 में हुआ। भारत ने श्रीलंका सरकार के अधिकारों और अंतर्क्रिया समूहों के विरुद्ध कार्रवाई करने का समर्थन किया था। उसी समय भारत ने सर्वोच्च स्तरों पर तमिलों के पलायन से जुड़े अपने गहन संस्कारों से अवगत कर दिया था और इस बात पर जोर दिया था कि यह सुनिश्चित किया जाये कि उनके अधिकार और कल्याण एलटीटीई के विरुद्ध जारी युद्ध में कहीं भी नष्ट न हो जाये। सशस्त्र संघर्ष के अंत के साथ एक प्रमुख मानवीय चुनौती उभर कर सामने आयी थी, जिसमें लगभग 3,00,000 तमिल नागरिक आंतरिक रूप से विस्थापित थे। जून 2009 में हमारे प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने 5 बिलियन रुपये के अनुदान को घोषणा श्रीलंका में राहत और पुनर्वास कार्यों के लिए की थी। अभी तक भारत ने 2,50,000 परिवारों के लिए राहत पैकेज भेजा है। भारत ने आपात चिकित्सा इकाई की स्थापना की है, जिसने मार्च से सितंबर 2009 के बीच 50,000 से अधिक लोगों को चिकित्सा सेवा प्रदान की है।

भारत लगातार इस बात की वकालत कर रहा है कि विस्थापित लोगों को शीघ्रतया उनके मूल स्थानों पर पुनः बसाया जाये। भारत ने श्रीलंका में आंतरिक तौर पर विस्थापित लोगों के आवास निर्माण पर लंबे की वादा सहायता के रूप में दी है। भारत ने बड़ी मात्रा में सीमेंट एवं कृषि उपकरण भी प्रदान किया है। चूंकि पुनर्वास हेतु डी-माइनिंग की आवश्यकता एक प्रमुख समस्या है इसलिए भारत सरकार ने अपने संपूर्ण वित्तीय पोषण से सात डी-माइनिंग दलों को भेजा है, जो पुनर्वास को गति देने में उत्तरी श्रीलंका के विभिन्न क्षेत्रों में सलियत हैं।

भारत का यह प्रयास है कि श्रीलंका के जातीय मुद्दे का समाधान कर राष्ट्रीय समन्वय को बढ़ाया जाए। मुद्दे का राजनीतिक हल जल्द ढूँढा जाए। भारत एक संयुक्त श्रीलंका की परिकल्पना करता है, जिसमें सभी समुदायों के हितों का समावेश हो। ऐसे श्रीलंका में लोकतंत्र, बहुलवाद तथा मानवाधिकारों को बढ़ावा मिले। श्रीलंका सरकार ने भारत को आश्वस्त किया है कि संविधान के 13वें संशोधन पर आधारित राजनीतिक प्रस्ताव पारित करने के लिए वह तमिलों से बातचीत करेगी।

राहत और पुनर्वास से निर्माण एवं विकास की ओर जाते हुए भारत सरकार ने अब अपना ध्यान आंतरिक रूप से विस्थापित लोगों की आवासीय जरूरतों की ओर लगाया है। राष्ट्रपति महिंदा राजपक्ष की भारत यात्रा 8-11 जून, 2010 के दौरान प्रधानमंत्री डॉ. सिंह ने घोषणा की थी कि भारत, श्रीलंका में 50,000 आवासों का निर्माण करेगा। प्रस्तावित योजना में उत्तरी, पूर्वी एवं मध्य प्रांतों के संदर्भ में इनके आवासों के विस्तार, निर्माण तथा मरम्मत सम्मिलित हैं। उत्तरी प्रांत के सभी 5 जनपदों को सम्मिलित करते हुए 1,000 आवासों की एक पायलट परियोजना का शुभारम्भ भारत द्वारा नवम्बर 2010 में किया गया था। इस पायलट परियोजना का कार्य प्रगति पर है। विदेश मंत्री श्री एस एम कृष्णा की जाफना यात्रा के दौरान तैयार घरों के पहले खेप का हस्तांतरण लाभार्थियों को 18 जनवरी, 2012 को कर दिया गया है। यात्रा के दौरान श्रीलंका सरकार के साथ शेष 49,000 घरों के लिए परियोजना के

अगले चरण के क्रियान्वयन के लिए एक संयुक्त विज्ञप्ति पर हस्ताक्षर किया गया है। अगला चरण जिसके शीघ्र ही प्रारम्भ होने की संभावना है, उसमें उत्तरी, पूर्वी, मध्य और ऊँचा आदि प्रान्तों में विस्तार और नये आवासीय इकाइयों का निर्माण तथा वर्तमान आवासों की मरम्मत आदि की व्यवस्थाएँ सम्मिलित हैं।

दोनों देशों के बीच जल क्षेत्रीय निकटता के कारण, विशेष रूप से मन्नार खाड़ी और पाक पट्टी में मछुआरों के भटकने की घटनाएँ सामान्य हो गयी हैं। दोनों देशों के बीच ऐसे मुद्दों से निपटने के लिए एक निश्चित व्यावहारिक व्यवस्था पर सहमति हुई है। इस व्यवस्था के माध्यम से निरुद्ध मछुआरों के मामलों को मानवीय ढंग से सुलझाना संभव हो सकेगा।

भारत और श्रीलंका के बीच रक्षा संबंध भी बढ़ रहे हैं। भारत एवं श्रीलंका के बीच साझी विरासत के रूप में सुरक्षा सरोकार जुड़े हैं। इन सरोकारों में एक-दूसरे की सुरक्षा के लिए सहयोग जिसमें समुद्र तटीय संचार सुरक्षा भी सम्मिलित है।

उच्च स्तरीय यात्राओं से दो देशों के बीच संबंध मजबूत होते हैं। विदेश मंत्री श्री एस एम कृष्णा श्रीलंका की यात्रा पर 16 से 19 जनवरी, 2012 की अवधि में गये थे। अपनी यात्रा की अवधि में वे राष्ट्रपति श्री महिंदा राजपक्ष और प्रधानमंत्री श्री डी एम जयरत्ने से मिले थे। श्रीलंकाई विदेश मंत्री प्रो० जी एल पेडरिस के साथ बैठक में भारतीय विदेश मंत्री श्री कृष्णा ने द्विपक्षीय संबंधों की विस्तृत समीक्षा की थी। उन्होंने श्रीलंकाई संसद के नेता प्रतिपक्ष श्री रानिल विक्रमसिंहे एवं तमिल राष्ट्रीय गठबंधन तथा अन्य श्रीलंकाई दलों के प्रतिनिधियों के साथ भी बातचीत की थी। विदेश मंत्री श्री कृष्णा भारत सरकार की सहायता से चल रही परियोजनाओं के संबंध में उत्तरी श्रीलंका के जाफना और किलिनोच्ची की भी यात्रा पर गये थे और आरियालाई, जाफना की आवासीय खण्डों के प्रथम खेप को हस्तान्तरित भी किया था। वे, दक्षिणी श्रीलंका के गाले की यात्रा पर भी गये थे जहाँ उन्होंने भारत द्वारा दिए गये क्रेडिट लाइन के अंतर्गत दक्षिणी रेल परियोजना के निर्मित हिस्से का उद्घाटन किया था। पूर्व राष्ट्रपति डॉ० ए पी जे अब्दुल कलाम श्रीलंका के राष्ट्रपति के निमंत्रण पर श्रीलंका राष्ट्रीय विभाषा योजना का शुभारम्भ करने के लिए 20 से 24 जनवरी 2012 की अवधि में श्रीलंका की यात्रा पर गये थे।

इससे पूर्व लोक सभा अध्यक्ष श्रीमती मीरा कुमार तृतीय सी पी ए एशियाई क्षेत्रीय सम्मेलन (The Third Asian Region Conference of the Commonwealth Parliamentary Association) में सम्मानित अतिथि के रूप में भाग लेने के लिए श्रीलंका की यात्रा पर 11 से 16 मार्च, 2011 की अवधि में गयी थी। तत्कालीन प्रान्तीय विकास एवं पंचायती राज मंत्री श्री विलासराज देशमुख चतुर्थ दक्षिण एशियाई स्वच्छता सम्मेलन में भाग लेने के लिए श्रीलंका की यात्रा पर 4 से 7 अप्रैल, 2011 के दौरान गये थे। श्रीलंकाई संसद के अध्यक्ष श्री चामाल राजपक्ष के नेतृत्व में एक संसदीय प्रतिनिधि मण्डल भारत के लोक सभा अध्यक्ष के आमंत्रण पर 1 से 4 अगस्त, 2011 के दौरान भारत की यात्रा पर आया था। वे अध्यक्ष एवं सांसदों के साक संघ के 5वें सम्मेलन में भाग लेने के लिए भी भारत की यात्रा पर 9 से 12 जुलाई, 2011 के दौरान आये थे।

चूँकि संकटग्रस्त इलाकों की जीविका प्राथमिक रूप से कृषि पर निर्भर है इसलिए भारत सरकार ने कृषि नवीनीकरण के व्यापक कार्यक्रमों की घोषणा की है। जिन कार्यक्रमों को तत्काल क्रियान्वयन के लिए दाय्य मंजूर किया गया है, उनमें उत्तरी श्रीलंका के कृषक संगठनों को बीजों तथा ट्रैक्टरों एवं अन्य उपकरणों की आपूर्ति सम्मिलित है। 500 ट्रैक्टरों की आपूर्ति उत्तरी प्रान्त के कृषक संगठनों व कृषि सेवा केन्द्रों को किया गया था। इस परियोजना की कुल लागत 600 मिलियन एस फल आर भी। उससे जा रहे लोगों और उनके जीवनयापन के लिए परिवहन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु भारत ने उत्तरी प्रान्त में वापस आने वाले लोगों को 10,000 साइकिलों की आपूर्ति की एक परियोजना चालू में लाई है।

भारत शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन, लघु एवं मध्यम उद्यम विकास इत्यादि क्षेत्रों की योजनाओं को भी लगातार सहायता प्रदान करता रहा है और अपने वित्त पोषण से देश के कई क्षेत्रों में प्रशिक्षण प्रदान कर रहा है। राष्ट्रपति श्री राजपक्ष की भारत यात्रा जून, 2010 की अवधि में लघु विकास परियोजनाओं में सहयोग के लिए एक संयुक्त विज्ञप्ति पर हस्ताक्षर, श्रीलंका की परियोजनाओं के लिए वित्तीय सहायता बढ़ाने के लिए किये गये थे। पूर्वी क्षेत्र में सहकारी समितियों को मछली पकड़ने के उपकरण, जाफना के शैक्षणिक चिकित्सालय को उपकरणों की आपूर्ति, दुर्गईपाह क्रीड़ा परिसर का नवनिर्माण, अचुवेली औद्योगिक क्षेत्र का पुनर्संचालन, उत्तरी प्रान्त में विद्यालयों की मरम्मत, मन्नार जनपद को मछली पकड़ने के उपकरणों की आपूर्ति और किलिनोच्ची तथा मुलायतीवू सार्वजनिक चिकित्सालय आदि के विकास कार्य या तो पहले ही पूरे कर लिये गये हैं अथवा योजना के अंतर्गत क्रियान्वयन के विभिन्न चरणों में हैं।

भारत ने मार्च, 2012 तथा मार्च 2013 में अमेरिका समर्थित मानवाधिकार परिषद के उस प्रस्ताव का समर्थन किया था जो श्रीलंका के विरुद्ध मानवाधिकार के उल्लंघन के मामलों की निंदा के लिए लाया गया था। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि पश्चिमी देशों या भारत ने लिट्टे के विरुद्ध श्रीलंका की सैन्य कार्रवाई या मानवाधिकार के उल्लंघन के मामलों को गंभीर न मानकर सैन्य कार्रवाई के अंतिम 100 दिनों में युद्ध अपराध (War Crimes) से जुड़े मामलों को गंभीर माना है। युद्ध अपराध से जुड़ी कई घटनाओं के विडियो रिकॉर्ड्स साक्ष्य विश्व समुदाय के सामने भी लाए गए हैं। मानवाधिकार परिषद के प्रस्ताव में श्रीलंका से खुद अपने बनाए लेशन्स लर्ट एण्ड रिकान्सिलेशन कमीशन की अनुशंसाओं को लागू करने की बात कही गई है। इस मामले में भारत की स्थिति साफ है कि वह लिट्टे के खिलाफ तो हो सकता है लेकिन वह तमिलों के खिलाफ होने वाले भेदभाव को सहन नहीं

कर सकता है। भारत के सामने यह समस्या खड़ी होती जा रही है कि श्रीलंकाई राजनीतिक नेतृत्व राजनीतिक मेल-मिलाप तथा शक्ति हस्तांतरण के प्रति अनिच्छुक होता जा रहा है। समय के साथ वहाँ बहुसंख्यकवाद (Majoritarianism) की भावना उभरती जा रही है जो निःसन्देह श्रीलंका की एकता एवं अखंडता के लिए अच्छी नहीं है। यह एक प्रकार से भारत को धोखा देने के समान है क्योंकि भारत ने श्रीलंकाई सेना द्वारा लिट्टे की हार में बड़ी राजनीतिक भूमिका निभाई थी। लेकिन गृह-युद्ध समाप्त होने के बाद वहाँ लोकतंत्र, कानून का शासन, मानवाधिकारों की स्थिति में गिरावट आई है तथा शासन की कमजोरियाँ स्पष्ट दिखने लगी हैं। तमिलों के साथ होने वाले भेदभाव में अभी भी कमी नहीं आई है। भारत में बड़ी संख्या में तमिल शरणार्थी रह रहे हैं जिनका पुनर्वास किया जाना अत्यंत महत्वपूर्ण है।

इधर भारत में तमिलनाडु में श्रीलंका में तमिलों के साथ किए जा रहे दुर्व्यवहार के विरोध में छात्रों, फिल्म अभिनेताओं तथा अन्य लोगों द्वारा भूख हड़ताल किया गया है। श्रीलंका के सैनिकों को भारत में दिए जा रहे प्रशिक्षण पर रोक लगाने की मांग की जा रही है। उस पर आर्थिक प्रतिबंध लगाए जाने की मांग हो रही है। लेकिन फिलहाल भारत की प्राथमिकता अंतर्राष्ट्रीय समुदाय विशेषकर अमेरिका एवं यूरोपीय संघ के साथ मिलकर श्रीलंका पर दबाव डालने की होनी चाहिए ताकि श्रीलंका तमिलों के साथ होने वाले भेदभाव को समाप्त करे तथा राजनीतिक मेल-मिलाप तथा पुनर्वास संबंधी अपने वायदे को पूरा करे। इस संबंध में भारत को जापान जैसे देशों तथा विश्व बैंक तथा एशियाई विकास बैंक जैसे अंतर्राष्ट्रीय संगठनों की भी मदद लेनी चाहिए ताकि श्रीलंका के सभी भागों में विकास कार्यों को बढ़ावा मिल सके। भारत को श्रीलंका द्वारा अपनाए जाने वाले पाकिस्तानी या चीनी कार्ड से किसी तरह विचलित नहीं होना चाहिए तथा अपने राष्ट्रीय हित की रक्षा पर ध्यान देना चाहिए।

अप्रैल, 2013 में भारत-श्रीलंका के बीच राजनीतिक अंत किया तथा आपसी समझ को बढ़ावा देने के लिए भारत से सांसदों का एक प्रतिनिधिमंडल श्रीलंका की यात्रा पर गया था। दोनों देशों के बीच राजनीतिक सहभागिता को संस्थात्मक रूप देने के प्रयास के रूप में यह यात्रा की गई थी। ऐसे यात्राओं का एक उद्देश्य राजनीतिक एवं आर्थिक समस्याओं का हल खोजना तथा टैक-2 कूटनीति को बढ़ावा देना भी है।

श्रीलंका तमिल बहुल उत्तरी क्षेत्र में उत्तर प्रांतीय परिषद (Northern Provincial Council) के लिए सितंबर, 2013 में चुनाव कराने पर सहमत हुआ है। चुनाव करवाने के लिए श्रीलंका पर अंतर्राष्ट्रीय दबाव है ताकि जल्द से जल्द तमिल समुदाय के साथ पुनर्सामंजस्य की प्रक्रिया आगे बढ़ाई जाए। लेकिन प्रांतीय सरकार को कौन-कौन सी शक्तियाँ सौंपी जाएंगी इस पर राजनीतिक सहमति का अभाव दिख रहा है। श्रीलंका में 13 वें संविधान संशोधन के संबंध में अनुशासन करने के लिए एक संसदीय समिति का गठन किया गया है। 13वां संशोधन जुलाई, 1987 में भारत-श्रीलंका समझौते के प्रस्ताव लाया गया था जिसमें सरकार प्रांतों को कुछ शक्तियाँ देने पर राजी हुई थी। भारत-श्रीलंका समझौते के अंतर्गत ही श्रीलंका में एकात्मक व्यवस्था के अंतर्गत प्रांतीय परिषद की व्यवस्था की गई थी।

यह आशंका व्यक्त की जा रही है कि प्रस्तावित संशोधन के माध्यम से प्रांतों से उनका पुलिस एवं भूमि संबंधी अधिकार वापस ले लिया जाएगा। भारत का मानना है कि श्रीलंका को शक्ति हस्तांतरण से जुड़े संवैधानिक प्रावधानों का पालन करना चाहिए। इसमें किसी तरह का हेरफेर नहीं करना चाहिए ताकि सार्थक विकास सुनिश्चित किया जा सके।

भारत-श्रीलंका के बीच चीनी कारक (China Factor in India-Sri Lanka relations)

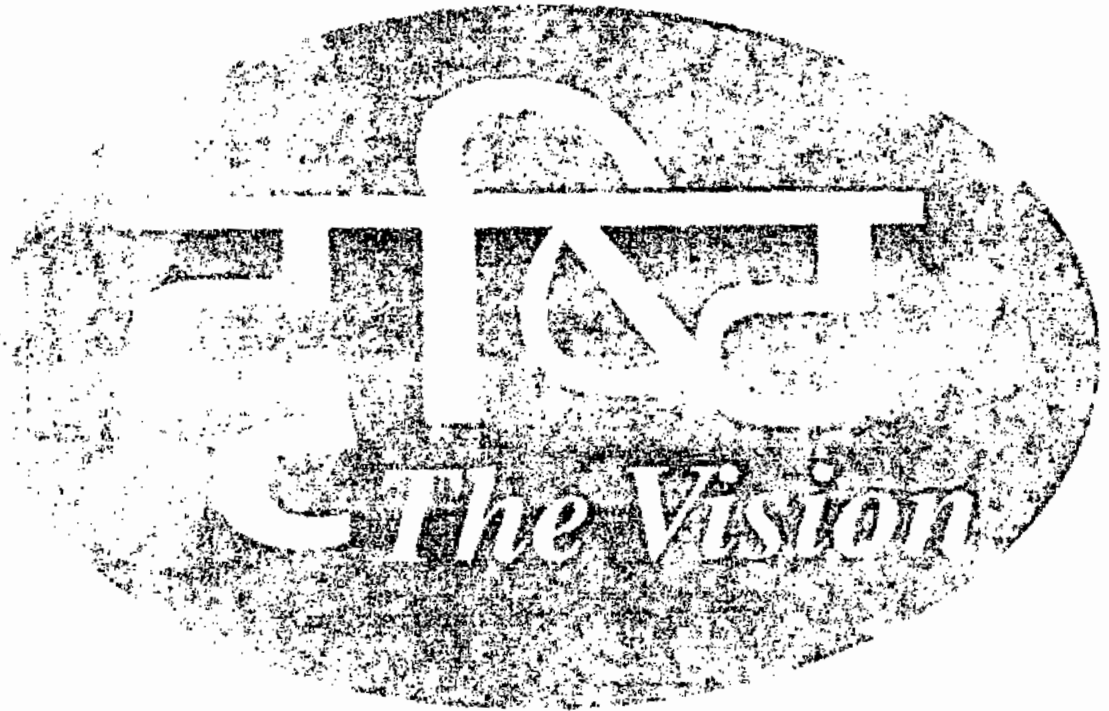
चीन आज भारत-श्रीलंका द्विपक्षीय संबंधों को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित कर रहा है। चीन ने श्रीलंका में समय पर काम आने वाले मित्र के रूप में अपनी पहचान बनायी है। श्रीलंका एवं चीन के संबंध बहुआयामी बनते जा रहे हैं। श्रीलंका ने 1950 में चीन को मान्यता दी थी लेकिन दोनों देशों के बीच 1957 में औपचारिक रूप से राजनयिक संबंध स्थापित हुआ था। शुरुआत में तो श्रीलंका-चीन के बीच काम चलाऊ संबंध ही रहे लेकिन पिछले कुछ वर्षों में श्रीलंका एवं चीन के बीच संबंध महत्वपूर्ण रूप से प्रगाढ़ हुए हैं। 2005 में श्रीलंका एवं चीन के बीच बहुआयामी सहयोग एवं मित्रता की संधि की गई। उसके बाद चीन श्रीलंका में आधारभूत संरचना विकास, आर्थिक मदद, तेल उत्खनन, निवेश, व्यापार करने के साथ-साथ एक मजबूत कूटनीतिक सहयोगी के रूप में भी उभरा है। चीन ने श्रीलंका के निर्माण एवं विकास से जुड़े क्षेत्रों के लिए लगभग 6 बिलियन डॉलर की ऋण सहायता दी है। श्रीलंका के निर्माण एवं विकास संबंधी कार्यों में आधा से ज्यादा भागीदारी चीन की है। इस मामले में भारत चीन से पीछे है। श्रीलंकाई लोग परियोजनाओं को समय पर पूरा करने, लागत, गुणवत्ता के मामले में चीन को बेहतर मानते हैं। हालाँकि युद्ध पश्चात श्रीलंका के पुनर्निर्माण में भारत की अपेक्षित भागीदारी हो रही है लेकिन चीन की भागीदारी भी कम नहीं है। चीन-श्रीलंका के बीच जिस तेजी से आपसी व्यापार में वृद्धि हो रही है, उससे कई लोग यह अनुमान लगाने लगे हैं कि जल्द ही चीन भारत को प्रतिस्थापित कर श्रीलंका का सबसे बड़ा व्यापार भागीदार बन जाएगा। वैसे भी चीन पहले से ही श्रीलंका का सबसे बड़ा विदेशी निवेशक एवं ऋणदाता है।

लिट्टे के विरुद्ध सैन्य कार्रवाई के दौरान चीन ने श्रीलंका को अस्त्र एवं संबंधित उपकरण उपलब्ध भी कराए थे। श्रीलंका ने चीन से हथियार प्राप्ति को दो आधारों पर उचित ठहराया था। पहला था विकल्प का अभाव एवं दूसरा था उचित मूल्य। इस कदम

से चीन ने श्रीलंका सरकार की सद्भावना प्राप्त की। श्रीलंका चीन के उस कदम से भी काफी खुश है जिसके अंतर्गत चीन ने पश्चिमी देशों द्वारा लिट्टे के विरुद्ध सैन्य कार्रवाई के दौरान किए गए युद्ध अपराधों संबंधी अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार परिषद में श्रीलंका के विरुद्ध लाए गए प्रस्ताव के विरुद्ध मतदान किया था। बदले में श्रीलंका चीन की एक चीन नीति (One China Policy) का समर्थन करता है। श्रीलंका ने भी अनेक अवसरों पर चीन के विरुद्ध लाए गए मानवाधिकार हनन से संबंधित प्रस्ताव के विरुद्ध मतदान किया है। श्रीलंका भारत एवं चीन से समान दूरी बनाकर रहना चाहता है। साथ ही दोनों देशों से लाभ भी उठाना चाहता है। भारत ने श्रीलंका के पुनर्निर्माण हेतु 1.8 बिलियन डॉलर की ऋण सहायता उपलब्ध कराई है जबकि चीन ने 3.4 बिलियन डॉलर की। ऐसे में श्रीलंका की प्राथमिकता स्वतः ही समझी जा सकती है।

जनवरी, 2013 में श्री लंका के विदेशी मंत्री प्रो. जी एल पेइरिस भारत-श्रीलंका संयुक्त आयोग की बैठक में भाग लेने के लिए भारत आए थे। संयुक्त आयोग की बैठक के दौरान दोनों देशों के बीच अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद एवं नशीले पदार्थों की तस्करी रोकने तथा दोहरे कराधान का परिहार संबंधी संशोधित समझौता किया गया था।

भारतीय सुरक्षा प्रतिष्ठानों में श्रीलंका के सामरिक क्षेत्रों में चीन की बढ़ती भूमिका से चिंता बढ़ती जा रही है। चीन एवं श्रीलंका के बीच अंतरिक्ष क्षेत्र में भी सहयोग बढ़ रहा है जो निःसंदेह भारत के लिए चिंतनीय विषय है। श्रीलंका की एक कंपनी चीन की सहायता से 2015 तक अपने पहले संचार उपग्रह प्रक्षेपण की तैयारी कर रही है। श्रीलंका ने चीन की मदद से कैंडी में एक अंतरिक्ष अकादमी सह उपग्रह स्टेशन (Space Academy Cum Satellite Ground Station) की स्थापना का भी निर्णय लिया है।



भारत-पाकिस्तान द्विपक्षीय संबंध (Indo-Pak Bilateral Relations)

*** (इस टॉपिक का उल्लेख मुख्य परीक्षा के प्रश्नपत्र-2 के विषय संख्या 17 में 'भारत एवं उसके पड़ोसी - संबंध' के रूप में किया गया है। 'दृष्टि' द्वारा वर्गीकृत पाठ्यक्रम के 15 खंडों में से इसका संबंध भाग-7 से है।)

भारत का विभाजन और उससे उत्पन्न समस्याएँ (Partition of India and Associated Problems)

भारतीय उपमहाद्वीप में अगस्त 1947 में दो स्वतंत्र राज्यों का जन्म हुआ। ब्रिटिश संसद द्वारा पारित एक कानून के अनुसार इनका गठन भारत एवं पाकिस्तान के रूप में हुआ। ये दोनों नए देश ब्रिटिश राष्ट्रमंडल (British Commonwealth) के सदस्य बनाए गए। राजनीतिक तौर पर ये दोनों देश पूरी तरह स्वतंत्र बनाए गए। पाकिस्तान का गठन धार्मिक आधार पर किया गया था क्योंकि मुस्लिम लीग का यह दावा था कि हिन्दू और मुसलमान दो अलग राष्ट्र हैं अतः उन्हें दो अलग राज्यों में ही संगठित होना चाहिए। दूसरी ओर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस धर्मनिरपेक्षता (Secularism) में विश्वास करती थी और समूचे भारत को एक रखना चाहती थी। स्वतंत्रता से कुछ ही समय पूर्व अविभाजित भारत के कई भागों में हिंसा भड़क उठी थी। उस समय केवल दो ही विकल्प थे— या तो देश को हिंसा में झुलसते रहने दिया जाए या फिर उसे दो भागों में विभाजित कर दिया जाए। अतएव कांग्रेस देश को साम्प्रदायिक दंगों से बचाने के लिए देश का विभाजन पर राजी हो गई।

परिणामतः अंग्रेजों ने देश को केवल दो स्वतंत्र देशों में विभाजित ही नहीं किया बल्कि 500 से अधिक देसी रियासतों (Princely States) पर से अपना सर्वोच्च अधिकार (Paramountacy) भी खत्म कर दिया। साथ ही उनके शासकों को यह अधिकार दिया गया कि वे भारत या पाकिस्तान किसी में भी अपनी रियासत का विलय कर लें। कुछ शासकों ने इसका एक गलत अर्थ यह निकालना शुरू कर दिया कि वे चाहें तो बिना भारत या पाकिस्तान में विलय किए भी पूरी तरह स्वतंत्र रह सकते हैं।

हिन्दू और मुसलमान सदियों से इस उप-महाद्वीप में साथ-साथ रहते आये थे परंतु देश के बँटवारे ने भारत और पाकिस्तान के बीच दुश्मनी पैदा कर दी। भारत का विभाजन वास्तव में द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद की सबसे बड़ी घटना थी जो लोग ऐतिहासिक, भौगोलिक और आर्थिक रूप से सदियों तक एक देश में रह रहे थे उन्हें दो राज्यों में बाँटकर एक अस्वाभाविक स्थिति पैदा कर दी गई थी। इससे दोनों धर्मों के बीच दरिद्रा बढ़ गई और भारत-पाकिस्तान के बीच दीर्घकालिक नफरत की भावना पैदा हो गई।

भारत हमेशा पाकिस्तान सहित सभी देशों के साथ मित्रता एवं शांतिपूर्ण संबंध बनाए रखने का पक्षधर रहा है। फिर भी पाकिस्तान के नेता बार-बार यह कहते आये हैं कि उन्हें भारत की ओर से खतरा है और भारत पाकिस्तान को हड़प लेना चाहता है। फलतः भारत ने अनेक बार पाकिस्तान को विश्वास दिलाया है कि उसकी स्वतंत्रता और अखंडता को भारत की ओर से कोई खतरा नहीं है। भारत, पाकिस्तान के साथ सभी विवादों का शांतिपूर्ण समाधान चाहता है—फिर भी पाकिस्तान की नीति भारत के विरुद्ध शत्रुता की रही है। पाकिस्तान के नेताओं और समाजवादी ने यह मिथ्या धारणा फैलाने का प्रयास किया है कि भारत पाकिस्तान के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करता और वह उसको समाप्त कर देना चाहता है। इस गलत प्रचार का परिणाम यह हुआ है कि हमारे लाख चाहने पर भी पाकिस्तान ने अब तक भारत को अपना दुश्मन मानना नहीं छोड़ा है।

पाकिस्तान की विदेश नीति हमेशा भारत के विरोध पर टिकी रही है और वह अपनी सारी समस्याओं के लिए भारत को जिम्मेवार ठहराता रहा है। जुल्फिकार अली भुट्टो ने तो यहाँ तक कह दिया था कि 700 वर्ष तक इस उपमहाद्वीप पर मुसलमानों ने शासन किया है। इसलिए जब 1947 में मुसलमानों को पाकिस्तान के रूप में अपना अलग राज्य मिला तो हिन्दू जनता बौखला उठी। भुट्टो ने इस संदर्भ में लिखा "पाकिस्तान हिन्दू राष्ट्रवाद के लिए एक चुनौती था जिसका भारत कभी सामना नहीं कर सकता।" पाकिस्तान का भारत-विरोधी विचार सदा ही सांप्रदायिक रूप में होता है जबकि भारत का धर्मनिरपेक्षता में पूरा विश्वास है। पाकिस्तान द्वारा किए गए दुष्प्रचार के बावजूद भारत के लोगों ने सांप्रदायिक सद्भावना कायम रखी है क्योंकि भारत सिर्फ एक हिन्दू राज्य नहीं है बल्कि यह सभी धर्मों को एक समान स्वतंत्रता देता है इसलिए पाकिस्तान द्वारा भारत के खिलाफ लगाए गए सभी आरोप बेबुनियाद हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देसी रियासतों के भविष्य का प्रश्न एक गंभीर समस्या बन गया था। उनके शासकों को इस बात की स्वतंत्रता थी कि वे अपने भविष्य का निर्णय खुद करें। अधिकतर राजा और नवाब ब्रिटिश सरकार के प्रति वफादार थे और उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलनों का दमन किया था और अपनी जनता को अधिकारों से वंचित रखा था। तत्कालीन गृहमंत्री सरदार पटेल ने समझा-बुझा कर लगभग 562 देसी रियासतों का भारत में विलय करवा लिया। केवल पाँच राज्यों ने पाकिस्तान में शामिल होने का निर्णय लिया। विलय के प्रश्न पर जूनागढ़, हैदराबाद और जम्मू-कश्मीर ने कोई स्पष्ट निर्णय नहीं लिया। जूनागढ़ का नवाब

ऐशो-आराम में डूबा रहता था और उसे अपनी जनता के कल्याण से कोई लेना-देना नहीं था। नवाब ने जूनागढ़ को पाकिस्तान में विलय करने का निर्णय ले लिया जबकि वह राज्य चारों ओर से भारतीय प्रदेश से घिरा था। जब जूनागढ़ में अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो गई तो भारत ने सैनिक कार्रवाई करके वहाँ शांति स्थापित की। नवाब पाकिस्तान भाग गया और जूनागढ़ के दीवान ने राज्य का विलय भारत में करने का प्रस्ताव किया। अंततः 1948 के आरंभ में एक जनमत-संग्रह में भारी बहुमत से लोगों ने भारत में विलय का समर्थन कर दिया।

एक अन्य रियासत हैदराबाद का निज़ाम (शासक) संसार के सबसे समृद्ध व्यक्तियों में से एक था। निज़ाम पहले हैदराबाद को एक स्वतंत्र देश बनाने और बाद में पाकिस्तान में विलय करने का संकेत देने लगा। यह भी राज्य चारों ओर से भारत के प्रदेशों से घिरा हुआ था। निकटवर्ती मैसूर राज्य पहले ही भारत में शामिल हो चुका था। जूनागढ़ की तरह हैदराबाद भी हिन्दू बहुसंख्यक था, परंतु निज़ाम मुसलमान होने के कारण भारत में विलय के लिए तुरंत तैयार नहीं हुआ हालाँकि वह भारत से इसके लिए बातचीत जरूर करता रहा था।

इसी बीच हैदराबाद के एक कट्टरपंथी नेता कासिम रज़वी के नेतृत्व में रज़ाकारों (Muslim Volunteers) ने राज्य में आतंक फैलाकर लोगों को मारना और लूटना शुरू कर दिया। देशभर में यह माँग की जा रही थी कि केन्द्र सरकार को सेना का प्रयोग करके स्थिति नियंत्रण में लाना चाहिए। अंततः सितंबर 1948 में गृहमंत्री सरदार पटेल के सीधे नियंत्रण में 'ऑपरेशन पोलो' (Operation Polo) के नाम से सैनिक कार्रवाई की गई। भारतीय सेना ने चौबीस घंटे में स्थिति पर काबू पा लिया परंतु पूरे राज्य को भारत सरकार के नियंत्रण में लाने में पाँच दिन का समय लग गया। इसके बाद निज़ाम ने हैदराबाद के भारत में विलय की प्रार्थना की जिसे भारत सरकार ने स्वीकार कर लिया। इस प्रकार हैदराबाद भारत का अंग बन गया। पाकिस्तान ने इस मामले को संयुक्त राष्ट्र संघ में उठाने का असफल प्रयास किया।

भारत से पाकिस्तान जाने वाले और पाकिस्तान से भारत आने वाले विस्थापितों या शरणार्थियों (Refugees) की समस्या का सीधा संबंध दोनों देशों में अल्पसंख्यकों के प्रश्न से जुड़ा हुआ था। वहाँ से बहुत बड़ी संख्या में हिन्दुओं और सिखों को अपना घर छोड़कर भारत आने के लिए मजबूर किया गया। इससे न केवल उनकी सर्पति पाकिस्तान में रह गई बल्कि बहुत बड़ी संख्या में लोग हताहत भी हुए। आँकड़ों के अनुसार हजारों लोगों को अपना जान से हाथ धोना पड़ा। भारत में भी इसकी कड़ी प्रतिक्रिया हुई और अनेक स्थानों पर दंगे हुए। बहरहाल, जहाँ एक ओर भारत सरकार ने कठोर उपाय करके हिंसा को दबाया और मुसलमानों को सुरक्षा प्रदान की, वहीं पाकिस्तान की सरकार गैर-मुसलमानों को सुरक्षा देने में विफल रही। दोनों देशों को अपने यहाँ विस्थापितों को फिर से बसाने की विकट समस्या से जूझना पड़ा।

भारत के प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने पाकिस्तान के प्रधानमंत्री लियाकत अली को बातचीत के लिए दिल्ली बुलाया और 8 अप्रैल 1950 को नेहरू-लियाकत अली समझौते पर हस्ताक्षर हुए। बहरहाल दोनों देशों के अल्पसंख्यक समुदाय इस समझौते के बावजूद अपने को सुरक्षित महसूस न कर सके। इस समझौते के विरोध में भारत के दो केन्द्रीय मंत्रियों डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी और के. सी. नय्योगी ने सरकार से इस्तीफा दे दिया। दूसरी ओर, हिन्दुओं के साथ दुर्व्यवहार के विरोध में पाकिस्तान में एकमात्र हिन्दू मंत्री जोगेन्द्रनाथ मंडल ने वहाँ की सरकार से इस्तीफा दे दिया।

भारत के विभाजन के फलस्वरूप लाखों शरणार्थी पाकिस्तान से भारत में आ गए थे। उनके पुनर्वास में लगभग पंद्रह वर्ष लग गए। उनके लिए आवास एवं आजीविका के साधनों का प्रबंध करना था। एक बड़ा प्रश्न यह भी था कि जो शरणार्थी अपनी संपत्ति, जैसे- मकान, दुकान, जमीन छोड़ आए थे उसका मुआवज़ा किस प्रकार दिया जाए? इसके लिए भारत को पाकिस्तान से कोई विशेष सहायता नहीं मिली। बँटवारे के समय हुए समझौते के अनुसार भारत से पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये मिलने थे और पाकिस्तान को पाँच वर्ष में तीन सौ करोड़ रुपये का ऋण चुकाना था। पाकिस्तान ने तो अपना वचन पूरा नहीं किया परंतु भारत सरकार ने पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये 1947 में ही उपलब्ध करा दिए थे।

अविभाजित पंजाब में पाँच नदियाँ बहती थीं, जिससे यह प्रदेश अग्रणी अन्न उत्पादक राज्य के रूप में जाना जाता था। भारत विभाजन ने तीन नदियाँ— रावी, सतलज और व्यास को भारत में बहने के लिए छोड़ दिया, जबकि सिंधु नदी तथा अन्य दो नदियाँ, झेलम और चेनाब का अधिकांश बहाव पाकिस्तान में रहा। रावी, सतलज और व्यास को पूर्वी नदियाँ और अन्य को पश्चिमी नदियाँ कहा जाने लगा। 25 में से 20 नहरें जो पूर्वी नदियों से पानी लेती थीं, मुख्य रूप से भारत में सिंचाई के लिए उपयोगी थीं। भारत यदि चाहता तो संपूर्ण जल का प्रयोग स्वयं कर सकता था लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। भारत द्वारा ऐसा करने से पाकिस्तान के पंजाब प्रांत में जल-समस्या खड़ी हो सकती थी। आगे चलकर भारत और पाकिस्तान के बीच जल का बँटवारा एक प्रमुख समस्या बन गया।

एक अन्य अस्थायी समझौते के अनुसार भारत ने पाकिस्तान की नहरों के लिए अपने क्षेत्र से इस शर्त पर पानी देना स्वीकार कर लिया कि पाकिस्तान उसका मूल्य देगा। यह समझौता 31 मार्च 1948 को समाप्त हो गया क्योंकि पाकिस्तान ने इसका नवीनीकरण नहीं करवाया। एक अन्य समझौता 4 मई, 1948 को किया गया, जिसके अनुसार दोनों सरकारों ने यह माना कि धीरे-धीरे

भारत से पाकिस्तान को पानी की आपूर्ति कम होती जाएगी। भारत को स्वयं जल की आवश्यकता थी, इसलिए उसने भाखड़ा में एक बांध बनाने का निर्णय किया ताकि भारत में आवश्यकतानुसार सिंचाई हो सके। परंतु अगस्त 1950 में पाकिस्तान ने एकतरफा तौर पर 1948 के समझौते को यह कहकर रद्द कर दिया कि यह समझौता दबाव में आकर किया गया था। उसके बाद लगभग दस साल की बातचीत के बाद एक समाधान निकला। विश्व बैंक (World Bank) के अध्यक्ष की मध्यस्थता के फलस्वरूप 19 सितंबर, 1960 को पानी के बँटवारे के बारे में करांची में नेहरू और पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खान ने हस्ताक्षर किए। इस समझौते में यह तय किया गया कि अगले दस वर्ष की अवधि के बाद, जो पाकिस्तान के निवेदन पर तीन वर्ष और बढ़ाई जा सकती थी, तीनों ही पूर्वी नदियों का पानी केवल भारत प्रयोग में लाया जाएगा और पाकिस्तान को केवल पश्चिमी नदियाँ पानी देंगी। इस समझौते के तहत भारत ने यह स्वीकार किया कि वह पाकिस्तान को नहर खुदवाने में वित्तीय सहायता देगा। यह समझौता सन् 1961 में लागू किया गया। उस समय तो ऐसा लगा था कि जल-बँटवारे की समस्या को सुलझा लिया गया है लेकिन हाल के घटनाक्रम जिसमें बुलर बैराज (Wuller Barrage), तुलबुल परियोजना (Tulbul Project) आदि शामिल हैं, से यह साबित होता है कि अभी भी दोनों देशों के बीच जल-समस्या बनी ही हुई है।

भारत-पाक संबंधों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical Background of Indo-Pak Relations)

(i) विभाजन से लेकर 1965 तक भारत-पाक संबंध (Indo-Pak Relations from Partition to 1965)

भारत विभाजन के उपरान्त 1954 में पाकिस्तान पश्चिमी सैनिक गठबंधनों, जैसे- दक्षिण-पूर्व एशिया संधि संगठन (सीएटो-SEATO) तथा 1955 में सेंट्रल ट्रीटी ऑर्गेनाइजेशन (सेंटो-CENTO) जिसे पूर्व में बगदाद सन्धि (Baghdad Pact) या मध्य-पूर्व सन्धि संगठन (मीटो-METO) के नाम से भी जाना जाता है, में शामिल हो गया। ये संगठन मुख्य तौर पर साम्यवाद के प्रसार को रोकने के लिए बनाए गए थे। दूसरी ओर, अमेरिका ने भारत को आश्वासन दिया कि उसके द्वारा पाकिस्तान को दिए गए हथियारों का प्रयोग भारत के खिलाफ नहीं किया जाएगा लेकिन व्यवहार में पाकिस्तान ने इन हथियारों का भरपूर प्रयोग 1965 और 1971 के युद्ध में भारत के विरुद्ध किया।

भारत ने अमेरिका से कहा था कि यदि वह पाकिस्तान को सैनिक सहायता देगा तो कश्मीर समस्या और भी उलझ जाएगी। वस्तुतः ऐसा ही हुआ। 'भारत विरोध' हमेशा ही पाकिस्तानी विदेश-नीति का प्रमुख अवयव रहा है। कश्मीर का पाकिस्तान में विलय पाकिस्तान का प्रमुख उद्देश्य है। विश्व राजनीति के मंच पर भारत को बदनाम करने के लिए पाकिस्तान कश्मीर के प्रश्न को बार-बार उछालता रहा है। पाकिस्तान विश्व को इसी नजर से देखता है कि कोई देश कहाँ तक कश्मीर के प्रश्न पर उसका साथ देता है। स्पष्ट है कि पाकिस्तान की विदेश-नीति में कश्मीर से बढ़कर कुछ भी नहीं है।

एक बार तो पाकिस्तान ने पश्चिमी देशों को साम्यवाद का डर दिखाकर यहाँ तक कह दिया कि वह खुद साम्यवादी गुट में शामिल हो जाएगा। उसने यह भी प्रचार किया कि यदि कश्मीर समस्या का उचित हल नहीं निकाला गया तो कश्मीर के साथ-साथ पूरे भारत में साम्यवाद छा जाएगा। पाकिस्तान के प्रधानमंत्री फिरोज खान नून ने मार्च 1958 में पाकिस्तानी संसद में बोलते हुए कहा "नेहरू कश्मीर समस्या को उलझाए रखकर पूरे उप-महाद्वीप को उपहारस्वरूप साम्यवाद की भेंट कर रहे हैं।"

पाकिस्तान ने भारत को डराने के लिए समय-समय पर अनेक महाशक्तियों के साथ अपने संबंध बढ़ाने के प्रयास किये। पाकिस्तान ने उस अमेरिकी सैनिक गुट का साथ दिया जो साम्यवाद के विरोध में बनाया गया था और फिर अमेरिका से बड़ी मात्रा में हथियार आदि भी खरीदे। इनमें आधुनिक लड़ाकू विमान और उतम टैंक इत्यादि शामिल थे। जब इसकी सहायता से पाकिस्तान को कश्मीर नहीं मिला तब उसने चीन के साथ मित्रता की और चीन ने उसे आर्थिक और सैनिक सहायता मुहैया कराई। पाकिस्तान ने सोवियत संघ को भी यह कहकर अपने पक्ष में करने का प्रयास किया कि यदि रूस भारत को समझा ले तो पाकिस्तान खुद सोवियत संघ के साथ दोस्ती कर लेगा।

कालांतर में जब पाकिस्तान को यह विश्वास हो गया कि भारत उसके सामने झुकने वाला नहीं है और उप-महाद्वीप में शक्ति संतुलन (Balance of Power) भारत के पक्ष में हो गया, तब पाकिस्तान ने अमेरिकी सैनिक संधियों में शामिल होकर दिखावटी शक्ति प्राप्त करने की कोशिश की। पाकिस्तान ने 1960 के दशक में यह अनुभव करना शुरू कर दिया कि केवल सैनिक संधियों से उसका हित पूरा होने वाला नहीं है। इसे ध्यान में रखते हुए उसने सोवियत संघ से अपने संबंध ठीक करने का प्रयास किया। बहरहाल, पाकिस्तान से गलती यह हुई कि उसने भारत को सोवियत संघ से अलग करने का विफल प्रयास किया। इस स्थिति में पाकिस्तान ने साम्यवादी चीन के साथ मित्रता की। उस समय तक भारत और चीन के संबंध काफी बिगड़ चुके थे। इसलिए जब पाकिस्तान ने चीन की ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाया तो चीन ने इस अवसर को अपने हाथ से जाने नहीं दिया। कश्मीर के प्रश्न पर पहले चीन भारत का विरोध नहीं करता था लेकिन अब उसने पाकिस्तान के साथ मिलकर भारत पर दबाव डालना शुरू कर दिया।

सन् 1962 में जब चीन ने भारत पर हमला किया तब पाकिस्तान ने अपने नए दोस्त चीन को पूरा समर्थन दिया। जब ब्रिटेन और अमेरिका ने भारत को सहायता की पेशकश की तब पाकिस्तान ने खुलकर इसका विरोध किया। पाकिस्तान के विरोध के बावजूद भारत को न केवल पश्चिमी देशों बल्कि सोवियत संघ से भी नैतिक और सैनिक सहायता प्राप्त हुई। इससे नाराज होकर पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खान ने अमेरिकी राष्ट्रपति कर्नेडी और ब्रिटिश प्रधानमंत्री मैकमिलन से मिलकर उनसे भारत को सहायता न देने का अनुरोध किया।

दूसरी ओर, पाकिस्तान के इस रवैये के बावजूद पं. नेहरू ने अयूब खान से भेंट की और एक संयुक्त वक्तव्य में दोनों नेताओं ने भारत-पाक विवादों को शांतिपूर्वक सुलझाने के लिए बातचीत करने का फैसला किया। एक समझौते के तहत पाकिस्तान-अधिकृत कश्मीर (Pak Occupied Kashmir - POK) का कुछ हिस्सा पाकिस्तान ने चीन को सौंप दिया। ऐसा करने का पाकिस्तान को कोई कानूनी अधिकार नहीं था फिर भी उसने चीन से दोस्ती बढ़ाने के लिए ऐसा किया।

सन् 1964 में नेशनल कॉन्फ्रेंस (National Conference) के नेता शेख अब्दुल्ला को रिहा कर दिया गया। उन्हें सन् 1953 से नजरबंद करके रखा गया था। शेख अब्दुल्ला ने कश्मीर के शेष भारत के साथ रिश्ते मजबूत रखने की बुनियाद रखी थी लेकिन जेल से बाहर आने के बाद उन्होंने भारत-विरोधी दृष्टिकोण अपनाया और कश्मीर के लोगों के लिए आत्मनिर्णय के अधिकार की माँग शुरू कर दी। पाकिस्तान ने उनका खुलकर समर्थन किया। उन्होंने पं. नेहरू से भेंट की और फिर अयूब खान से मिलने पाकिस्तान गए। उनका तर्क था कि जब तक भारत और पाकिस्तान के संबंध सामान्य नहीं हो जाते तब तक कश्मीर की समस्या का हल नहीं निकल सकता। उसके तुरंत बाद नेहरू की मृत्यु हो गई और अब्दुल्ला के प्रयासों का कोई सार्थक परिणाम नहीं निकला।

कच्छ का विवाद (Rann of Kutch Dispute): भारत के गुजरात तथा पाकिस्तान के सिंध प्रांत की सीमा पर कच्छ का रण स्थित है। यह कच्छ नामक क्षेत्र एक देसी रियासत का अंग था और जब कच्छ का भारत में विलय हुआ तो वह भारत का भाग बन गया लेकिन पाकिस्तान ने इस स्थिति को कभी स्वीकार नहीं किया। उसका कहना था कि कच्छ सिंध प्रांत का भाग है और कच्छ पाकिस्तान को ही मिलना चाहिए। लेकिन भारत ने यह दावा स्वीकार नहीं किया। अप्रैल 1965 में भारत-पाक सीमा पर दोनों देशों की सेनाओं में इसी मुद्दे पर मुठभेड़ हुई। पाकिस्तान की दो सैन्य टुकड़ियाँ कच्छ के क्षेत्र में आ गयीं और जून के अंत तक लड़ाई होती रही। ब्रिटिश प्रधानमंत्री विल्सन के प्रयासों से युद्ध विराम हुआ। यह तय हुआ कि दोनों देशों की सेनाएं 1 जनवरी, 1965 की स्थिति में वापस चली जाएं। यह भी तय हुआ कि कच्छ के रण की समस्या पञ्च-निर्णय अर्थात् मध्यस्थता (Arbitration) के लिए एक न्यायाधिकरण को सौंप दी जाए। न्यायाधिकरण ने अपने निर्णय में कच्छ का 90 प्रतिशत क्षेत्र भारत में ही रहने दिया जबकि शेष 10 प्रतिशत क्षेत्र पाकिस्तान को सौंप दिया। इस पञ्च-निर्णय की भारत में कड़ी आलोचना हुई परंतु 1965 में दिए गए वचन के अनुसार भारत ने यह निर्णय स्वीकार कर लिया। कच्छ पर हुए आक्रमण के समय पाकिस्तान ने खुलकर उन अस्त्रों का प्रयोग किया जो उसे दक्षिण-पूर्व एशिया संधि संगठन (SEATO) तथा अमेरिका से प्राप्त हुए थे। जब पाकिस्तान को युद्ध विराम के लिए मजबूर किया गया और पञ्च-निर्णय के लिए मामला आगे भेजा गया तो पाकिस्तान काफी हताश हुआ और अब उसने एक बार फिर से कश्मीर को अपना निशाना बना लिया।

(ii) भारत-पाकिस्तान युद्ध, 1965 (Indo-Pak War, 1965)

भारत और पाकिस्तान के बीच 1965 के युद्ध से पुनः यह सिद्ध हो गया कि भारत हर मामले में पाकिस्तान से आगे है। सोवियत संघ ने कच्छ के संकट के समय तटस्थ दृष्टिकोण अपनाया था परंतु इस युद्ध में आमतौर पर उसका झुकाव भारत की ओर रहा। तथापि, सोवियत प्रधानमंत्री कोसीगिन (Kosygin) उस समय पाकिस्तान को भी खुश करने का प्रयास कर रहे थे। उन्होंने पाकिस्तान से संबंध सुधारने का प्रयास किया और इसके चलते पाकिस्तानी प्रधानमंत्री अयूब खान को सोवियत संघ आने का निमंत्रण दिया। कोसीगिन का कहना था कि भारत-पाकिस्तान संघर्ष का मूल कारण हथियारों की आपूर्ति नहीं है बल्कि यह तो पश्चिमी देशों की साम्राज्यवादी नीति है जिसने उन्हें संघर्ष के लिए बाध्य किया है।

भारत के राजनीतिज्ञ पाकिस्तान-सोवियत वार्ता से स्वाभाविक रूप से परेशान हुए। दरअसल, उस समय सोवियत संघ की दिलचस्पी पाकिस्तान के साथ मैत्री करने और उसे हथियार बेचने में थी। इस पृष्ठभूमि में तत्कालीन प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने सोवियत संघ की यात्रा की। उन्होंने सोवियत नेताओं को दक्षिण एशिया की वास्तविक स्थिति से अवगत कराया और सोवियत संघ द्वारा भारत को मिलने वाली सहायता को जारी रखने का अनुरोध किया। परंतु सोवियत नेताओं ने शास्त्री को विश्वास दिलाया कि सोवियत संघ के पाकिस्तान के साथ मधुर संबंध होने से भारत के साथ उसकी मैत्री में कोई कमी नहीं आएगी। बहरहाल, शास्त्री की पॉस्को यात्रा अधिक सफल नहीं रही। उसी समय पाकिस्तान ने अशांति फैलाने और भारत के विरुद्ध लड़ाई छेड़ने की योजना बनाई।

4 अगस्त 1965 को पाकिस्तान ने कश्मीर में हजारों सैनिकों को बिना वरदी के युद्ध विराम रेखा के इस पार कश्मीर में भेजना शुरू कर दिया। घुसपैठिए (Infiltrators) गुरिल्ला युद्ध के लिए चीन में प्रशिक्षित किए गए थे और ये भारत में हिंसा फैलाने, तोड़-फोड़ करने और राज्य सरकार को उखाड़ फेंकने की नीयत से भेजे गए थे। योजना यह थी कि जब पाकिस्तान के सैनिक वरदी में आक्रमण करेंगे तो ये घुसपैठिए उनकी सहायता करेंगे। घुसपैठियों ने वहाँ हिंसा फैलाना शुरू कर दिया। शीघ्र ही भारतीय सेना ने उनके विरुद्ध कार्रवाई शुरू कर दी और बड़ी संख्या में उन्हें मार गिराने के अलावा कईयों को पकड़ लिया गया। सेना ने यह भी पता लगा लिया कि पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर में घुसपैठियों के अड्डे कहाँ-कहाँ पर थे। भारत ने उन्हें अपने कब्जे में करने का फैसला कर लिया। अगस्त 1965 के तीसरे सप्ताह तक कारगिल सेक्टर में दो अड्डों को छीन लिया गया था। कुछ दिन बाद तिथवाल सेक्टर में भी दो अड्डे भारत ने अपने कब्जे में ले लिए और फिर भारतीय सेना ने उरी-पुंछ सेक्टर में हाजीपीर पर भी अधिकार कर लिया। इससे पाकिस्तानी घुसपैठियों के भारत में प्रवेश के सारे रास्ते बंद हो गए। जब पाकिस्तानी घुसपैठियों को कश्मीर से बाहर निकालने के लिए भारत ने संयुक्त राष्ट्र महासचिव से अनुरोध किया तो पाकिस्तान के विदेश मंत्री जुल्फिकार अली भुट्टो ने साफ कह कर टाल दिया कि पाकिस्तान सरकार का इन घुसपैठियों से कोई संबंध नहीं है।

इस प्रकार जब पाकिस्तान की योजना पूरी तरह विफल हो गई तो खीजकर 1 सितंबर, 1965 को उसने औपचारिक रूप से कश्मीर पर हमला कर दिया। इस बार पाकिस्तान की सेना ने न सिर्फ युद्ध विराम रेखा का, बल्कि अंतर्राष्ट्रीय सीमा का भी उल्लंघन किया। भारत ने संयुक्त राष्ट्र को साफ कह दिया कि जब तक पाकिस्तान की सेना और घुसपैठिए बाहर नहीं निकलते, शांति बहाल नहीं हो सकती। भारत को जब यह पता लगा कि पाकिस्तान एक बहुत बड़ा हमला करने वाला है तो 5 सितंबर 1965 को भारत ने पंजाब के तीन सेक्टरों पर जवाबी कार्रवाई की। दूसरी ओर भारतीय सेना लाहौर की ओर बढ़ रही थी। इस बीच पाकिस्तानी हवाई सेना ने अमृतसर पर बमबारी करके हमला तेज कर दिया। परिणामस्वरूप भारत की वायुसेना ने भी-थल सेना की सहायता के लिए कार्रवाई शुरू कर दी। युद्ध के दौरान संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (United Nations Security Council) निरंतर इस समस्या पर विचार करती रही। कई सुझाव दिए गए, प्रस्ताव पारित किए गए और महासचिव ने पाकिस्तान और भारत की यात्रा की। यह भी तय किया गया कि एशिया, अफ्रीका के देशों से गठित एक शांति सेना को कश्मीर भेजा जाए जो जनमत-संग्रह होने तक वहीं रहेगी और यह जनमत-संग्रह तीन महीने के भीतर करवा लिया जाए। लेकिन भारत ने इन शर्तों को अस्वीकार कर दिया। भारत के प्रतिनिधि एम. सी. चागला ने सुरक्षा परिषद से अनुरोध किया कि वह पहले यह तय करे कि आक्रमक कौन है? उन्होंने यह दिलाया कि स्वयं संयुक्त राष्ट्र के पर्यवेक्षकों ने यह बताया था कि 5 अगस्त को पाकिस्तानी घुसपैठिए कश्मीर में आ गए थे। चीन ने इस दौरान पाकिस्तान को हरसंभव सहायता देने का वादा किया और भारत को यह चेतावनी दी कि वह तिब्बत-सिक्किम सीमा पर अपने सैनिक अड्डे बंद कर दे। इस चेतावनी का मतलब केवल पाकिस्तान को मजबूत बूढ़ा था। भारत ने सुरक्षा परिषद द्वारा जनमत संग्रह के अनुरोध को अस्वीकार कर दिया और कहा कि कश्मीर को संविधान सभा विलय का अंतिम अनुमोदन कर चुकी है।

20 सितंबर 1965 को सुरक्षा परिषद ने भारत और पाकिस्तान से युद्ध विराम और अपनी-अपनी सेनाओं को 5 अगस्त 1965 की यथास्थिति बहाल करने के लिए कहा। प्रस्ताव पास होने के समय भारतीय जवान पाकिस्तान सेना पर हावी हो रहे थे। इसलिए पाकिस्तान ने बिना विलम्ब किए इस युद्ध विराम को स्वीकार कर लिया। इस प्रकार भारत-पाक युद्ध समाप्त हुआ और पाकिस्तान के मनसूबों पर पानी फिर गया। इस युद्ध में भारतीय सेनाओं को बड़ी सफलता प्राप्त हुई थी। इससे उनका मनोबल ऊँचा हो गया था। भारत को 1962 में चीन के हाथों जो पराजय हुई थी, उसका बदला ले लिया गया था। युद्ध के समय पाकिस्तान ने अनेक झूठे प्रचार किए जैसे कि पाकिस्तानी सेनाएँ दिल्ली में घुस गई हैं और उन्होंने चांदनी चौक को तहस-नहस कर दिया है आदि।

भारत की सेनाएँ 20 दिन से अधिक चले इस युद्ध में अत्यंत वीरता एवं साहस से लड़ीं और उन्होंने अमेरिका से मिले पैटन टैंकों को, जिनका पाकिस्तान प्रयोग कर रहा था, बहुत हानि पहुँचाई। हमारे सैनिकों ने पाकिस्तान के लाखों हथियारों को, जो अमेरिका और चीन में निर्मित थे, भागते हुए पाकिस्तानियों से छीन लिया। भारतीय रक्षा मंत्रालय के अनुसार हमारे 2000 से भी अधिक अधिकारी और जवान मारे गए। भारत के लगभग 200 टैंकों को हानि पहुँची और दोनों देशों ने पचास-पचास विमान खो दिये। इस युद्ध के बीच में ही युद्ध विराम हो जाने के कारण किसी को भी निश्चित विजय या पराजय नहीं हुई। बहरहाल भारत अधिक शक्तिशाली अवश्य ही सिद्ध हुआ।

(iii) ताशकन्द समझौता (The Tashkent Agreement)

सोवियत संघ के ताशकन्द नगर में 4-10 जनवरी 1966 को एक सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में युद्ध समाप्त कर शांति स्थापना का निर्णय किया गया। ताशकन्द शिखर सम्मेलन (Tashkent Summit) सोवियत प्रधानमंत्री कोसीगिन की पहल पर बुलाया गया था और उसमें तत्कालीन प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री तथा पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खान ने भाग लिया। युद्ध के दौरान महाशक्तियों ने शांति के प्रयास किए थे। चीन ने तो भारत को चेतावनी तक दे डाली थी परंतु सोवियत हस्तक्षेप के भय से उसने पाकिस्तान के पक्ष में हस्तक्षेप नहीं किया था। बहरहाल युद्ध विराम के बाद भी दोनों पक्षों में तनाव बना ही रहा।

उस समय सोवियत संघ की पहल पर शांति स्थापना का कार्य किया जा सकता था क्योंकि ब्रिटेन और अमेरिका भी भारत पर लगातार दबाव डाल रहे थे। सोवियत प्रधानमंत्री ने सितंबर 1965 के आरंभ में शांति स्थापना का विफल प्रयास किया था। इसे 13 सितंबर को फिर दोहराया गया। इस बार सोवियत संघ के निमंत्रण को शास्त्री जी ने तो सिद्धांत रूप से स्वीकार कर लिया परंतु पाकिस्तान ने कहा कि इससे कोई लाभ होने वाला नहीं है। अयूब का यह अनुमान सही नहीं निकला कि अमेरिका उनके पक्ष में बोलेगा। दरअसल, चीन और पाकिस्तान की बढ़ती मित्रता को देखते हुए अमेरिका ऐसा नहीं कर सकता था। युद्ध-विराम के पश्चात् नवम्बर 1965 में अयूब खान ने सोवियत संघ का निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। इस सम्मेलन में सोवियत प्रधानमंत्री भी मौजूद रहे ताकि आवश्यकता पड़ने पर वह मध्यस्थ की भूमिका निभा सकें।

पूर्व निर्धारित उद्देश्यों एवं अपेक्षाओं के साथ शास्त्री एवं अयूब खान ने ताशकंद की यात्रा की। अयूब खान ने कहा था कि वे कश्मीर विवाद के "उचित" समाधान के लिए तैयार हैं, परंतु क्या "उचित" था उन्होंने यह स्पष्ट नहीं किया। शायद उनकी मंशा यह रही होगी कि कश्मीर का पाकिस्तान में विलय ही "उचित" होगा। भारत के प्रधानमंत्री ने यह स्पष्ट कर दिया था कि कश्मीर का भविष्य किसी बातचीत का विषय नहीं हो सकता है। कश्मीर तो भारत का अभिन्न हिस्सा है। शास्त्री ने यह आशा व्यक्त की कि भविष्य में भारत और पाकिस्तान एक-दूसरे के विरुद्ध बल प्रयोग नहीं करेंगे। उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया कि भारत "पाकिस्तान की संप्रभुता और अखंडता को पूरी तरह स्वीकार करता है।" सोवियत संघ ने पहली बार दो गैर-साम्यवादी देशों के बीच मध्यस्थता करने का प्रयास किया था। सोवियत संघ के प्रयासों का अमेरिका सहित अनेक देशों ने स्वागत और समर्थन किया। वास्तव में शायद चीन को छोड़कर पूरा विश्व इस बैठक की सफलता की कामना कर रहा था। बैठक में छह दिन तक दोनों देशों ने कठोर रुख अपनाया। अंत में 10 जनवरी 1966 को प्रसिद्ध ताशकंद घोषणा (Tashkent Declaration) पर इस आशा और विश्वास के साथ हस्ताक्षर किए गए कि दोनों देशों का भविष्य उज्ज्वल और शांतिमय होगा। ताशकंद घोषणा पर हस्ताक्षर करने के कुछ ही घंटे बाद दिल का गंभीर दौरा पड़ने से शास्त्री जी का देहांत हो गया।

ताशकंद घोषणापत्र में नौ-सूत्र थे और इनमें यह आशा व्यक्त की गई थी कि भारत और पाकिस्तान के मध्य संबंध सामान्य एवं मैत्रीपूर्ण होंगे और दोनों देशों की जनता के बीच भी मित्रता और सौहार्द को बढ़ावा मिलेगा। इसके नौ सूत्र निम्नलिखित थे-

1. भारत और पाकिस्तान दोनों के सभी सैनिक अधिकारी और जवान 25 फरवरी 1966 तक उस स्थिति में वापस चले जाएंगे जहाँ वे 5 अगस्त 1965 को थे।
2. भारत और पाकिस्तान के संबंध आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने की नीति पर आधारित होंगे।
3. भारत और पाकिस्तान अच्छे पड़ोसियों के समान संबंध स्थापित करने का प्रयास करेंगे। दोनों देश संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अनुसार कभी भी बल प्रयोग न करें और अपने विवाद शांतिपूर्ण उपायों से सुलझाने के लिए प्रयत्न करने पर सहमत हों।
4. दोनों देशों के बीच आर्थिक एवं व्यापारिक संबंधों को बढ़ावा देने के लिए, दूरसंचार व्यवस्था तथा सांस्कृतिक आदान-प्रदान किए जाएंगे।
5. दोनों देश एक-दूसरे के विरुद्ध किए जाने वाले उद्घाटन को रोकने का प्रयास करेंगे और पारस्परिक मैत्री के हित में प्रचार को बढ़ावा देंगे।
6. युद्धबंदियों की अदला-बदली (Repatriation) का कार्य दोनों देशों के संबंध अधिकारी शीघ्र पूरा करेंगे।
7. भारत और पाकिस्तान के बीच सामान्य राजनयिक संबंध बहाल किए जाएंगे और दोनों देशों के उच्चायुक्त (High Commissioners) अपने-अपने पदों पर पुनः कार्य करना आरंभ करेंगे।
8. शरणार्थियों और गैर-कानूनी तौर पर दूसरे देश में चले गए नागरिकों की समस्या पर दोनों पक्ष विचार-विमर्श जारी रखेंगे। लोगों के पलायन पर रोक लगायी जाएगी तथा संघर्ष के दौरान लूटी या छीनी गई सम्पत्ति वापस की जाएगी।
9. अन्य मामलों के समाधान हेतु भारत-पाकिस्तान संयुक्त कार्यदल का गठन किया जाएगा।

इस अपेक्षा से कि ताशकंद समझौता भारत-पाक संबंधों को सामान्य बनाने में सहायक होगा, भारतीय जनता ने इसका स्वागत किया। समझौते पर हस्ताक्षर करने के तुरंत बाद प्रधानमंत्री शास्त्री ने कहा था कि यह "अंतर्राष्ट्रीय राजनय में एक अनूठा प्रयोग" है। कार्यकारी प्रधानमंत्री गुलजारी लाल नन्दा ने ताशकंद समझौते को लागू करने के प्रति अपनी प्रतिबद्धता जतायी। परंतु पाकिस्तान में इसकी तीखी आलोचना हुई। वहाँ के विदेश मंत्री ने कश्मीर समस्या का निदान किए बिना इस समझौते को बेमानी कहा। कुछ पाकिस्तानियों ने इसे भारत के समक्ष आत्मसमर्पण तक की संज्ञा दे डाली। अयूब खान ने पाकिस्तानी जनता को भरोसा दिलाते हुए कहा कि संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के अनुसार चलने का मतलब यह नहीं है कि युद्ध किया ही नहीं जा सकता, बल प्रयोग न करने का अर्थ केवल इतना है कि यदि शांति का मार्ग खुला हो तो बल प्रयोग न किया जाए। भारत-पाकिस्तान के बीच एक सप्ताह के अंदर राजनयिक संबंध बहाल किए गए। इस समझौते को लेकर महाशक्तियों ने अलग-अलग प्रतिक्रियाएँ व्यक्त कीं। सोवियत संघ के लिए यह सुनहरा अवसर था क्योंकि उसी ने यह समझौता करवाया था, चीन को निराशा हुई कि भारत-पाक समझौता हुआ ही

क्यों, और ब्रिटेन की प्रतिष्ठा को काफी धक्का लगा। चीन के निराश होने की वजह यह थी कि इस समझौते का सारा श्रेय उसका प्रतिद्वंद्वी सोवियत संघ ले गया था।

ताशकंद घोषणा (Tashkent Declaration) वास्तव में एक ऐतिहासिक समझौता था। इस समझौते के बाद पहली बार यह आशा की गई थी कि भारत और पाकिस्तान अब संघर्ष का मार्ग छोड़कर शांति कायम करने का प्रयास कर सकेंगे परंतु शीघ्र ही यह आशा निराशा में बदल गई। पाकिस्तान अपनी सैन्य शक्ति बढ़ाता गया और भारत-विरोधी प्रचार तेज करता गया। भुट्टो ने तो यहाँ तक कह डाला कि, हिंदू संस्कृति इस्लामी संस्कृति का विनाश करने के लिए कृतसंकल्प है। यह भी कहा कि सभी साम्राज्यवादी शक्तियाँ भारत का समर्थन कर रही हैं। भारत ने तशकंद समझौते के प्रति अपनी पूर्ण प्रतिबद्धता दिखाई। समझौते के अनुरूप सैनिकों की अदला-बदली और वापसी हो गई परंतु मित्रता, सहयोग और सद्भावना के प्रयास सफल नहीं हुए। भारत तो बल प्रयोग को छोड़ना चाहता था परंतु पाकिस्तान का एकमात्र उद्देश्य कश्मीर को हथियाना था। इस बीच पाकिस्तान ने सोवियत संघ के साथ अपने संबंध सुधारने के लिए कई कदम उठाए। वास्तव में पाकिस्तान का इरादा भारत और सोवियत संघ के बीच दरार पैदा करने का था। इसके विपरीत सोवियत संघ, पाकिस्तान की अमेरिका और चीन पर निर्भरता कम करवाना चाहता था। कालांतर में पाकिस्तान ने समझौते में किए गए वादे तोड़ दिए। पाकिस्तान ने 1966-1969 की अवधि में सोवियत संघ को यह विश्वास दिलाना चाहा कि यदि कश्मीर के प्रश्न पर सोवियत संघ पाकिस्तान का समर्थन करे तो वह अमेरिका पर अपनी निर्भरता कम कर देगा।

पाकिस्तान के अनुसार भारतीय उपमहाद्वीप में शांति के लिए यह आवश्यक था कि पाकिस्तान, भारत से ज्यादा शक्तिशाली हो, साथ ही कश्मीर मामला भी सुलझ जाए। बहरहाल भारत और पाकिस्तान के बीच बढ़ते तनाव के कई दूसरे कारण भी थे। प्रथम, पाकिस्तान और चीन का वह समझौता जिसके तहत गिलगित और बल्तिस्तान को जोड़ने वाली सड़क खोल दी गई। पाकिस्तान-चीन की यह कार्रवाई भारत के दृष्टिकोण से एक गैर-कानूनी कार्रवाई थी। दूसरे, पाकिस्तान इस बात के लिए अमेरिका, सोवियत संघ और चीन के द्वारा भारत पर दबाव डाल रहा था कि वह कश्मीर के प्रश्न पर उसकी माँग मान ले। तीसरे, भारत और पाकिस्तान के बीच गंगा के पानी के बंटवारे के बारे में तनाव बढ़ता जा रहा था। दरअसल पाकिस्तान को भय था कि यदि भारत ने फरक्का बाँध बनाया तो इससे पूर्वी बंगाल सूखे की चपेट में आ जाएगा।

कुछ समय बाद एक बार फिर भारत ने युद्ध न करने संबंधी समझौता करने का प्रस्ताव किया। जिसे पाकिस्तान ने ठुकरा दिया। अयूब खान ने भारत के प्रस्ताव को पाकिस्तान को थोखा देने वाला बताया। इस बीच भारत को ऐसे अनेक प्रमाण मिले जिनसे यह जाहिर होता था कि पाकिस्तान मित्र और नागा विद्रोहियों का सहायता दे रहा था। दूसरी ओर अमेरिका भी पाकिस्तान को और अधिक मदद देने लगा था।

(iv) बांग्लादेश संकट और भारत-पाक युद्ध, 1971 (Bangladesh Crisis and Indo-Pak War, 1971)

सन् 1971 में पूर्वी पाकिस्तान में विद्रोह के बाद बांग्लादेश को एक नये देश का रूप में प्रदान किया गया। भारत-पाकिस्तान संबंधों का एक ऐतिहासिक मोड़ कहा जा सकता है। हालाँकि यह घटना पाकिस्तान के आंतरिक राजनीतिक उतार-चढ़ाव की नतीजा थी परंतु इसने भारत की विदेश नीति को बहुत प्रभावित किया। भारत के विभाजन के समय (1947) बंगाल प्रांत को धर्म के आधार पर दो भागों में बाँट दिया गया था जिनमें मुस्लिम बहुल पूर्वी बंगाल पाकिस्तान को अंग बन गया। अब पश्चिमी और पूर्वी पाकिस्तान के बीच लगभग 1200 मील का फासला था। धर्म के आधार पर बने पाकिस्तान में उस देश की अधिकांश जनसंख्या पूर्वी पाकिस्तान में निवास करती थी फिर भी देश की राजनीति की लगभग पश्चिमी पाकिस्तान विशेषकर पंजाब के नेताओं के हाथों में थी। पाकिस्तान के दोनों भागों में धर्म के अलावा कोई और समानता नहीं थी। दोनों की भाषाएँ, संस्कृति और परम्पराएँ भी भिन्न-भिन्न थीं। बजाय इसके कि दोनों भागों का भावनात्मक रूप से मेल करवायें, पाकिस्तान के शासकों विशेषकर सैनिक शासकों अयूब खान और याह्या खान ने पूर्वी पाकिस्तान का दमन करना शुरू कर दिया।

पूर्वी पाकिस्तान पर भाषा के तौर पर उर्दू को थोपा गया जो वहाँ के लोगों को कतई स्वीकार नहीं था। दिसम्बर 1970 में कराए गए पाकिस्तान की संसद (National Assembly) के चुनावों में पूर्वी पाकिस्तान की पार्टी अवामी लीग (Awami League) को बहुमत मिला फिर भी उसके नेता शेख मुजीबुर्रहमान को राष्ट्रपति याह्या खान ने प्रधानमंत्री नहीं बनाया। इससे वहाँ संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गई। पाकिस्तान पीपुल्स पार्टी के नेता जुल्फिकार अली भुट्टो से मिलकर याह्या खान ने पूर्वी पाकिस्तान में दमन चक्र शुरू कर दिया। लोकतांत्रिक तरीके से चुने हुए मुजीबुर्रहमान को सत्ता से वंचित रखे जाने के कारण पूर्वी पाकिस्तान में गृह-युद्ध (Civil War) छिड़ गया।

सत्ता देने की बात तो दूर उल्टे शेख मुजीबुर्रहमान को जेल में डाल दिए जाने से पूर्वी पाकिस्तान में हिंसा भड़क उठी। पाकिस्तान की सुरक्षा सेनाओं ने अवसर पाकर वहाँ आतंक फैलाना शुरू कर दिया। इसमें भारी जान-माल की हानि हुई। इस बीच लगभग एक करोड़ शरणार्थी भारत आ गए। अप्रैल 1971 में पूर्वी बंगाल के लोगों ने अपने प्रांत को एक स्वतंत्र देश घोषित कर दिया। इस स्थिति

में भारत की भूमिका महत्वपूर्ण हो गई क्योंकि यह भारत की ही सीमा थी जहाँ हिंसा का तांडव हो रहा था और बड़ी संख्या में शरणार्थी देश में प्रवेश कर रहे थे।

भारत ढाका से अपने अधिकारियों को वापस बुलाना चाहता था, परंतु इस बीच पाकिस्तान ने अनेक कठिनाइयाँ पैदा कर दीं। दूसरी ओर, इस तनाव के वातावरण में पूर्वी बंगाल के युवकों ने मुक्तिबाहिनी (Mukti Bahini) नाम से अपना एक सशस्त्र संगठन तैयार कर लिया। इन सारी परिस्थितियों के लिए पाकिस्तान ने भारत को ही दोषी ठहराया। उसने आरोप लगाया कि भारत अपने सैनिकों को मुक्तिबाहिनी के रूप में संघर्ष के लिए भेज रहा है।

सभी प्रमुख देशों से सम्पर्क स्थापित कर भारत की प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने पूर्वी बंगाल में नरसंहार बंद करने के लिए दबाव डलवाने का प्रयास किया ताकि शरणार्थी वापस लौट सकें। श्रीमती गाँधी के प्रयास विफल रहे। अमेरिका के राष्ट्रपति निक्सन ने यह साफ कह दिया कि यदि भारत और पाकिस्तान के बीच युद्ध होता है जिसमें चाहे चीन भी पाकिस्तान का साथ क्यों न दे, अमेरिका भारत को मदद नहीं देगा। साथ ही निक्सन ने यह चेतावनी भी दी कि अमेरिका सम्भावित युद्ध में पाकिस्तान के पक्ष में हस्तक्षेप कर सकता है। याह्या ख़ाँ ने भारत को धमकी देते हुए कहा कि यदि उसने बांग्ला विद्रोहियों को भड़काना बंद नहीं किया तो भारत-पाकिस्तान युद्ध शुरू हो सकता है और इस युद्ध में पाकिस्तान अकेला नहीं होगा। ऐसी स्थिति में भारत के लिए किसी शक्तिशाली देश के साथ मैत्री करना जरूरी हो गया। औपचारिक रूप से सन् 1971 को भारत-सोवियत शांति, मैत्री और सहयोग संधि इसी पृष्ठभूमि में की गई थी।

भारत और पाकिस्तान के बीच 4 दिसंबर 1971 को एक बार फिर युद्ध शुरू हुआ। इससे पूर्व भारत-पाकिस्तान की पूर्वी सीमा पर 11 नवम्बर को स्थिति उस समय विस्फोटक हो गई जब पाकिस्तानी टैंक मुक्तिबाहिनी से लड़ते हुए भारतीय प्रदेश में घुस आए। इसके जवाब में भारतीय जवानों ने पाकिस्तान के 13 टैंक नष्ट कर दिए। अगले दिन कलकत्ता (कोलकाता) के पूर्व में चार पाकिस्तानी लड़ाकू विमानों ने भारत की वायु सीमा का उल्लंघन किया। भारत के विमानों ने तीन पाकिस्तानी विमानों को मार गिराया और तीन अधिकारियों को पकड़ लिया। अब यह साफ हो गया था कि भारत-पाकिस्तान युद्ध किसी भी समय शुरू हो सकता था। राष्ट्रपति याह्या ख़ाँ ने 25 नवंबर को भारत को 10 दिन के अंदर देख लेने की धमकी दी। 3 दिसम्बर 1971 को शाम के समय पाकिस्तानी सेना ने हमारी पश्चिमी सीमा पर हमला कर दिया। कश्मीर में युद्ध-विराम रेखा की इस ओर पाकिस्तान ने भारत की कई चौकियों पर आक्रमण किया। उत्तर भारत में श्रीनगर से आगरा तक पाकिस्तानी वायु सेना ने अनेक हवाई अड्डों पर भारी बमबारी की परंतु उसे विशेष सफलता नहीं मिली क्योंकि भारतीय लड़ाकू विमानों को वहाँ से पहले ही हटा लिया गया था।

भारत-सोवियत शांति, मैत्री और सहयोग संधि, 1971

सन् 1971 में भारत और सोवियत संघ द्वारा हस्ताक्षरित इस संधि के मुख्य बिंदु निम्नलिखित थे-

1. भारत और सोवियत संघ के बीच स्थायी शांति और मैत्री स्थापित होगी; दोनों देश एक दूसरे की स्वतंत्रता, संप्रभुता और प्रादेशिक अखंडता की रक्षा करेंगे। वे एक दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे। उनके मैत्री संबंध दो अच्छे पड़ोसियों की तरह होंगे।
2. दोनों देश एशिया सहित पूरे विश्व में शांति स्थापना के प्रयास करते रहेंगे और सम्पूर्ण निरस्त्रीकरण के लिए काम करेंगे।
3. दोनों देशों ने सभी लोगों की समानता के उच्च आदर्श के प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त की और उपनिवेशवाद और जातिवाद को बड़ी निंदा की।
4. भारत ने सोवियत संघ की शांति की नीति को सराहा तथा सोवियत संघ ने भारत की गुट-निरपेक्षता की तारीफ की और संसार में शांति सुनिश्चित करने का वचन दिया।
5. शांति एवं सुरक्षा के प्रति अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त करते हुए दोनों देशों ने प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं पर एक-दूसरे से सम्पर्क स्थापित करने का वादा किया।
6. दोनों देशों ने यह प्रतिज्ञा की कि वे अर्थव्यवस्था, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आपसी सहयोग बनाए रखेंगे और आपस में व्यापार, यातायात और संचार को बढ़ावा देंगे।
7. वे दोनों कला, विज्ञान, साहित्य, शिक्षा, जन-स्वास्थ्य, प्रचार माध्यमों, पर्यटन और खेलकूद के क्षेत्र में अपने सहयोग को आगे बढ़ाएंगे।
8. दोनों देशों ने यह प्रतिबद्धता व्यक्त की कि वे ऐसी सैनिक संधियों में शामिल नहीं होंगे, जो दूसरे देश के हित के विरुद्ध होंगी और दोनों देश एक दूसरे पर हमला नहीं करेंगे।
9. दोनों में से कोई भी किसी ऐसे तीसरे देश को मदद नहीं देगा, जिसका कि दूसरे देश के साथ सैनिक संघर्ष चला रहा होगा; यदि दोनों में से किसी एक देश पर आक्रमण होता है, या आक्रमण का डर होता है, तो वे आपस में सलाह-मशवरा करेंगे।
10. दोनों देश किसी ऐसी संधि पर हस्ताक्षर नहीं करेंगे जो कि दूसरे मित्र के हितों के विरुद्ध हो।

भारत और पाकिस्तान के बीच 4 दिसंबर 1971 को एक बार फिर युद्ध शुरू हुआ। इससे पूर्व भारत-पाकिस्तान की पूर्वी सीमा पर 11 नवम्बर को स्थिति उस समय विस्फोटक हो गई जब पाकिस्तानी टैंक मुक्तिबाहिनी से लड़ते हुए भारतीय प्रदेश में घुस आए। इसके जवाब में भारतीय जवानों ने पाकिस्तान के 13 टैंक नष्ट कर दिए। अगले दिन कलकत्ता (कोलकाता) के पूर्व में चार पाकिस्तानी लड़ाकू विमानों ने भारत की वायु सीमा का उल्लंघन किया। भारत के विमानों ने तीन पाकिस्तानी विमानों को मार गिराया और तीन अधिकारियों को पकड़ लिया। अब यह साफ हो गया था कि भारत-पाकिस्तान युद्ध किसी भी समय शुरू हो सकता था। राष्ट्रपति याह्या ख़ाँ ने 25 नवंबर को भारत को 10 दिन के अंदर देख लेने की धमकी दी। 3 दिसम्बर 1971 को शाम के समय पाकिस्तानी सेना ने हमारी पश्चिमी सीमा पर हमला कर दिया। कश्मीर में युद्ध-विराम रेखा की इस ओर पाकिस्तान ने भारत की कई चौकियों पर आक्रमण किया। उत्तर भारत में श्रीनगर से आगरा तक पाकिस्तानी वायु सेना ने अनेक हवाई अड्डों पर भारी बमबारी की परंतु उसे विशेष सफलता नहीं मिली क्योंकि भारतीय लड़ाकू विमानों को वहाँ से पहले ही हटा लिया गया था।

देश में राष्ट्रपति ने आपातकाल की घोषणा कर दी और इंदिरा गांधी सरकार ने यह निर्णय किया कि पाकिस्तान की युद्ध-सामग्री को नष्ट कर दिया जाए। शीघ्र ही भारतीय सेना को यह आदेश मिला कि वह पूर्वी पाकिस्तान में घुसकर दुश्मन को पराजित करे। भारतीय विमानों ने पाकिस्तानी वायु सेना के अनेक ठिकानों को भारी क्षति पहुँचाई। याह्या खान ने इस लड़ाई को निर्णायक बताया और कहा कि भारत को शीघ्र ही सबक सिखा देंगे। यह युद्ध सचमुच निर्णायक रहा पर इसमें सबक पाकिस्तान को सिखाया गया। युद्ध केवल 16 दिसम्बर तक चला। अमेरिकी राष्ट्रपति निक्सन ने परमाणु युद्ध की धमकी दे डाली परंतु अगस्त 1971 की भारत-सोवियत संधि को ध्यान में रखते हुए अमेरिका और चीन किसी ने भी कोई हस्तक्षेप नहीं किया। पाकिस्तान चीन एवं अमेरिका से केवल नैतिक समर्थन पा सका, अलबत्ता उसने उनसे प्राप्त हथियारों का प्रयोग अवश्य किया। पाकिस्तान को पूर्वी एवं पश्चिमी दोनों मोर्चों पर हार का सामना करना पड़ा।

पाकिस्तानी सेना 15 दिसम्बर तक अपना मनोबल खो चुकी थी परंतु जनरल नियाजी समर्पण के लिए तैयार नहीं थे। उनके जवानों को भारतीय सेना ने घेर लिया था। उनके पास भागने का कोई मार्ग नहीं रह गया था। नियाजी ने पश्चिमी पाकिस्तान चले जाने की अनुमति माँगी परंतु भारतीय सेना अध्यक्ष जनरल मानेकशां ने इसकी आज्ञा नहीं दी। 15 दिसम्बर को देर रात जनरल नियाजी ने युद्ध विराम के लिए संदेश भेजा परंतु भारतीय अधिकारियों ने उनसे बिना शर्त समर्पण की माँग की। अंत में 16 दिसम्बर, 1971 को नियाजी ने लेफ्टिनेंट जनरल जगजीत सिंह अरोड़ा के सम्मुख बिना शर्त समर्पण कर दिया। इस दौरान लगभग 90,000 पाकिस्तानी सैनिकों ने समर्पण किया था और उन्हें युद्ध बंदी के रूप में भारत लाया गया। पूर्वी क्षेत्र में पाकिस्तानी आत्मसमर्पण के बाद भारत ने पश्चिमी क्षेत्र में अपनी ओर से एकतरफा युद्ध विराम की घोषणा उसी दिन कर दी। उस समय तक बांग्लादेश की स्थिति स्पष्ट हो चुकी थी। फिर भी याह्या खान भारत को पाकिस्तान की भूमि से पूरी तरह बाहर फेंक देने की बात कर रहे थे। वैश्विक समुदाय ने भारत को विजयी देश माना। उसने भारत से युद्ध विराम की अपील की।

भारत-पाकिस्तान युद्ध के फलस्वरूप स्वतंत्र, संप्रभु बांग्लादेश का जन्म हुआ जिसने भारत ने दिसम्बर 1971 में मान्यता प्रदान की। पाकिस्तान में याह्या खान ने त्यागपत्र देकर जुल्फिकार अली भुट्टो को सत्ता सौंप दी। सत्ता में आने पर भुट्टो ने शेख मुजीबुर्रहमान को रिहा कर दिया। ढाका जाते हुए मुजीबुर्रहमान दिल्ली रुके और उन्होंने बांग्लादेश की स्वतंत्रता के लिए भारत का आभार व्यक्त किया।

(v) शिमला समझौता-1972 (Shimla Agreement-1972)

20 दिसम्बर 1971 को जब पाकिस्तान के राष्ट्रपति जुल्फिकार अली भुट्टो ने सत्ता संभाली तब उन्हें पता हुआ पाकिस्तान विराम के रूप में मिला। सत्ता संभालते ही भुट्टो ने यह वादा किया कि वह शीघ्र ही बांग्लादेश को फिर से पाकिस्तान में शामिल कर लेंगे। पाकिस्तानी सेना के अनेक अधिकारियों को देश की शर्मनाक पराजय के लिए उत्तरदायी मानकर बर्खास्त कर दिया गया। अनेक उद्योगपतियों के परंपत्र रह कर दिए गए और मुजीबुर्रहमान को 8 जनवरी 1972 को रिहा कर दिया गया।

कई महीने तक चलने वाली राजनयिक-स्तर की बातचीत के बाद जून 1972 के अंत में शिमला में भारत-पाकिस्तान शिखर बैठक हुई। इंदिरा गांधी और जुल्फिकार अली भुट्टो ने अपने उच्चस्तरीय मंत्रियों और अधिकारियों के साथ उन सभी विषयों पर चर्चा की जो 1971 के युद्ध के दौरान उत्पन्न हुए थे। साथ ही उन्होंने दोनों देशों के अन्य प्रश्नों पर भी बातचीत की। इनमें कुछ प्रमुख विषय थे:

- युद्धबंदियों की अदला-बदली
- पाकिस्तान द्वारा बांग्लादेश की मान्यता का प्रश्न
- भारत और पाकिस्तान के राजनयिक संबंधों को सामान्य बनाना
- व्यापार शुरू करना और कश्मीर में नियंत्रण रेखा निर्धारित करना।

लम्बी बातचीत के बाद भुट्टो इस बात के लिए तैयार हुए कि भारत-पाकिस्तान संबंधों को केवल द्विपक्षीय वार्तालाप से तय किया जाएगा। 2 जुलाई, 1972 को शिमला सम्मेलन के अंत में एक समझौते पर इंदिरा गांधी और भुट्टो ने हस्ताक्षर किए। इसमें यह प्रावधान किया गया कि दोनों देश अपने संघर्ष और विवाद समाप्त करने का प्रयास करेंगे और यह आश्वासन दिया गया कि उप महाद्वीप में स्थाई मित्रता के लिए कार्य किया जाएगा। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए इंदिरा गांधी और भुट्टो ने शिमला समझौते के अंतर्गत यह तय किया कि:

1. दोनों ही सरकारें एक-दूसरे देश के विरुद्ध दुश्चरार को रोकेंगी और ऐसे समाचारों को प्रोत्साहन देंगी जिससे मित्रता को बढ़ावा मिले।
2. दोनों देशों के संबंधों को सामान्य बनाने के लिए: (i) संचार संबंध स्थापित किए जाएंगे; (ii) आवागमन की सुविधाएँ दी जाएँगी ताकि दोनों देशों के लोग आसानी से आवागमन कर सकें और घनिष्ठ संबंध विकसित कर सकें; (iii) जहाँ तक संभव होगा व्यापार और आर्थिक सहयोग शीघ्र ही फिर से आरम्भ किए जाएँगे; (iv) विज्ञान और संस्कृति के क्षेत्र में आपसी सहयोग को प्रोत्साहन दिया जाएगा।

3. दोनों देश सभी विवादों और समस्याओं के शांतिपूर्ण समाधान के लिए सीधी बातचीत करेंगे और स्थिति में एकतरफा कार्रवाई करके कोई परिवर्तन नहीं करेंगे। वे एक-दूसरे के विरुद्ध न तो बल प्रयोग करेंगे न क्षेत्रीय अखंडता की अवहेलना करेंगे। साथ ही साथ वे एक-दूसरे की राजनीतिक स्वतंत्रता में भी कोई हस्तक्षेप नहीं करेंगे।
4. तय किया गया कि भविष्य में दोनों सरकारों के अध्यक्ष मिलते रहेंगे और इस बीच संबंध सामान्य बनाने के लिए दोनों देशों के अधिकारी बातचीत करते रहेंगे।
5. स्थायी शांति के हित में दोनों सरकारें निम्न बिंदुओं पर सहमत हुईं (i) 17 दिसम्बर, 1971 की युद्ध विराम रेखा को नियंत्रण रेखा (Line of Control) के रूप में मान्यता दी गई (ii) इस समझौते के बीस दिन के अंदर सेनाएँ अपनी-अपनी सीमा से पीछे चली जाएँगी।

शिमला समझौते का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि दोनों ने आपसी विवादों को बातचीत से हल करने का निर्णय लिया। इसका यह अर्थ हुआ कि कश्मीर विवाद का अंतर्राष्ट्रीयकरण न करके सामान्य विवादों की तरह आपसी बातचीत से सुलझाया जाएगा। ऐसा भी सुनने में आया था कि दोनों नेताओं ने कश्मीर के बारे में यह योजना बनाई थी कि थोड़े-बहुत परिवर्तनों के साथ वास्तविक नियंत्रण रेखा को स्थायी सीमारेखा का रूप दिया जाए। ऐसा अनुमान लगाया गया कि यदि कश्मीर में युद्ध विराम रेखा को स्थायी अंतर्राष्ट्रीय सीमा मानने का प्रस्ताव सचमुच होता तो भी भुट्टो उस समय कोई वादा करने की स्थिति में नहीं थे।

भारत द्वारा पाकिस्तान के 90,000 युद्धबंदियों को स्वदेश वापस भेजने के प्रश्न को पाकिस्तान द्वारा बांग्लादेश की मान्यता से जोड़ दिया गया। व्यावहारिक रूप से युद्धबंदियों को 1973 में ही वापस किया जा सका। इनके बारे में कोई भी निर्णय, बांग्लादेश की सहमति के बिना नहीं लिया जा सकता था। युद्धबंदियों के अतिरिक्त लगभग 30,000 बांग्लादेशी नागरिकों को बलपूर्वक पाकिस्तान ने रोका हुआ था और 2 लाख 60 हजार पाकिस्तानी नागरिक बांग्लादेश में जमे हुए थे। इस्लामिक देशों के अनुरोध पर पाकिस्तान ने 1974 में बांग्लादेश को मान्यता प्रदान की। पाकिस्तान द्वारा बांग्लादेश की मान्यता के बाद अगस्त 1974 में भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश के बीच यह निर्णय हुआ कि पाकिस्तान युद्ध अपराधों की निंदा करेगा और बदले में बांग्लादेश 195 युद्धबंदियों को भी वापस कर देगा।

(vi) शिमला समझौते के बाद भारत-पाकिस्तान संबंध (Indo-Pak Relations after Shimla Agreement)

शिमला समझौते का निहितार्थ है कि भारत और पाकिस्तान के सभी विवादों की आपसी बातचीत के द्वारा हल किया जाएगा। जब से यह समझौता हुआ इस बात को बार-बार दोहराया गया है परंतु पाकिस्तान ने इस समझौते के बावजूद कश्मीर समस्या को अंतर्राष्ट्रीय मंच पर उठाने का प्रयास किया। पाकिस्तान को अपने इस कार्य में सफलता नहीं मिली और 1997 में प्रधानमंत्री नवाज शरीफ ने बातचीत का मार्ग अपनाया। शिमला समझौते से कुछ हद तक पाकिस्तान अवश्य लाभान्वित हुआ। उदाहरण के लिए भुट्टो को पश्चिमी पाकिस्तान का वह प्रदेश वापस मिल गया जो लडाख में वह हार गए थे। उन्हें अपने युद्धबंदी वापस मिल गए और पूर्वी पाकिस्तान के अलावा कोई अन्य प्रादेशिक हानि नहीं हुई।

जुलफिकार अली भुट्टो को 1977 में एक सैनिक विद्रोह में सत्ता से हटाकर जनरल जिया उल हक पाकिस्तान के शासक बन बैठे। सत्ता में आने पर जिया उल हक ने कहा था कि वह 90 दिन के अंदर पाकिस्तान में नए चुनाव करवाएँगे परंतु लगभग एक दशक तक कोई चुनाव नहीं हुए। जिया शासन ने भुट्टो पर पड़यंत्र रचने का आरोप लगाया, उन पर मुकदमा चलाया गया अंत में उन्हें फाँसी की सजा दी गई। मोरारजी देसाई सरकार ने अपने अल्पकाल में पाकिस्तान के साथ संबंध सुधारने के कई उपाय किए। पाकिस्तान की तरफ से भी सकारात्मक संकेत मिले। विदेश मंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने 1978 में पाकिस्तान की एक सफल यात्रा की और संबंध सुधारने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए।

1980-89 की अवधि में इंदिरा गाँधी और राजीव गाँधी सरकार ने संबंध सुधारने के लिए कई कदम उठाये परंतु जिया शासन ने विश्वास उत्पन्न करने वाले कोई कदम नहीं उठाए। उनके विपरीत भारत को तोड़ने के लिए आतंकवादियों और पृथक्तावादियों को प्रोत्साहित किया। आतंकवाद ने पंजाब और कश्मीर में हजारों जानें ले लीं और 1984 में स्वयं इंदिरा गाँधी आतंकवाद का शिकार हुईं। राजीव गाँधी और तत्कालीन पाकिस्तानी प्रधानमंत्री बेनजीर भुट्टो ने बातचीत आरंभ की परंतु कोई हल नहीं निकला।

देश की सुरक्षा को तब गंभीर खतरा पैदा हो गया जब जम्मू-कश्मीर में सन् 1989 से आतंकवादी गतिविधियों में तेजी देखी गई। अनेक वर्षों तक सीमा के उस पार से आतंकवाद को बढ़ावा मिलता रहा। लगभग छः साल तक कश्मीर में राष्ट्रपति शासन रहा क्योंकि चुनाव कराना असंभव हो गया था। जब 1996 में कश्मीर की जनता ने लोकसभा और विधान सभा चुनाव शांतिपूर्वक सम्पन्न किए और डा. फारूक अब्दुल्ला की लोकतांत्रिक सरकार सत्ता में आई तब पाकिस्तान की सरकार को एक धक्का लगा, क्योंकि राज्य में शांति कायम होने लगी। श्री नरसिंह राव के प्रधानमंत्रित्व काल में (1991-96) भारत और पाकिस्तान के बीच कई बार विदेश सचिव स्तर पर बातचीत हुई परंतु कोई सफलता इसलिए नहीं मिली क्योंकि पृथक्तावादियों को बराबर पाकिस्तानी समर्थन

मिलता रहा और पाकिस्तान लगातार कहता रहा कि कश्मीर में भारत के सुरक्षा बल मानव अधिकारों की अवहेलना कर रहे हैं। जब 1993 में बेनजीर भुट्टो फिर से प्रधानमंत्री बनीं तो एक नई आशा जगी। नई दिल्ली ने कई महत्वपूर्ण सुझाव दिए परंतु पाकिस्तान संयुक्त राष्ट्र के 1948 के जनमत संग्रह के प्रस्ताव की ही रट लगाए रहा। जब 1993 में हजरत बल में संकट उत्पन्न हुआ और भारतीय सेनाओं ने जब बिना कोई गोली चलाए समस्या का समाधान कर लिया तो पाकिस्तान को बहुत निराशा हुई। पाकिस्तान के लिए केवल एक ही मुद्दा था और वह था कश्मीर को पाकिस्तान में मिलाना।

(vii) 90 के दशक बाद भारत-पाक संबंधों की समीक्षा (Review of Indo-Pak Relations After 1990's)

शीतयुद्ध के बाद अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में आये बदलाव एवं द्विपक्षीय प्रयासों के बावजूद भारत-पाक संबंध सामान्य नहीं हो पाये। जून 1992 में दोनों देशों ने परस्पर गुप्तचरी का आरोप लगाते हुए एक-दूसरे के कूटनीतियों को निष्कासित कर दिया। 1990 के दशक में पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ के उस प्रस्ताव को चंद्रशेखर एवं नरसिंह राव की सरकारों ने गंभीरता से नहीं लिया जिसमें दक्षिण एशिया को परमाणु मुक्त क्षेत्र बनाने की बात की गई थी। हालाँकि नवम्बर 1992 में सियाचिन हिमनद (Siachen Glacier) को लेकर बातें फिर से आरंभ हो गईं। परंतु द्विपक्षीय संबंधों में कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं दिखे क्योंकि जम्मू कश्मीर में बढ़ते असंतोष और दोनों राष्ट्रों की घरेलू राजनीति से विवादित मुद्दे सुलझ नहीं पाये।

सभी मुद्दों पर मतभेद के कारण विदेश सचिव स्तर की सभी बातें विफल रही परंतु दोनों देशों के प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी और नवाज शरीफ ने 1999 के लाहौर शिखर सम्मेलन द्वारा दोनों देशों के बीच संबंधों में सुधार की कोशिश की। अनेक लोगों ने लाहौर उद्घोषणा को भारत-पाक संबंधों के बीच नए युग का आरंभ समझा। भारत ने पाकिस्तान की ओर से कारगिल जैसी बड़े पैमाने की घुसपैठ की कार्यवाही की कभी अपेक्षा नहीं की थी। तथापि एक सीमित युद्ध के बाद भारत ने मुजाहिदीन और पाकिस्तानी सैन्य बल युक्त घुसपैठियों से अपना क्षेत्र पुनः प्राप्त कर लिया।

अगस्त 2000 की हिजबुल-नई दिल्ली वार्ता, नवम्बर 2000 की प्रधानमंत्री वाजपेयी का रमजान के अवसर पर शांति संदेश तथा जुलाई 2001 में मुशरफ-वाजपेयी के आगरा शिखर सम्मेलन जैसे विभिन्न शांति प्रयत्नों की असफलता के कारण कश्मीर में शांति की उम्मीद की किरण बुझती दिखाई दी। जब पाकिस्तान के तानाशाह ने प्रेस कॉन्फ्रेंस में कश्मीर के आतंकवादियों को बारम्बार स्वतंत्रता सेनानी कहकर संबोधित किया तो वे बातें रोक दी गईं। भारतीय पक्ष में इससे रोष व्याप्त हुआ तथा बातें समाप्त कर दी गईं। भारतीय संसद पर 13 दिसंबर 2001 के आतंकी हमले के बाद पाकिस्तान के विरुद्ध भारत की व्यापक सैनिक गतिविधि तथा दो परमाणु संपन्न पड़ोसी देशों के बीच युद्ध की संभावित आशंका ने व्यापक तौर पर अंतर्राष्ट्रीय समुदाय का ध्यान आकर्षित किया जिसने पाकिस्तान को भारत के खिलाफ आतंकवाद को जांच करने के लिए प्रारंभिक कदम उठाने पर बाध्य किया। 2004 में भारत में नई सरकार के आने के साथ ही दोनों देशों ने परमाणु परीक्षण प्रतिबंध की विस्तार करने तथा परमाणु युद्ध की संभावना को रोकने के लिए दोनों देशों के विदेश सचिवों के बीच एक हॉटलाइन की स्थापना पर आपसी सहमति व्यक्त की गई।

परम्परागत तौर पर पाकिस्तान की कश्मीर नीति घुसपैठियों को समर्थन देने पर आधारित थी लेकिन 6 जनवरी, 2004 को पाकिस्तानी राष्ट्रपति ने पाकिस्तान भूमि का इस्तेमाल आतंकवाद के लिए न होने देने के प्रति प्रतिबद्धता व्यक्त की। मुम्बई ट्रेनों में आतंकी बम धमाकों के बाद भारत ने आणखी विदेश सचिव स्तर की वार्ताओं की स्थिति करके पाकिस्तान के साथ शांति प्रक्रिया से अपने कदम पीछे हटा लिए। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने यह निर्णय लिया कि वे सीमा पार से भारत में घुसपैठ को रोकने के लिए आवश्यक कदम उठाने के संबंध में राष्ट्रपति मुशरफ पर दबाव डालेंगे। इस बीच बाह्य वातावरण कभी इतना सहायक नहीं रहा जितना कि पिछले कुछ वर्षों में कश्मीर के संबंध में भारत-पाक विवाद के समाधान को लेकर बना है। बुश प्रशासन ने भी सार्वजनिक रूप से सीमा पार आतंकवाद के लिए पाकिस्तान को जिम्मेदार ठहराया तथा इन हमलों पर रोक लगाने के लिए पाकिस्तान से आश्वासन भी प्राप्त किया। भारतीय प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने कश्मीर त्यागने का विचार भी अस्वीकार कर दिया है परंतु उन्होंने बहुधा नवीन समाधानों का आग्रह किया है जिससे जीवन की परिस्थितियों और सामान्य संस्थाओं में सुधार हो सकेगा। सिंह ने यह स्पष्ट कर दिया है कि भारत, कश्मीर का कूटनीतिक समाधान खोजने के लिए राजनीतिक दौंव लगाने के लिए तैयार है।

वर्ष 2006 में भारत की अपील के प्रतिक्रियास्वरूप पाकिस्तान के राष्ट्रपति परवेज मुशरफ कश्मीर मामले पर समाधान के लिए दो प्रस्तावों को लेकर आगे आए। पहले प्रस्ताव में तीन सुझाव थे- आजाद कश्मीर, गिलगित और पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर (POK) में बलूचिस्तान सहित जम्मू कश्मीर के पार सात प्रदेशों की पहचान करना; इन प्रदेशों का विसैन्यीकरण करना तथा इन क्षेत्रों में भारत व पाकिस्तान के संयुक्त निरीक्षण के अधीन संघीय सरकारों की स्थापना करना। दूसरे प्रस्ताव में चार-सूत्रीय कार्यक्रम शामिल था- कश्मीर अपनी मौजूदा सीमाओं को सुरक्षित बनाए रखे परंतु लोग स्वतंत्र रूप से इधर-उधर आ-जा सकें; प्रदेश को स्वशासन अथवा स्वायत्तता दी जाए परंतु स्वतंत्रता नहीं, भिन्न-भिन्न समय पर सेनाओं को हटाया जाए तथा भारत, पाकिस्तान और कश्मीर सहित एक संयुक्त निरीक्षण तंत्र की स्थापना की जाए। दोनों प्रस्तावों पर विभिन्न दिशाओं से मिश्रित प्रतिक्रियाएँ आईं। भारत और पाकिस्तान के बीच विवाद के निपटारे के लिए कश्मीर के संबंध में एक अस्थाई निर्देशन भी तैयार किया गया। इस बीच पाकिस्तान

में मुशरफ शासन का अंत हुआ और जरदारी-गिलानी की लोकतांत्रिक सरकार अस्तित्व में आयी। पाकिस्तान के पूर्व राष्ट्रपति परवेज मुशरफ द्वारा जो संयुक्त वक्तव्य जारी किया गया उसके अंतर्गत इस बात पर बल दिया गया कि आतंकवाद के मुद्दे को अन्य द्विपक्षीय मुद्दों से अलग करके देखने की जरूरत है।

26 नवंबर, 2008 को मुंबई में आतंकवादियों द्वारा हमला किए जाने के बाद भी भारत ने संयम से काम लिया लेकिन साथ ही इसने पाकिस्तान के समक्ष आतंकवाद के प्रति अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट कर दिया।

15-16 जुलाई, 2009 को मिस्र (Egypt) के शर्म-अल शेख में आयोजित गुट निरपेक्ष आन्दोलन (Non Aligned Movement-NAM) के 15वें शिखर सम्मेलन के दौरान दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों के बीच अनौपचारिक वार्ता हुई। मुंबई में 26 नवम्बर के आतंकवादी हमले के पश्चात् भारत व पाकिस्तान के नेताओं के बीच वार्ता का यह महत्वपूर्ण अवसर था। भारतीय प्रधानमंत्री डॉ॰ मनमोहन सिंह ने पाकिस्तान के राष्ट्रपति आसिफ अली जरदारी से कहा कि पाकिस्तान अपनी भूमि का इस्तेमाल आतंकवाद फैलाने के लिए न करें। पाकिस्तानी प्रधानमंत्री ने भारतीय प्रधानमंत्री को यह आश्वासन दिया कि उनका देश आतंकवादियों के विरुद्ध सख्त कार्यवाही करेगा तथा 26 नवम्बर के मुंबई कांड के दोषियों को पकड़कर दण्डित करने की हरसंभव कोशिश करेगा। वार्ता के पश्चात् जारी एक संयुक्त वक्तव्य में द्विपक्षीय वार्ता में बलूचिस्तान को शामिल किए जाने के कारण भारत के विपक्षी दलों ने सरकार की काफी आलोचना की। वक्तव्य के संबंध में पाकिस्तान का तर्क है कि चूंकि इस वक्तव्य में कश्मीर के मुद्दे को छोड़ दिया गया है इसलिए जनता को यह बताना है कि हमने बलूचिस्तान के मामले को इसमें शामिल करवा लिया है। इससे पाकिस्तानी प्रधानमंत्री जनता के रोष से बच जाएंगे। दूसरी तरफ, भारत का तर्क है कि चूंकि बलूचिस्तान के मामले में भारत का कोई हाथ नहीं है और बलूचिस्तान की समस्या मुख्यतः पाकिस्तान की पैदा की हुई है तो ऐसे मामले को शामिल करने में कोई फर्क नहीं पड़ता है। जैसा कि प्रधानमंत्री डॉ॰ मनमोहन सिंह ने कहा कि इसमें छुपाने वाली कोई बात नहीं है। संयुक्त राज्य अमेरिका ने भी इस बात की अभी हाल में पुष्टि की है कि ऐसा प्रतीत होता है कि बलूचिस्तान के मामले में भारत का कोई हाथ नहीं है। बलूचिस्तान का मामला उसका आंतरिक मामला है। इसके समाधान के लिए दोनों पक्षों के नेताओं ने तय किया है कि दोनों देशों के विदेश सचिव परस्पर मिलते रहेंगे तथा अपनी-वार्ता के निर्णयों से विदेश मंत्रियों को अवगत कराते रहेंगे। इस संयुक्त वक्तव्य का सबसे महत्वपूर्ण बात यह रही है कि इसमें कश्मीर मुद्दे पर चर्चा नहीं की गई जो स्पष्ट करता है कि दोनों पक्ष अब क्षेत्र में अमन एवं शांति चाहते हैं और इसके प्रति गंभीर भी हैं।

प्रधानमंत्री डॉ॰ मनमोहन सिंह ने इस अवसर पर काफी दृढ़ता दिखाई। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि न सिर्फ मुंबई आतंकी हमलावरों को हँदकर उन्हें कठघरे में लाने के लिए तोस व प्रभावशाली उपाय करने की जरूरत है बल्कि आतंकवादी समूहों के क्रियाकलापों को भी बिल्कुल खत्म किए जाने की आवश्यकता है ताकि भविष्य में इस तरह की घटनाएँ न हों। भारतीय प्रधानमंत्री ने स्पष्ट कर दिया कि यदि पाकिस्तान ऐसा नहीं कर पाता है तो द्विपक्षीय वार्तालाप की निरंतरता भारतीय इच्छा पर निर्भर करेगी।

भारत-पाक तनावों को कम करने के लिए दोनों देशों को चाहिए कि वे पिछली कड़वाहट को भूलकर समस्त मुद्दों पर खुलकर चर्चा करें तथा सियाचिन और सर कीक विवादों का समाधान शीघ्रता से करें। इन राष्ट्रों को सर्वाधिक गंभीर कश्मीर के मुद्दे पर वार्ता भी साथ-साथ करनी होगी।

(viii) गुजराल सिद्धांत और पाकिस्तान (Gujral Doctrine and Pakistan)

भारत ने 1996-97 से अपने पड़ोसी देशों के साथ संबंध सुधारने के लिए एकतरफा रियायत की घोषणा की। तत्कालीन विदेश मंत्री इंद्र कुमार गुजराल द्वारा स्थायी शांति के हित में की गई यह एक अद्वितीय पहल थी। भारत को यह पूरी तरह विदित था कि उपमहाद्वीप में भयानक परमाणु होड़ आरंभ हो चुकी है, सीमा पर दोनों ओर सेनाओं का जमावड़ा था। शत्रुतापूर्ण संबंधों के कारण संसाधनों का दुरुपयोग हो रहा था। यही कारण है कि दोनों देश विश्व के निर्धनतम देशों में शामिल रहे हैं। द्विपक्षीय वार्ताओं की शृंखला जो 1994 तक चली, पूरी तरह विफल रही। जब मार्च 1997 में एक बार फिर विदेश सचिव-स्तर पर भारत पाकिस्तान वार्ता शुरू हुई तब यह दोनों देशों की ओर से नई महत्वपूर्ण पहल मानी गई।

भारत और पाकिस्तान के बीच अनेक मुद्दों पर असहमति चल रही है। उदाहरण के लिए भारत इस बात पर बल देता है कि कश्मीर भारत का एक अभिन्न अंग है जबकि पाकिस्तान का कहना है कि यह तो एक विवादस्पद क्षेत्र है। पाकिस्तान का यही कहना रहा कि कश्मीर समस्या का समाधान केवल जनमत संग्रह (Referendum) से ही हो सकता है। दूसरा, कश्मीर दो परस्पर-विरोधी विचारधाराओं का भी संघर्ष है। पाकिस्तान के लिए यह दो-राष्ट्रों के सिद्धांत का प्रतीक है। पाकिस्तान का मानना है कि हिन्दू प्रभुत्व वाले भारत में मुसलमानों को बराबरी का दर्जा मिल ही नहीं सकता। भारत के लिए अपनी धर्मनिरपेक्षता की राष्ट्रीय नीति को बनाए रखने का मुद्दा प्राथमिक महत्व का है। तीसरे, राजनयिक स्तर पर पाकिस्तान कश्मीर को मुख्य मुद्दा (Core Issue) कहता है और शेष द्विपक्षीय समस्याओं के समाधान से पूर्व इसको हल करना चाहता है। दूसरी ओर, भारत का यह विश्वास है कि

कश्मीर के प्रश्न पर विचार करने से पूर्व संबंधों का सहजीकरण, बेहतर व्यापार और विश्वास उत्पन्न करने वाले उपाय (Confidence Building Measures) किए जाने आवश्यक हैं। कश्मीर समस्या के समाधान हेतु एक सुझाव यह भी दिया जाता है कि नियंत्रण रेखा को अंतर्राष्ट्रीय सीमा मान लिया जाए अर्थात् कश्मीर का जितना भाग पाकिस्तान के पास है, वह उसी के पास रहे और भारतीय प्रदेश भारत का स्थायी अंग बना रहे। परंतु दोनों देशों के नेता इससे दूर भागते हैं क्योंकि उन्हें इस प्रश्न पर अपने-अपने देश में विरोध का डर है।

1997 के माले सार्क शिखर सम्मेलन के दौरान भारतीय प्रधानमंत्री गुजराल एवं पाकिस्तान के प्रधानमंत्री नवाज शरीफ की मुलाकात से सौहार्दपूर्ण माहौल बना था। ऐसा प्रतीत हुआ कि दोनों नेता भारत और पाकिस्तान के सभी विवादों के शांतिपूर्ण समाधान के इच्छुक थे।

जब मार्च 1997 में श्री गुजराल ने पड़ोसी देशों के संदर्भ में कई एकतरफा सहायता प्रावधानों की घोषणा की तथा गुजराल सिद्धान्त को पाकिस्तान के संदर्भ में लागू करने की महत्वपूर्ण पहल की गई। इसका उद्देश्य दोनों देशों के बीच तनाव को कम करना और जनता से जनता के स्तर पर सम्पर्क को बढ़ावा देना था। कई ऐसे उपायों की एकतरफा घोषणा की गई जिनसे दोनों देशों के नागरिकों को बीजा संबंधी सुविधाएँ प्राप्त हो सकें।

भारत आने वाले पाकिस्तानी व्यापारियों के लिए एक वर्ष में अनेक बार प्रवेश योग्य बीजा जारी किए गए। ये बीजा विशेषकर पाकिस्तानी पर्यटकों, धार्मिक यात्रियों, बालकों एवं वृद्धों के लिए विशेष सुविधाजनक रहे। वृद्धों एवं बालकों को भारत आने पर पुलिस को सूचना देने की अनिवार्यता समाप्त कर दी गई। भारत ने यह भी घोषणा की कि वृद्धों, छात्रों, पत्रकारों और सांस्कृतिक समूहों से कोई भी बीजा-शुल्क नहीं लिया जाएगा। पुस्तकों और पत्रिकाओं को एक दूसरे देश में भेजने की खुली छूट देने की भी घोषणा की गई। भारत को यह आशा थी कि वह पाकिस्तान के साथ सांस्कृतिक संबंध सुधार सकेगा। इस उद्देश्य के लिए कलाकारों, कवियों तथा लेखकों की प्रतिभा के आदान-प्रदान पर भी बल दिया गया।

पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ भारत से संबंध सुधारने और सभी द्विपक्षीय मामलों के शांतिपूर्ण समाधान का प्रयास कर रहे थे परन्तु उनके विदेश मंत्री गोहर अयूब खान कश्मीर को ही मुख्य मुद्दा मानते रहे। यहाँ तक कि मई 1997 में नव सार्क शिखर सम्मेलन के अवसर पर गुजराल-नवाज शरीफ भेंट से पूर्व माले (मालदीव) में गोहर अयूब ने कहा था कि यदि कश्मीर के मूल मुद्दे की अवहलना होती रही तो ये वार्ताएँ सफल हो ही नहीं सकती। तत्कालीन विदेश मंत्री ने भारत पर यह आरोप लगाया था कि वह कश्मीर में मानवाधिकार का उल्लंघन कर रहा है।

माले में गुजराल-नवाज शरीफ वार्ता का कोई तत्काल परिणाम नहीं निकला परन्तु दोनों प्रधानमंत्रियों ने बातचीत जारी रखने और कई मामलों से संबंधित अध्ययन-समूह (Study Groups) गठित करने का निर्णय लिया जो कि उन सभी प्रश्नों पर विचार करेंगे जिनके कारण भारत-पाकिस्तान संबंध अमैत्रीपूर्ण बने रह रहे हैं। यह भी निर्णय हुआ कि विदेश सचिव स्तर की वार्ता जारी रखी जाए ताकि भविष्य में औपचारिक शिखर वार्ता हो सके और उसके अच्छे परिणाम निकल सकें। गुजराल-शरीफ मुलाकात से भारत-पाकिस्तान के बीच सकारात्मक माहौल आवश्यक बना लेकिन दोनों देशों के बीच भविष्य में संबंध कैसे रहेंगे यह अनुमान लगाना उस समय मुश्किल था।

पाकिस्तान यह महसूस करने लगा है कि अंतर्राष्ट्रीय समुदाय कश्मीर मामलों में पहले जैसा समर्थन नहीं करता। कभी-कभी उसके पक्ष में इस्लामी देशों के संगठन इत्यादि से कुछ समर्थन मिलता है। इस परिस्थिति में पाकिस्तान के प्रधानमंत्री ने विश्वास उत्पन्न करने वाले उपाय करने का निश्चय किया। भारत के साथ वाणिज्यिक संबंध सामान्य होने से निश्चय ही पाकिस्तान को आर्थिक लाभ होने वाला था। विश्व बैंक जैसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था, पाकिस्तान पर इस बात के लिए दबाव डाल रही थी कि वह अपने रक्षा-व्यय में कमी करे तथा भारत के साथ संबंध सुधारे। इस मौके को भारत भी अपने हाथ से निकलने नहीं देना चाहता था। गुजराल सिद्धान्त इसका उत्तर था।

भारत द्वारा मई 1998 में किए गए परमाणु परीक्षण के बाद भारत-पाकिस्तान संबंध और भी खराब हो गए। पाकिस्तान द्वारा किए गए परमाणु विस्फोट के बाद दोनों देशों के विरुद्ध आर्थिक प्रतिबंध लगा दिए गए। इसकी शुरुआत संयुक्त राज्य अमेरिका से की गई। परन्तु सितम्बर 1998 में संयुक्त राष्ट्र महासभा के अधिवेशन में भाग लेने गए प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी तथा पाकिस्तान के प्रधानमंत्री श्री नवाज शरीफ ने मुलाकात की तथा सद्भावना का वातावरण बनाने के प्रयास किए। कई महत्वपूर्ण निर्णयों के साथ-साथ यह भी निश्चय किया गया कि दिल्ली तथा लाहौर के मध्य बस सेवा चलायी जाए ताकि दोनों देशों के निवासी सरलतापूर्वक आ जा सकें। पाकिस्तान ने यह प्रस्ताव रखा कि दिल्ली से लाहौर आने वाली बस में स्वयं प्रधानमंत्री वाजपेयी आयें जिसे भारत ने स्वीकार कर लिया। संचार माध्यमों में यह अनुमान लगाया गया कि इस 'बस राजनय' (Bus Diplomacy) की शुरुआत अमेरिका की पहल से शुरू की गई थी लेकिन आगे चलकर यह बात असत्य सिद्ध हुई। वाजपेयी के इस निर्णय का केवल सांकेतिक महत्व था लेकिन इसमें कई संभावनाएँ निहित थीं।

श्री वाजपेयी की पाकिस्तान बस यात्रा से देश में खुशी का माहौल बन गया। लाहौर यात्रा से पूर्व प्रधानमंत्री वाजपेयी ने यह स्वीकार किया था कि उनकी यात्रा के दौरान कश्मीर पर चर्चा तो अवश्य होगी। उन्होंने शिमला समझौते का उल्लेख करते हुए कहा था कि भारत और पाकिस्तान के मध्य सभी प्रश्नों का हल आपसी बातचीत से तय किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा था कि हम बातचीत के लिए तैयार हैं। लाहौर यात्रा से पूर्व उन्होंने कश्मीर मुद्दे पर भी बातचीत करने की आशा जतायी थी। इस संदर्भ में उन्होंने शिमला समझौते का भी उल्लेख किया था। यह अपेक्षा की जा रही थी कि इस बस राजनय (Bus-Diplomacy) से दक्षिण एशिया में एक नए युग का उदय होगा। यह तो किसी को भी आशा नहीं थी कि कोई करिश्मा हो जाएगा क्योंकि 50 वर्ष से अधिक समय से बार-बार पाकिस्तान कश्मीर को हड़पने का असफल प्रयास करता रहा था। पाकिस्तान ने भारत द्वारा बढ़ाए गए मैत्री के हाथ को नहीं पकड़ा। उसने तो श्री वाजपेयी की लाहौर यात्रा के तुरंत बाद कारगिल की पहाड़ियों पर अनधिकृत कब्जा करके भारत के विरुद्ध आक्रामक कार्रवाई कर दी। कारगिल का क्षेत्र कश्मीर में नियन्त्रण रेखा (Line of Control) के इस ओर भारतीय प्रदेश में स्थित है।

भारत को इस बात की पूरी आशा थी कि लम्बे समय से चली आ रही भारत-पाकिस्तान कटुता के स्थान पर मधुर सम्बन्धों की स्थापना होने जा रही थी। पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ ने भी यह कहा था कि हम दोनों को परमाणु मुद्दे पर चर्चा करनी चाहिए, प्रक्षेपास्त्रों के विषय में बातचीत करनी चाहिए। उन्होंने यह भी कहा था कि भारत कश्मीर के प्रश्न पर तीसरे पक्ष का हस्तक्षेप नहीं चाहता तो फिर परमाणु मुद्दे पर तीसरे पक्ष की कोई भी भूमिका क्यों हो। इस प्रकार, लाहौर यात्रा से पूर्व भारत की जनता और सरकार मैत्री के लिए उत्सुक थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि पाकिस्तान के विदेश मंत्री सत्ताज अजीज ने स्पष्ट रूप से नकारात्मक दृष्टिकोण अपनाया था। उन्होंने कश्मीर, सियाचिन, तुलबुल प्रयोजना तथा सार झीक सहित अनेक मुद्दों पर भारत की आलोचना की। नए सकारात्मक वातावरण का श्रेय स्वयं लेते हुए पाकिस्तानी विदेश मंत्री ने भारतीय सांसदों के एक शिष्टमण्डल को सम्बोधित करते हुए कहा कि भारत को चाहिए कि द्विपक्षीय सम्बन्धों के वर्तमान सीमा क्षेत्रों पर बल देने से ऊपर उठे। जब तक हम कश्मीर विवाद के समाधान की दिशा में आगे नहीं बढ़ते तब तक दक्षिण एशिया में शांति की कामना की ही नहीं जा सकती। इस प्रकार, पाकिस्तानी नेताओं के द्वारा परस्पर विरोधी सकारात्मक एवं नकारात्मक संकेतों के मध्य प्रधानमंत्री श्री वाजपेयी ने 20 फरवरी, 1999 को दिल्ली-लाहौर बस से लाहौर यात्रा की।

भारतीय प्रधानमंत्री का पाकिस्तानी सीमा क्षेत्र में भव्य स्वागत किया गया लेकिन पाकिस्तान के धार्मिक कट्टरपंथियों ने इस यात्रा का विरोध किया। श्री वाजपेयी ने पाकिस्तानी नेताओं से महत्वपूर्ण वार्तालाप की। उन्होंने पाकिस्तान के इस संदेह को भी दूर करने का प्रयास किया कि भारत पाकिस्तान के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करता। इस भ्रम को दूर करने के लिए वे लाहौर में स्थित मौनार-ए-पाकिस्तान भी गए। भारत बाकी दुनिया को यह विश्वास दिलाना चाहता था कि वह प्रभुसत्ता सम्पन्न पाकिस्तान की स्थापना एवं उसके अस्तित्व को स्वीकार करता है तथा सम्मान देता है। जहाँ एक ओर भारत ने मित्रता तथा भाईचारे के लिए कदम उठाया, वहीं दूसरी ओर पाकिस्तानी कट्टरपंथियों ने मौनार-ए-पाकिस्तान को पवित्र जल से धोकर उस स्थान को पवित्र किया, जहाँ श्री वाजपेयी ने खड़े होकर पाकिस्तान की सुख शांति के लिए शुभकामनाएँ व्यक्त की थीं। श्री वाजपेयी की यह यात्रा भी पाकिस्तानी जनता का दिल जोतने में असफल रही। फिर भी सरकारी स्तर पर भारतीय प्रधानमंत्री का भव्य स्वागत किया गया।

(ix) लाहौर घोषणापत्र (Lahore Declaration)

लाहौर घोषणापत्र में इस बात पर बल दिया गया कि दोनों प्रधानमंत्री "दोनों देशों के मध्य शांति और स्थायित्व की किरण देखते हैं।" उन्होंने इस बात को दोहराया कि वे पूरी तरह शिमला समझौते को लागू करने के लिए कटिबद्ध हैं। उन्होंने संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के सिद्धान्तों तथा उद्देश्यों के प्रति अपनी वचनबद्धता दोहराई एवं परमाणु निःसशस्त्रीकरण तथा अप्रसार के उद्देश्यों के प्रति भी प्रतिबद्धता व्यक्त की। इन वचनबद्धताओं की पृष्ठभूमि में दोनों प्रधानमंत्रियों ने यह सहमति व्यक्त की कि वे जम्मू-कश्मीर सहित सभी मुद्दों के समाधान के लिए अपने प्रयासों को गति प्रदान करेंगे तथा यह भी स्पष्ट किया कि वे एक-दूसरे देश के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे। उन्होंने इस बात पर सहमति व्यक्त की कि दोनों देशों के बीच व्यापक एवं एकीकृत बातचीत को और आगे बढ़ाया जाएगा। उन्होंने आतंकवाद की, उसके प्रत्येक रूप तथा अभिव्यक्तियों की निन्दा की। दोनों प्रधानमंत्रियों ने लाहौर घोषणा के द्वारा समस्त मानव अधिकारों एवं स्वतन्त्रताओं की सुरक्षा तथा उनके प्रोत्साहन के लिए अपना संकल्प व्यक्त किया। उन्होंने इस बात पर भी सहमति व्यक्त की कि वे परमाणु अस्त्रों के अनधिकृत अथवा संयोगवश उपयोग के खतरे को कम करने के लिए कदम उठाएँगे।

इस प्रकार लाहौर घोषणा में मैत्री, सहयोग, हस्तक्षेप न करने, आतंकवाद का नाश करने, मानव अधिकारों का सम्मान करने तथा अच्छे पड़ोसियों के रूप में व्यवहार करने जैसे उच्च आदर्शों पर बल दिया गया। परन्तु दुर्भाग्य की बात यह हुई कि लाहौर घोषणा की स्याही सूखने भी नहीं पाई थी कि पाकिस्तान ने भारत के विरुद्ध आक्रमण का मार्ग अपना लिया। लाहौर घोषणा का भारत में व्यापक स्वागत हुआ तथा अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय ने भी इसकी प्रशंसा की। उचित ही कहा गया था कि दोनों देशों के मध्य शांति और

सद्भावना स्थापित करने का महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व अब प्रधानमंत्रियों को वहन करना होगा। लाहौर घोषणा पत्र के अतिरिक्त, दोनों प्रधानमंत्रियों ने एक संयुक्त वक्तव्य भी जारी किया तथा दोनों देशों के विदेश सचिवों ने एक समझौता ज्ञापन (Memorandum of Understanding) पर हस्ताक्षर भी किए।

संयुक्त वक्तव्य में प्रधानमंत्रियों ने घोषणा की कि समय-समय पर दोनों विदेश मंत्री आपसी हित के सभी मामलों पर चर्चा करेंगे। वार्ता की इस प्रस्तावित प्रक्रिया का विशेष रूप से स्वागत किया गया। सहमति ज्ञापन में सुरक्षा सम्बन्धी विषयों तथा परमाणु सिद्धान्तों पर विशेष बल दिया गया। इसमें एक महत्वपूर्ण प्रावधान यह किया गया कि दोनों देश अपने-अपने प्रक्षेपास्त्रों के परीक्षणों की एक-दूसरे को पूर्व जानकारी देंगे तथा इस सम्बन्ध में एक द्विपक्षीय समझौता भी करेंगे। इन बातों के अतिरिक्त दोनों देश इस बात पर भी सहमत हुए कि वे समय-समय पर विश्वास बहाल करने वाले उपायों (Confidence Building Measures) को लागू करने की प्रक्रिया की समीक्षा करेंगे और यदि आवश्यक हुआ तो इन उपायों को प्रभावी रूप से लागू करने के लिए एक उचित परामर्श-व्यवस्था (Appropriate Consultative Mechanism) भी स्थापित करेंगे।

श्री अटल बिहारी वाजपेयी की लाहौर यात्रा के तुरंत बाद राष्ट्रपति श्री के.आर. नारायणन ने यह आशा व्यक्त की थी कि इस यात्रा से दोनों देशों के पारस्परिक सम्बन्धों में एक नए अध्याय का आरम्भ होगा अर्थात् नए सुखद युग का आगमन होगा। संसद को सम्बोधित करते हुए राष्ट्रपति ने कहा था कि लाहौर घोषणा दोनों देशों के मध्य शांति और सुरक्षा का नया मानक सिद्ध होगी। उन्होंने यह भी कहा कि प्रधानमंत्री ने पाकिस्तान की जनता और सरकार को यह विश्वास दिलाया था कि भारत उस देश के साथ शांति और मैत्री का इच्छुक है तथा वह व्यापक सहयोग स्थापित करना चाहता है।

दैनिक समाचार पत्र 'द हिन्दू' ने दोनों प्रधानमंत्रियों के सरोहनीय प्रयासों की प्रशंसा करते हुए लिखा था कि श्री वाजपेयी तथा श्री शरीफ ने अच्छे पड़ोसियों जैसे व्यवहार की नीतियों का मार्ग अपनाने पर बल देकर प्रशंसनीय सकल्य का प्रदर्शन किया है। वह अभूतपूर्व सहस्र का कार्य था, जो कि उस समय तक किए गए सभी प्रयासों से हट कर किया गया था।

विश्व के अधिकांश देशों ने भी लाहौर प्रक्रिया की सराहना की। ब्रिटेन, अमेरिका, रूस तथा फ्रांस सहित अनेक देशों ने इस बात पर प्रसन्नता व्यक्त की थी कि भारत-पाकिस्तान आपसी बातचीत के द्वारा समस्याओं को सुलझाने का प्रयास कर रहे हैं। भारत और पाकिस्तान विश्वास-निर्माण (Confidence Building) के उपाय कर रहे थे। लाहौर प्रक्रिया की अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के द्वारा भी सराहना की गई।

आपसी मुठों का सुलझाने के लिए भारत की वचनबद्धता को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री वाजपेयी ने दुहराते हुए स्थाई रूप से शांति, स्थिरता, प्रगति तथा समृद्धि का आह्वान किया। प्रधानमंत्री ने कहा था, "हम इतिहास को तो बदल सकते हैं परन्तु भूगोल को नहीं; हम अपने मित्रों को बदल सकते हैं परन्तु पड़ोसियों को नहीं।" उन्होंने इस बात पर बल दिया था कि विश्वास का वातावरण तैयार किया जाए ताकि आपसी मनमुटाव कम हो सके।

(x) कारगिल युद्ध (Kargil War)

1947 में पाकिस्तान द्वारा कश्मीर में थोपे गए युद्ध को समाप्त करने के लिए आरम्भ में जिस स्थान पर युद्ध-विराम हुआ था उसके परिणामस्वरूप जम्मू-कश्मीर का एक बड़ा भाग पाकिस्तान के कब्जे में अनधिकृत रूप से रह गया था। उस समय जो युद्ध-विराम रेखा निश्चित हुई थी, उस पर पाकिस्तान समय-समय पर गोलीबारी तो करता ही रहता था साथ ही साथ उसने 1965 और 1971 में भारत के विरुद्ध दो युद्ध लड़े भी थे। बांग्लादेश-युद्ध (1971) के पश्चात् हुए इन्दिरा गाँधी-जुल्फिकार अली भुट्टो शिखर सम्मेलन के अंत में शिमला समझौता संपन्न हुआ। उस समय मामूली परिवर्तनों के साथ कश्मीर में युद्ध-विराम रेखा को नियन्त्रण रेखा (Line of Control) के रूप में जाना जाने लगा। शिमला समझौते में यह प्रावधान किया गया था कि दोनों देश आपसी बातचीत (Bilateral Negotiations) के द्वारा सभी विवादों का समाधान करेंगे। स्पष्ट है, इनमें कश्मीर विवाद भी शामिल था। यह भी तय किया गया था कि कोई भी देश इस स्थिति को एकपक्षीय कार्रवाई द्वारा बदलने का प्रयास नहीं करेगा। इस प्रावधान में यह निहित था कि: (क) दोनों देश नियन्त्रण रेखा का पूरा सम्मान करेंगे। (ख) सभी विवादों को दोनों देश द्विपक्षीय बातचीत के द्वारा हल करेंगे। इसका अर्थ था कि कश्मीर सहित किसी भी विवाद के समाधान के लिए किसी तीसरे पक्ष की मध्यस्थता स्वीकार नहीं की जाएगी।

सन् 1972 में भारत और पाकिस्तान के बीच वरिष्ठ सैनिक अधिकारियों के द्वारा नियन्त्रण रेखा का निर्धारण किया गया था। जिन मानचित्रों (Maps) पर नियन्त्रण रेखा निर्धारित की गई थी, उन पर दोनों देशों के अधिकारियों ने हस्ताक्षर भी किए थे। सामान्यतया लगभग 27 वर्ष तक इस नियन्त्रण रेखा (LOC) का सम्मान किया गया। 27 वर्ष के पश्चात् और लाहौर घोषणा के तुरंत बाद पाकिस्तान ने भारतीय क्षेत्र में कारगिल की पहाड़ी चोटियों पर कब्जा करने की योजना बनाई। पाकिस्तान ने न केवल सशस्त्र एवं प्रशिक्षित आतंकवादियों को नियन्त्रण रेखा के इस ओर भेजा, बल्कि अपनी सेना के अधिकारियों और जवानों को भी बिना वर्रों

के, कारगिल पर कब्जा करने के लिए भेजा। यह न केवल शिमला समझौते का अपमान था वरन् नियन्त्रण रेखा की अवहेलना तथा भारत के विरुद्ध एक आक्रमण भी था। कारगिल क्षेत्र के द्रास तथा बटालिक उपक्षेत्रों की पहाड़ियों पर भी पाकिस्तानियों ने नियन्त्रण रेखा पार करके कब्जा कर लिया था। जिस समय भारत के अधिकारियों को इस आक्रमण का आभास हुआ उस समय तक पाकिस्तानी घुसपैठिए लगभग 100 किलोमीटर से अधिक की लम्बाई में लगभग 10 किलोमीटर अंदर तक घुस आए थे। उन्होंने न केवल भारतीय सेना के खाली पड़े बंकरों पर कब्जा कर लिया था बल्कि कुछ और बंकर भी बना लिए थे। जैसे ही मई 1999 के आरम्भ में घुसपैठ का पता लगा जैसे ही भारतीय सेना को आदेश दे दिया गया कि उन्हें बाहर निकाल दिया जाए। परन्तु यह कार्य आसान नहीं था। घुसपैठियों का कब्जा जिन चोटियों पर था वे 15,000 से 16,000 फीट की ऊँचाई पर थीं, जो कि या तो बर्फ से ढँकी हुई थीं या फिर उन पर पड़ी बर्फ पिघल रही थी।

भारतीय सेना की ओर से यह कहा गया कि 1972 से ही यह व्यवस्था थी कि गर्मियों में तो सेना के जवान इन चोटियों पर तैनात रहते थे, लेकिन भीषण सर्दी तथा हिमपात होने पर वे नीचे अपने शिविरों में आ जाते थे। बर्फ पिघलने तक बंकर खाली पड़े रहते थे। सन् 1998 के शीतकाल में भी यही स्थिति थी। परन्तु 1999 में पाकिस्तान ने अपना खेल खेला। जहाँ औपचारिक तौर पर पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ श्री अटल बिहारी वाजपेयी का भव्य स्वागत कर रहे थे, वहीं पाकिस्तानी घुसपैठिए नियन्त्रण रेखा के इस पार भारतीय चोटियों पर गोपनीय ढंग से कब्जा कर रहे थे। एक ओर प्रधानमंत्री वाजपेयी मैत्री का संदेश लेकर लाहौर गए थे, वहीं दूसरी ओर पाकिस्तान ने भारत के साथ विश्वासघात किया। इस स्थिति को विश्वासघात कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी।

पाकिस्तान की रणनीति केवल कारगिल की चोटियों पर कब्जा करने की नहीं थी बल्कि वह श्रीनगर-लेह राजमार्ग को काट देना चाहता था ताकि लद्दाख क्षेत्र का कश्मीर घाटी से सम्पर्क ही टूट जाए। यदि ऐसा हो जाता तो पाकिस्तान के लिए कश्मीर पर दबाव बनाना आसान हो जाता। वहाँ असतोष और आतंकवाद को बढ़ाया जा सकता था। पाकिस्तान की रणनीति सम्पूर्ण जम्मू-कश्मीर या कम से कम कश्मीर घाटी को अपने कब्जे में करने की थी। पाकिस्तानी नीति-निर्धारकों के चार तत्कालीन उद्देश्य थे—

- (क) भारत के विरुद्ध सैनिक विजय प्राप्त करना तथा नियन्त्रण रेखा के इस और कुछ भारतीय क्षेत्र पर स्थाई कब्जा करना
- (ख) कश्मीर समस्या का अन्तर्राष्ट्रीयकरण करना
- (ग) भारत के मुसलमानों का सहयोग प्राप्त करना
- (घ) नियन्त्रण रेखा के इस ओर भारतीय क्षेत्र में असतोष भड़काना

इन प्रयासों के बावजूद पाकिस्तान की रणनीति पूरी तरह विफल हो गई। भारत की सेना ने अपने शौर्य का प्रदर्शन करते हुए पाकिस्तानी सेना और घुसपैठियों को पराजित कर दिया। संभवतः पाकिस्तान की एकमात्र उपलब्धि यह रही कि कारगिल युद्ध ने समस्त विश्व का ध्यान अपनी ओर खींचा परन्तु इसे किसी भी प्रकार कश्मीर समस्या का अन्तर्राष्ट्रीयकरण नहीं कहा जा सकता।

पाकिस्तान की स्थापना होने के बाद यह प्रथम अवसर था जब वह विश्व-समुदाय में बिल्कुल अलग-थलग पड़ गया। इधर, भारत को विश्व-समुदाय का पूर्ण समर्थन प्राप्त हुआ। पाकिस्तान के निकटतम मित्र संयुक्त राज्य अमेरिका तथा चीन द्वारा भी पाकिस्तान पर दबाव डाला गया कि वह कारगिल से अपने सैनिकों एवं घुसपैठियों को वापस बुला ले तथा यथास्थिति (Status Quo) बहाल करे। अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय की भारत से केवल इतनी अपेक्षा थी कि वह समय से काम ले। भारत ने स्वैच्छा से ऐसा ही किया। उसकी सेना ने कभी भी नियन्त्रण रेखा को पार नहीं किया। इसके फलस्वरूप भारत के 400 से अधिक सैनिक (अधिकारी और जवान) वीरगति को प्राप्त हुए। पाकिस्तान को इससे कहीं अधिक हानि हुई। भागते हुए पाकिस्तानियों ने कई शव अपने पीछे छोड़ दिए। इन शवों का भारतीय सेना ने मुस्लिम धार्मिक परम्परा के अनुसार अंतिम संस्कार किया।

यह ठीक है कि भारत के खुफिया माध्यम पाकिस्तानी आक्रमण की अग्रिम सूचना प्राप्त करने में विफल रहे। कुछ आलोचकों का तो कहना है कि सरकार को इस संबंध में जो संकेत मिले उसने उनकी अनदेखी कर दी। बाद में यह पता चला कि इस प्रकार की घुसपैठ की एक योजना 1987 में भी बनाई गई थी परन्तु राष्ट्रपति जिया-उल-हक ने इसे अस्वीकार कर दिया था। उन्हें भारतीय सेना की क्षमता और योग्यता का आभास था। इस बार, दिसम्बर 1998 में बनाई गई योजना के अनुसार पाकिस्तान ने 1998-99 की शीतकालीन स्थिति का लाभ उठाकर यह आक्रामक कार्रवाई कर डाली। परन्तु मई 1999 में सूचना मिलते ही भारत की सेना ने भीषण कठिनाइयों के बावजूद संयम से काम लेते हुए “ऑपरेशन विजय” में शत्रु को पराजित कर दिया।

पाकिस्तानी सैनिकों को स्पष्ट रूप से बता दिया गया कि वे या तो भाग जाएँ या मरने के लिए तैयार रहें। जो पाकिस्तानी सैनिक भागे नहीं, उनको सेना ने मौत के घाट उतार दिया। पाकिस्तान की कूटनीति पूरी तरह विफल रही। भारत को सैनिक विजय के साथ-साथ भारी कूटनीतिक सफलता भी मिली। युद्ध के दौरान पाकिस्तान के विदेश मंत्री चीन का समर्थन प्राप्त करने के लिए बीजिंग गए। परन्तु उन्हें निराश लौटना पड़ा। उसके तुरंत बाद विदेश मंत्री सरताज अजीज भारत आए। उन्होंने यह समझने की कोशिश की कि कारगिल में जो घुसपैठिए थे वे न तो उनके देश के सैनिक थे और न ही भाई के व्यक्ति थे। उन्होंने उन्हें कश्मीर का स्वतन्त्रता सेनानी कहा। पाकिस्तान के इस कथन पर किसी ने भी विश्वास नहीं किया। भारत के तत्कालीन विदेश मंत्री श्री जसवंत

सिंह ने पाकिस्तानी विदेश मंत्री सरताज अजीज को स्पष्ट शब्दों में यह बात कह दी कि आपसी बातचीत का एक ही मुद्दा हो सकता है और वह है "भारतीय क्षेत्र से घुसपैठियों की वापसी"।

जिस समय यह स्पष्ट हो गया कि अत्यंत विपरीत परिस्थितियों के बावजूद भारतीय सेनाएँ आगे बढ़ रही थीं, एक के बाद एक चोटी पर पुनः अपना अधिकार स्थापित कर रही थीं तथा पाकिस्तान की पराजय निश्चय थी, इसी दौरान पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ अमेरिका गए। अमेरिकी राष्ट्रपति श्री क्लिंटन ने उनसे 4 जुलाई, 1999 को भेंट की। अमेरिकी राष्ट्रपति से भी पाकिस्तानी नेता को कोई समर्थन नहीं मिला। राष्ट्रपति क्लिंटन ने श्री शरीफ को स्पष्ट शब्दों में यह कहा कि वे कारगिल से सभी पाकिस्तानियों को तुरन्त वापस बुलाएँ और नियन्त्रण रेखा का पूरा सम्मान करें तथा फिर आपसी बातचीत के द्वारा विवादों का समाधान करें। मित्र देशों द्वारा समर्थन से मना करने के कारण अलग-थलग पड़े पाकिस्तान को भारत की समस्त भूमि को खाली करना पड़ा जो कारगिल में उसने अपने अधिकार में ले ली थी। अधिकांश क्षेत्र को पहले ही भारत के वीर सैनिकों ने स्वतन्त्र करवा लिया था। इस प्रकार भारत को हर दृष्टि से राजनीतिक-सामरिक-कूटनीतिक सफलता प्राप्त हुई। निश्चित ही यह सराहनीय बात है कि तापमान 0° (डिग्री) के नीचे होने पर भी भारतीय सेना ने जिस शौर्य का प्रदर्शन किया वह देश की खातिर बलिदान करने से कम नहीं था। लगभग दो महीने के संघर्ष में 500 भारतीय सैनिक वीरगति को प्राप्त हुए। पाकिस्तानी आक्रमण का सामना करने में भारत को 5,000 करोड़ रुपये से अधिक धन व्यय करना पड़ा।

यह किसी ने सोचा भी नहीं था कि पाकिस्तान इतनी जल्दी और इतनी आसानी से अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के दबाव के सामने घुटने टेक देगा। पाकिस्तान की रणनीति निश्चय ही जालाकी भरी थी। उस देश की सेना और प्रशासन ने उस समय यह कार्रवाई की थी जब भारतीय सेना को इसका आभास नहीं था। जिस समय कारगिल का संघर्ष आरम्भ हुआ भारत में वाजपेयी सरकार संसद में पराजित होने के पश्चात् काम चलाऊ सरकार के रूप में कार्य कर रही थी। पाकिस्तान समझता था कि वह श्रीनगर-लेह राजमार्ग को काट देगा, सियाचिन ग्लेशियर क्षेत्र में भारतीय जवानों को फँसा लेगा, नियन्त्रण रेखा की वैधता पर प्रश्न चिन्ह लगा देगा तथा कश्मीर घाटी में व्यापक अशांति उत्पन्न कर सकेगा। इस प्रकार वह अपनी योजना के प्रति पूर्ण रूप से आश्वस्त था। परन्तु वास्तव में ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। पाकिस्तान की पराजय हुई, पाकिस्तानी सैनिक और भाड़े के घुसपैठिए या तो मारे गए या खदेड़ दिए गए या अंत में राष्ट्रपति क्लिंटन के निर्देश पर वे वापस चले गए। नियन्त्रण रेखा के इस ओर भारतीय सेना का पूर्ण अधिकार हो गया, यद्यपि ऐसा करने के लिए भारत के वीर सैनिकों को प्रायः रात्रि के समय दुर्गम पहाड़ियाँ पर रंगते हुए जाना पड़ता था। भारतीय वायु सेना ने भी शत्रु के छक्के छुड़ा दिए। अमेरिका ने भारत-पाक विवाद में किसी भी रूप में मध्यस्थता करने से इनकार कर दिया। यह भी पाकिस्तान की कूटनीतिक हार थी।

(xi) भारत-पाक तनाव (चरम-वृद्धि का काल) (Indo-Pak Tension-Period of Extreme Stage)

लाहौर घोषणापत्र (1999) में आशा व्यक्त की गई थी कि दोनों देश न केवल सभी विवाद आपसी बातचीत से सुलझा लेंगे, बल्कि यह भी कि वे अच्छे पड़ोसी की तरह शांति से रहेंगे। परन्तु इसके तुरंत बाद कारगिल युद्ध ने इन आशाओं पर पानी फेर दिया। यही नहीं अक्टूबर 1999 में पाकिस्तान के सेनाध्यक्ष जनरल परवेज मुशर्रफ ने निर्वाचित प्रधानमंत्री नवाज शरीफ को अपदस्थ करके जेल में डाल दिया और स्वयं देश का शासन सम्भाल लिया। भारत के लिए यह केवल पाकिस्तान का आंतरिक मामला नहीं रह गया। शीघ्र ही एक दशक से जम्मू-कश्मीर में चल रहे पाक-प्रेरित आतंकवाद में और तेजी आई। सीमा पार से भारतीय क्षेत्र में गोलीबारी भी जारी रही। काफी समय तक भारत यह कहता रहा कि वह पाकिस्तान से तब तक बातचीत नहीं करेगा जब तक वहाँ लोकतंत्र बहाल नहीं हो जाता। उधर पाकिस्तानी सैनिक शासक बार-बार भारत से बातचीत की पेशकश करते रहे और इसके लिए भारत पर अन्तर्राष्ट्रीय दबाव भी बढ़ता गया। अंततः भारत ने 2001 के आरम्भ में परवेज मुशर्रफ को भारत आने का आमंत्रण दिया। भारत यात्रा से तुरंत पहले मुशर्रफ ने अपने को पाकिस्तान का राष्ट्रपति घोषित कर दिया। भारत में राष्ट्रपति मुशर्रफ का भव्य स्वागत किया गया और यह आशा व्यक्त की गई कि दोनों देशों के संबंधों में सुधार होगा। परन्तु ऐसा कुछ नहीं हुआ। आगरा में वाजपेयी-मुशर्रफ केवल यही कहते रहे कि कश्मीर का मुद्दा ही सबसे अधिक महत्व का है। दूसरी ओर पाकिस्तान का कहना था कि भारत जम्मू-कश्मीर राज्य की जनता का "उत्पीड़न" करता चला आ रहा है यह "उत्पीड़न" समाप्त होना चाहिए और कश्मीर के लोगों को आत्मनिर्णय का अधिकार दिया जाना चाहिए ताकि वे अपने भविष्य का स्वयं निर्णय कर सकें। भारत उनकी दलीलों को स्वीकार नहीं कर सकता था। भारत के लिए कश्मीर उस अर्थ में सबसे प्रमुख मुद्दा (Core Issue) नहीं है जिस अर्थ में पाकिस्तान इसकी बात करता है। भारत का तर्क है कि समस्त जम्मू-कश्मीर राज्य भारत का अधिन्न अंग है। जम्मू-कश्मीर का भारत में विलय 1947 में संवैधानिक तरीके से हुआ था जिसका आगे चलकर 1956 में वहाँ की निर्वाचित संविधान सभा ने भी अनुमोदन किया था।

भारत का आरोप है कि पाकिस्तान जम्मू-कश्मीर के एक बड़े भाग को अवैध रूप से अपने कब्जे में किए हुए है जिसे खाली करना होगा। भारत का यह भी कहना है कि कश्मीर में पाकिस्तानी आतंकवादियों के माध्यम से परीक्षा युद्ध चल रहा है। श्री मुशर्रफ

आतंकवाद को स्वीकार ही नहीं करते थे। उन्होंने भारतीय प्रधानमंत्री और आगरा में उपस्थित पत्रकारों को भी यह कहा कि कश्मीर में जारी हिंसा आतंकवाद न होकर राज्य की जनता द्वारा चलाया जा रहा "स्वतन्त्रता संग्राम" है। भारत ने अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को इस बात के प्रमाण दिए हैं कि पकड़े गए तथा मारे गए आतंकवादी या तो पाकिस्तानी थे या पाक-अधिकृत कश्मीर के प्रशिक्षित आतंकवादी थे। आगरा वार्ता इस सीमा तक विफल रही कि अंत में संयुक्त घोषणापत्र भी जारी नहीं किया गया। आगरा के पश्चात् जहाँ एक ओर आतंकवाद निरंतर चलता रहा, वहीं दूसरी ओर भारत ने पाकिस्तान से तब तक बात करने से इनकार कर दिया जब तक वह पूरी तरह आतंकवाद समाप्त नहीं करता।

11 सितंबर, 2001 की वर्ल्ड ट्रेड सेंटर की घटनाक्रम के बाद अमेरिका ने पाकिस्तान के साथ अपने संबंध फिर से स्थापित किए। पाकिस्तान को अमेरिका से बड़ी मात्रा में वित्तीय मदद एवं सैन्य सामग्री प्राप्त हुई। इसके तुरंत बाद पाकिस्तान समर्थित एवं प्रेरित आतंकवाद ने भारत में अपनी गतिविधियाँ बढ़ा दीं। निर्दोष पुरुषों, महिलाओं और बच्चों की और अधिक हत्याएँ की गईं। अक्टूबर 2001 में श्रीनगर स्थित कश्मीर सचिवालय पर विस्फोट करके उसे नष्ट करने का प्रयास किया गया तथा 13 दिसम्बर, 2001 को पाकिस्तानी आतंकवादियों ने नई दिल्ली में संसद भवन में बम विस्फोट करने के लिए आत्मघाती आक्रमण किया परंतु भारत के सतर्क सुरक्षा कर्मियों ने उनका मुकाबला किया और पाकिस्तानी पहचान-पत्र धारक आतंकवादी मारे गए।

इस आक्रमण का उद्देश्य न केवल संसद भवन को ध्वस्त करना था बल्कि समस्त राष्ट्रीय राजनीतिक नेतृत्व की हत्या करना भी था। पाकिस्तान ने निर्लज्जतापूर्वक अपने आतंकवादियों को भी भारत का सुरक्षा बल कह डाला और उनके शव लेने से भी इनकार कर दिया। इसके पश्चात् तनाव अत्यधिक बढ़ गया। भारत ने पश्चिमी-सीमा पर अपनी सेना तैनात कर दी, युद्ध की आशंका प्रबल हो गई, भारतीय उच्चायुक्त को वापस बुला लिया गया, पाकिस्तानी विमानों के भारतीय वायु-सीमा में उड़ने की अनुमति वापस ले ली गई तथा भारत और पाकिस्तान के मध्य चलने वाली समझौता एक्सप्रेस रेलगाड़ी एवं दिल्ली-लाहौर बस भी बंद कर दी गई।

पाकिस्तान ने भी सीमा पर अपनी सेना तैनात कर दी फिर भी दोनों देशों के पास परमाणु अस्त्र युद्ध अवरोधक सिद्ध हुए तथा अंतर्राष्ट्रीय घातकों का ध्यान में रखकर भारत ने युद्ध के लिए तैयार अपनी सेना को 2002 के अंत में सीमा से तो वापस बुला लिया परन्तु अन्य उपाय यथावत बने रहे क्योंकि पाकिस्तान की ओर से आतंकवादी गतिविधियों में कोई कमी नहीं हुई थी।

भारत-पाक द्विपक्षीय संबंधों में तनाव के मुख्य बिंदु (Major Irritants in Indo-Pak bilateral Relations)

(i) कश्मीर विवाद (The Kashmir Dispute)

जम्मू-कश्मीर राज्य में अधिकांश आबादी मुस्लिम समुदाय की है। उत्तर भारत के इस राज्य का कुल क्षेत्रफल 85,806 वर्ग मील है और इसे 'पृथ्वी का स्वर्ग' कहा जाता है। उनके शासक हिन्दू महाराजा हरि सिंह थे। परन्तु दुर्भाग्यवश भारत विभाजन के समय राज्य के विलय के बारे में कोई फैसला नहीं लिया गया। अंतिम निर्णय होने तक हरि सिंह ने पाकिस्तान के साथ एक यथास्थिति समझौता (Standstill Agreement) पर हस्ताक्षर किया था। लेकिन भारत इस प्रकार की किसी अस्थायी व्यवस्था को स्वीकार नहीं करता। महाराजा कश्मीर को एक स्वतंत्र देश घोषित करने की योजना बना रहा था। इस बीच पाकिस्तान ने कश्मीर को पाकिस्तान में मिलाने के लिए उस पर दबाव डालना प्रारंभ कर दिया था। दैनिक आवश्यकताओं को अनेक वस्तुओं के कश्मीर पहुँचने में बाधाएँ उत्पन्न की गईं।

इससे पूर्व जुलाई 1947 में वाइसराय लॉर्ड माउंटबेटन चार दिन की कश्मीर यात्रा पर गया था। अपने चार दिनों के प्रवास में उसने महाराजा को शीघ्र निर्णय लेने के लिए कहा ताकि कश्मीर का विलय या तो भारत या फिर पाकिस्तान में समय रहते हो जाए। महाराजा परिस्थिति का आकलन करने में असफल रहा। वह विलय के प्रश्न को टालता रहा। माउंटबेटन ने तो यह भी कहा कि यदि देश के बैटवारे के पूर्व कश्मीर का विलय चाहे पाकिस्तान में ही हो जाता तो भी भारत को कोई आपत्ति न होती। सरदार पटेल ने भी ऐसा ही विचार व्यक्त किया था परन्तु महाराजा हरि सिंह के निर्णय न लेने के कारण भारत और पाकिस्तान के बीच एक गंभीर विवाद का जन्म हुआ।

पाकिस्तान के समर्थन से कश्मीर पर कबायलियों के आक्रमण से कुछ ही समय पूर्व पाकिस्तान ने कश्मीर के महाराजा से रियासत का पाकिस्तान में विलय करने के लिए एक अंतिम प्रयास किया था। परन्तु महाराजा ने तुरंत कोई निर्णय लेने से इंकार कर दिया। इसके बाद 22 अक्टूबर, 1947 को कश्मीर पर आक्रमण शुरू हुआ। पाकिस्तान के सीमांत प्रांत के कबायली पाँच दिनों में श्रीनगर से केवल पच्चीस मील दूर स्थित बारामूला पहुँच गए। आक्रमण शुरू होने के बाद घबराए हुए महाराजा हरि सिंह ने भारत में विलय की प्रार्थना की। महाराजा ने केंद्र से तुरंत सेनाएँ भेजने के लिए कहा ताकि आक्रमण करने वालों को भगाया जा सके।

हरि सिंह ने माना कि उनके सामने केवल दो ही विकल्प थे- या तो आक्रमणकारियों को कश्मीर की जनता पर आक्रमण की छूट दी जाए या फिर कश्मीर का भारत में विलय किया जाए। भारत ने 27 अक्टूबर 1947 को महाराजा की प्रार्थना को स्वीकार कर आक्रमण का सामना करने के लिए सेना को कश्मीर भेज दिया। राज्य के विलय की प्रार्थना स्वीकार करते हुए भारत ने यह कहा कि आक्रमणकारियों को खदेड़ देने के बाद विलय के प्रश्न पर राज्य की जनता की इच्छा पूछी जाएगी। पाकिस्तान ने भारत में कश्मीर के विलय को कभी स्वीकार नहीं किया। पाकिस्तान के प्रधानमंत्री लियाकत अली खान ने तो यहाँ तक कहा कि कश्मीर का भारत में विलय राज्य की जनता के साथ एक धोखा है। यह विचित्र बात थी कि पाकिस्तान ने कश्मीर पर आक्रमण शुरू किया और उसी ने भारत को आक्रामक कहना शुरू कर दिया। अंततः भारतीय सेना ने तेजी से मुकाबला करते हुए आक्रमणकारियों को पीछे खदेड़ना शुरू कर दिया परंतु कबायलियों को पाकिस्तान से प्राप्त हो रही सहायता के कारण भारतीय सेना को कुछ रुकावटें आईं। चूंकि भारत पाकिस्तान के साथ युद्ध नहीं चाहता था अतः 31 दिसम्बर, 1947 को भारत ने यह मामला संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद में उठाया। उसने पाकिस्तान-समर्थित आक्रमण को खत्म कराने के लिए संयुक्त राष्ट्र से सहायता माँगी। भारत ने पाकिस्तान को आक्रमणकारी बताया। पाकिस्तान ने भारत के आरोप को गलत बताते हुए इस बात पर बल दिया कि कश्मीर का भारत में विलय अवैध है। आक्रमणकारियों ने जो इलाका अपने अधिकार में ले लिया था पाकिस्तान ने वहाँ पर आजाद कश्मीर सरकार की स्थापना कर दी। पचास वर्ष बाद भी पाकिस्तान यही कहता रहा कि, उसके कब्जे वाला प्रदेश आजाद है जबकि भारत के अधीन प्रदेश को वह अवैध मानता रहा। जब मामला सुरक्षा परिषद के विचाराधीन था तब पाकिस्तान के प्रधानमंत्री ने कहा था कि उनकी सरकार कश्मीर में कुछ शर्तों के मान लेने पर लड़ाई बंद करवाने का प्रयास कर सकती है।

उन्होंने माँग की कि भारत अपनी सेनाएँ कश्मीर से वापस बुला ले, राज्य के सुरक्षा बलों को शस्त्रविहीन कर दिया जाए, शेख अब्दुल्ला की सरकार को हटाकर एक मिली-जुली सरकार बनाई जाए जिसमें आजाद कश्मीर के प्रतिनिधि भी शामिल हों। इसके पश्चात् अंतर्राष्ट्रीय देख-रेख में जनमत-संग्रह (Plebiscite) करवाया जाए। ये शर्तें भारत को स्वीकार्य नहीं थीं। अतः भारत और पाकिस्तान के बीच एक दीर्घकालिक संघर्ष आरंभ हो गया।

सुरक्षा परिषद ने काफी विचार-विमर्श के बाद 20 जनवरी, 1948 को तीन सदस्यों का एक आयोग गठित किया। इसमें भारत और पाकिस्तान का एक-एक प्रतिनिधि जबकि तीसरा सदस्य इन दोनों के द्वारा चुना जाता था। भारत ने चेकोस्लोवाकिया को और पाकिस्तान ने अर्जेंटीना को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। ये दोनों तीसरे नाम पर सहमत नहीं हुए। अतः सुरक्षा परिषद ने अमेरिका को तीसरा सदस्य मनोनीत किया। इस आयोग को कश्मीर विवाद निपटाने का कार्य सौंपा गया। बाद में सुरक्षा परिषद ने बेल्जियम और कोलम्बिया को भी इसका सदस्य बना दिया। यह आयोग भारत और पाकिस्तान के लिए संयुक्त राष्ट्र आयोग (United Nations Commission for India and Pakistan - UNCIP) कहलाया। सुरक्षा परिषद ने यह भी प्रस्ताव किया कि भारत के सैनिक और पाकिस्तानी कबायली दोनों ही वापस चले जाएँ। सभी प्रमुख राजनीतिक दलों की एक मिली-जुली अंतरिम सरकार बनाई जाए। सुरक्षा परिषद द्वारा गठित आयोग (UNCIP) जम्मू और कश्मीर की यात्रा करे, भारत तथा पाकिस्तान के बीच मध्यस्थता करके शांति स्थापित करे और जनमत संग्रह करवाए। इस प्रस्ताव से दोनों पक्ष संतुष्ट नहीं हुए।

संयुक्त राष्ट्र आयोग ने मामले को जाँच-पड़ताल की, भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों से बातचीत की और 11 दिसंबर, 1948 को अपनी रिपोर्ट पेश की। इसमें शांति बहाल करने के लिए और जनमत संग्रह करवाने के लिए कुछ प्रस्ताव किए गए। वे थे- युद्ध विराम के बाद पाकिस्तान कश्मीर से अपनी सेनाएँ वापस बुला लेगा, वह क्षेत्र कबायलियों और पाकिस्तानी सेना से खाली करवाया जाएगा, उसका प्रशासन स्थानीय अधिकारियों के द्वारा होगा तथा तीसरे, जब ये दोनों शर्तें पूरी हो जाएँगी और आयोग इसकी सूचना भारत को देगा तब भारत भी अपने सैनिकों को वापस बुला लेगा। समझौता होने तक भारत कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए सीमित संख्या में सुरक्षा बल कश्मीर में तैनात करेगा।

पाकिस्तान इन प्रस्तावों को नहीं मानना चाहता था परंतु अंत में समझाने-बुझाने पर दोनों देशों ने एक युद्ध विराम समझौते पर हस्ताक्षर किए और 1 जनवरी, 1949 की मध्य रात्रि को युद्ध विराम लागू हो गया। समझौते के अनुसार संयुक्त राष्ट्र आयोग की शर्तों को माने जाने के बाद जनमत-संग्रह करवाया जाना था।

युद्ध विराम रेखा, जो अब नियंत्रण रेखा कहलाती है वहाँ पर स्थित है जहाँ 1947 का युद्ध समाप्त हुआ था। इसके अनुसार कश्मीर का लगभग 32,000 वर्ग मील क्षेत्र पाकिस्तान के कब्जे में रह गया, जिसे उसने आजाद कश्मीर का नाम दिया। राज्य की कुल 80 लाख जनसंख्या में से 7 लाख पाकिस्तानी कब्जे वाले क्षेत्र में रह गए। संयुक्त राष्ट्र आयोग ने यह सिफारिश की थी कि युद्ध विराम लागू करने में यदि भारत और पाकिस्तान के बीच कोई विवाद होगा तो उसका निर्णय जनमत-संग्रह अधिकारी चेस्टर निमिट्ज करेंगे। भारत ने इस पूरे प्रश्न को सुरक्षा परिषद के सम्मुख पुनः पेश किया। चेस्टर निमिट्ज पाकिस्तान को कश्मीर से अपनी सेनाएँ वापस बुलाने के लिए सहमत नहीं करा सके इसलिए उन्होंने त्यागपत्र दे दिया।

मैक्नाughtन योजना (The Mcnaughton Plan): 1949 के अंत तक यह स्पष्ट हो गया था कि पाकिस्तान का अपने अधिकृत क्षेत्र से सेनाएँ वापस बुलाने कोई इरादा नहीं था। सेनाओं की वापसी के बिना जनमत-संग्रह हो ही नहीं सकता था। दिसंबर 1949 में सुरक्षा परिषद् के प्रधान कनाडा (Canada) के जनरल मैक्नाughtन थे। उन्होंने कश्मीर समस्या के समाधान के लिए एक योजना प्रस्तुत की।

इस योजना के अनुसार पाकिस्तान और भारत दोनों द्वारा सेनाओं को कश्मीर से वापस बुलाया जाना था। इस प्रकार जनमत-संग्रह के लिए कश्मीर का विसैन्यीकरण करना था। इस योजना का प्रमुख दोष यह था कि आक्रमण करने वाले (पाकिस्तान) और उसके शिकार (भारत) दोनों में कोई अंतर ही नहीं किया गया था। जहाँ पाकिस्तान ने पहले आक्रमणकारियों का समर्थन किया और फिर स्वयं आक्रामक बना वहीं दूसरी ओर भारतीय सेनाएँ महाराज हरी सिंह के आग्रह पर रक्षा के लिए भेजी गई थीं। भारत ने यह कार्य राज्य के औपचारिक विलय के बाद ही किया था। अतः भारत ने इस योजना को अस्वीकार कर दिया। भारत के प्रतिनिधि बी.एन. राव ने सुरक्षा परिषद् में कहा कि आज स्थिति यह है कि पाकिस्तान जो 1948 से कहता आ रहा था कि उसने आक्रमण करने वालों को या आजाद कश्मीर की सेनाओं को कोई सहायता नहीं दी थी वह अब स्वयं आक्रामक है और राज्य के लगभग आधे भाग पर उसका अवैध कब्जा है। यह एक ऐसा आक्रमण है जिसका कोई भी अनुमोदन नहीं करता परंतु मैक्नाughtन योजना में उसको अस्वीकार करने का कोई संकेत ही नहीं है।

डिक्सन प्रस्ताव (The Dixon Proposals): मैक्नाughtन योजना के विफल होने के बाद सुरक्षा परिषद् ने 24 फरवरी, 1950 को यह प्रस्ताव किया कि पाँच महीने के अंदर भारत और पाकिस्तान दोनों की सेनाएँ कश्मीर से वापस बुला ली जाएँ ताकि जनमत संग्रह करवाया जा सके। सुरक्षा परिषद् के प्रस्ताव को लागू करने का कार्य ऑस्ट्रेलिया के उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश सर ओवेन डिक्सन (Sir Owen Dixon) को सौंपा गया। मई के अंत में डिक्सन भारतीय उपमहाद्वीप पहुँचे। सैनिकों की वापसी के बारे में कोई समझौता न हो सका और डिक्सन के प्रयास बेवततीजा रहे। भारत ने अपनी सेनाओं को इसलिए वापस नहीं बुलाया क्योंकि भारत आक्रमणकर्ता नहीं था और उसकी सेनाएँ अपने देश के एक भाग में पाकिस्तानी आक्रमण का सामना करने के लिए भेजी गई थीं।

डिक्सन ने स्वयं यह स्वीकार किया कि अक्टूबर 1947 में कबायलियाँ और मई 1948 में पाकिस्तानी सेना का कश्मीर में प्रवेश अंतर्राष्ट्रीय कानून की अवहेलना थी। फिर भी डिक्सन ने यह प्रस्ताव रखा कि युद्ध विराम रेखा को आधार मानकर कश्मीर राज्य का विभाजन कर दिया जाए। साथ ही यह भी कहा कि कश्मीर घाटी का भविष्य तय करने के लिए जनमत-संग्रह करवाया जाए। भारत को यह प्रस्ताव बिलकुल भी स्वीकार्य नहीं था। स्वयं डिक्सन ने अपनी गलती महसूस की और त्यागपत्र दे दिया। उन्होंने भारत और पाकिस्तान के बीच सीधी बातों का सुझाव दिया।

ग्राहम मिशन (The Graham Mission): डिक्सन के प्रस्तावों की असफलता के बाद लंदन में हुए राष्ट्रमंडल सम्मेलन में कश्मीर समस्या के समाधान के लिए एक और प्रयास किया गया। इसमें सुझाव दिया गया कि पहले कश्मीर का असेन्यीकरण करवाया जाए और फिर यह मामला पंच-निर्णय (Arbitration) के लिए सौंप दिया जाए। भारत ने यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। इस बीच शेख अब्दुल्ला सरकार ने जम्मू कश्मीर राज्य के लिए संविधान निर्माण हेतु संविधान सभा के चुनाव का निर्णय लिया। इससे पाकिस्तान परेशान हो गया और उसने एक बार फिर फरवरी 1951 में कश्मीर का प्रश्न सुरक्षा परिषद् में उठाया। परिषद् ने ब्रिटेन और अमेरिका के संयुक्त प्रस्ताव को स्वीकार करके डिक्सन के स्थान पर एक नए मध्यस्थ की नियुक्ति का निर्णय किया। इसके अनुसार अमेरिका के डॉ. फ्रैंक पी. ग्राहम को भेजा गया। उन्होंने जनमत-संग्रह से पहले असेन्यीकरण का सुझाव दिया। परंतु इस विषय पर कोई समझौता न हो सका कि व्यवस्था बनाए रखने के लिए कितनी संख्या में सेना को रखना उचित होगा। अतः ग्राहम ने भी त्यागपत्र दे दिया और दोनों को प्रत्यक्ष बातचीत करने का सुझाव दिया।

ग्राहम मिशन की असफलता के साथ ही कश्मीर के संबंध में संयुक्त राष्ट्र के प्रयासों को स्थगित कर दिया गया। ग्राहम के सुझाव के अनुसार भारत और पाकिस्तान के प्रधानमंत्रियों की कई मुलाकातें हुईं। उन्होंने यह तय किया कि कश्मीर में 1954 में जनमत-संग्रह करवाया जाए। परंतु जनमत संग्रह प्रशासक (Plebiscite Administrator) के नाम पर सहमति न हो पाने के कारण यह नहीं हो सका।

इसके पश्चात् 1957-58 में संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् के तत्कालीन अध्यक्ष गुन्नार जारिंग (Gunnar Jarring) ने भारत और पाकिस्तान की यात्रा के बाद सुरक्षा परिषद् को बताया कि 1948 के युद्ध विराम समझौते के बाद इतनी घटनाएँ घटी हैं कि अब जनमत-संग्रह प्रस्ताव को लागू करवा पाना व्यावहारिक तौर पर असंभव हो गया है। उन्होंने सुरक्षा परिषद् को याद दिलाया कि जो अंतर्राष्ट्रीय समझौते तुरंत लागू नहीं किए जाते, उनको बाद में लागू करवा पाना कठिन हो जाता है क्योंकि परिस्थितियाँ बदल जाती हैं। इस प्रकार लगभग पचास वर्ष बाद पाकिस्तान द्वारा अपनी सेनाएँ कश्मीर से वापस न बुलाने के कारण जनमत संग्रह नहीं हो सका।

इस बीच जम्मू-कश्मीर की विधानसभा ने, जिसका चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर हुआ था, 6 फरवरी 1954 को भारत में कश्मीर के विलय का अनुमोदन कर दिया। कश्मीर के लिए जो संविधान बनाया गया उसमें राज्य को भारत का अभिन्न

अंग घोषित किया गया। इस प्रकार कश्मीर की जनता ने अपनी इच्छा जाहिर कर दी थी। जहाँ तक भारत का प्रश्न है उसने जनता की इच्छा के अनुसार 26 जनवरी, 1957 के विलय को अंतिम रूप दे दिया। पाकिस्तान ने अपनी सेनाएँ वापस नहीं बुलाई इसलिए जनमत-संग्रह नहीं हो सका परन्तु संविधान सभा के द्वारा जनता ने महाराजा के विलय के निर्णय का समर्थन कर ही दिया।

कश्मीर विवाद की प्रकृति (Nature of Kashmir Dispute)

जम्मू-कश्मीर की समस्या इतनी उलझी हुई है कि पचास वर्ष से ज्यादा समय में भी उसका कोई हल नहीं निकल सका। दूसरी ओर पाकिस्तान, जो कि इस्लामी गणराज्य होने का दावा करता है, उसके लिए कश्मीर को प्राप्त करना इसलिए आवश्यक है क्योंकि उस राज्य में मुसलमान बहुसंख्या में हैं और पाकिस्तान मुसलमानों के लिए अलग राष्ट्र में विश्वास करता है।

पाकिस्तान का मुख्य तर्क है कि प्रस्तावित जनमत-संग्रह भारत की हठधर्मिता के कारण नहीं हो सका। दूसरी ओर भारत का तर्क है कि 1948 के युद्ध विराम समझौते के अनुसार सेनाओं की वापसी पहली शर्त थी। पाकिस्तान ने इस शर्त को पूरा नहीं किया। साथ ही भारत पर पाकिस्तान ने 1965 और 1971 में युद्ध थोप दिए और आगे 1989 से कश्मीर में आतंकवाद फैलता गया। भारत यह नहीं मानता कि उसने अपना कोई वादा तोड़ा है क्योंकि राज्य की चुनी हुई संविधान सभा ने भारत में राज्य के विलय को स्वीकार किया है।

पाकिस्तान के दृष्टिकोण से 1996 में भी समस्या यही थी कि जनमत-संग्रह अवश्य होना चाहिए। पाकिस्तान का विश्वास है कि यदि आज जनमत-संग्रह होता है तो कट्टरपंथी बहुमत के कारण कश्मीर अवश्य ही पाकिस्तान के पक्ष में मत देगा। भारत की दृष्टि में समस्या केवल इतनी है कि पाकिस्तान कश्मीर के एक-तिहाई से अधिक भाग पर गैर-कानूनी कब्जा बनाए हुए है जो उसे खाली करना चाहिए। साथ ही भारत विश्व समुदाय का ध्यान कश्मीर में आतंकवाद की ओर भी दिलाता रहा है जिसे पाकिस्तान का समर्थन प्राप्त है।

पाकिस्तान के तर्क (Arguments of Pakistan)

कश्मीर के पाकिस्तान में विलय की माँग के समर्थन में, पाकिस्तान ने समय-समय पर कई तर्क दिए हैं। पहला, दो राष्ट्रों के सिद्धांत के आधार पर पाकिस्तान का तर्क है कि कश्मीर में मुसलमानों की काफी अधिक जनसंख्या होने के कारण उसका स्वाभाविक स्थान पाकिस्तान में है। ब्रिटिश भारत के विभाजन का आधार ही यही था कि मुस्लिम बहुसंख्या वाले प्रांतों को मिलाकर, पाकिस्तान का निर्माण होगा इसलिए कश्मीर को पाकिस्तान का ही अंग होना चाहिए। दूसरा, यह तर्क दिया गया कि पाकिस्तान में बहने वाली तीन नदियाँ सिंधु, झेलम और चिनाब का उद्गम कश्मीर में है। पाकिस्तान की कृषि सिंचाई पर निर्भर करती है इसलिए भी कश्मीर को पाकिस्तान का अंग होना चाहिए। यदि कश्मीर में कोई ऐसी सरकार बनती है जो पाकिस्तान में पानी नहीं आने देगी तो उसकी अर्थव्यवस्था बर्बाद हो जाएगी। इन नदियों का पानी पाकिस्तान के लिए बहुमूल्य है इसलिए उनके उद्गम को भारत में नहीं रहने दिया जा सकता। परन्तु पानी के बँटवारे के संबंध में 1961 का समझौता होने के बाद इस तर्क का कोई मूल्य नहीं रह गया। तीसरे, पाकिस्तान ने कहा कि कश्मीर राज्य की अर्थव्यवस्था बहुत कुछ पाकिस्तान पर निर्भर करती है। कश्मीर में अधिकतर प्राकृतिक उत्पाद, विशेषकर लकड़ी का प्रमुख बाजार पाकिस्तान में था। कश्मीर को अधिकतर खाद्य पदार्थ पाकिस्तान भेजता था। इस प्रकार पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर को अलग रखने पर दोनों की अर्थव्यवस्था संकट में पड़ जाएगी। चौथे, भौगोलिक तौर पर कश्मीर पाकिस्तान से काफी निकट है। पाकिस्तान का तर्क है कि कश्मीर की काफी लंबी सीमा पाकिस्तान के साथ मिलती है जबकि तीसरी सीमा का एक टुकड़ा ही कश्मीर को भारत के साथ जोड़ता है इसलिए भी कश्मीर को पाकिस्तान में होना चाहिए। इन सबके अतिरिक्त पाकिस्तान की सैनिक शक्ति के लिए कश्मीर बहुत उपयोगी है। न केवल पाकिस्तानी सेना में बड़ी संख्या में कश्मीरी जवान थे बल्कि पाकिस्तान की सुरक्षा रणनीति भी कश्मीर को पाकिस्तान के अंग के रूप में रखने की है। कश्मीर को भारत में छोड़ना पाकिस्तान के लिए दीर्घकालिक खतरा है।

भारत की स्पष्ट स्थिति (India's Clear Position): भारत ने दो राष्ट्रों के सिद्धांत को कभी नहीं माना। भारत की निष्ठा धर्मनिरपेक्षता के प्रति है। विभाजन के समय धार्मिक आधार पर जनसंख्या की अदला-बदली का कोई विचार नहीं था। परन्तु अधिकतर अल्पसंख्यकों को पाकिस्तान से अपना घर और संपत्ति छोड़कर भारत में आना पड़ा। भारत धर्म को राज्य का आधार नहीं मानता है। भारतीय नेताओं ने देश का विभाजन हिंसा से बचने के लिए स्वीकार किया था, धर्म के आधार पर बाँटने के लिए नहीं। इसलिए कश्मीर को बहुसंख्यक लोगों के धर्म के आधार पर पाकिस्तान का भाग नहीं बनाया जा सकता।

पाकिस्तान का यह तर्क कि उसकी तीन मुख्य नदियों का उद्गम कश्मीर में है, स्वीकार नहीं किया जा सकता। वास्तव में केवल झेलम कश्मीर से निकलती है। सिंधु और सतलज का उद्गम चीन में होता है। इसके अतिरिक्त यह ध्यान देने योग्य है कि देशों की सीमाएँ कभी भी नदियों के स्रोत के आधार पर तय नहीं की जातीं। यूरोप में अनेक ऐसी नदियाँ हैं जो कि विभिन्न देशों में

होकर बहती हैं इसलिए पाकिस्तान के दावे का कोई महत्व नहीं है।

पारस्परिक आर्थिक निर्भरता, कश्मीर पर पाकिस्तान के दावे को उचित नहीं ठहरा सकती। पाकिस्तान और भारत की एक-दूसरे पर आर्थिक निर्भरता, कश्मीर और पाकिस्तान की पारस्परिक निर्भरता से कहीं अधिक है। वास्तव में यह तर्क भी निराधार है क्योंकि संसार के सभी देशों की एक-दूसरे पर निर्भरता बढ़ रही है।

इसी प्रकार पाकिस्तान का यह तर्क कि कश्मीर की अधिकतर सीमा पाकिस्तान के साथ लगती है इसलिए उसे पाकिस्तान का भाग होना चाहिए, युक्तिसंगत नहीं है। अगर यह बात मान ली जाए तो बहुत सारे देश अपनी स्वतंत्रता खो बैठेंगे। पाकिस्तान का यह कहना है कि उसकी रक्षा के लिए बहुत से सैनिक कश्मीर से लिए जाते हैं, भी अर्थहीन है। पाकिस्तान की एक मजबूत सेना है जिसका मुख्य आधार कश्मीर की सीमित जनसंख्या नहीं हो सकती।

(ii) सियाचिन विवाद (Siachen Dispute)

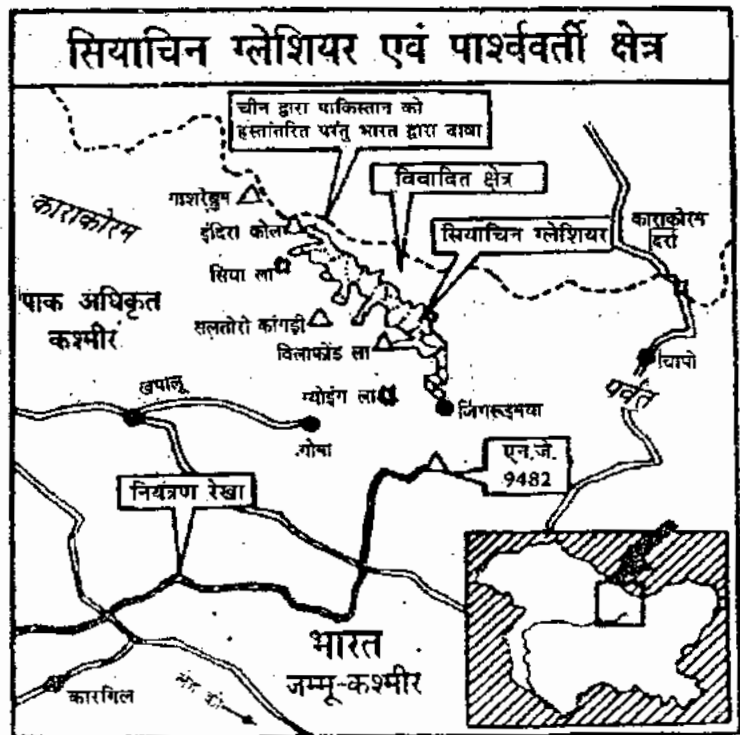
सियाचिन हिमनद (Siachen Glacier) के मामले में भारत अपने पहले के दावों पर कायम है, उनमें किसी तरह का बदलाव नहीं आया है और पाकिस्तान को चाहिए कि सबसे पहले 6300 मीटर ऊँचे इस हिमनद (Glacier) पर भारत के हक को प्रामाणिक माने। दरअसल, भारत यह चाहता है कि पाकिस्तान सियाचिन पर भारत की वास्तविक उपस्थिति (Actual Ground Position) को स्वीकार करे। जहाँ भारतीय फौजें वर्ष 1984 से तैनात हैं। पाकिस्तान चाहता है कि भारत 1972 की स्थिति में अपनी सेनाओं को वापस बुला ले। वर्तमान में भारतीय फौजें 75 किमी. लंबे इस हिमनद पर नियंत्रण कर बेहतर स्थिति में हैं। भारत का कहना है कि इस्लामाबाद पक्के तौर पर सेनाओं की वास्तविक उपस्थिति रेखा (Actual Ground Position Line-AGPL) को माने तभी वह अपनी फौजों को यहाँ से पीछे हटायेगा। बहरहाल वर्ष 2003 के बाद यहाँ कभी संघर्ष नहीं हुआ है।

सियाचिन का सामरिक महत्व (Strategic Significance of Siachen)

1. इससे काफी ऊँचाई मिल जाती है ताकि दुश्मनों पर सामरिक बढ़त मिल सके।
2. पाकिस्तानी और चीनी सीमाओं पर एकत्र उनकी सेनाओं के बीच सियाचिन एक सामरिक निगरानी स्थल का कार्य करता है।
3. यह दक्षिण में लद्दाख घाटी की रक्षा में सहायक है तथा साथ ही कारगिल क्षेत्र को भी इससे मदद मिलती है।

सियाचिन मुद्दे पर द्विपक्षीय वार्ताएँ (Bilateral Talks on Siachen Issue)

भारत और पाकिस्तान समग्र वार्ता प्रक्रिया के आठ मुद्दों में से सियाचिन भी एक है। इस वार्ता प्रक्रिया के पहले भारत और पाकिस्तान छह बैठकें कर चुके हैं। आशा है शीघ्र ही किसी शिखर सम्मेलन के दौरान भारत और पाकिस्तान दोनों इस विषय में कोई सकारात्मक वार्ता कर इस विवाद को हल करेंगे।

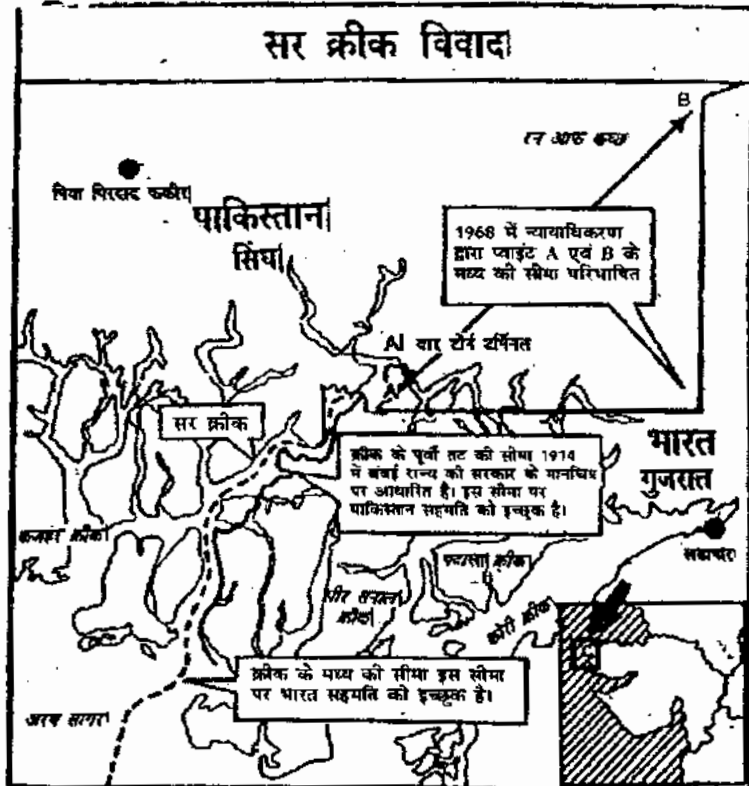


(iii) सरक्रीक विवाद (Sir Creek Dispute)

देश के पश्चिम में स्थित राज्य गुजरात में भारत और पाकिस्तान के बीच अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तीन खण्डों से बनती है: (1) पूर्वी टर्मिनल (ET) और पश्चिमी टर्मिनल (WT) के बीच का खण्ड, इसका निर्धारण, वर्ष 1968 के कच्छ ट्रिब्युनल अवार्ड (Kutch Tribunal Award) द्वारा किया गया है; (2) पश्चिमी टर्मिनल (WT) और सर क्रीक के बीच का सेगमेंट; तथा (3) सर क्रीक।

सर क्रीक 96 किमी (60 मील) की एक लम्बी दलदली पट्टी है जिसमें जहाँ तहाँ जमीन के टुकड़े हैं तथा कच्छ के रन के इलाके में इसे लेकर भारत और पाकिस्तान के बीच विवाद है। क्रीक का मुहाना अरब सागर में मिलता है। यह भारत के गुजरात राज्य के कच्छ क्षेत्र को पाकिस्तान के सिंध प्रांत से अलग करता है। सर क्रीक का नाम उस ब्रिटिश प्रतिनिधि के नाम पर पड़ा है जिनसे निवेदन किया गया था कि वे सिन्ध के शासक और कच्छ के राव महाराज के बीच क्रीक के तट पर पड़े ईंधन को लेकर उठे विवाद की मध्यस्थता करें। भारत ने 'ग्रीन लाइन' के नाम से जानी जाने वाली सीमा-रेखा का प्रतिवाद किया है। भारत का कहना है कि यह एक सांकेतिक रेखा (Indicative Line) है जिसे तकनीकी तौर पर रिबन लाइन (Ribbon Line) कहा जाता है। भारत अपनी इस माँग पर दृढ़ है कि सीमा बीच-धारा में पड़ती है जैसा कि वर्ष 1925 में बने एक दूसरे नक्शे में दर्शाया गया है तथा वर्ष 1924 में बीच-धारा में गाड़े गए स्तंभों को उसका कार्यान्वयन स्थल माना गया। नदी तटीय सीमाओं के निर्धारण के मामले में भारत 'थालवेग सिद्धांत' (Thalweg Doctrine) को मानता है।

अंतर्राष्ट्रीय विधि के अंतर्गत 'थालवेग सिद्धांत' के अनुसार दो राज्य आपसी सहमति से मध्य धारा (Mid-Channel) को सीमा-रेखा मान सकते हैं।



भारत-पाक वार्ताओं की वर्तमान स्थिति (Current Status of Indo-Pak Talks)

कम्पोजिट डायलाग के आठ मुद्दे (Eight Issues of composite Dialogue)

1. कश्मीर मुद्दा: चरणबद्ध तरीके से कश्मीर के मुद्दे को सुलझाने का प्रयास करना।
2. आतंकवाद एवं नशीले पदार्थों की तस्करी: (1) एक निष्पक्ष अंतर्राष्ट्रीय एजेंसी के द्वारा आतंकवाद को परिभाषित करके उस पर कार्रवाई की जानी चाहिए; (2) नशीले पदार्थों की तस्करी रोकने से संबंधित वार्ता जारी रहनी चाहिए; (3) सीमा पर आतंकवादी घुसपैठ एवं नशीले पदार्थों की तस्करी से संबंधित गतिविधियों को रोकने हेतु दोनों देशों में सीमा पर तैनात सुरक्षा बलों के बीच बेहतर समन्वय स्थापित करना चाहिए।
3. आर्थिक एवं वाणिज्यिक सहयोग: इसके अंतर्गत निवेश, एमएफएन, सीमा प्रवेश प्रावधानों का सरलीकरण, नये मार्गों को खोलना, आधारभूत संरचना के लिए संयुक्त उद्यम स्थापित करना, तेल एवं गैस, इस्पात एवं ऊर्जा के क्षेत्रों में सहयोग स्थापित करना। सीमा पार के समाचार पत्रों के प्रसार (Circulation) पर रोक हटाना ताकि दोनों देशों के विचारों को ठीक से समझा जा सके।
4. शांति एवं सुरक्षा: परमाणु शस्त्र रखने, आतंकवादी समूहों से निपटने, आतंकवादी हमलों, सैन्य दक्षता से सम्बन्धित मुद्दे इसमें शामिल हैं। साथ ही पारम्परिक सैनिकों की संख्या को भी कम करना आदि इसी संघटक के भाग हैं।
5. सियाचिन: यह विवाद 1980 के दशक में उस समय उठा जब पाकिस्तानी सरकार की स्वीकृति से कुछ पर्वतारोही अभियान पर आए। भारत ने इसका विरोध किया और हवाई कार्रवाई की। अब शांति स्थापित करने के क्रम में दो विकल्प उभरकर सामने आए हैं; (क) दोनों पक्षों को चरणबद्ध ढंग से अपने सैनिकों को हटाना चाहिए; (ख) इस क्षेत्र को शांति क्षेत्र के रूप में विकसित करना चाहिए।

6. सर त्रीक: भारत की खम्भात की खाड़ी और पाकिस्तान के सिंध क्षेत्र के बीच 60 मील लम्बी जल पट्टी (Strip) है। इस क्षेत्र पर दोनों ही देश अपना-अपना दावा पेश करते हैं। अपरिभाषित सीमा क्षेत्र के कारण दोनों देशों के निर्दोष मछुआरों को सीमा उल्लंघन के आरोप में पकड़ लिया जाता है। इस मुद्दे का समाधान तुरंत होना चाहिए था परंतु वार्ता के कई दौर के बाद भी कोई समाधान नहीं निकल पाया है।
7. मैत्रीपूर्ण आदान-प्रदान: ट्रेक II, III एवं IV के स्तर पर संबंधों को बनाए रखने हेतु अनेक उपाय किये जाने चाहिए— जैसे (क) बीजा-प्रक्रिया को और उदार बनाना (ख) पंजीकरण एवं जांच प्रक्रिया को भी सरल बनाना। (ग) शैक्षणिक संस्थानों के बीच बेहतर समन्वय स्थापित करना। (घ) रेल, सड़क और जल माध्यम से आवाजाही बढ़ाना।
8. बुलर बैराज: इस विवाद का जन्म वर्ष 1985 में हुआ था जब भारत ने झेलम नदी पर बाँध का निर्माण शुरू किया था। पाकिस्तान ने इस निर्माण का विरोध किया और उसने इसे सिंधु जल संधि 1960 का उल्लंघन माना परंतु भारत का मानना है कि यह बैराज कश्मीर में ऊर्जा आपूर्ति हेतु अनिवार्य है।

भारत-पाकिस्तान वार्ता की नई संभावना (New Possibility of Indo-Pak Talk)

जून, 2013 में नवाज शरीफ के नेतृत्व में पाकिस्तान मुस्लिम लीग एन (पीएमएलएन) पार्टी की सरकार बनी है। इससे भारत पाकिस्तान के साथ द्वि-पक्षीय वार्तालाप आगे बढ़ने के प्रति आशान्वित हुआ है। सार्थक वार्तालाप के लिए भारत 26/11 के मुम्बई आतंकवादी हमले के संबंध में पाकिस्तान से ठोस कार्रवाई की अपेक्षा करता है। मुंबई पर 2008 में हुए आतंकवादी हमले के बाद से ही भारत-पाकिस्तान के बीच वार्तालाप स्थगित है। वार्तालाप को शुरू करने में अन्य कई छोटी-छोटी लेकिन महत्वपूर्ण घटनाओं ने भी बाधा पैदा की है। जनवरी, 2013 में भारत-पाक सीमा पर भारतीय सेना के दो जवानों के सिर काट दिए गए थे जिससे भारत में एक बड़ा जनक्रोध देखने को मिला था। सीमा पर आतंकवाद से जुड़े अन्य मामलों में भी पाकिस्तान भारत से किए अपने वायदों को पूरा नहीं कर पाया है।

भारत पाकिस्तान से अति इष्ट राष्ट्र (Most Favoured Nation) का दर्जा दिए जाने संबंधी निर्णय को कार्यान्वित करने की आशा करता है। यह पाकिस्तान के भी आर्थिक हित में है कि वह भारत के साथ अपने संबंध जल्द से जल्द सामान्य बनाए। पाकिस्तान दिसंबर 2012 में ही उत्पादों पर लागू सभी तरह के प्रतिबंधों को समाप्त कर भारत को अति इष्ट राष्ट्र का दर्जा देने वाला था लेकिन वहाँ के कुछ व्यापारिक समूहों द्वारा विरोध किए जाने के कारण वह ऐसा नहीं कर सका। पाकिस्तान को यह बात अच्छी तरह मालूम है कि भारत-पाकिस्तान संबंधों को सामान्य बनाने के लिए दोनों देशों के बीच आर्थिक अन्तःक्रिया बढ़ाना आवश्यक है। भारत ने पाकिस्तान को 1996 में ही अति इष्ट राष्ट्र (एमएफएन) का दर्जा दिया था लेकिन पाकिस्तान भारत को अब तक यह दर्जा नहीं दे पाया है। पाकिस्तान ने भारत से व्यापार होने वाले व्यापारिक वस्तुओं से संबंधित नकारात्मक सूची (Negative List) को 31 दिसंबर, 2012 तक समाप्त करने का लक्ष्य तय किया था लेकिन वह ऐसा नहीं कर सका। उसने भारत को यह वचन दिया था कि जैसे ही नई सरकार का गठन हो जाएगा वह जल्द से जल्द नकारात्मक सूची को समाप्त कर देगा।

भारत के ज्यादातर लोग पाकिस्तान समर्थित आतंकवाद, पाकिस्तान के साथ सैन्य दुश्मनी, उसके परमाणु अस्त्र तथा कश्मीर पर उसके दावे को लेकर चिंतित रहते हैं। पाकिस्तान को लेकर भारतीय जनमानस में एक प्रकार का अविश्वास देखा जाता है। पाकिस्तान में भी एक बड़ा तबका भारत को अविश्वास की नजर से देखता है। लेकिन इन सबके बीच एक सच्चाई यह भी है कि दोनों देशों के 80 प्रतिशत से ज्यादा लोग भारत-पाकिस्तान के बीच शांति चाहते हैं। नवनिर्वाचित प्रधानमंत्री नवाज शरीफ ने यह स्पष्ट कहा है कि वे भारत-पाकिस्तान के बीच की वार्ता को उस कड़ी को जोड़ेंगे जो 1998 के लाहौर वार्ता के बाद टूट गई थी। वे भारत-पाकिस्तान के बीच मित्रता एवं शांति के पक्षधर हैं। लेकिन शांति निर्माण प्रक्रिया को पाकिस्तानी सेना द्वारा समर्थन दिया जाएगा या नहीं, यह हमेशा एक विवाद का विषय रहा है। नवाज सरकार का वैसे भी सेना के साथ संबंध सामान्य नहीं रहा है। हालाँकि पाकिस्तान के नए प्रधानमंत्री नवाज शरीफ ने पाकिस्तान में कार्य कर रहे भारत विरोधी तत्वों एवं भाषणों पर रोक लगाने, 1999 के कारगिल युद्ध तथा 2008 के मुम्बई आतंकी हमले की जाँच कराने की बात कही है जो निश्चित तौर पर भारत के हित में है। अब देखने वाली बात यह होगी कि भारत के साथ सामान्य संबंध बनाने के प्रयास में सेना किस हद तक नवाज सरकार का साथ देती है।

भारत-पाकिस्तान के बीच कुछ अन्य छोटे-छोटे मुद्दे हैं जिनका समाधान दोनों देशों को करना है। इनमें से एक मुद्दा बीजा नीति को और अधिक उदार बनाने से जुड़ा है। दोनों देशों की सरकारों को यह प्रयास करना होगा कि जो भी एक-दूसरे देश में जाना चाहते हों उन्हें आसानी से बीजा प्राप्त हो। हाल के वर्षों में दोनों देशों के बीच एक नयी समस्या भी देखने को मिल रही है। यह समस्या एक-दूसरे देश में स्थित उच्चायोगों के कर्मचारियों की सुरक्षा से जुड़ी है। पिछले कुछ वर्षों में दोनों देशों ने अपने-अपने उच्चायोगों में कर्मचारियों के साथ दुर्व्यवहार एवं इंटेलेजेंस एजेंसियों द्वारा हमला किए जाने जैसी शिकायतें की हैं।

भारत नवाज सरकार की ओर आशा भरी निगाहों से देख रहा है लेकिन भारत में कई विश्लेषक यह मानते हैं कि भारत के दृष्टिकोण से कई ऐसे महत्वपूर्ण मुद्दे हैं जो पूर्णतया नवाज शरीफ के नियंत्रण में नहीं हैं। ऐसे मुद्दों का समाधान करने के लिए पाकिस्तान सरकार, वहाँ की सेना एवं कट्टरपंथी इस्लामिक समूहों की भूमिका महत्वपूर्ण होगी।

भारत में आतंकवादी घटनाओं पर नियंत्रण के लिए जरूरी है कि पाकिस्तान के साथ-साथ अफगानिस्तान में भी आतंकवादी समूहों को नियंत्रित किया जा सके। इस परिप्रेक्ष्य पाकिस्तान की महत्वपूर्ण भूमिका है। उसकी यह भूमिका तब और भी बढ़ जाती है जब 2014 के अंत तक अफगानिस्तान से अमरीकी नेतृत्व वाला अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा सहायता बल (आईएसएफ) वापस जाने वाला है।

भारत-पाकिस्तान के बीच पिछले कुछ दिनों में जेल के अंदर बंद एक-दूसरे देश के कैदियों पर जानलेवा हमले जैसी घटनाएँ घटित हुई हैं। हमलों में इनकी जान तक चली गई। अप्रैल, 2013 में ऐसे ही एक जानलेवा हमले में लाहौर के कोट लखपत जेल में बंद भारतीय कैदी सरबजीत सिंह की जान चली गई जिससे भारत में तीव्र जनाक्रोश भड़का था। प्रतिक्रिया स्वरूप मई, 2013 में भारत के जम्मू स्थित कोट भलवल सेंट्रल जेल में बंद पाकिस्तानी कैदी सनाउल्लाह पर जानलेवा हमला हुआ। इस घटना के कुछ दिनों बाद उसकी की मृत्यु हो गई। भारत एवं पाकिस्तान दोनों को ऐसी घटनाओं पर रोक लगाने के लिए कदम उठाना चाहिए। कैदियों की स्थिति जानने के लिए भारत-पाकिस्तान के बीच एक न्यायिक समिति का भी गठन किया गया है। कैदियों से संबंधित भारत-पाकिस्तान न्यायिक समिति ने पाकिस्तान के जेलों में बंद भारतीय कैदियों की स्थिति जानने के लिए अप्रैल-मई, 2013 में पाकिस्तान के कराची, रावलपिंडी तथा लाहौर में स्थित जेलों की यात्रा की थी। यात्रा के पश्चात् इस समिति ने पाकिस्तान के जेलों में बंद भारतीय कैदियों की सुरक्षा मजबूत करने की अनुशंसा की थी। भारत-पाकिस्तान के बीच गिरफ्तार व्यक्तियों के संदर्भ में मई, 2008 में एक काउन्सलर संपर्क संबंधी समझौता (Consular Access Agreement) किया गया था। इस समझौते के अंतर्गत गिरफ्तारी के तीन महीने के अंदर गिरफ्तार व्यक्ति को काउन्सलर से संपर्क करने की सुविधा उपलब्ध करानी होगी न कि कैदियों के कारावास की अवधि समाप्त होने पर। भारत-पाकिस्तान की महिलाओं, बच्चों, मानसिक रूप से क्षिप्त व्यक्तियों, बुजुर्ग कैदियों के लिए मानवीय एवं सहायता के आधार पर उन्हें रिहा किए जाने की व्यवस्था करनी चाहिए। कई बार लोग विदेशी अधिनियम (Foreigners Act) एवं बीजा का उल्लंघन करने तथा गलती से सीमा पार करते जैसे मामलों में पकड़े जाते हैं। इन्हें मानवीय आधार पर रिहा किए जाने की व्यवस्था होनी चाहिए।

दिसंबर 2012 में भारत-पाकिस्तान के बीच परमाणु संबंधी विश्वास बहाली उपायों पर विशेषज्ञ स्तरीय बातें हुई थी। बैठक में लाहौर समझौता, जापान के अनुसार विश्वास बहाली उपायों के कार्यान्वयन एवं उसे मजबूत बनाने के उपायों पर भी विचार-विमर्श किया गया था। इस बातचीत में परस्पर स्वीकार्य अतिरिक्त विश्वास बहाली की संभावनाओं पर भी विचार-विमर्श किया गया था।

दोनों पक्षों ने वर्तमान बैलिस्टिक मिसाइल के परीक्षण एवं चेतावनी एवं परमाणु अस्त्रों से दुर्घटनावश होने वाले जोखिम को कम करने संबंधी समझौते की समीक्षा भी की। दोनों पक्षों ने इस बात पर संतोष व्यक्त किया कि परमाणु अस्त्रों के दुर्घटनावश जोखिम को कम करने संबंधी समझौता की फरवरी 2013 से पांच साल आगे तक के लिए बढ़ा दिया गया है।

सितंबर 2012 में भारत के विदेश मंत्री एस.एम. कृष्ण पाकिस्तान गए थे। वहाँ उन्होंने पाकिस्तान के विदेश मंत्री हिना रब्बानी खार से मिलकर द्विपक्षीय मुद्दों पर बातचीत की थी। इस बातचीत में आतंकवाद एवं तैशेली विवादों की रोकथाम, मानवीय मुद्दे, वाणिज्यिक एवं आर्थिक सहयोग, वलर बाध, तुलबल नौवहन परियोजना, सर क्रोक, सियाचिन, शांति एवं सुरक्षा, विश्वास बहाली के उपायों, जम्मू-कश्मीर तथा मित्रतापूर्ण विनियमों को बढ़ावा देने जैसे उपायों पर चर्चा की गई थी। दोनों देश सभी विवादित मुद्दों का शांतिपूर्ण समाधान करने पर सहमत थे तथा भारत-पाकिस्तान के बीच सभी क्षेत्रों में सहयोग एवं विश्वास पर आधारित संबंधों को बढ़ाने पर भी सहमत थे।

नियंत्रण रेखा के आर-पार विश्वास बहाली उपाय करने संबंधी संयुक्त कार्यकारी दल (Joint Working Group on Cross-Line of Control Confidence Building Measures) की अनुशंसाओं के संदर्भ में दोनों देशों ने निम्नलिखित प्रमुख निर्णय लिए हैं-

- पर्यटन एवं धार्मिक यात्राओं के साथ नियंत्रण रेखा के आर-पार यात्रा को बढ़ावा दिया जाएगा।
- नियंत्रण रेखा के दोनों ओर पर्यटन एवं धार्मिक स्थलों को चिह्नित किया जाएगा तथा प्राधिकृत अधिकारियों को संबंधित सूचना उपलब्ध करायी जाएगी।
- ऐसी यात्रा निर्दिष्ट टूर ऑपरेटर द्वारा सामूहिक रूप में करवाई जाएगी तथा यह 15 दिनों से ज्यादा की नहीं होगी।
- ऐसे पर्यटन एवं धार्मिक यात्राएँ अप्रैल से अक्टूबर के बीच की जा सकेंगी।
- ऐसी यात्राओं के लिए शुरुआती प्रवेश चाकोटी-उरु तथा रावलकोट-पूछ प्रवेश स्थल से हो सकेगा।
- दोनों देश नियंत्रण रेखा के दोनों ओर की जाने वाली यात्राओं के आवेदनों पर तेजी से विचार करने के लिए सुविधा प्रदान करेंगे। आवेदनों पर विचार करने की अधिकतम समय सीमा 45 दिनों की होगी।
- दोनों देश आपातकालीन स्थितियों में वैध प्रवेश अनुमति पत्र धारकों को नियंत्रण रेखा पार कराने के लिए आवश्यक सहायता उपलब्ध कराएंगे।

नियंत्रण रेखा के दोनों ओर व्यापार को बढ़ावा देने के संबंध में भी कुछ निर्णय लिए गए। इनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं-

- नियंत्रण रेखा के दोनों ओर व्यापार के लिए अनुमति प्राप्त वस्तुओं में से 21 सूचीबद्ध उत्पादों का दोनों देशों द्वारा सम्मान किया जाएगा।
- दोनों ओर के व्यापारियों के बीच मासिक (Monthly) आधार पर बैठक की सुविधा प्रदान की जाएगी।
- नियंत्रण रेखा के दोनों ओर होने वाले व्यापार के संचालन संबंधी मुद्दों का समाधान संबंधित निर्दिष्ट अधिकारी कर सकेंगे।
- नियंत्रण रेखा पर व्यापार को बढ़ावा देने के लिए सड़कों एवं बाँधों का सुधार किया जाएगा।
- व्यापार संचालन स्थलों पर परिवहन संपर्क को मजबूत बनाया जाएगा।

संयुक्त कार्यदल में दोनों पक्ष व्यावसायिक प्रतिनिधियों के विनिमय पर भी सहमत हुए। दोनों पक्षों के बीच इस बात पर भी सहमति बनी कि सीमा-रेखा के आर-पार विश्वास बहाली से संबंधित संयुक्त कार्य दल की बैठक द्विवर्षीय (Bi-annual) आधार पर होगी। इस बैठक के दौरान दोनों देश धार्मिक स्थलों के लिए यात्रा की सुविधा बढ़ाने, मीडिया समूहों के विनिमय, खेल टूर्नामेंट का आयोजन तथा एक-दूसरे के विरुद्ध शत्रुतापूर्ण प्रचार रोकने पर भी सहमत हुए थे। भारत-पाकिस्तान के बीच कृषि, शिक्षा, पर्यावरण, स्वास्थ्य, सूचना, सूचना तकनीकी एवं दूरसंचार, विज्ञान एवं तकनीक से संबंधित तकनीकी स्तरीय कार्यकारी समूह (Technical Level Working Groups) का भी गठन किया गया है। ये समूह संबंधित क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने का प्रयत्न करते हैं।

भारत-पाक संबंधों में चीन की भूमिका (China's Role in Indo-Pak Relations)

विगत कई दशकों से चीन और पाकिस्तान के द्विपक्षीय संबंधों की छाया भी भारत-पाक संबंधों पर पड़ती रही है। इसे निम्नलिखित क्षेत्रों में देखा जा सकता है-

- पाक-चीन रक्षा संबंध (Pak-China Defence Relations):** चीन और पाकिस्तान के बीच सुरक्षा सहयोग की शुरुआत 1960 के दशक से प्रारंभ होती है, जब चीन ने इस्लामाबाद के निकट बड़े जेट और वैमानिकी क्षेत्रों को विकसित करने के लिए वित्तीय और तकनीकी सहायता प्रदान की। यहीं से अब मुख्य युद्धक टैंक और बख्तरबंद सैनिक गाड़ियों का उत्पादन होता है और पाकिस्तान वायु सेना द्वारा उड़ाए जाने वाले सभी प्रकार के लड़ाकू विमानों की मरम्मत भी यहीं होती है। वर्षों से चीन पाकिस्तान के लिए परंपरागत और परमाणु हथियारों की आपूर्ति करता रहा है, जो भारत के लिए चिंताजनक है। चीन ने सबसे पहले 1991-92 में पहले बैच में एम 11 (जिन्हें पाकिस्तान ने गजनी नाम दिया) प्रक्षेपास्त्र उपलब्ध कराए। इनकी मारक क्षमता 300 किमी. है। चीन ने परमाणु क्षमता वाले मध्यम दूरी के डीएफ 15 एम 9 प्रक्षेपास्त्र (जिन्हें पाकिस्तान में शाहीन कहते हैं) जिनकी मारक क्षमता 600 से 700 किमी है, इस्लामाबाद को उपलब्ध कराए। यह आपूर्ति मिसाइल टेक्नोलॉजी कंट्रोल रेजिम (Missile Technology Control Regime - MTCR) का उल्लंघन था। एम 9 की मारक क्षमता इतनी है कि वह उत्तर भारत के सारे शहरों और नगरों को अपना निशाना बना सकती है। एक ओर अमेरिका ने पाकिस्तान पर 1965 और 1990 के दौरान आर्थिक प्रतिबंध लगाया था, वहीं दूसरी ओर चीन ने लगातार पाकिस्तान के सैन्य आधुनिकीकरण हेतु सहयोग दिया है। एक महत्वपूर्ण बात यह है कि चीन को रूस से मिलने वाली प्रक्षेपास्त्र तकनीक पाकिस्तान को उपलब्ध हो जाती है। तीन दशकों से भी ज्यादा समय से चीन पाकिस्तान को लड़ाकू विमान उपलब्ध करा रहा है। 2009 में 1.4 अरब डॉलर के सौदे के अंतर्गत चीन ने पाकिस्तान को 36 अत्याधुनिक लड़ाकू जेट विमान देने का समझौता किया था।

- पाक अधिकृत कश्मीर में चीन की उपस्थिति:** पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर (Pak Occupied Kashmir - POK) में चीन की उपस्थिति भारत के लिए चिंता का विषय है। जहाँ तक जम्मू कश्मीर के नियंत्रण का संबंध है, यह कहा जा सकता है कि भारत के नियंत्रण में 45 प्रतिशत, पाकिस्तान के नियंत्रण में 35 प्रतिशत और चीन के नियंत्रण में 20 प्रतिशत भूमि है। कराकोरम राजमार्ग जो चीन के जिंजियांग क्षेत्र को पाकिस्तान के कब्जे वाले गिलगिट बालतिस्तान क्षेत्र से जोड़ता है, चीनी और पाकिस्तानी इंजीनियरों द्वारा 1986 में तैयार किया गया। चीन इस समय विवादित क्षेत्र में बहुत से इंफ्रास्ट्रक्चर बनाने में लगा है। चीन और पाकिस्तान ने 2006 में कराकोरम राजमार्ग की सुधार के लिए एक करार किया है। इन परियोजनाओं के पूरा हो जाने के बाद सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण इस क्षेत्र में परिवहन की क्षमता काफी बढ़ जाएगी। कराकोरम राजमार्ग से चीन की पहुँच ब्लॉचिस्तान स्थित ग्वाटर बंदरगाह से होकर खाड़ी देशों तक हो जाएगी। खुंजरीब दर्रे से होकर जाने वाले रेलमार्ग के निर्माण के लिए चीन और पाकिस्तान के बीच एक समझौते पर हस्ताक्षर किए गए हैं।

पाकिस्तान में बंदरगाह, रेलमार्ग एवं सड़कों के निर्माण के लिए चीन अधिक उपयुक्त है, क्योंकि उसके पास समस्याग्रस्त पाकिस्तान में काम करने का अनुभव और ताकत दोनों हैं। कराकोरम राजमार्ग के समानांतर एक रेलमार्ग बनाने की संभावना का अध्ययन करने के लिए समझौता दोनों देशों के बीच हो चुका है। अगले 10 से 15 सालों में काशगर और ग्वाटर के

बीच रेल मार्ग बनना कोई कंपोल कल्पना नहीं रह जाएगी। वे काराकोरम राजमार्ग को सभी मौसम में प्रयोग करने के योग्य बनाने के लिए गिलगिट बालतिस्तान क्षेत्र में काम कर रहे हैं। जैसा कि ऊपर बताया गया है कि चीन और पाकिस्तान सड़कों मजबूत करने में लगे हैं जिससे खराब मौसम में भी आवागमन क्षमता बढ़ जाए। वर्तमान में यह राजमार्ग जाड़े में लगभग छह महीने बंद रहता है। काशगर, उइगुर के कार्यक्षेत्र के रूप में जाना जाता है जो यदा-कदा स्वतंत्र तुर्कमेनिस्तान की माँग करने के लिए हिंसा करते रहते हैं।

उइगुर अलगाववादियों को नियंत्रित करने के लिए एवं उनका संबंध तालिबान समर्थकों से तोड़ने के लिए चीन, पाकिस्तान से गोपनीय खबरें और सैन्य सहायता की माँग करता रहा है। चीन और पाकिस्तान ने इनसे निपटने के लिए एक नीति बनाई है, जिसके अंतर्गत पाकिस्तानी सुरक्षा सेनाएँ उइगुर लड़ाकुओं को, जो पाकिस्तान के आतंकी कैंपों में शरण लेना चाहते हैं, उन्हें वापस भेज देती हैं। चीन और पाकिस्तान जैसे आतंकवाद विरोधी साझा अभ्यास भी करते रहे हैं। ईस्ट तुर्किस्तान इस्लामिक मूवमेंट (ईटीआईएम) जैसे सैन्य ग्रुपों को कुचलने के लिए जुलाई 2010 में दोनों देशों के बीच साझा सैन्य अभ्यास हुआ। ईटीआईएम जिसे अलकायदा का समर्थक माना जाता है, चीन के जिंजियांग प्रांत के उइगुर मुस्लिम बहुल क्षेत्रों में बहुत सक्रिय है। चीनी अधिकारियों ने शिकायत की है कि ईटीआईएम के सदस्यों को प्रशिक्षण पाक-अफगान सीमा स्थित प्रशिक्षण शिविरों में दिया जाता है। यह भी संभावना है कि दोनों देश चीन पाकिस्तान सीमा पर ईटीआईएम आतंकवादियों के विरुद्ध साझा सैन्य कार्रवाई कर सकते हैं। भविष्य में बीजिंग और इस्लामाबाद के मध्य आतंकवाद विरोधी सहायता की और भी ज्यादा संभावना है।

(iii) **जल शक्ति परियोजना (Hydro Power Project):** पाकिस्तान के राष्ट्रपति आसिफ अली जरदारी की अगुआई में 2009 में चीन यात्रा के दौरान दोनों पक्षों ने उत्तरी क्षेत्र के बजी में एक हाइड्रो पावर स्टेशन बनाने के लिए समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए हैं जो भारत के लिए चिंता का विषय है। भारत का दृष्टिकोण है कि इस्लामाबाद को गेर-कानूनी कब्जे वाले क्षेत्र में इस तरह की कोई परियोजना नहीं लगानी चाहिए। यह करार पाकिस्तान के राष्ट्रपति की यात्रा के दौरान किए गए छह करारों में से एक है। जलशक्ति परियोजना के अलावा शिक्षा, मत्स्य पालन, कृषि, बांध और निवेश के क्षेत्रों में भी करार हुए। हालाँकि इनमें सबसे महत्वपूर्ण जल शक्ति परियोजना का निर्माण हो रहा है जो बिल्ट, ऑपरेट एण्ड ट्रांसफर (बीओटी) के आधार पर है जिसका तात्पर्य है कि सारा निवेश चीनी उद्यमी करेंगे। इस बांध की लागत छह से सात अरब डॉलर होगी और 7000 मेगावाट बिजली पैदा करने की क्षमता होगी। यात्रा के दौरान पाकिस्तान के राष्ट्रपति ने चीनी कंपनियों को चार अन्य प्रांतों में दर्जनों छोटे और मझाले बांधों को बनाने हेतु नीलामी में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया।

(iv) **पीओके में आधारभूत संरचना का विकास (Infrastructure Development in Pak Occupied Kashmir):** भारत सदैव ही पाक अधिकृत कश्मीर (POK) क्षेत्र में चीन द्वारा बुनियादी विकास का विरोध करता रहा है। हाल ही में एक प्रसिद्ध अमेरिकी पत्रकार ने न्यूयार्क टाइम्स में लिखा कि पाकिस्तान गिलगिट-बालतिस्तान क्षेत्र को चुपके से चीन के हवाले करना चाहता है। इससे समस्या और गंभीर हो गई है। इसने यह भी बताया कि चीन की पीपुल्स लिबरेशन आर्मी के लगभग 7 हजार से 11 हजार सैनिक पहले ही रेलवे नेटवर्क विकसित करने के लिए इस क्षेत्र में पहुँच गए हैं। रेलवे प्रणाली विकसित करने के अलावा पाकिस्तान से चीन के जिंजियांग प्रांत को जोड़ने वाली काराकोरम सड़क को भी बढ़ा रहे हैं। न्यूयार्क टाइम्स ने यह भी बताया कि पीपुल्स लिबरेशन आर्मी के सैनिक बांधों, एक्सप्रेसवे और अन्य परियोजनाओं पर काम कर रहे हैं। यह भी बताया कि पीपुल्स लिबरेशन आर्मी के सिपाही उन 22 गुप्त स्थानों पर सुरंगें बना रहे हैं जहाँ पाकिस्तानियों को भी जाने की अनुमति नहीं है। ऐसा अनुमान है कि इन सुरंगों की आवश्यकता ईरान से चीन जाने वाली गैस पाइपलाइन परियोजना जो गिलगिट से होकर काराकोरम पार करेगी, में पड़ेगी। लेकिन इनका उपयोग मिसाइलों के संचयन के लिए भी किया जा सकेगा। वे बड़े पैमाने पर निवास योग्य कॉम्प्लेक्स बना रहे हैं जिससे अंदाजा लगाया जा सकता है कि वे वहाँ पर स्थायी रूप से रहने वाले हैं। अभी तक वे अस्थायी मकानों में रह रहे हैं।

भारत सरकार के विदेश मंत्रालय ने गिलगिट-बालतिस्तान क्षेत्र में चीन के इस जमावड़े पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा कि तथ्यों का सत्यापन किया जा रहा है और यदि यह सत्य पाया गया तो यह एक गंभीर मामला है।

(v) **कश्मीर अलगाववादियों की सहायता और यूएनएससी में भारत के प्रयासों का विरोध (Help to Kashmiri Separatists and Opposition of India's Efforts in UNSC):** हथियार और गोला बारूद, मिसाइल और परमाणु तकनीक की आपूर्ति के अलावा पीओके में आधारभूत संरचना विकसित करने के साथ चीन संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में जिहादी संगठनों पर प्रतिबंध के मुद्दे का विरोध करके पाकिस्तान और कश्मीरी अलगाववादियों को सहायता देता रहा है। भारत के संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद का सदस्य बनने का विरोध चीन और पाकिस्तान दोनों ही कर रहे हैं।

- (vi) चीन-पाक परमाणु करार (China-Pak Atomic Agreement): परमाणु तकनीकी के क्षेत्र में सहायता चीन और पाकिस्तान के बीच सामरिक संबंधों का एक महत्वपूर्ण पहलू है जो भारत के लिए एक गंभीर चिंतनीय विषय है। चीन ने 1991 में पाकिस्तान से पहला करार किया जिसके अंतर्गत चश्मा में 300 मेगावाट का परमाणु पावर प्लांट लगाना था। यह चीन द्वारा किशाऊ में स्वयं प्रथम विकसित तकनीक के आधार पर था। चश्मा का रिएक्टर सन 2000 में चालू हो गया। 13 साल की अवधि के बाद चीन ने पाकिस्तान से मई 2004 में दूसरा करार उस समय किया, जिस वर्ष चीन 46 सदस्यीय नाभिकीय आपूर्ति समूह (Nuclear Suppliers Group-NSG) का सदस्य बना। पाकिस्तान की परमाणु ऊर्जा की चाह, भारत अमेरिकी 2005 की परमाणु संधि या 123 करार के बाद और बढ़ गई। भारत और अमेरिका के मध्य आर्थिक, सैन्य और राजनीतिक संबंधों को देखकर चीन और पाकिस्तान चिंतित हैं। इसी पृष्ठभूमि में अक्टूबर 2008 में राष्ट्रपति आसिफ अली जरदारी की चीन यात्रा के तुरंत बाद इस्लामाबाद ने यह दावा किया कि चीन, पाकिस्तान में चश्मा-3 और चश्मा-4 रिएक्टरों को बनाने में मदद करेगा। एनएसजी (NSG) के नियमों के अनुसार सदस्य केवल उन्हीं देशों को परमाणु उपस्कर और सामान बेच सकते हैं जो एनपीटी (Non Proliferation Treaty) संधि के भागीदार हैं या जिन्होंने पूर्ण रूप से सेफगार्ड स्वीकार किया हो। चीन पाकिस्तान को परमाणु रिएक्टर देने के लिए पहले एनएसजी ग्रुप की अनुमति लेने के लिए प्रतिबद्ध था। यह ध्यान देने योग्य बात है कि भारत-अमेरिका परमाणु संधि या 123 करार को अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी और एनएसजी दोनों ने ही स्वीकृति दे दी थी। भारत ने स्वयं घोषित परमाणु नीति में न्यूक्लियर टेस्ट न करने, फिसाइल मैटेरियल कट ऑफ ट्रीटी (Fissile Material Cut-off Treaty – FMCT) के समझौते पर अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों की सहायता करने, निर्यात के कठोर नियमों का पालन करने और दूसरे देशों को संवर्द्धन और प्रसंस्करण (Reprocessing) तकनीक न देने का वायदा किया। इस तरह से यह स्पष्ट है कि भारत-अमेरिका परमाणु करार और चीन-पाकिस्तान परमाणु करारों में महत्वपूर्ण भेद है।

जून 2010 के क्राइस्ट चर्च न्यूजीलैंड में हुए एनएसजी की बैठक में चीन-पाकिस्तान परमाणु मुद्दा बातचीत के लिए आया, किंतु यह एजेंडा का रूप धारण नहीं कर पाया। चीन बहुत से प्रश्नों का सही जवाब देने में असमर्थ रहा। किंतु ऐसा विश्वास है कि चीनी परमाणु कंपनियों ने पाकिस्तान में दो परमाणु रिएक्टर लगाने का करार कर लिया है। चीन की सहायता से पाकिस्तान के पास दो अतिरिक्त परमाणु रिएक्टरों के आ जाने से भारत और पाकिस्तान के बीच जहाँ एक ओर शक्ति में असंतुलन आ जाएगा, वहीं दूसरी ओर इस परमाणु क्षमता का आतंकवादियों जैसे गलत हाथों में जाने की आशंका है। पाकिस्तान पहले भी चोरी छिपे लीबिया, उत्तरी कोरिया और इरान को परमाणु तकनीक आपूर्ति करता रहा है। भारत के लिए यह एक चिंता का विषय है कि ऐसी सहायक तकनीक अवांछित और घातक तत्वों के हाथों में लग जाए। भारत की स्थिति यह है कि वह पाकिस्तान की परमाणु ऊर्जा की आवश्यकता का विरोध नहीं करता, परंतु चाहता है कि करार पारदर्शी हो और दूसरों के हाथों में परमाणु क्षमता न जाए। यह भारत के हित में है कि वह अमेरिका और विशेषकर चीन दोनों को ही इस बात से अवगत करे कि यह तकनीक पाकिस्तान से अन्य गलत हाथों में जाने की आशंका है जो भारत की सुरक्षा एवं क्षेत्रीय स्थिरता के लिए आहतकारी है।

भारत, एन.पी.टी. और सी.टी.बी.टी.

(Non-Proliferation Treaty and Comprehensive Test Ban Treaty)

*** (इस टॉपिक का संबंध मुख्य परीक्षा के प्रश्नपत्र-2 से है। 'दृष्टि' द्वारा वर्गीकृत पाठ्यक्रम के 15 खंडों में से इसका संबंध भाग-7 से है।)

प्रथम चरण: भारतीय विदेश नीति का मूल आधार राष्ट्रीय आंदोलन से ही निर्मित हुआ। गांधी की अहिंसात्मक नीति का प्रभाव विदेश नीति पर अत्यधिक प्रभावी हुआ। आरंभ में नेहरू ने विदेश नीति में आदर्शवादी तत्वों को प्राथमिकता दी, जिसमें उन्होंने शांति और निरस्त्रीकरण का समर्थन जबकि उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद एवं रंग-भेद की नीति का विरोध किया और साथ ही संयुक्त राष्ट्र संघ को शक्तिशाली बनाने पर बल दिया।

वर्ष 1954 में नेहरू ने संयुक्त राष्ट्र के मंच से समूचे विश्व से परमाणु हथियारों के उन्मूलन की मांग की। यद्यपि नेहरू ने परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग का समर्थन किया। नेहरू के नेतृत्व में भारत में परमाणु ऊर्जा आयोग की स्थापना हुई। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के शीतयुद्ध के युग में महाशक्तियों के मध्य परमाणु हथियारों को असीमित रूप में संग्रहित करने को लेकर संघर्ष जारी था। वर्ष 1949 में रूस द्वारा परमाणु परीक्षण किया गया। वर्ष 1954 में ब्रिटेन ने भी परमाणु परीक्षण किया। नेहरू ने आदर्शवादी नीतियों का अनुसरण करते हुए एशियाई, अफ्रीकी देशों की एकता का समर्थन किया। साथ ही साथ चीन के साथ पंचशील समझौते पर भी हस्ताक्षर किए।

दूसरा चरण: वर्ष 1962 में भारत-चीन युद्ध के पश्चात् भारतीय विदेश नीति में यथार्थवाद अत्यधिक प्रभावी हुआ। शांति के बजाय, सुरक्षा को विदेश नीति में प्राथमिक महत्त्व दिया गया। इससे दक्षिण-एशिया और समूचे विश्व में भारत के सम्मान को गहरी ठेस पहुँची। पड़ोसी देशों ने भारत के विरुद्ध चीन कार्ड का प्रयोग किया। दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों ने भी यह महसूस किया कि भारत, चीन से उनकी रक्षा करने में सक्षम नहीं है। गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों से भी भारत को उचित समर्थन प्राप्त नहीं हुआ। यद्यपि यह उल्लेखनीय है कि वर्ष 1963 में भारत ने प्रस्तावित पी.टी.बी.टी. (Partial Test Ban Treaty) का समर्थन किया, लेकिन वर्ष 1964 में चीन द्वारा परमाणु परीक्षण करने के पश्चात् भारतीय विदेश नीति में परमाणु हथियारों के प्रति परंपरागत दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ, क्योंकि चीनी परमाणु हथियारों से भारतीय सुरक्षा को सीधे खतरा था। यह उल्लेखनीय है कि चीन पाकिस्तान की बढ़ती मित्रता भारतीय सुरक्षा के लिए अत्यधिक संवेदनशील मुद्दा था।

परमाणु अप्रसार संधि के मूल प्रावधान (Key Provisions of N.P.T.)

- इस संधि के अनुसार, जिन राज्यों ने 1 जनवरी, 1968 से पहले परमाणु परीक्षण किया है वे परमाणु शक्ति संपन्न राज्य कहलायेंगे।
- इसके अनुसार अमेरिका, रूस, ब्रिटेन, फ्रांस और चीन परमाणु शक्ति संपन्न राज्य हैं।
- परमाणु शक्ति संपन्न राज्य गैर-परमाणु शक्ति संपन्न राज्यों को परमाणु ऊर्जा के लिए ईंधन और तकनीक प्रदान करेंगे। लेकिन इससे पहले गैर-परमाणु शक्ति संपन्न राज्यों को परमाणु अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर करने होंगे।
- इसमें क्षेत्रीय परमाणु मुक्त क्षेत्र का भी प्रावधान है।
- गैर-परमाणु शक्ति संपन्न राज्यों के परमाणु अनुसंधान केंद्रों का निरीक्षण अंतराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (IAEA) के द्वारा किया जायेगा।
- यह संधि 1970 में लागू हुयी। जिसका प्रत्येक पाँच वर्षों के बाद पुनरावलोकन किए जाने का प्रावधान है। 1995 में इस संधि को अनिश्चित काल के लिए लागू कर दिया गया।

परमाणु अप्रसार संधि पर भारत की आपत्ति

एन.पी.टी. पर हस्ताक्षर को लेकर भारत ने निम्नलिखित आपत्तियाँ उठायीं-

- भारत निरस्त्रीकरण का पक्षधर है, जबकि एन.पी.टी. परमाणु अप्रसार की संधि है।
- यह संधि अत्यधिक भेदभावपूर्ण है, क्योंकि इसमें राज्यों को दो श्रेणियों में बाँटा गया है- परमाणु शक्ति संपन्न एवं गैर-परमाणु शक्ति संपन्न। यह अंतराष्ट्रीय विधि के प्रतिकूल भी है, क्योंकि अंतराष्ट्रीय विधि में प्रत्येक राज्य को एक समान इकाई माना जाता है।

- (iii) इस संधि द्वारा परमाणु शक्ति संपन्न राज्यों के लिए परमाणु हथियारों पर विशेषाधिकार बनाये रखने का प्रावधान किया गया और गैर-परमाणु शक्ति संपन्न राज्यों की सुरक्षा का कोई प्रावधान नहीं किया गया।
- (iv) यह संधि मूलतः तकनीकी हस्तांतरण में बाधक है। संधि में इस बात का कोई उल्लेख नहीं है कि परमाणु शक्ति संपन्न राज्य, अपने परमाणु हथियारों की कटौती करेंगे या नहीं।
- (v) यद्यपि उपरोक्त आपत्तियों के बावजूद भारत द्वारा इस संधि पर हस्ताक्षर न करने का सबसे बड़ा कारण भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए उत्पन्न खतरा था।

1970 के दशक में इन्दिरा गांधी ने विदेश नीति को यथार्थवादी दिशा में आगे बढ़ाया। शीतयुद्ध के इस युग में भारत-सोवियत संघ के मध्य शांति एवं मित्रता की संधि (1971) हुई, क्योंकि '70' के दशक में अमेरिका और चीन के संबंध मित्रतापूर्ण हो गये। यह शीतयुद्ध की राजनीतिक की अत्यधिक महत्वपूर्ण घटना थी। यह उल्लेखनीय है कि चीन, अमेरिका और पाकिस्तान के मध्य एक त्रिकोण स्थापित हुआ, जिससे भारत की सुरक्षा के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न हो गया। परिणामस्वरूप 1974 में भारत ने शांतिपूर्ण परमाणु परीक्षण किया। भारत विश्व का एकमात्र राज्य है, जिसने शांतिपूर्ण परीक्षण का दावा किया क्योंकि भारत द्वारा यह स्पष्ट कहा गया कि वह परमाणु हथियारों का निर्माण नहीं करेगा, लेकिन साथ ही परमाणु हथियारों के विषय में सभी विकल्प खुले रखने की नीति की घोषणा की। चीन ने इसे 'परमाणु-ब्लैकमेल' की संज्ञा दी। पाकिस्तान ने कहा, इससे दक्षिण-एशिया में परमाणु हथियारों की होड़ बढ़ेगी। अमेरिका सहित अन्य विकसित देशों ने भारत पर तकनीकी एवं आर्थिक प्रतिबंध आरोपित कर दिये।

सुरक्षा के मुद्दे पर दीर्घकालिक नीति के अंतर्गत 1983 से भारत ने 'समग्र प्रक्षेपास्त्र विकास कार्यक्रम' आरंभ किया। यद्यपि यह उल्लेखनीय है कि प्रक्षेपास्त्रों के हस्तांतरण को रोकने के लिए 1987 में कनाडा, फ्रांस, जर्मनी, इटली, ब्रिटेन और अमेरिका जैसे देशों ने एम.टी.सी.आर. (Missile Technology Control Regime) पर हस्ताक्षर किए। इनके अनुसार, वे किसी अन्य राज्य को इस तकनीक का हस्तांतरण नहीं करेंगे। यह भी उल्लेखनीय है कि 1979 में सोवियत संघ द्वारा अफगानिस्तान में हस्तक्षेप के कारण अमेरिका के लिए पाकिस्तान 'फ्रंट लाइन राज्य' के रूप में उभरा। इसी के चलते अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को भारी सैन्य सहायता दी गयी। चीन द्वारा भी पाकिस्तान को परमाणु सामग्री एवं तकनीक की खुली सहायता दी गयी, और इसी वजह से '80' के दशक में पाकिस्तान परमाणु हथियारों के निर्माण की क्षमता प्राप्त कर चुका था।

विदित है कि चीन ने अपने परमाणु हथियारों की तैनाती तिब्बत के क्षेत्र में की हुई थी। इसलिए दो परमाणु शक्ति संपन्न राज्यों के समीप होने के कारण भारतीय सुरक्षा के लिए एक दीर्घकालिक खतरा उत्पन्न हो रहा था। सोवियत संघ के विघटन के बाद शीतयुद्ध की समाप्ति के पश्चात् अमेरिका नियंत्रित एक-ध्रुवीय विश्व में परमाणु अप्रसार को मूल उद्देश्य बनाया गया। अब अमेरिकी दबाव के कारण रूस ने भी अप्रसार का समर्थन किया। उल्लेखनीय है कि भारत के परंपरागत मित्र रूस ने यूरोप और अमेरिका को अपनी विदेश नीति में प्राथमिकता दी। उस समय तक भारत अपनी रक्षा आपूर्ति में मूलतः रूस पर निर्भर था। अतः शीतयुद्धोत्तर विश्व में भारतीय विदेश नीति के लिए परमाणु अप्रसार का मामला और भी चुनौतीपूर्ण हो गया, क्योंकि एन.पी.टी. और सी.टी.बी.टी. पर हस्ताक्षर करने के लिए भारत पर लगातार दबाव बनाया गया। 1990 के बाद आर्थिक रूप से भारत की स्थिति कमजोर थी। इसलिए परमाणु परीक्षण के संदर्भ में एक स्पष्ट निर्णय लेने में कठिनाई आ रही थी।

समग्र परमाणु परीक्षण संधि (CTBT) के प्रावधान (Provisions of CTBT)

- (i) समग्र शब्द का अभिप्राय सभी प्रकार के परमाणु परीक्षणों को प्रतिबंधित करने से है।
- (ii) भूमिगत, जल और आकाश में परीक्षण को प्रतिबंधित किया गया है। और परमाणु शक्ति संपन्न और गैर-परमाणु शक्ति संपन्न राज्य परमाणु परीक्षण नहीं करेंगे।
- (iii) सभी देशों के ऊपर यह प्रतिबंध समान रूप में लागू होगा, कि वे परमाणु परीक्षण नहीं कर सकते।
- (iv) इस संधि में यह प्रावधान था कि तत्कालीन वे 44 राज्य, जिनके पास परमाणु अनुसंधान की सुविधा है, वे 90 दिनों की अवधि में समग्र परमाणु परीक्षण संधि पर हस्ताक्षर करेंगे, तभी यह संधि लागू होगी।
- (v) समग्र परमाणु परीक्षण संधि में अंतर्राष्ट्रीय पर्यवेक्षण केन्द्र (International Monitoring Centre) की स्थापना का प्रावधान किया गया।
- (vi) समग्र परमाणु परीक्षण संधि में अंतर्राष्ट्रीय डाटा केन्द्र के निर्माण का भी प्रावधान किया गया जिसके विश्व में 300 केन्द्र होंगे।

समग्र परमाणु परीक्षण संधि पर भारत की आपत्ति

भारत ने सी.टी.बी.टी. पर आपत्ति दर्ज करते हुए इसे अस्वीकृत कर दिया। एक महत्वपूर्ण एवं आमूल निर्णय लेते हुए 11 मई, 1998 को भारत द्वारा शक्ति शृंखला के नाम से परमाणु विस्फोट किये गये। भारत ने स्पष्ट कहा कि इस विस्फोट का उद्देश्य न्यूनतम परमाणु प्रतिरोधक क्षमता अर्जित करना था। आलोचकों के अनुसार, भारत द्वारा किये गये परमाणु परीक्षण से भारत को हानि हुई।

क्योंकि पाकिस्तान ने भी परमाणु परीक्षण करके भारत को परंपरागत सैन्य बढ़त को संतुलित कर दिया। यह आलोचना तर्कसंगत नहीं है, क्योंकि भारत द्वारा किया गया परमाणु परीक्षण, पाकिस्तान केन्द्रित नहीं था। भारत को सुरक्षा का मूल खतरा चीन से आ रहा था। भारत ने सी.टी.बी.टी. को अस्वीकृत कर दिया, जिसके निम्नलिखित कारण हैं-

- भारत के अनुसार तकनीकी रूप से यह संधि निरर्थक है क्योंकि विकसित देशों ने कम्प्यूटर सिमुलेशन तकनीक का विकास कर लिया है, जिससे उन्हें परमाणु परीक्षण की आवश्यकता नहीं होगी। इसलिए यह संधि मूलतः विकासशील देशों को परमाणु तकनीक से वंचित करने का प्रयत्न है।
- इन्ट्री इन्टू फोर्स का प्रावधान राज्यों की सम्प्रभुता की संकल्पना के विरुद्ध है। क्योंकि इसके अंतर्गत यह कहा गया कि व्यापक परमाणु परीक्षण संधि तभी लागू होगी जब वे 44 राज्य इस पर हस्ताक्षर करेंगे, जिनके पास परमाणु अनुसंधान की सुविधा है।
- परमाणु अप्रसार का दायरा अब व्यापक हो गया है। इसलिए सी.टी.बी.टी. पर हस्ताक्षर करने का अभिप्राय, एम.टी.सी.आर. (Missile Technology Control Regime) और एफ.एम.सी.टी. (Fissile Materials Control Treaty) पर हस्ताक्षर करना होगा।
- भारत के अनुसार सुरक्षा के मुद्दे पर जापान और दक्षिण कोरिया की भाँति वह अमेरिका से एटमी सुरक्षा प्राप्त नहीं कर सकता क्योंकि इससे भारत की स्वतंत्र विदेश नीति प्रभावित होगी।
- भारत, नेपाल, भूटान जैसा छोटा राज्य भी नहीं है इसलिए भारत की सुरक्षा का दायित्व स्वयं भारत का है।
- भारत द्वारा परमाणु विस्फोट करके आर्थिक प्रतिबंधों को स्वीकार किया गया, क्योंकि विदेश नीति का स्पष्ट मानना था कि परीक्षण के बाद आर्थिक प्रतिबंध आरोपित होंगे, लेकिन यथार्थवादी निर्णय के अंतर्गत सुरक्षा की ज्यादा प्राथमिकता दी गयी।
- यथार्थवादियों ने भारतीय विदेश नीति के लिए इसे एक बहुत बड़ी उपलब्धि माना। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि इससे सम्पूर्ण विश्व भारत को गंभीरता के साथ लेगा।

यद्यपि यह उल्लेखनीय है कि भारत ने न्यूनतम परमाणु प्रतिरोधक क्षमता का उद्देश्य निर्धारित किया तथा यह स्पष्ट रूप में कहा कि इसका उद्देश्य राष्ट्रीय सुरक्षा है, परमाणु हथियारों की दौड़ को बढ़ाना नहीं। वर्तमान समय तक भी समग्र परमाणु परीक्षण संधि (CTBT) लागू नहीं हो सकी है।

परमाणु परीक्षण (1998) पर अंतर्राष्ट्रीय प्रतिक्रियाएँ

- अमेरिका ने भारत पर आर्थिक और तकनीकी प्रतिबंध आरोपित किये।
- जापान ने भारत से अपना राजदूत और ऑस्ट्रेलिया ने भारत से अपना उच्चायुक्त वापस बुला लिया।
- चीन ने सुरक्षा परिषद में भारत के विरुद्ध प्रस्ताव संख्या-1172 के अन्तर्गत कठोर प्रतिबंध लगाने की मांग की।
- रूस ने भी परमाणु परीक्षण की आलोचना की। यद्यपि कड़े प्रतिबंधों का विरोध किया।
- पाकिस्तान ने छगाई परमाणु बम का परीक्षण किया।
- दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों ने भी इसका विरोध किया, यद्यपि वियतनाम ने इसका समर्थन करते हुए कहा कि यह चीन जैसे देशों को संतुलित करने के लिए बेहतर है।

अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में भारतीय विदेश नीति की रणनीति

पोखरण परमाणु परीक्षण के बाद भारतीय विदेश नीति में निम्नलिखित रणनीति का प्रयोग किया गया-

- जसवंत सिंह और स्ट्रोब टॉलबोट (अमेरिका) के मध्य कई दौर की वार्ता आयोजित हुई। भारत ने अमेरिका को यह बताने का प्रयत्न किया कि भारतीय परमाणु परीक्षण उसकी अपनी विशिष्ट सुरक्षा चिंताओं के कारण किया गया। हथियारों की दौड़ को बढ़ावा देना भारत का उद्देश्य नहीं है। भारत ने यह भी आश्वासन दिया कि वह परमाणु अप्रसार की सभी मान्यताओं का पालन करेगा।
- चीन के साथ भी संबंधों को सामान्य बनाने का प्रयत्न किया गया। जापान और दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों को भारत ने अपनी सुरक्षा चिंताओं से अवगत कराया।
- पाकिस्तान के साथ विश्वास बहाली के उपायों पर वार्ता हुई। अटल बिहारी वाजपेयी और तत्कालीन पाकिस्तानी प्रधानमंत्री नवाज शरीफ के मध्य विश्वास निर्माण के उपायों पर सहमति बनी। दोनों देशों ने विश्व जनमत को यह भरोसा दिलाया कि दक्षिण-एशिया में परमाणु हथियारों का प्रयोग नहीं होगा।
- आंतरिक रूप में भारत ने न्यूनतम परमाणु प्रतिरोधक क्षमता अर्जित करने के लिए अग्नि के विकास पर भी बल दिया। इसी के साथ भारत ने अपनी स्पष्ट परमाणु नीति का भी निर्माण किया।

महाशक्तियों का भारत के प्रति परिवर्तित दृष्टिकोण

वर्ष 2000 के बाद अमेरिकी नीति में भारतीय विदेश नीति के प्रति परिवर्तन देखने को मिला। अमेरिका ने भी अब भारत को अलग-थलग करने की बजाय उसे साथ लेकर चलने की नीति अपनाई, क्योंकि उभरती शक्तियाँ विश्व व्यवस्था के निर्माण की क्षमता नहीं रखती लेकिन इस व्यवस्था को भंग करने की क्षमता उनमें होती है। सितंबर 2001 के बाद भारत पर आरोपित अनेक प्रतिबंधों को अमेरिका ने धीरे-धीरे समाप्त करने की घोषणा की। अमेरिका की इस परिवर्तित नीति के कारण जापान तथा दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों ने भी भारत के प्रति अपनी नीति में परिवर्तन किया।

21वीं शताब्दी में भारतीय अर्थव्यवस्था दुनिया की दूसरी सबसे तेजी से उभरती हुई अर्थव्यवस्था है। समूचे विश्व समुदाय ने भारतीय लोकतंत्र को स्थायी लोकतंत्र की श्रेणी में रखा। परिणामस्वरूप समूचे विश्व में व्याप्त समस्याओं जैसे- आतंकवाद, पर्यावरणीय समस्या, नशीली दवाओं के व्यापार को हल करने के लिए भारत के महत्त्व को स्वीकार किया गया।

वैश्विक परमाणु निर्यात नियंत्रण व्यवस्था

वर्तमान विश्व में परमाणु हथियारों और प्रक्षेपास्त्रों के प्रसार को रोकने के लिए विश्व में अनेक उपाय किये गये हैं। इसके अंतर्गत प्रक्षेपास्त्र तकनीक नियंत्रण व्यवस्था (Missile Technology Control Regime), विखण्डनीय पदार्थों की कटौती का समझौता (Fissile Materials Control Treaty) वासनार समूह (Wassenaar Group) तथा परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह (NSG) का निर्माण किया गया है। भारत इनमें से किसी भी समूह का सदस्य नहीं है, जबकि भारत के पास उच्चतर परमाणु तकनीक है। भारत ने परमाणु सामग्री के अप्रसार का स्वतः से पालन किया है। विश्व में भारत को एक उत्तरदायी परमाणु तकनीक क्षमता वाला राज्य माना जाता है। इसीलिए वर्तमान समय में अनेक राज्यों ने इन संस्थाओं में भारत की सदस्यता का समर्थन किया है।

प्रक्षेपास्त्र तकनीक नियंत्रण व्यवस्था (MTCR) के प्रावधान

- जिन देशों के पास प्रक्षेपास्त्र निर्माण की तकनीक है उन्होंने यह समझौता किया है कि प्रक्षेपास्त्र तकनीक का हस्तांतरण अन्य देशों को न किया जाय।
- इस नियंत्रण व्यवस्था की स्थापना 1987 में हुयी जिसमें कनाडा, फ्रांस, जर्मनी, इटली, जापान, ब्रिटेन और अमेरिका सदस्य थे।
- इसमें मूलतः उस प्रक्षेपण व्यवस्था को प्रतिबंधित करने का प्रयत्न किया गया जिससे 500 किलो के भार को 300 कि.मी. तक प्रक्षेपित किया जा सकता है। इसमें अब मानवरहित वायुयानों के प्रसार को भी प्रतिबंधित किया गया है क्योंकि परमाणु हथियारों का प्रक्षेपण इन्हीं प्रक्षेपास्त्रों के द्वारा किया जाता है।
- यह एक अनौपचारिक और स्वैच्छिक समझौता है जिसमें अब 34 देश सम्मिलित हैं। परंतु चीन इसका सदस्य नहीं है, क्योंकि चीन ने इसकी सदस्यता के लिए 2004 में आवेदन किया परंतु उसे सदस्यता नहीं दी गई।

विखण्डनीय पदार्थों की कटौती का समझौता (FMCT)

- 1992 में संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वारा विखण्डनीय पदार्थों की कटौती के समझौते पर विचार-विमर्श हुआ। जिसके द्वारा यह प्रस्ताव किया गया कि यूरेनियम और थोरियम के ऐसे उत्पादों को प्रतिबंधित कर दिया जाय, जिनका प्रयोग परमाणु हथियारों के निर्माण में होता है।
- अभी विखण्डनीय पदार्थों की कटौती का समझौता (FMCT) लागू नहीं है क्योंकि इस समझौते पर अभी भी राज्यों के बीच सहमति का अभाव है।

ऑस्ट्रेलिया समूह (Australia Group)

- इसकी स्थापना ईराक द्वारा रासायनिक हथियारों के प्रयोग (1984) के बाद सन् 1985 में ऑस्ट्रेलिया में अमेरिका और यूरोपीय देशों ने मिलकर जैविक और रासायनिक हथियारों को प्रतिबंधित करने के लिए की।
- इस समूह में आरंभ में 15 देश सम्मिलित थे, जबकि वर्तमान समय में इसमें 41 सदस्य हैं।

वासनार व्यवस्था (Wassenaar Arrangement)

- वासनार हॉलैंड का एक शहर है, जो हेग के पास स्थित है। इस व्यवस्था की स्थापना 1996 में हुई जिसके द्वारा परम्परागत हथियारों और दोहरे प्रयोग की वस्तुओं और तकनीक के निर्यात पर नियंत्रण का प्रावधान किया गया इसमें 41 देश सम्मिलित हैं।

परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह (NSG) और भारत की सदस्यता

- वर्ष 2010 से और उसके बाद अमेरिकी राष्ट्रपति ओबामा ने भारत की परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह में सदस्यता का स्पष्ट समर्थन किया है।

- भारत परमाणु अनुसंधान के क्षेत्र में अत्यधिक विकसित राज्य है। इसलिए भारत की इस संगठन में सदस्यता का समर्थन किया जा रहा है, जिससे परमाणु अप्रसार को प्रभावी बनाया जा सके।
- यह अपने आप में उल्लेखनीय है कि 1974 ई. में परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह की स्थापना भारत के परमाणु परीक्षण के बाद की गई। इसे लंदन समूह के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि इसकी अधिकांश बैठकें लंदन में होती थीं।
- वर्तमान समय में इसके 46 सदस्य हैं तथा सभी सदस्य परमाणु अप्रसार संधि (NPT) के हस्ताक्षरकर्ता राज्य हैं।
- वर्तमान समय में परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह ने भारत को परमाणु तकनीक और ईंधन के मामले में एक विशेष छूट दे रखी है क्योंकि परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह के द्वारा केवल उन्हीं राज्यों को परमाणु तकनीक और ईंधन दिया जाता है, जिन्होंने परमाणु अप्रसार संधि (NPT) पर हस्ताक्षर किए हैं।

सदस्यता का लाभ

- यह बिन्दु ध्यान देने योग्य है कि जब भारत को परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह के द्वारा सभी सुविधाएँ प्राप्त हो रही हैं, तो उसके द्वारा परमाणु अप्रसार संधि (NPT) पर हस्ताक्षर करने का क्या औचित्य है?
- इसकी सदस्यता से भारत को एक उत्तरदायी राज्य का दर्जा प्राप्त हो जायेगा और भारत का परमाणु निर्यात व्यवस्था से अलगाव समाप्त हो जायेगा।
- परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह के प्रावधानों में होने वाले परिवर्तन में भी भारत की भूमिका महत्वपूर्ण हो जायेगी।
- अन्य संगठनों में भारत को सदस्यता प्राप्त करना भी आसान हो जायेगा।

सदस्यता में बाधा

- परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह का सदस्य होने के लिए परमाणु अप्रसार संधि (NPT) पर हस्ताक्षर करना पहली और प्राथमिक शर्त है।
- यदि भारत परमाणु अप्रसार संधि (NPT) पर हस्ताक्षर कर देगा, तो उसके सभी परमाणु अनुसंधान केन्द्रों पर अंतराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (IAEA) की निरीक्षण करने का अधिकार मिल जायेगा।

निष्कर्ष

- भारत समर्थकों ने कहा कि परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह में भारत की सदस्यता महत्वपूर्ण है क्योंकि भारत एक उत्तरदायी राज्य है। भारत की सदस्यता के लिए या तो भारत को परमाणु शक्ति संपन्न देश का दर्जा दे दिया जाय अथवा परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह की सदस्यता शर्तों में परिवर्तन कर दिया जाय।

भारत की परमाणु नीति

- मई, 1998 में शक्ति भूखला के परमाणु परीक्षण के बाद भारत ने परमाणु नीति का निर्माण किया।
 - (i) संयुक्त राष्ट्र चार्टर में प्रत्येक राज्य को आत्मरक्षा का अधिकार दिया गया है। जब तक विश्व परमाणु हथियारों से मुक्त नहीं होता, तब तक भारत को अपनी सुरक्षा के लिए विश्वसनीय परमाणु प्रतिरोध बनाने की आवश्यकता है।
 - (ii) परमाणु प्रतिरोध के निर्माण में अधिकतम विश्वसनीयता, प्रभावकारिता और सुरक्षा की भी आवश्यकता है।
 - (iii) विश्वसनीय परमाणु प्रतिरोध निर्मित करने के लिए भारत के पास पलटवार की क्षमता होनी चाहिए तथा स्वयं को बचाने की भी क्षमता होनी चाहिए।
 - (iv) भारत की परमाणु शक्ति का मूल उद्देश्य भारत को परमाणु आक्रमण से सुरक्षित रखना है। इसलिए भारत किसी भी देश के ऊपर पहले परमाणु हमला नहीं करेगा।
 - (v) भारत उन देशों के ऊपर भी परमाणु हमला नहीं करेगा, जिनके पास परमाणु हथियार नहीं हैं अथवा वे परमाणु शक्ति संपन्न देशों के गठबंधन के साथ नहीं हैं।
 - (vi) भारत अपनी परंपरागत सैन्य क्षमता को भी और सुदृढ़ करेगा।
- न्यूनतम निवारक क्षमता के लिए भारत को निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना होगा-
 - परमाणु शक्ति पर्याप्त प्रकार्यात्मक तथा सुरक्षित होनी चाहिए।
 - एक प्रभावी कमान और नियंत्रण व्यवस्था होनी चाहिए।
 - एक प्रभावी सूचना और पहले सावधान करने वाली क्षमता होनी चाहिए।
- उपरोक्त रणनीति के अनुसार, व्यावहारिक रूप में व्यवस्थित योजना और प्रशिक्षण होना चाहिए तथा अंत में परमाणु हथियारों की तैनाती आवश्यक है।

परमाणु शक्ति

- इसके अंतर्गत युद्ध का खतरा उत्पन्न होने के समय कम से कम समय में भारत अपनी परमाणु क्षमता की तैनाती कर सके।
- भारत की परमाणु शक्ति प्रभावकारी, विविधतापूर्ण, लचीली और विश्वसनीय तथा न्यूनतम प्रतिरोध की आवश्यकताओं के अनुसार होगी। जिसके अनुसार समुद्र, भूमि, गतिशील वाहन और वायु से प्रयोग की क्षमता वाले परमाणु हथियारों का भी विकास किया जाएगा।

विश्वसनीय और बचाव

- विरोधी राज्यों के विरुद्ध परमाणु शक्ति के प्रयोग की प्रभावी क्षमता।
- परमाणु क्षमता विश्वसनीय, सटीक और समयबद्ध होनी चाहिए।

बचाव

- भारत की परमाणु शक्ति तथा कमान और नियंत्रण व्यवस्था का इस प्रकार निर्माण होगा कि अचानक होने वाले हमले के विरुद्ध भारत त्वरित प्रतिक्रिया कर सके।

कमान और नियंत्रण व्यवस्था

- भारतीय परमाणु नीति के अंतर्गत एक प्रभावी कमान व्यवस्था का निर्माण किया गया है।
- एक प्रभावी कमान और नियंत्रण व्यवस्था के द्वारा एकीकृत प्रकायित्मक योजना का निर्माण किया जाएगा। परमाणु प्रक्षेपण को भी प्रभावी रूप में तैनात किया जाएगा।

सुरक्षा एवं संरक्षा

- परमाणु हथियारों के निर्माण, परिवहन तथा संचित करने पर विशेष बल दिया जायेगा, जिससे किसी भी तरह की हानि न हो अथवा वे किसी अनाधिकृत व्यक्ति के पास न पहुँचें।
- परमाणु दुर्घटनाओं को टालने की पर्याप्त व्यवस्था की जायेगी।
- आपरा प्रबंधन के लिए प्रभावी इंतजाम किया जायेगा।

निःशस्त्रीकरण एवं हथियारों का नियंत्रण

- भेदभाव रहित वैश्विक परमाणु निःशस्त्रीकरण भारत का मूल उद्देश्य है। भारत परमाणु हथियार रहित विश्व के निर्माण का समर्थक है।
- भारत के द्वारा अन्य राज्यों को भी परमाणु हथियार पहले प्रयोग न करने की नीति के लिए सहमत करना होगा।
- परमाणु हथियारों की घातक प्रकृति को देखते हुए विश्वास निर्माण के उपायों को अपनाया जायेगा तथा उनके संभावित खतरे को भी न्यूनतम किया जायेगा।
- परमाणु हथियारों का नियंत्रण भी भारतीय सुरक्षा के लिए आवश्यक है।

भारत के पहले प्रयोग न करने की नीति पर विवाद

- वर्तमान समय में चीन के प्रभावी सैन्य आधुनिकीकरण को देखते हुए भारत द्वारा अपनी पहले प्रयोग न करने की नीति पर पुनर्विचार की अपेक्षा की जा रही है।
- पाकिस्तान के द्वारा अभी भी पहले प्रयोग न करने की नीति का पालन नहीं किया जाता है।
- पाकिस्तान परंपरागत सैन्य क्षमता के दृष्टिकोण से भारत से पीछे है इसलिए पाकिस्तान द्वारा भारत पर परमाणु हमले की आशंका बनी रहती है।

इस नीति के पक्ष में भारत का तर्क

- चीन के पास परमाणु हथियार हैं और चीन ने भी पहले प्रयोग न करने की नीति अपना रखी है। इसलिए भारत के द्वारा इस नीति को परिवर्तित करने से भारत और चीन के बीच अनावश्यक संदेह और सैन्य प्रतिस्पर्धा बढ़ेगी।
- पहले प्रयोग न करने की नीति भारत के उत्तरदायी राज्य होने के अनुरूप है।
- भारत की परमाणु क्षमता अपनी सुरक्षा के लिए है, आक्रमण के लिए नहीं। इसलिए पहले प्रयोग न करने की नीति बेहतर है।

निष्कर्ष

- वर्तमान समय में भारत की पहले प्रयोग न करने की नीति बेहतर और कारगर है। यह भी उल्लेखनीय है कि आकस्मिक और युद्ध की परिस्थितियों में कोई भी देश किसी भी नीति को तत्काल बदल देता है।

ईरान की परमाणु समस्या

- ईरान ने परमाणु अप्रसार संधि (NPT) पर हस्ताक्षर किए हैं।
- अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (IAEA) ने वर्ष 2003 में अपनी रिपोर्ट में कहा कि ईरान अपने परमाणु कार्यक्रमों को विस्तारित करके परमाणु हथियार बनाने का प्रयत्न कर रहा है।
- अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (IAEA) द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के आधार पर संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद द्वारा ईरान पर प्रतिबंध आरोपित किए गये।
- अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (IAEA) के मतदान में भारत ने वर्ष 2005, 2006 और 2009 में ईरान के विरुद्ध मतदान किया।

ईरान का पक्ष

- ईरान के अनुसार वह परमाणु अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर करने वाला राज्य है और इस संधि के अंतर्गत प्रत्येक राज्य को परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण प्रयोग का अधिकार है।
- परमाणु सामग्री के 20% से ज्यादा संवर्धन से परमाणु हथियार का निर्माण किया जा सकता है।
- जब ईरान के पास दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा तेल भण्डार है। अतः परमाणु ऊर्जा की जरूरत क्यों? ईरान के अनुसार वह भविष्य के लिए परमाणु ऊर्जा का विकास कर रहा है।
- इस्लामी राज्यों के संगठन (OIC) की मांग है कि पूरे पश्चिम एशिया को परमाणु हथियार मुक्त क्षेत्र बनाया जाय।
- ईरान के अनुसार इजरायल को परमाणु हथियार ईरान की सुरक्षा को गंभीर खतरा पहुँचाते हैं। इसलिए पहले इजरायल के परमाणु हथियारों को समाप्त करने की बात होनी चाहिए और समूचे पश्चिम एशिया को परमाणु मुक्त क्षेत्र के रूप में विकसित किया जाय।

वर्तमान समस्या

- 2009 के बाद ईरान ने अपने परमाणु संवर्धन कार्यक्रम को पुनः शुरू कर दिया जिसके परिणामस्वरूप ईरान पर भारी आर्थिक प्रतिबंध लगा दिये गये। वर्तमान समय में सुरक्षा परिषद ने ईरान के व्यापार और तेल एवं गैस के निर्यात पर भी प्रतिबंध लगा रखा है।
- सुरक्षा परिषद के चैप्टर-6 के अंतर्गत पारित प्रस्ताव बाध्यकारी नहीं होते हैं।
- चैप्टर-7 के अंतर्गत पारित प्रस्ताव राज्यों के ऊपर बाध्यकारी नहीं होते हैं।
- ईरान पर अनुच्छेद-41 के तहत प्रतिबंध लगाया गया है।
- इस समस्या के समाधान के लिए सुरक्षा परिषद के पाँच स्थायी सदस्य (P-5+1) और जर्मनी की लगातार बातचीत चल रही है।

ईरान समस्या पर भारत का दृष्टिकोण

- रूस और चीन संयुक्त राष्ट्र संघ (UN) के प्रतिबंध को मानने को तैयार नहीं है।
- भारत के अनुसार, ईरान पर लगाये जाने वाले प्रतिबंध एकपक्षीय नहीं होने चाहिए, बल्कि भारत केवल बहुपक्षीय प्रतिबंधों का समर्थक है।
- बहुपक्षीय प्रतिबंध, संयुक्त राष्ट्र संघ (UN) जैसी संस्थाओं द्वारा तथा एकपक्षीय प्रतिबंध अमेरिका (USA) द्वारा लगाया जाता है।
- भारत के अनुसार ईरान समस्या का कोई सैन्य समाधान नहीं है। इसलिए भारत ईरान पर किसी भी सैन्य कार्यवाही का बिल्कुल भी समर्थक नहीं है।
- भारत ने ईरान के शांतिपूर्ण परमाणु कार्यक्रम का समर्थन किया। लेकिन ईरान के परमाणु हथियार बनाने का बिल्कुल समर्थन नहीं किया।

ईरान और भारत के परमाणु कार्यक्रम में अंतर

- भारत ने कभी भी परमाणु अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर नहीं किए। प्रारंभ से इसे भेदभावपूर्ण माना, जबकि ईरान ने परमाणु अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर किए हैं।

- भारत एक उत्तरदायी और लोकतांत्रिक राज्य है, जिसने अपनी परमाणु क्षमता का घरेलू तकनीक के द्वारा विकास किया। जबकि ईरान के परमाणु कार्यक्रम के संबंध उत्तर कोरिया, लीबिया जैसे देशों से बताये जाते हैं।
- भारत, परमाणु प्रसार में कभी भी संलग्न नहीं रहा और भारत ने परमाणु हथियार मूलतः सुरक्षा के लिए प्राप्त किये। जबकि ईरान का व्यवहार कई बार आक्रामक प्रतीत होता है, क्योंकि वह इजरायल के विरुद्ध खुली धमकी का प्रयोग करता है।

उत्तरी कोरिया का परमाणु मुद्दा

- उत्तरी कोरिया ने 1985 ई. में परमाणु अप्रसार संधि (NPT) पर हस्ताक्षर किए।
- उत्तरी कोरिया ने वर्ष 2003 ई. में यह घोषणा की कि वह परमाणु अप्रसार संधि (NPT) से अलग हो रहा है।
- उत्तरी कोरिया ने वर्ष 2006, 2009 और फरवरी, 2013 में परमाणु परीक्षण किया।

उत्तरी कोरिया का पक्ष

- उत्तरी कोरिया के अनुसार, उसने अपनी आत्मरक्षा के लिए परमाणु परीक्षण किया।
- उत्तरी कोरिया के अनुसार, उसको सुरक्षा का सबसे बड़ा खतरा अमेरिका से है।
- उत्तरी कोरिया ने यह भी मांग की कि अमेरिका को अपनी सेना दक्षिण कोरिया और जापान से हटा लेनी चाहिए।

समाधान के प्रयत्न

- वर्ष 2003 में उत्तर कोरिया की परमाणु समस्या को हल करने के लिए 6 देशों की वार्ता आयोजित की गई। जिसमें उत्तर कोरिया, दक्षिण कोरिया, जापान, चीन, रूस और अमेरिका सम्मिलित हुए।
- लेकिन वर्ष 2009 में उत्तर कोरिया 6 देशों की चलने वाली वार्ता से अलग हो गया और उसने परमाणु और प्रक्षेपास्त्र कार्यक्रमों को पुनः आरंभ कर दिया। इसलिए समस्या का समाधान नहीं हो सका।

पश्चिमी देशों (USA) का तर्क

- वर्तमान समय में उत्तर कोरिया पर सुरक्षा परिषद के द्वारा भारी आर्थिक व्यापारिक प्रतिबंध आरोपित किये गये हैं।
- पश्चिमी देशों का तर्क है कि उत्तर कोरिया अपनी गरीब जनता के कल्याण के बजाय परमाणु हथियारों का विकास कर रहा है।
- जापान और दक्षिण कोरिया के द्वारा भी उत्तर कोरिया पर आर्थिक प्रतिबंध आरोपित कर दिये गये हैं।

इस समस्या का भारत पर प्रभाव

- उत्तर कोरिया के द्वारा पाकिस्तान के प्रक्षेपास्त्र कार्यक्रम को सहायता दी जा रही है।
- इसके बदले पाकिस्तान, उत्तरी कोरिया को परमाणु कार्यक्रम में मदद कर रहा है। उत्तर कोरिया के प्रक्षेपास्त्र Taepodong-2 की क्षमता 5500 किमी. है, जो अग्नि-5 की क्षमता के बराबर है।
- पाकिस्तान के पास इस समय 5000 किमी. की मारक क्षमता वाले प्रक्षेपास्त्र के निर्माण की क्षमता नहीं है। इसलिए इस क्षेत्र में उत्तर कोरिया उसकी सहायता कर सकता है।

शब्दावली

- (Axis of Evil)– दुष्ट राज्यों के धुरी का विचार 2002 ई. में अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश ने दिया। उन्होंने ईरान, ईराक और उत्तरी कोरिया को दुष्ट राज्यों में सम्मिलित किया। क्योंकि वे आतंकवाद को बढ़ा रहे हैं, और परमाणु हथियारों की प्राप्ति का प्रयत्न कर रहे हैं।
- (Rogue State)– अमेरिका ने क्यूबा, लीबिया और सीरिया को बीमार राज्यों की श्रेणी में रखा। क्योंकि ये अंतर्राष्ट्रीय मान्यताओं की अवहेलना करते हैं और घातक नरसंहार के हथियार प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं।

भारत-रूस संबंध (India-Russia Relations)

*** (इस टॉपिक का संबंध मुख्य परीक्षा के प्रश्नपत्र-2 से है। 'दृष्टि' द्वारा वर्गीकृत पाठ्यक्रम के 15 खंडों में से इसका संबंध भाग-7 से है।)

द्विपक्षीय संबंधों की सामान्य पृष्ठभूमि (General Background of Bilateral Relations)

आज हम भारत और रूस के बीच 'विशेष एवं विशेषाधिकृत रणनीतिक भागीदारी' (Special and Privileged Strategic Partnership) की बात करते हैं। इस विलक्षण और बहुआयामी संबंध का निर्माण अचानक नहीं हुआ है। पिछले 65 वर्षों के दौरान दोनों देशों के पारस्परिक हितों को सबसे अधिक ध्यान में रखा गया है। सहयोग के व्यापक क्षेत्रों में इसके ठोस और रचनात्मक परिणाम सामने आए हैं। विश्वसनीय मैत्री भारत-रूस संबंधों की विशेषता रही है। प्रत्येक पीढ़ी ने इन विलक्षण संबंधों को पोषित एवं संवर्धित किया है। इसे दोनों देशों के राजनैतिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में व्यापक सम्मति भी प्राप्त है।

भारत के शुरुआती उद्योगिक एवं प्रतिरक्षा संवर्धन काल के दौरान सोवियत संघ की सहायता से लेकर प्रमुख रणनीतिक क्षेत्रों में संयुक्त उपक्रम एवं विकास की ठोस भागीदारी तक दोनों राष्ट्रों को विभिन्न स्तरों पर नियमित वार्ताओं एवं द्विपक्षीय तंत्रों से सहारा मिलता रहा है। हमारा सहयोग संस्थागत बन गया है— चाहे आप प्रतिरक्षा क्षेत्र की बात करें अथवा अंतरिक्ष क्षेत्र, हाइड्रोकार्बन अथवा परमाणु ऊर्जा क्षेत्र की, इनसे दोनों ही देशों को निरंतर लाभ हुआ है।

दोनों देशों के लोगों के बीच शैक्षणिक और कलात्मक संपर्क भी बहुत महत्वपूर्ण रहे हैं। 5000 से अधिक भारतीय छात्र रूसी विश्वविद्यालयों एवं संस्थानों में अध्ययन कर रहे हैं। सभी स्तरों पर दोनों देशों के निजी क्षेत्र के बीच व्यावसायिक संपर्कों में तेजी आ रही है। एक दूसरे के संगीत, नृत्य तथा प्राचीन परंपराओं के प्रति महान आस्था के चलते सांस्कृतिक संपर्क सुदृढ़ हुए हैं।

वैश्विक मुद्दों के प्रति भारत और रूस का साझा दृष्टिकोण है और बदलती विश्व व्यवस्था के संदर्भ में इनके साझे लक्ष्य हैं। बदलती अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली में उदयमान एवं जिम्मेदार भागीदारों के रूप में एक-दूसरे की ताकतों एवं रणनीतिक स्वायत्तता से भी लाभ प्राप्त करते हैं। द्विपक्षीय संबंध स्थायी शांति, न्यायसंगत विश्व व्यवस्था तथा बहुपक्षीय प्रणाली में विश्वास के आधार पर कार्य करते हैं।

यह बात दिसंबर-2011 के भारत-रूस संयुक्त वक्तव्य (India-Russia Joint Statement), मार्च 2012 के नई दिल्ली ब्रिक्स घोषणा (New Delhi BRICS Declaration) तथा अप्रैल 2012 की मास्को की रूस-भारत-चीन संयुक्त विज्ञप्ति (Russia-India-China joint Statement) में झलकती है। शंघाई सहयोग संगठन (Shanghai Cooperation Organisation – SCO), परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह (Nuclear Suppliers Group – NSG) तथा संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (United Nations Security Council – UNSC) जिसमें भारत अभी स्थायी सदस्य नहीं है, जैसे बड़े मंचों पर रूस के समर्थन की भारत सराहना करता है।

द्विपक्षीय संबंधों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical background of bilateral Relations)

स्वतंत्रतापूर्व काल में भारत-सोवियत संबंध (Indo-Soviet Relations During Pre-Independence Period)

जिस समय भारत एक स्वतंत्र प्रभुसत्तासंपन्न राष्ट्र के रूप में नवोदित हुआ, संसार दो शक्ति-गुटों में विभाजित हो चुका था। शीतयुद्ध तथा विश्व का द्विध्रुवीकरण वास्तविकता बन चुका था। संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ दो महाशक्तियों के रूप में उभरे थे। वैश्विक मामलों में प्रभुत्व दो महाशक्तियों का ही था। भारत ने गुटनिरपेक्ष रहने का निर्णय किया और एक स्वतंत्र विदेश नीति अपनाई। आरंभ में दोनों गुटों ने भारत को शंका की दृष्टि से देखा। शुरुआती वर्षों में सोवियत संघ को अमेरिका की अपेक्षा भारत से अधिक नियंत्रण हुआ। सोवियत नेता स्टालिन ने भारत की गुटनिरपेक्षता को पश्चिम-समर्थक नीति के रूप में देखा परंतु स्वतंत्रता से पूर्व भारतीय नेतागण विशेषकर जवाहरलाल नेहरू तथा एम. एन. राय सोवियत प्रगति से काफी प्रभावित थे। एक पिछड़ी अर्थव्यवस्था को आधुनिक औद्योगिक अर्थव्यवस्था में परिणत किए जाने के सोवियत नेताओं के प्रयासों को भारतीयों ने विस्मय से देखा था। जवाहरलाल नेहरू 1927 में सोवियत संघ की यात्रा पर गए थे। वह न केवल 1917 की रूसी क्रांति से प्रभावित थे वरन् समाजवादी विचारधारा के अनुसार जो योजनाबद्ध विकास सोवियत संघ में हुआ था उससे भी बहुत प्रभावित थे। भारत के स्वाधीनता संघर्ष में दिए गए समर्थन के लिए भारत सोवियत संघ का आभारी था। साथ ही सोवियत संघ से मित्रता करना भारत के हित में भी था।

स्वतंत्रता के पश्चात् जवाहरलाल नेहरू ने सोवियत संघ तथा अमेरिका दोनों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित करने का प्रयास किया था। भारत और सोवियत मैत्री को अमेरिका ने शंका की दृष्टि से देखा और कहा कि यह उभरती मित्रता सोवियत संघ द्वारा दक्षिण एशिया में साम्यवादी विचारधारा का प्रसार मात्र है परंतु भारत ने इस प्रकार की शंकाओं को निराधार बताया। सोवियत संघ भी संदेह और पूर्वाग्रहों से मुक्त नहीं था। भारत के प्रयासों के बावजूद भारत और सोवियत संघ के संबंध स्टालिन के जीवन काल में उतने गंभीर नहीं हो सके जितने जवाहर लाल नेहरू चाहते थे। भारत-सोवियत संबंधों में तनाव का प्रमुख कारण स्टालिन का कठोर दृष्टिकोण था। स्टालिन का विश्वास था कि जो साम्यवादी नहीं है निश्चय ही सोवियत संघ का विरोधी है। भारत का यह निर्णय कि वह गणतंत्र बन जाने पर भी एष्टिमंडल का सदस्य बना रहेगा, सोवियत संघ को अप्रसन्न करने के लिए पर्याप्त था। भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति को सोवियत संघ ने कभी पसंद नहीं किया। उसने इस नीति को भारत की पश्चिम-समर्थक या पूँजीवादी नीति की संज्ञा दी।

जिस प्रकार भारत-अमेरिका संबंधों में उतार-चढ़ाव आए वैसा तो भारत सोवियत संबंधों के विषय में नहीं कहा जा सकता फिर भी स्टालिन युग में संबंध अपेक्षा के अनुसार अच्छे नहीं हो सके लेकिन उसके पश्चात् दोनों देशों के संबंध प्रायः मधुर रहे हैं। उत्तर-स्टालिन युग में भारत सोवियत संघ संबंधों पर टिप्पणी करते हुए एम. सी. चागला (M.C. Chagla) ने कहा था कि सोवियत संघ संकट के दिनों में हमारा मित्र सिद्ध हुआ है और जो संकट के समय में मित्र होता है वही वास्तविक मित्र होता है।

शीत युद्ध के समय में भारत-सोवियत संबंध (Indo-Soviet Relations During The Cold War)

प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने सोवियत संघ को यह स्पष्ट कर दिया था कि भारत महाशक्तियों के संघर्ष से अलग रहकर गुटनिरपेक्षता की नीति का पालन करते हुए सोवियत संघ के साथ दृढ़ मैत्री का इच्छुक है। यद्यपि उपनिवेशवाद तथा निःशस्त्रीकरण जैसे विषयों पर भारत और सोवियत संघ में मतभेद था फिर भी गुटनिरपेक्षता के मुद्दे पर दोनों देशों में सहमति नहीं हो सकती थी। ऐसे कई अवसर आए जब दोनों देशों ने एक-दूसरे का समर्थन किया। जब भारत ने संयुक्त राष्ट्र में दक्षिण अफ्रीका के रंगभेद के प्रश्न को उठाया और पश्चिमी देशों ने इस समस्या को दक्षिण अफ्रीका का आंतरिक मामला कहकर ढाल दिया तब सोवियत संघ ने भारत का समर्थन करते हुए कहा था कि रंगभेद का प्रश्न आंतरिक न होकर निश्चय ही अंतर्राष्ट्रीय है। स्टालिन को भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति में पूँजीवाद की गंध आती थी। उस समय भारत के अधिकतर नेताओं के मन में भी सोवियत संघ के प्रति शंका व्याप्त थी।

भारत ने निरंतर सोवियत संघ की शान्तिपूर्ण धारणाओं को दूर करने का प्रयास किया। भारत ने चीन में साम्यवादी क्रांति सम्पन्न होने के तीन माह के भीतर ही चीन को मान्यता देकर यह सिद्ध कर दिया कि वह स्वतंत्र विदेश नीति का पालन कर रहा है। सन् 1949 में ही भारत और सोवियत संघ के बीच एक व्यापारिक अनुबंध हुआ। इसके अनुसार सोवियत संघ ने भारत से चाय और कच्चे जूट का आयात करने और बदले में भारत को गेहूँ तथा मक्का का निर्यात करना स्वीकार किया। इस समझौते में तकनीकी विशेषज्ञों के आदान-प्रदान का भी प्रावधान था। स्टालिन की 1953 में मृत्यु हो गई। यद्यपि इससे पूर्व ही भारत के प्रति सोवियत संघ के दृष्टिकोण में निश्चित परिवर्तन हुआ था। भारत द्वारा साम्यवादी चीन को मान्यता, 1951 की अमेरिकी-जापान संधि का विरोध तथा कोरिया युद्ध के प्रथम चरण के उपरान्त स्वतंत्र और निष्पक्ष नीति अपनाने के कारण सोवियत संघ ने भारत की प्रशंसा की अर्थात् 1953 से पूर्व ही भारत-सोवियत संबंधों में सुधार दिखाई देने लगा था।

ख़रुचेव और भारत-सोवियत संबंध (Khrushchev and Indo-Soviet Relations)

मार्च 1953 में स्टालिन की मृत्यु के पश्चात् भारत-सोवियत संबंधों में एक नया मोड़ आया। निकिता ख़रुचेव सोवियत साम्यवादी दल के महासचिव बने और उन्होंने स्टालिन की नीतियों में सीमित उदारिकरण आरंभ किया। इधर 1954 में भारत और चीन ने पंचशील के पाँच महत्वपूर्ण सिद्धांतों का प्रतिपादन किया। इनमें शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व का सिद्धांत अत्यंत उपयोगी था। 1955 तक अनेक देशों ने पंचशील का अनुमोदन कर दिया था। जून 1955 में जवाहर लाल नेहरू ने सोवियत संघ की यात्रा की और उस देश की जनता को शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की विचारधारा से प्रभावित किया। नेहरू की यात्रा के अंत में जारी एक संयुक्त विज्ञापित में कहा गया कि सोवियत संघ-भारत संबंध पंचशील द्वारा निर्धारित होते रहेंगे तथा दोनों देश पारस्परिक लाभ और लोक कल्याण के लिए एक-दूसरे के साथ सहयोग करते रहेंगे। नवम्बर 1955 में सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी के महासचिव निकिता ख़रुचेव (Nikita Khrushchev) तथा प्रधानमंत्री निकोलाई बुल्गानिन (Nikolai Bulganin) भारत यात्रा पर आए। दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों ने एक संयुक्त वक्तव्य में कहा कि भारत तथा सोवियत संघ के मध्य समानता तथा पारस्परिक लाभ के आधार पर व्यापारिक और आर्थिक सहयोग होगा। बुल्गानिन ने भारतीय संसद को संबोधित करते हुए कहा था कि सोवियत संघ अपने आर्थिक तथा वैज्ञानिक अनुभव भारत के साथ बाँटने के लिए तैयार है। सोवियत संघ ने यह भी स्पष्ट किया कि वह कश्मीर को भारत का अभिन्न अंग मानता है। गोआ को भारत में शामिल करने का समर्थन करते हुए सोवियत संघ ने कहा कि पुर्तगाल द्वारा तुरंत गोआ को स्वतंत्र कर देना चाहिए। इस दौरान भारत और सोवियत संघ के बीच आर्थिक और सांस्कृतिक सहयोग में वृद्धि हुई।

कश्मीर मुद्दे पर सोवियत संघ ने स्पष्ट रूप से भारत का समर्थन किया। 1952 में जब कश्मीर का प्रश्न सुरक्षा परिषद के सम्मुख उपस्थित हुआ और इस संबंध में ग्राहम रिपोर्ट पर विचार हो रहा था तब सोवियत संघ ने आरोप लगाया कि अमेरिकी गुट पाकिस्तान की साम्राज्यवादी नीति का समर्थन कर रहा है। सोवियत संघ ने कश्मीर में विदेशी घुसपैठियों को भेजे जाने का भी विरोध किया था। ख्रुश्चेव काल में सोवियत संघ की नीति भारत का समर्थन करने की हो गई थी। 1955 में सोवियत संघ ने स्पष्ट कहा था कि जम्मू-कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है। भारत और सोवियत संघ दोनों देशों ने 1956 में स्वेज संकट के समय ब्रिटेन, फ्रांस तथा इजराइल द्वारा मिश्र पर किए गए आक्रमण की तीव्र आलोचना की परंतु उसी वर्ष जब सोवियत संघ ने हंगरी (Hungary) में हस्तक्षेप किया तो भारत ने संकोच के साथ यह मत व्यक्त किया कि सोवियत सेनाओं को हंगरी से वापस बुला लिया जाना चाहिए तथा वहाँ की जनता को आत्मनिर्णय का अधिकार दिया जाना चाहिए। इस बात पर सोवियत संघ भारत से नाराज हुआ। यद्यपि भारत में अनेक आलोचकों का कहना था कि भारत को खुलकर सोवियत हस्तक्षेप का विरोध करना चाहिए था जो नहीं किया गया। वास्तव में जब हंगरी में हस्तक्षेप का प्रश्न संयुक्त राष्ट्र महासभा में विचार के लिए लाया गया तो भारत ने संयुक्त राज्य अमेरिका के उस प्रस्ताव पर मतदान में भाग नहीं लिया जिसमें सोवियत हस्तक्षेप की निंदा की गई थी। हंगरी की घटना के पश्चात् भारत-सोवियत संबंध और घनिष्ठ होते गए। 1961 में भारत ने सशस्त्र सेनाओं के द्वारा पुर्तगाली नियंत्रण से गोआ को मुक्त करवाया तब सोवियत संघ ने भारत का समर्थन किया। कश्मीर के प्रश्न पर कई बार सुरक्षा परिषद् में सोवियत संघ ने भारत के पक्ष में निषेधाधिकार (Veto) का प्रयोग किया। अक्टूबर 1962 में जब चीन ने भारत पर आक्रमण किया तो सोवियत संघ ने तटस्थ भूमिका निभाई।

भारत में चीनी आक्रमण के समय ही क्यूबा का मिसाइल संकट भी उत्पन्न हुआ था। सोवियत प्रक्षेपास्त्र लेकर जो जहाज क्यूबा जा रहे थे, अमेरिका ने उनका मार्ग अवरुद्ध कर दिया। अन्ततः सोवियत जहाजों को वापस बुलाना पड़ा अन्यथा परमाणु युद्ध छिड़ सकता था। इस घटना के लिए चीन ने सोवियत संघ की तीव्र आलोचना की लेकिन भारत ने ऐसा नहीं किया। उसके पश्चात् सोवियत संघ ने पुनः भारत को सहायता देनी आरंभ कर दी।

ब्रेझ्नेव युग में भारत-सोवियत संबंध (Indo-Soviet Relations During the Brezhnev Era)

सन् 1964 में भारतीय प्रधानमंत्री नेहरू के निधन के पश्चात् लाल बहादुर शास्त्री ने उनके उत्तराधिकारी के रूप में सत्ता संभाली। उधर सोवियत संघ में ख्रुश्चेव का पतन हो गया। ख्रुश्चेव के पश्चात् ब्रेझ्नेव पार्टी के महासचिव बने और सर्वाधिक शक्ति उनके हाथों में आ गई। कोसीजिन (Kosygin) को प्रधानमंत्री बनाया गया। ब्रेझ्नेव 1964 से 1983 के आरंभ तक सोवियत संघ के सबसे शक्तिशाली नेता रहे। भारत-सोवियत संबंधों में 1960-65 की अवधि में बहुत निकटता आई। ख्रुश्चेव के पतन के पश्चात् सोवियत संघ भारतीय उप-महाद्वीप में और अधिक रुचि लेने लगा था। सन् 1965 में भारत और पाकिस्तान के बीच कच्छ के रण और कश्मीर की समस्या पर तीव्र विवाद होने लगा। उस समय तक पाकिस्तान और चीन में प्रगाढ़ मैत्री हो गई थी यद्यपि पाकिस्तान अमेरिकी गुट का सदस्य बना हुआ था। वह साम्यवाद-विरोधी दक्षिण पूर्व एशिया संधि संगठन (South East Asia Treaty Organization - SEATO) का सदस्य भी था। उस समय चीन के साथ सोवियत संघ के संबंध भी अच्छे नहीं थे।

1965 में कच्छ के रण संबंधी विवाद को लेकर भारत पाकिस्तान संबंध इतने कटु हो गए थे कि युद्ध की आशंका प्रतीत होने लगी थी। पाकिस्तान कश्मीर मुद्दे का सैनिक समाधान करने के लिए उत्सुक था। 1962 में चीन ने भारत को सीमा युद्ध में अपमानित किया था। अतः पाकिस्तानी नेताओं को विश्वास हो गया था कि वे भारत को आसानी से पराजित कर देंगे। पाकिस्तान ने कश्मीर में घुसपैठिए (Infiltrators) भेज कर शांति-व्यवस्था भंग करने का प्रयास किया। सितम्बर 1965 में भारत-पाकिस्तान युद्ध हुआ जिसमें भारत ने पाकिस्तान को पराजित किया। इस युद्ध में पाकिस्तान को अमेरिकी समर्थन मिला जबकि सोवियत संघ ने भारत का पक्ष लिया। भारत-पाकिस्तान युद्ध में पाकिस्तान ने आधुनिकतम टैंकों सहित अमेरिकी शस्त्रों का भारत के विरुद्ध खुलकर प्रयोग किया। पाकिस्तान ने अनेक चीनी शस्त्रों का प्रयोग भी किया। सोवियत संघ ने सुरक्षा परिषद के माध्यम से युद्ध विराम करवाने का सफल प्रयास किया और फिर उसके सुझाव से ताशकंद में जनवरी 1966 में भारत-पाकिस्तान शिखर सम्मेलन हुआ ताकि दोनों देशों के बीच शांति स्थापित की जा सके। ताशकंद वार्ता प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री तथा पाकिस्तानी राष्ट्रपति अयूब खान के मध्य हुई जिसमें सोवियत प्रधानमंत्री कोसीजिन (Kosygin) ने भी योगदान किया। वार्ता के पश्चात् ताशकंद समझौता हुआ जिस पर लाल बहादुर शास्त्री एवं अयूब खान ने हस्ताक्षर किए। इसके अनुसार दोनों देशों की सेनाओं को सितम्बर-पूर्व की स्थिति में वापस चले जाना था। अतः यथास्थिति (Status quo) बहाल करने का निर्णय हुआ।

भारत की जनता ने इस निर्णय को दुर्भाग्यपूर्ण माना क्योंकि हमारी सेना को वे सभी क्षेत्र छोड़ने पड़े जो उसने पाकिस्तान से छीने थे परंतु लालबहादुर शास्त्री की समझौते पर हस्ताक्षर करने के बाद ताशकंद में ही मृत्यु हो जाने से जनता ने अपना रोष व्यक्त नहीं किया। शास्त्री के उत्तराधिकारियों ने इस समझौते को लागू करने का निश्चय किया। विशेषज्ञों ने ताशकंद समझौते को सोवियत कूटनीति बताया। इस समझौते के पश्चात् सोवियत संघ ने पाकिस्तान को अमेरिका के प्रभाव से मुक्त करने और अपने प्रभाव में लाने का प्रयास किया। सोवियत संघ ने पाकिस्तानी राष्ट्रपति को द्विपक्षीय वार्ता के लिए भी आमंत्रित किया और 1968 में पाकिस्तान को शस्त्रास्त्र बेचने का प्रस्ताव किया। इस संबंध में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की आलोचना के उत्तर में सोवियत संघ ने भारत को वैसा

ही आश्वासन दिया जैसा कभी अमेरिका ने दिया था कि सोवियत शास्त्रास्त्रों का प्रयोग भारत के विरुद्ध नहीं किया जाएगा। भारत की जनता इससे आश्वस्त नहीं हुई। परंतु कुछ समय पश्चात् विश्व राजनीति के बदलते परिप्रेक्ष्य में सोवियत संघ ने पाकिस्तान को शास्त्रास्त्र देना बंद कर दिया। सन् 1971 में बांग्लादेश संकट के उपरान्त भारत सोवियत संघ के इतना निकट आ गया कि आलोचकों ने यह कहना आरंभ कर दिया कि भारत ने गुटनिरपेक्षता की नीति को ही त्याग दिया है।

बांग्लादेश संकट तथा भारत-सोवियत मैत्री संधि

(Bangladesh Crisis and Indo-Soviet Treaty of Friendship)

बांग्लादेश संकट 1971 में पाकिस्तानी शासकों की अदूरदर्शिता के कारण उत्पन्न हुआ। उस समय वर्तमान बांग्लादेश पाकिस्तान का एक प्रांत था और पूर्वी पाकिस्तान कहलाता था। दिसम्बर 1970 में पाकिस्तान की राष्ट्रीय सभा के लिए चुनाव हुए। इस चुनाव में शेख मुजीबुर्रहमान के नेतृत्व वाली आवामी लीग को स्पष्ट बहुमत मिला परंतु मुजीब को प्रधानमंत्री पद पर नियुक्त नहीं किया गया। इस कारण पूर्वी-पाकिस्तान में विद्रोह आरम्भ हो गया जिसका याह्या खान सरकार ने दमन करना शुरू कर दिया। लोगों की हत्याएँ की जाने लगीं। लाखों शरणार्थी भाग कर भारत में आ गए जिससे भारत पर अनावश्यक दबाव बढ़ा। संयुक्त राज्य अमेरिका ने इंदिरा गांधी की इस प्रार्थना को ठुकरा दिया कि वह पाकिस्तान पर दबाव डाले ताकि स्थिति को सामान्य बनाया जा सके और भारत में आए लगभग एक करोड़ शरणार्थी अपने घरों को वापस जा सकें। इस संकट के परिणामस्वरूप दिसम्बर 1971 में एक युद्ध हुआ जिसमें भारत की विजय और पाकिस्तान की पराजय हुई। पाकिस्तान की सेना ने भारत की सेना के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया और स्वतंत्र बांग्लादेश का जन्म हुआ।

इससे पूर्व जब पाकिस्तान युद्ध की तैयारी कर रहा था और अमेरिका उसका साथ देने के लिए तैयार था तब भारत के पास सोवियत संघ से मदद लेने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा था। इन परिस्थितियों में अगस्त 1971 में 20 वर्षीय भारत-सोवियत शांति, मैत्री और सहयोग संधि (Treaty of Peace, Friendship and Cooperation) पर हस्ताक्षर किए गए। इस समझौते पर दोनों देशों के विदेश मंत्रियों-सरदार स्वर्ण सिंह तथा ग्रोमिको (Gromyko) ने हस्ताक्षर किए। ग्रोमिको ने इस अवसर पर कहा था कि दो देशों के बीच कभी-कभी ऐतिहासिक घटनाएँ घटती हैं। शांति, मित्रता और सहयोग की संधि इसी प्रकार की एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटना है। यह संधि एक प्रतिरोधक सिद्ध हुई और अमेरिका ने भारत-पाक युद्ध में हस्तक्षेप नहीं किया। संधि का सार यह था कि भारत और सोवियत संघ दोनों एक-दूसरे की नीति का सम्मान करेंगे और विश्व शांति के लिए कार्य करेंगे। समय-समय पर दोनों देश एक-दूसरे से परामर्श करेंगे तथा एक-दूसरे के विरुद्ध तीसरे देश के साथ कोई संधि नहीं करेंगे। यदि भारत अथवा सोवियत संघ पर आक्रमण होता है तो ऐसी स्थिति में दोनों देश संपर्क करेंगे।

भारत-सोवियत संधि (Indo-Soviet Treaty), 1971

इसका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है—

- दोनों देशों और उनकी जनता के बीच स्थायी शांति तथा मित्रता रहेगी। दोनों एक-दूसरे की स्वतंत्रता, संप्रभुता एवं प्रादेशिक अखंडता की रक्षा करेंगे तथा एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे।
- स्थायी शांति के लिए प्रतिबद्ध दोनों देश, एशिया तथा समस्त विश्व में शांति की रक्षा करेंगे, उसे सुदृढ़ बनाएँगे तथा शस्त्रों की होड़ को रोक कर निःशस्त्रीकरण के लिए कार्य करेंगे।
- दोनों देश समानता में विश्वास करते हुए उपनिवेशवाद (Colonialism) एवं प्रजातिवाद (Racialism) की निंदा करते हैं।
- भारत, सोवियत संघ की शांति की नीति का आदर करता है तथा सोवियत संघ, भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति का सम्मान करता है।
- विश्व शांति और सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए दोनों देश एक-दूसरे से संपर्क तथा सहयोग करेंगे।
- दोनों देश समानता और पारस्परिक हित के उद्देश्य से आर्थिक, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक सहयोग तथा वाणिज्य, यातायात और संचार साधनों का विस्तार करेंगे।
- विज्ञान, कला, साहित्य, जन स्वास्थ्य, शिक्षा, प्रेस, रेडियो, दूरदर्शन, खेलकूद एवं पर्यटन के क्षेत्र में संबंधों को और अधिक विकसित करेंगे।
- दोनों देश किसी ऐसी सैनिक संधि में शामिल नहीं होंगे जो कि दूसरे पक्ष के विरुद्ध हो। वे एक-दूसरे के विरुद्ध आक्रमण नहीं करेंगे।
- दोनों देश किसी ऐसे तीसरे देश को सैन्य, आर्थिक या तकनीकी सहायता नहीं देंगे जो कि दूसरे पक्ष के विरुद्ध सशस्त्र संघर्ष कर रहा हो। दोनों में से किसी पर आक्रमण या उसका खतरा होने की स्थिति में वे तुरंत पारस्परिक परामर्श करेंगे ताकि आक्रमण या उसके खतरे को रोका जा सके।
- दोनों देशों ने यह आश्वासन दिया कि वे किसी अन्य देश के साथ ऐसी कोई संधि नहीं करेंगे जो इस संधि से मेल न खाती हो या उसके विरुद्ध हो।
- इस संधि की अवधि 20 वर्ष होगी। उसके पश्चात् इसे पाँच-पाँच वर्ष की अवधि के लिए बढ़ाया जा सकेगा। एक वर्ष का नोटिस देकर कोई भी पक्ष इसे समाप्त कर सकेगा।
- संधि की किसी धारा की व्याख्या के संबंध में किसी मतभेद का दोनों पक्ष पारस्परिक बातचीत के द्वारा शांतिपूर्वक समाधान करेंगे।

भारत-सोवियत मैत्री संधि सम्यानुसार खरी उतरी और 20 वर्ष की अवधि पूरी होने के पश्चात् जुलाई 1991 में इस संधि का नवीकरण (Renovation) किया गया। विपक्ष के नेता अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा था कि 1971 की संधि का स्वागत किया जाना चाहिए क्योंकि इसके द्वारा भारत को एक ऐसा मित्र प्राप्त हो गया है जिसका विश्वास किया जा सकता है और जो संकट के समय में हमारा साथ दे सकता है। कांग्रेस के वरिष्ठ नेता श्री के. कामराज का विचार था कि यह संधि न केवल दोनों देशों की मित्रता को सुदृढ़ बनाएगी वरन् एशिया तथा विश्व में शांति सुनिश्चित करने में भी सहायक होगी। लोकनायक जय प्रकाश नारायण ने इसे दक्षिण एशिया में शांति की निश्चित गारंटी कहा था।

इस संधि के आलोचकों ने निम्नलिखित आधारों पर इसकी आलोचना की-

- यह संधि भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति की अवहेलना है।
- इस संधि ने भारत को सोवियत संघ का प्रभाव क्षेत्र बना दिया।
- इसे अप्रत्यक्ष रूप से एक सैनिक संधि का नाम दिया गया।
- इस संधि ने भारत-चीन संबंधों के सामान्य होने में अवरोधक का कार्य किया।
- भारत और अमेरिका के संबंध जो पहले ही खराब हैं अब और भी कटुतापूर्ण हो सकते हैं।
- हिंद महासागर महाशक्तियों के रणकौशल का क्षेत्र बन सकता है।

यदि हम गुटनिरपेक्षता की मूल धारणा को देखें तो यह संधि अवश्य ही गुटनिरपेक्षता साथ समझौता था, परन्तु एक ऐसी आवश्यकता थी जिसका कोई विकल्प नहीं था। दूसरी ओर इस संधि के समर्थकों का कहना था कि भारत के सामने इसके अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था। इस संधि का अपेक्षित परिणाम यह हुआ कि दिसंबर 1971 के भारत-पाक युद्ध में न तो अमेरिका ने कोई हस्तक्षेप किया और न चीन ने। सोवियत संघ ने सुरक्षा परिषद के भीतर और बाहर भारत का पूर्ण समर्थन किया। संयुक्त राष्ट्र में बांग्लादेश के प्रवेश के प्रश्न पर भी सोवियत संघ और भारत ने पूर्ण सहयोग किया। 2 अक्टूबर, 1972 को भारत एवं सोवियत संघ के मध्य महत्वपूर्ण विज्ञान और प्रौद्योगिकी सहयोग समझौता सम्पन्न हुआ।

भारत के आर्थिक विकास के लिए सहायता देने वालों में सोवियत संघ प्रमुख था। हिन्द महासागर को 'शांति क्षेत्र' घोषित करवाने की माँग का सोवियत संघ ने सैद्धांतिक रूप में समर्थन किया और उसने भारत की चिंता से सहमति व्यक्त की। सोवियत संघ हिंद महासागर को 'शांति का क्षेत्र' घोषित करने के लिए यह आवश्यक समझता था कि दीएगो गार्शिया (Diego Garcia) के अमेरिकी नौसैनिक अड्डे सहित इस क्षेत्र के सभी विदेशी सैन्य प्रतिष्ठानों और अड्डों को बंद किया जाए।

सोवियत राष्ट्रपति ब्रेझ्नेव की नवम्बर 1973 की भारत यात्रा ने भारत-सोवियत मैत्री को और भी शक्ति प्रदान की। ब्रेझ्नेव यात्रा के परिणामस्वरूप भारत और सोवियत संघ के बीच एक व्यापार समझौता हुआ जिसके अनुसार 1980 तक भारत-सोवियत व्यापार में वृद्धि करने तथा अनेक क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने का प्रावधान किया गया। सोवियत राष्ट्रपति तथा प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी द्वारा जारी एक संयुक्त विज्ञप्ति में एशियाई देशों की स्वतंत्रता और सुरक्षा पर बल दिया गया। यह भी निश्चय किया गया कि भारत में सोवियत सहायता से स्थापित परियोजनाओं का विस्तार किया जाए तथा उद्योग एवं कृषि क्षेत्रों में नए उपक्रम स्थापित किए जाएँ।

18 मई, 1974 को राजस्थान के पोखरण नामक स्थान पर भारत द्वारा किए गए परमाणु परीक्षण का सोवियत संघ ने स्वागत किया जबकि पाकिस्तान और उसके समर्थक देशों ने घोर निंद की।

जनता पार्टी सरकार और भारत-सोवियत संबंध (Janta Party Government and Indo-Soviet Relations)

1977 में हुए आम चुनाव के पश्चात् श्री मोरारजी देसाई के नेतृत्व में गठित जनता पार्टी सरकार ने सोवियत संघ के साथ संबंधों को मधुर बनाए रखा। सत्ता में आने से पूर्व जनता पार्टी के नेताओं ने विशुद्ध गुट-निरपेक्षता (Genuine Non-Alignment) की बात की थी जिससे लगा कि वे भारत-सोवियत संबंधों पर कम ध्यान देंगे परन्तु ऐसा कुछ नहीं हुआ बल्कि भारत और सोवियत संघ के संबंध और भी सुदृढ़ हुए। विदेश मंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने सोवियत संघ के साथ मैत्रीपूर्ण संबंधों पर बल दिया। मार्च 1979 में सोवियत प्रधानमंत्री कोसिगिन (Kosygin) ने अपनी भारत यात्रा के समय कहा कि मेरा देश भारत के साथ मित्रता को विशेष महत्व की दृष्टि से देखता है। जून 1979 में प्रधानमंत्री मोरार जी देसाई सोवियत संघ गए। वहाँ उन्होंने कहा कि शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के आधार पर दोनों देशों के बीच सहयोग को बढ़ावा दिया जाएगा।

1979 में अफगानिस्तान में सोवियत सैनिक हस्तक्षेप के साथ ही नव शीतयुद्ध (New Cold War) आरंभ हो गया। इस हस्तक्षेप को पश्चिमी आलोचकों ने सोवियत आक्रमण की संज्ञा दी परन्तु सोवियत समर्थकों ने इसे सोवियत संघ द्वारा मजबूरी में उठाया गया कदम बताया। उन्होंने कहा कि संयुक्त राज्य अमेरिका तथा पाकिस्तान, अफगानिस्तान की सोवियत-समर्थक सरकार को उखाड़ फेंकना चाहते हैं इसलिए सोवियत सरकार को यह हस्तक्षेप करना पड़ा। सोवियत सैनिक आठ वर्ष से ज्यादा समय तक वहाँ तैनात रहे। इस अवधि में अफगानिस्तान को सोवियत उपनिवेश भी कहा गया और वहाँ से लाखों शरणार्थी भाग कर ईरान और पाकिस्तान

चले गए और हजारों अफगानिस्तानी भारत भी आए। विदेशों में रह रहे अफगानों को पाकिस्तान से सहायता मिली और उन्होंने सोवियत समर्थक अफगानिस्तान की नजीबुल्लाह सरकार के विरुद्ध विद्रोह आरंभ कर दिया। इस बीच 1980 में श्रीमती इंदिरा गाँधी पुनः सत्ता में आ गई। उनकी सरकार ने स्पष्ट रूप से अफगानिस्तान पर सोवियत कब्जे की निंदा नहीं की। यद्यपि नीति के आधार पर भारत विदेशी हस्तक्षेप को अनुचित मानता था। श्रीमती इंदिरा गाँधी और राजीव गाँधी द्वारा अपनाई गई नीतिगत आलोचकों ने गुटनिरपेक्षता का त्याग कहा। भारत द्वारा सोवियत हस्तक्षेप की निंदा न करने से देश के सम्मान को क्षति अवश्य पहुँची। यद्यपि दिसम्बर 1980 में सोवियत राष्ट्रपति ब्रेझ्नेव की भारत यात्रा के समय अफगानिस्तान में सोवियत सैन्य उपस्थिति का कोई उल्लेख नहीं किया गया परंतु दोनों नेताओं ने पश्चिम एशिया तनाव पर चिंता व्यक्त की। उन्होंने इस क्षेत्र के देशों की स्वतंत्रता, प्रभुसत्ता तथा प्रादेशिक अखंडता का आदर करते हुए व्यापक राजनीतिक समाधान के प्रति अपनी प्रतिबद्धता दोहराई।

उत्तर-ब्रेझ्नेव काल में द्विपक्षीय संबंध (Bilateral Relations in the Post-Brezhnev Period)

1982 में राष्ट्रपति ब्रेझ्नेव की मृत्यु के पश्चात सोवियत संघ ने भारत को विश्वास दिलाया कि भारत-सोवियत संबंध पहले की तरह सामान्य बने रहेंगे। 1984 में श्रीमती गाँधी की मृत्यु के पश्चात उनके पुत्र राजीव गाँधी ने भारत का नेतृत्व संभाला। उधर सोवियत संघ में मिखाइल गोर्बाचेव 1985 में पार्टी के महासचिव पद पर आसीन हुए। राजीव-गोर्बाचेव शासन काल में भारत-सोवियत संबंधों में और भी सुधार आया। अधिकतर अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं पर दोनों देशों के समान विचार होने से संबंध और भी गहरे बने। राजीव गाँधी ने कई बार कहा कि सोवियत संघ ने मुसीबत के समय भारत का साथ दिया है अतः भारत-सोवियत मैत्री को उच्च स्तर पर बनाए रखा जाएगा। मई 1985 में राजीव गाँधी सोवियत यात्रा पर गए। सोवियत नेताओं ने भारत के प्रधानमंत्री को विश्वास दिलाया कि वे पाकिस्तान के परमाणु कार्यक्रम से उत्पन्न भारत की चिंता से सहमत हैं। दोनों देशों ने आर्थिक और तकनीकी सहयोग के समझौते पर भी हस्ताक्षर किए जिसके द्वारा भारत को मिलने वाली सोवियत आर्थिक सहायता में काफी वृद्धि की गई।

ब्रेझ्नेव द्वारा प्रस्तावित एशिया के लिए सामूहिक सुरक्षा के विचार को गोर्बाचेव ने भी आगे बढ़ाने का प्रयास किया। उन्होंने यह माना कि इस विचार को व्यावहारिक रूप देना सरल कार्य नहीं है। भारत की एशिया में महत्वपूर्ण भूमिका का उल्लेख करते हुए सोवियत नेता ने कहा था कि शांति और अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा को सुदृढ़ बनाने में हम भारत के योगदान को सराहना करते हैं।

1986 में राजीव गाँधी तथा गोर्बाचेव ने दिल्ली घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किए। गोर्बाचेव ने चेतावनी स्वरूप कहा था कि यदि भारत और पाकिस्तान की समस्याओं का संतोषजनक समाधान नहीं हुआ तो इसके अकल्पनीय परिणाम होंगे। उन्होंने आशा व्यक्त की थी कि भारत की भांति पाकिस्तान भी अच्छे पड़ोसी जैसा व्यवहार करेगा। उन्होंने एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह कही कि उनका देश भारत-सोवियत मैत्री के मूल्य पर चीन के साथ संबंध सुधारने का प्रयास नहीं करेगा।

दिल्ली घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर करने पर राजीव गाँधी एवं गोर्बाचेव ने यह आशा व्यक्त की थी कि यह घोषणा-पत्र व्यापक परमाणु निःशस्त्रीकरण की दिशा में एक ठोस कदम सिद्ध होगा। दिल्ली घोषणा-पत्र में निम्नलिखित अपेक्षाएँ की गईं—

- शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व को अंतर्राष्ट्रीय संबंध का आधार बनाया जाए।
- मानव जीवन को सर्वोपरि मान्यता दी जाए।
- अहिंसा को सामुदायिक जीवन का आधार माना जाए।
- भय और संदेह के स्थान पर सद्भाव एवं विश्वास का वातावरण बनाया जाए।
- प्रत्येक देश की राजनीतिक तथा आर्थिक स्वतंत्रता के अधिकार को मान्यता दी जाए तथा इसका आदर किया जाए।
- शस्त्रास्त्रों पर व्यय की जाने वाली धनराशि का उपयोग सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए किया जाए।
- व्यक्ति के बहुमुखी विकास के लिए समुचित वातावरण को सुनिश्चित किया जाए।
- मानव जाति की भौतिक एवं बौद्धिक क्षमता का उपयोग विश्व समस्याओं के समाधान के लिए किया जाए।
- आतंक के संतुलन (Balance of Terror) के स्थान पर अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा सुनिश्चित की जाए।
- विश्व को परमाणु शस्त्रास्त्रों से मुक्त बनाने के लिए निःशस्त्रीकरण के लिए ठोस उपाय किए जाएँ।

महत्वपूर्ण राजनीतिक घोषणा के साथ-साथ भारत और सोवियत संघ के मध्य एक आर्थिक समझौता भी हुआ। इसके अनुसार सोवियत संघ ने भारत में नई परियोजनाओं की स्थापना तथा पुरानी परियोजनाओं के नवीनीकरण के लिए दीर्घकालीन ऋण देने का वचन दिया। सन् 1988 से ही दोनों देशों में सांस्कृतिक आदान-प्रदान के उद्देश्य से सांस्कृतिक महोत्सवों का आयोजन किया जाने लगा। कलाकारों ने अपनी-अपनी कलाओं के प्रदर्शन से एकता की भावना को बल प्रदान किया। सन् 1988 में गोर्बाचेव की भारत यात्रा सफल रही। भारत में ऊर्जा उत्पादन सहित अनेक विकास परियोजनाओं के लिए बड़ी राशि उपलब्ध कराई गई। कुडनकुलम (Kudankulam) में एक-एक हजार मेगावाट के दो परमाणु बिजलीघर स्थापित करने में सोवियत सहायता तथा अंतरिक्ष के शांतिपूर्ण उपयोग संबंधी समझौते के अनुसार मौसम विज्ञान, संचार और अंतरिक्ष क्षेत्र में सहयोग करने का निर्णय लिया गया। इसके अतिरिक्त भारत तथा सोवियत संघ ने आर्थिक क्षेत्र में भी कई दीर्घकालीन परियोजनाएँ आरंभ करने का निर्णय लिया।

सन् 1991 के अंत में शीतयुद्ध समाप्त हो गया परंतु सोवियत संघ में मिखाइल गोर्बाचेव द्वारा आरंभ किए गए सुधारों की प्रक्रिया ने एक नया वातावरण उत्पन्न कर दिया। इस बीच 1989 में भारत में सत्ता परिवर्तन हुआ। कुछ माह तक भारत-सोवियत संबंधों में शिथिलता रहने के पश्चात जुलाई 1990 में प्रधानमंत्री विश्वनाथ प्रताप सिंह की सोवियत यात्रा ने संबंधों को बल प्रदान किया। कश्मीर के प्रश्न पर सोवियत दृष्टिकोण की पुनः पुष्टि की गई। इस प्रकार भारत-सोवियत संबंध कुछ मुद्दों पर मतभेद के बावजूद सामान्य बने रहे।

भारत-सोवियत मैत्री संधि का नवीनीकरण किया जाना दोनों देशों के स्थायी हित में था। सन् 1990-91 में खाड़ी संकट के संदर्भ में भारत ने सामान्य रूप से सोवियत दृष्टिकोण का समर्थन किया। सोवियत संघ की भाँति ही भारत ने फिलिस्तीन मुक्ति संगठन (Palestine Liberation Organization - PLO) के साथ संबंध सुदृढ़ करने के प्रयास जारी रखे साथ ही इजराइल के साथ राजनयिक संबंध स्थापित करने की प्रक्रिया भी आरंभ की गई।

1991 में सोवियत संघ में अप्रत्याशित परिवर्तन हुए तथा पूर्वी यूरोप के अनेक सोवियत समर्थक देशों में लोकतांत्रिक सरकारों की स्थापना हुई। स्वयं भूतपूर्व सोवियत संघ में गोर्बाचेव द्वारा आरम्भ किए गए सुधारों से जनता ने लोकतांत्रिक अधिकार प्राप्त किए। सोवियत संघ में 70 वर्षों से नियन्त्रित अर्थव्यवस्था एवं राजनीति थी अतः गोर्बाचेव द्वारा किए गए सुधारों से इन दोनों व्यवस्थाओं ने नया स्वरूप प्राप्त किया। सुधारों ने साम्यवादी दल के एकाधिकार को भी समाप्त कर दिया और 1991 में बहुदलीय लोकतंत्र के सिद्धांत को स्वीकार कर लिया गया। अगस्त 1991 में कट्टरपंथी साम्यवादियों ने गोर्बाचेव को अपदस्थ करने का असफल प्रयास किया। उनका प्रयास था कि सत्ता पुनः साम्यवादियों के नियंत्रण में आ जाए।

दिसंबर 1991 में सोवियत संघ का विघटन हो गया। दो में से एक महाशक्ति का अस्तित्व खत्म हो गया। सोवियत संघ के स्थान पर 15 स्वतंत्र प्रभुसत्ता-सम्पन्न देशों ने संयुक्त राष्ट्र की सदस्यता प्राप्त कर ली। रूस गणराज्य को अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने सोवियत संघ का उत्तराधिकारी राज्य स्वीकार किया और उसे सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता प्रदान की गई। विघटन के समय सोवियत संघ के भूतपूर्व गणराज्यों ने एक संघ स्थापित किया जिसको स्वतंत्र राज्यों का राष्ट्रकुल (Commonwealth of Independent States - C.I.S.) कहा गया। भारत ने न केवल रूस के साथ बल्कि सभी गणराज्यों के साथ सौहार्दपूर्ण संबंध बनाए रखने का निर्णय लिया।

शीत युद्ध के बाद संबंध (Relations After the Cold War)

बोरिस येल्ट्सिन (Boris Yeltsin) के नेतृत्व में नवोदित रूसी गणराज्य ने भारत को मित्रता और सहयोग की नीति पर चलते रहने का आश्वासन दिया जिस पर कई दशकों से भारत-सोवियत संबंध आधारित थे। सोवियत संघ के विघटन ने 1971 की मैत्री संधि की उपयोगिता समाप्त कर दी और उसके स्थान पर एक नई भारत-रूस मैत्री संधि आवश्यक हो गई। रूस के राष्ट्रपति बोरिस येल्ट्सिन (Boris Yeltsin) तथा प्रधानमंत्री नरसिंह राव ने 1993 में एक नई संधि पर हस्ताक्षर किए। इस संधि में ये प्रावधान किए गए कि, (अ) दोनों में से कोई भी देश कोई ऐसा कार्य नहीं करेगा जिससे दूसरे देश के हितों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़े तथा (ब) दोनों देश एक-दूसरे की प्रादेशिक अखण्डता बनाए रखने के लिए वचनबद्ध हैं। स्वाभाविक तौर पर इस संधि का महत्व उतना नहीं हो सकता था जितना कि बांग्लादेश संकट के परिप्रेक्ष्य में 1971 की भारत-सोवियत मैत्री संधि का था।

इस बीच रूस के नए नेताओं को उग्र वामपंथियों तथा उग्र दक्षिणपंथियों दोनों की आलोचना और विरोध का सामना करना पड़ रहा था। ऐसी स्थिति में रूस ने 1992 से ही एक-ऐसी विदेश नीति अपनाई जिसके द्वारा वह पश्चिमी देशों तथा गुटनिरपेक्ष देशों दोनों के साथ मित्रता रख सके। इस पृष्ठभूमि में भारतीय प्रेक्षकों को भारत-रूस संबंधों में तीन प्रमुख प्रवृत्तियों का आभास हुआ। (i) निरंतरता की नीति, (ii) सभी वैचारिक अवधारणाओं से मुक्त नए भारत-रूस संबंधों के विकास पर बल, (iii) कुछ ऐसे अमेरिका समर्थक थे जिन्हें भारत-रूस मैत्री की को बलिदान करने में भी कोई संकोच नहीं था। 1993 में राष्ट्रपति बोरिस येल्ट्सिन की भारत यात्रा तथा 1994 में नरसिंह राव की रूस यात्रा ने परम्परागत मित्रता की भावना को सुदृढ़ कर दिया। रूसी राष्ट्रपति द्वारा कश्मीर के प्रश्न पर भारतीय पक्ष का पूर्ण समर्थन तथा पाकिस्तान को सैन्य सहायता देने से साफ इनकार करने से ऐसा प्रतीत हुआ कि द्विपक्षीय संबंधों की सुदृढ़ता में कोई कमी नहीं आई है। शीतयुद्ध की समाप्ति के पश्चात रूस और भारत के दीर्घकालीन हित एक समान हो गए हैं। दोनों ही देश बहुध्रुवीय (Multipolar) विश्व की संरचना में रुचि रखते हैं। आर्थिक क्षेत्र में दोनों देशों की पारस्परिक निर्भरता बनी हुई है। आने वाले लंबे समय तक भारत को रूस की सैन्य प्रौद्योगिकी तथा कलपुर्जों की आवश्यकता होगी तथा रूस को भारत से उपभोक्ता वस्तुएँ आयात करनी होंगी। भारत ऊर्जा की कमी से जूझ रहा है जबकि रूस के पास अतिरिक्त ऊर्जा है यानि रूस भारत की ऊर्जा जरूरतों को पूरा कर सकता है। भारत की भाँति रूस भी अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की पुनर्संरचना में रुचि रखता है।

1990 के दशक में रूस का अमेरिका की ओर झुकाव इस बात का संकेत था कि उसकी आर्थिक स्थिति खराब थी। उधर रूसी विद्वान यह अनुभव कर रहे थे कि पश्चिमी देश विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका लोकतांत्रिक रूस की प्रगति में उतनी रुचि नहीं रखते थे जितनी वे उसे स्थायी रूप से निर्धन बनाए रखने में रखते थे। वे चाहते थे कि रूस स्थायी रूप से पश्चिम पर निर्भर

बना रहे। साथ औद्योगिक देशों के समूह जी-7 ने रूस के समर्थन में आवाज तो उठायी परंतु वे रूस को प्रस्तावित आर्थिक सहायता देने में निरंतर संकोच करते रहे। अतः विद्वानों का मत था कि भारत चाहे विकासशील ही सही, रूस के साथ उसकी मित्रता का मूल्य कम नहीं होने देना चाहिए।

रूस के राष्ट्रपति बोरिस येल्ट्सिन की 1993 की भारत यात्रा ने भारत-रूस संबंधों में उत्पन्न शंकाओं को भी दूर कर दिया। जहाँ 1992 में रूसी प्रवक्ताओं ने कुछ ऐसे वक्तव्य दिए थे जिनसे रूस का पाकिस्तान की ओर बढ़ता झुकाव स्पष्ट होता था, वहीं 1993 में रूसी राष्ट्रपति की भारत यात्रा से यह स्पष्ट हो गया कि भारत के प्रति रूस की नीति पूर्ववत् मैत्री की बनी रहेगी। येल्ट्सिन ने स्पष्ट और दुविधारहित शब्दों में कश्मीर के विषय में भारतीय नीति के प्रति रूसी समर्थन को दोहराया और कहा कि उनका देश पाकिस्तान को सैनिक तथा तकनीकी सहायता देने वाला नहीं है। भारत-रूस मैत्री संधि पर दोनों देशों की ओर से हस्ताक्षर किए गए। इसके द्वारा दोनों ने मित्रता को सुदृढ़ करने, एक-दूसरे की प्रादेशिक अखंडता की रक्षा करने तथा एक-दूसरे के सुरक्षा हितों के विरुद्ध कोई कार्य न करने का वचन दिया। इस यात्रा का एक महत्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि रुपया-रुबल समानता समझौते के द्वारा भारत पर ऋण भार कम हो गया। इसी यात्रा के दौरान एक सैन्य तथा तकनीकी सहयोग समझौता (Military and Technical Cooperation Agreement) भी संपन्न हुआ। इसके अनुसार भारतीय रक्षा बलों के लिए कलपुर्जों की आपूर्ति के संबंध में चली आ रही अनिश्चितता भी समाप्त हो गई। रक्षा एवं तकनीकी सहयोग को मजबूत बनाने के लिए एक अंतरसरकारी आयोग (Inter-Governmental Commission) का गठन किया गया।

राष्ट्रपति येल्ट्सिन ने सार्वजनिक रूप से घोषणा की थी कि भारत के शांतिपूर्ण अंतरिक्ष अनुसंधान कार्यक्रम के प्रयोग में आने वाले क्रायोजेनिक इंजनों (Cryogenic Engines) के संबंध में रूस प्रौद्योगिकी उपलब्ध करवाएगा परंतु शीघ्र ही अमेरिका के दबाव में रूस इस आश्वासन से पीछे हट गया। इस प्रकार भारतीय जनता के मन में रूस की वास्तविक इच्छा के प्रति पुनः शंका उत्पन्न हो गई। जनवरी 1993 की येल्ट्सिन की भारत यात्रा के समय ऐसा अनुभव हुआ कि रूस एक ओर भारत तथा दूसरी ओर पश्चिम एवं चीन के मध्य बराबर दूरी (Equidistance) रखना चाहता है परंतु 1994 में संकेत मिले कि रूस इस नीति को छोड़कर भारत के निकट आना चाहता है। रूस, भारत के साथ पारम्परिक मित्रता के लिए इच्छुक था। आर्थिक क्षेत्र में भी रूस को यह विश्वास हो गया था कि अमेरिकी पूंजीवादी स्वतंत्र बाजार की नीति की अपेक्षा भारत की मिश्रित अर्थव्यवस्था वाली नीति श्रेष्ठ है। अतः भारत के साथ आर्थिक तथा राजनीतिक दोनों क्षेत्रों में सहयोग वांछनीय हो गया था। रूस ने अमेरिका पर निर्भर रहने के अपने प्रयासों में परिवर्तन किया।

जुलाई 1994 में अपने मास्को प्रवास के दौरान प्रधानमंत्री पी. वी. नरसिंह राव ने रूसी सांसदों के समक्ष महत्वपूर्ण भाषण दिया। श्री राव ने कहा कि भारत के राष्ट्रीय आंदोलन को रूस की महान अवतूर क्रांति के आदर्शों और उद्देश्यों से बहुमूल्य प्रेरणा प्राप्त हुई थी। प्रधानमंत्री ने कहा कि अब जबकि रूस में भी बहुदलीय लोकतंत्र देश की राजव्यवस्था का आधार बन गया है तब दोनों देशों के हितों में समानता विश्व प्रगति के लिए एक शुभ लक्षण है। प्रधानमंत्री की जून-जुलाई 1994 की इस यात्रा ने भारत-रूस मैत्री का एक नया अध्याय आरंभ किया। दोनों देशों ने द्विपक्षीय व्यापार के मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करने के लिए भी उपाय किए। भारत के भूतपूर्व विदेश सचिव जे. एन. दीक्षित का विचार था कि रूस ने जानबूझकर 1991-94 की अवधि में भारत के साथ दूरी पैदा की थी। इस अवधि में रूस को विश्वास हो गया था कि उसकी भविष्य की समृद्धि संयुक्त राज्य अमेरिका तथा पश्चिमी यूरोप के साथ संबंधों पर ही निर्भर करती है परंतु 1997 के आरंभ में रूस के विदेश मंत्री येवगेनी प्रिमाकोव (Yevgeny Primakov) ने अधिक व्यावहारिक नीति अपनाई। उस समय तक 7 अत्यधिक विकसित राष्ट्रों के समूह G-7 में रूस के प्रवेश के प्रयास सफल नहीं हुए थे तथा पश्चिमी देशों द्वारा रूस को मिलने वाली आर्थिक सहायता भी अपर्याप्त थी। इसलिए रूस के लिए अपनी प्राथमिकताओं की समीक्षा करना आवश्यक हो गया था। यद्यपि मूल रूप से रूस का पश्चिम की ओर झुकाव बना रहा फिर भी उसने भारत, पाकिस्तान, चीन तथा जापान के साथ अधिक सुदृढ़ संबंधों के लिए प्रयास तेज कर दिए। रूस को इस बात की चिंता थी कि स्वतंत्र राज्यों के राष्ट्रकुल (Commonwealth of Independent States - CIS) में अमेरिका का प्रभाव बढ़ रहा था जबकि रूस उसे रोकना चाहता था। इसी बीच संयुक्त राज्य अमेरिका उत्तर अटलांटिक संधि संगठन (North Atlantic Treaty Organization - NATO) का विस्तार करने के लिए उतावला हो रहा था। नाटो में पूर्वी यूरोप के कई देशों को शामिल करने का प्रस्ताव था। नाटो के विस्तार को रोकने के लिए रूस ने भरसक प्रयत्न किए परंतु वह सफल नहीं हुआ। अंततोगत्वा मई 1997 में पेरिस सम्मेलन के दौरान स्वयं बोरिस येल्ट्सिन ने नाटो-रूस संस्थापना अधिनियम (NATO - Russia Founding Act) पर हस्ताक्षर किए। इसके द्वारा रूस और नाटो के मध्य सहयोग का प्रावधान किया गया। इसमें सामान्य हित के मुद्दों पर बातचीत के लिए एक स्थायी संयुक्त परिषद् (Permanent Joint Council) की स्थापना पर सहमति हुई लेकिन नाटो के निर्णयों पर रूस को निषेधाधिकार (Veto Power) नहीं मिल पाया।

मार्च 1997 में प्रधानमंत्री एच. डी. देवगौडा (H.D. Deve Gowda) ने रूस की यात्रा की तथा राष्ट्रपति बोरिस येल्ट्सिन एवं प्रधानमंत्री विक्टर चेरनोमिरदिन (Victor Chernomyrdin) के साथ विचार-विमर्श किया। वार्ता के अंत में कई समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए। इसमें दोहरे करों को रोकने संबंधी समझौता, सीमा शुल्क (Customs) के क्षेत्र में सहयोग एवं पारस्परिक सहायता संबंधी समझौता

तथा प्रत्यर्पण संबंधी समझौता सम्मिलित था। इन समझौतों के अतिरिक्त रूस ने शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिए भारत की परमाणु ऊर्जा क्षमता के विस्तार में सहायता देने का वचन भी दिया। इस उद्देश्य से रूस ने भारत को 1000 मेगावाट क्षमता वाले दो परमाणु संयंत्र (Atomic Reactors) बेचने के लिए भी सहमति व्यक्त की। रूस ने यह भी निश्चय किया कि वह भारत के साथ एकीकृत दीर्घकालीन रक्षा आपूर्ति सहयोग कार्यक्रम (Integrated Long-Term Defence Supplies Cooperation Programme) में भागीदार होगा।

वार्ता के दौरान रूस के राष्ट्रपति ने प्रधानमंत्री देवगौड़ा को विश्वास दिलाया कि रूस भारत के सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता प्राप्त करने के प्रयासों का पूर्ण समर्थन करेगा। उन्होंने पनबिजली उत्पादन के क्षेत्र में भारत के साथ सहयोग करने की इच्छा भी व्यक्त की। इस समय रूस ने पाकिस्तान को शस्त्रास्त्रों की बिक्री पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया था। भारत के लिए सामरिक दृष्टि से यह अत्यंत महत्वपूर्ण बात थी। इस प्रकार रूस ने भारत से मित्रता को पुनः सुदृढ़ बनाने के लिए विभिन्न प्रयास किए।

मार्च 1997 की भारत-रूस शिखर वार्ता का सबसे महत्वपूर्ण परिणाम यह निकला कि रूस पुनः भारत के निकट आ गया। इससे पूर्व रूस को यह अहसास हुआ कि उसके साथ पश्चिमी शक्तियों ने धोखा किया है क्योंकि न तो रूस को G-7 की पूर्ण सदस्यता प्राप्त हुई और न ही कुछ दिन पूर्व हेल्सिंकी में नाटो के विस्तार को रोकने के लिए अमेरिकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन को सहमत किया जा सका। गौड़ा-येल्त्सिन वार्ता की समाप्ति पर रूस के राष्ट्रपति ने कहा कि हम कई दशकों से मित्र रहे हैं और आगे भी रहेंगे। बोरिस येल्त्सिन ने माना कि दक्षिण एशिया क्षेत्र में भारत स्थायित्व प्रदान करने वाली शक्ति है।

अब तक के भारत और रूस संबंध तीन स्पष्ट चरणों में विभाजित किए जा सकते हैं। स्टालिन युग में सोवियत संघ ने भारत से दूरी बनाए रखी थी क्योंकि वह मानता था कि नेहरू के समय का भारत, ब्रिटेन और अमेरिका से जुड़ा हुआ एक प्रतिक्रियावादी राज्य था। दूसरी ओर खुरचेव युग से लेकर गोर्बाचोव के आरंभिक वर्षों तक निकट आर्थिक और सैनिक संबंधों के माध्यम से भारत-रूस (सोवियत संघ) संबंध बहुत मधुर रहे। शीत युद्ध की समाप्ति तथा आर्थिक अराजकता की अवधि में भारत और रूस के संबंधों में नरमी आई थी क्योंकि येल्त्सिन अमेरिका के नेतृत्व में कार्य करने के इच्छुक थे परंतु जब रूस-अमेरिकी संबंध अस्थिरता के चरम पर पहुँच गए तो मास्को नई दिल्ली के साथ अपनी मैत्री के नवीनीकरण के लिए प्रयत्नशील हो गया।

इस नई नीति के अधीन रूस ने भारत की ओर मित्रता का हाथ बढ़ाया और कई समझौतों पर हस्ताक्षर किए। भूतपूर्व विदेश सचिव मुचकुंद दुबे के अनुसार भारत-रूस संबंध जो कि सोवियत संघ के विघटन के पश्चात कभी तनाव की स्थिति में आ गए थे, उन्हें अब नई ऊर्जा मिली है। दुबे के अनुसार रूसी नेताओं ने अब यह स्पष्ट संकेत दिया है कि वे भारत के साथ अपने संबंधों को पहले जैसे उच्च स्तर पर वापस ले जाना चाहते हैं और वे एशिया की सुरक्षा और उसके स्थायित्व के लिए भारत को एक महत्वपूर्ण कारक मानते हैं। सी. उदय भास्कर ने कहा कि रूस के साथ भारत को अपनी दीर्घकालीन रणनीतिक भागीदारी का विकास अत्यंत सावधानी से करना चाहिए। रूस अब सोवियत संघ नहीं रहा है यह बात ध्यान में रखनी होगी। रूस की विदेश नीति की निष्पक्ष समीक्षा से भी यही परिणाम निकलता है कि रूस ने अब यह अनुभव कर लिया है कि भारत की उपेक्षा और पश्चिम पर अत्यधिक भरोसा करके उसने गलती की थी। इसी अनुभव के परिणामस्वरूप भारत के साथ मित्रता के नए प्रयास किए गए और साथ ही रूस पश्चिमी देशों के साथ भी निकट सहयोग के लिए कार्य करता रहा। जून 1997 में सांत शीर्षस्थ औद्योगिक देशों के संगठन G-7 की शिखर बैठक में भाग लेने के लिए येल्त्सिन को भी आमंत्रित किया गया और जी-7 के सदस्यों ने उनका हार्दिक स्वागत किया। इस नई घटना को G-8 के उभरने का संकेत माना जा सकता था।

इस प्रकार 1997 के मध्य से यह स्पष्ट हो गया था कि चाहे रूस अमेरिका के और अधिक निकट आने के लिए प्रयत्नशील हो उत्तर-शीतयुद्ध काल में भारत और रूस के संबंध उसी परम्परागत मैत्री की ओर अग्रसर हो रहे थे जो भारत-सोवियत संघ सौहार्द के दिनों में दिखाई पड़ती थी।

कारगिल संघर्ष के दौरान भी भारत और रूस की पारम्परिक मैत्री स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हुई। इस संघर्ष के कारण भारत और रूस के मध्य विकसित हो रही रणनीतिक भागीदारी (Strategic Partnership) को और अधिक गति प्राप्त हुई। कारगिल संघर्ष के आरम्भ से ही रूस ने खुलकर भारत का समर्थन किया तथा पाकिस्तान से कहा कि वह नियंत्रण रेखा के पार भारतीय प्रदेश से अपने घुसपैठिए तुरंत वापस बुला ले। रूस ने कारगिल में पाकिस्तानी कार्यवाही की निन्दा की तथा कहा कि किसी भी व्यावहारिक वार्ता के लिए यह पहली शर्त है कि नियंत्रण रेखा का सम्मान किया जाए। यह सत्य है कि लगभग सभी देशों ने भारत की स्थिति तथा उसके संयम की सराहना की परन्तु बड़ी शक्तियों में रूस एकमात्र ऐसा देश था जिसने निःसंकोच जम्मू-कश्मीर को भारत का एक राज्य कहा और इस पर हुए आक्रमण की निन्दा की। कारगिल में दो महीने तक चले भारत-पाकिस्तान संघर्ष में रूस ने भारत को जो समर्थन दिया उससे यह सिद्ध होता है कि रूस भारत के साथ रणनीतिक भागीदारी स्थापित करने के लिए तैयार है।

कारगिल संघर्ष में भारत द्वारा अपनायी गई संयम की नीति को विश्व समुदाय द्वारा जो समर्थन मिला वह अभूतपूर्व था। भारत ने इस समर्थन के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की। परन्तु इन सभी देशों में रूस द्वारा मिले समर्थन को विशेष रूप से सराहा गया। रूस ने बिना किसी संकोच के पाकिस्तानी घुसपैठ की निन्दा करते हुए उसे आक्रमण की संज्ञा दी। रूस ने कश्मीर समस्या के अन्तर्राष्ट्रीयकरण के प्रयासों का विरोध किया और कहा कि भारत और पाकिस्तान के सभी विवादों का समाधान शिमला समझौते

तथा लाहौर घोषणा-पत्र के प्रावधानों के अनुसार किया जाना चाहिए। इस घटना से यह भी संकेत मिलता है कि इस्लामी कट्टरवाद (Islamic Fundamentalism) एक नई चुनौती के रूप में उभर रहा है जो न केवल भारत के लिए खतरा है बल्कि रूस सहित अन्य देशों के लिए भी खतरा बन सकता है यहाँ तक कि चीन भी इस खतरे का शिकार हो सकता है।

बदलते घटनाक्रम में रूस इस बात के लिए भी सहमत हुआ कि वह भारत को ऐसे नवीनतम शास्त्रास्त्र देगा जो उसने अब तक किसी अन्य देश को नहीं दिए हैं। यह निर्णय सिद्ध करता है कि भारत-रूस मैत्री क्षणिक न होकर स्थायी है। यह भी स्पष्ट है कि रूस भारत को अपना रणनीतिक भागीदार मानता है। राष्ट्रपति बोरिस येल्ट्सिन द्वारा 31 दिसम्बर, 1999 को अपने पद से त्यागपत्र देने के पश्चात् प्रधानमंत्री ब्लादीमीर पुतिन (Bladimir Putin) रूस के कार्यवाहक राष्ट्रपति बने। उनकी सरकार ने कहा कि रूस भारत एवं चीन को अपना स्वाभाविक मित्र मानता है।

आगे चलकर रूसी राष्ट्रपति ब्लादीमीर पुतिन तथा प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी की सरकारों ने आपसी संबंधों को और भी प्रगाढ़ बनाने का प्रयास किया। अमेरिकी राष्ट्रपति क्लिंटन की मार्च 2000 की भारत यात्रा के कुछ ही माह पश्चात् राष्ट्रपति ब्लादीमीर पुतिन भारत आए तथा आपसी सहयोग का नया आयाम दिया। दोनों ने सामरिक भागीदारी (Strategic Partnership) के नए समझौते पर हस्ताक्षर किए। इसके अतिरिक्त भविष्य में सहयोग के लिए अन्य समझौतों पर भी हस्ताक्षर किए गए।

सामरिक सहयोग के समझौते में पुतिन और वाजपेयी ने यह वचन दिया कि दोनों से कोई भी देश किसी ऐसी संधि या समझौते पर हस्ताक्षर नहीं करेगा जिससे दूसरे पक्ष की स्वतन्त्रता, संप्रभुता, प्रादेशिक अखंडता अथवा उसके राष्ट्रीय हितों पर आघात होता हो। दोनों देशों ने यह भी प्रतिबद्धता व्यक्त की कि वे मिलकर अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद के विरुद्ध संघर्ष करेंगे। भारत की संसद को संबोधित करते हुए राष्ट्रपति ब्लादीमीर पुतिन ने कहा कि भारत उसी प्रकार कश्मीर में अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद का शिकार है जिस प्रकार रूस चेबन्या में। पुतिन के अनुसार ये सामान्यतया वही व्यक्ति तथा संगठन हैं जो फिलिपीन्स से कोसोवो तक आतंकवादी गतिविधियाँ चला रहे हैं। इनका शिकार कश्मीर और अफगानिस्तान से लेकर उत्तरी कॉकैसस (Caucasus) तक सभी हैं। तत्कालीन प्रधानमंत्री वाजपेयी ने भी आतंकवाद को एक गम्भीर चुनौती बताते हुए सभी स्तरों पर इसके विरुद्ध संघर्ष करने का वचन दिया।

द्विपक्षीय संबंधों की हालिया अवस्था (Current Status of bilateral Relations)

रूस के साथ भारत का संबंध भारत की विदेश नीति की एक प्रमुख प्राथमिकता है। भारत रूस को एक विश्वसनीय एवं भरोसेमंद रणनीतिक भागीदार के रूप में देखता है। भारत एवं रूस के बीच सन् 2000 में रूसी राष्ट्रपति ब्लादीमीर पुतिन की भारत यात्रा के फलस्वरूप द्विपक्षीय संबंधों में गहराई देखने को मिली। सन् 2000 के रणनीतिक संबंधों में रक्षा, परमाणु ऊर्जा, अंतरिक्ष, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, हाइड्रोकार्बन व्यापार एवं निवेश जैसे क्षेत्र सम्मिलित हैं। भारत-रूस रणनीतिक भागीदारी में अनेक स्तर पर संवाद-यात्रिकी (Consultation Mechanism) की व्यवस्था की गई है जिससे कि सहयोग एवं नियमित अंतर्क्रियाकलापों को सुनिश्चित किया जा सके।

अक्टूबर 2012 में व्यापारिक, आर्थिक, वैज्ञानिक, तकनीकी एवं सांस्कृतिक सहयोग से संबंधित भारत-रूस अंतर-सरकारी आयोग की बैठक में भाग लेने आए रूस के उपप्रधानमंत्री दमित्री रोगोजिन ने कहा था कि रूस पाकिस्तान को अस्त्रों की आपूर्ति नहीं करेगा। उन्होंने कहा कि इस क्षेत्र की सुरक्षा के लिए रूस हमेशा भारत के साथ सहयोग करता रहा है और अन्य देशों की तरह रूस ने भारत के लिए कभी भी परेशानी खड़ी नहीं की है।

दिसंबर 2012 में भारत आए रूस के राष्ट्रपति ब्लादीमीर पुतिन ने कहा था कि भारत के साथ मित्रता एवं सहयोग बढ़ाना रूस की विदेश नीति की प्राथमिकता है। उन्होंने 2000 की सामरिक भागीदारी की घोषणा को ऐतिहासिक बताया। उन्होंने कहा कि 21वीं शताब्दी के प्रथम दशक के घटनाक्रमों तथा उनके संबंध में भारत-रूस सहयोग से यह साबित होता है कि वास्तव में वे अद्वितीय, विशिष्ट एवं विशेषाधिकृत प्रकृति के हैं। यह संबंध तब और भी महत्वपूर्ण हो जाता है, जब विश्व समुदाय असंतुलित वैश्विक विकास, आर्थिक एवं सामाजिक अस्थिरता, विश्वास तथा सुरक्षा की कमी से जूझ रहा हो। रूसी राष्ट्रपति ब्लादीमीर पुतिन का मानना था कि इन परिस्थितियों में भारत एवं रूस को अंतर्राष्ट्रीय मामलों में उत्तरदायी नेतृत्व एवं सामूहिक कार्रवाई का उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए। उन्होंने कहा कि भारत एवं रूस को मिलकर विश्व को न्यायपूर्ण, लोकतांत्रिक एवं सुरक्षित बनाने का प्रयास करना चाहिए तथा मध्यपूर्व, उत्तरी अफ्रीका एवं अफगानिस्तान जैसे मसलों का समाधान करने की सुविधा प्रदान करनी चाहिए। उन्होंने माना कि दोनों देशों के बीच ब्रिक्स के अंदर भागीदारी बढ़ती जा रही है। विश्व व्यापार के नियमों का विकास, व्यापारिक, तकनीकी, वैज्ञानिक एवं मानवीय सहयोग से गुणवत्तापूर्ण सहभागिता विकसित होगी। रूसी राष्ट्रपति ब्लादीमीर पुतिन ने आर्थिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए व्यापारिक समुदायों के बीच प्रत्यक्ष संबंध विकसित करने, गतिशील एवं आशाजनक क्षेत्रों में निवेश, तकनीकी एवं अद्वितीय सहयोग को बढ़ावा देने की बात कही। उन्होंने यह भी कहा कि वे इस्पात उद्योग, हाइड्रोकार्बन उत्पादन, कार एवं वायुयान निर्माण, जैव तकनीक उद्योग से बेहतर रिटर्न की आशा करते हैं। उन्होंने कहा कि प्रमुख कार्य तकनीकी यंत्र एवं सामग्री उत्पादन के लिए

आधारभूत एवं प्रयुक्त अनुसंधान सुनिश्चित करना है। भारत-रूस के बीच 2020 तक के लिए विज्ञान, तकनीकी एवं नवप्रवर्तन से संबंधित दीर्घाधिक सहयोग संबंधी कार्यक्रम के अंतर्गत महत्वपूर्ण मानदण्ड तय किए गए हैं।

द्विपक्षीय एवं व्यापारिक संबंधों की प्रगति की समीक्षा के प्रयास में भारत के विदेश मंत्री सलमान खुरशीद अप्रैल 2013 में रूस के उप प्रधानमंत्री दमित्री रोगोजीन से मास्को में मिले। इस अवसर पर विदेश मंत्री ने कहा कि रूस के साथ द्विपक्षीय संबंध भारतीय विदेश नीति की एक प्रमुख प्राथमिकता है। भारत-रूस को पुराना एवं समय पर खरा उतरने वाला मित्र मानता है, जिसने भारत के आर्थिक विकास एवं सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

अप्रैल 2013 में भारत एवं रूस ने विनियमन समझौता (Regulation Agreement) के अंतर्गत संयुक्त आयोग का गठन किया है। इसके अंतर्गत आपातकालीन प्रबंधन के लिए संयुक्त आयोग की संरचना, कार्य एवं प्रक्रिया का वर्णन किया गया है। इससे आपात कालीन परिस्थितियों में होने वाली हानि को नियंत्रित एवं रोका जा सकता है। आपातकालीन प्रबंधन से संबंधित समझौता दिसंबर 2010 में ही किया गया था जिसे लागू करने के लिए आवश्यक संयुक्त आयोग के गठन का अब प्रावधान किया गया है। आपातकालीन प्रबंधन के अंतर्गत आपदा की स्थिति में दोनों देशों के लोगों की सुरक्षा एवं बेहतरी के लिए कार्य किया जा सकेगा। आपदा प्रबंधन के क्षेत्र में परस्पर लाभदायक वैज्ञानिक एवं तकनीकी जानकारी का भी आदान-प्रदान किया जा सकेगा। इस संयुक्त आयोग की बैठक क्रमशः भारत एवं रूस में आयोजित की जाएगी।

वार्षिक शिखर सम्मेलन (Annual Summits)

- भारत के प्रधानमंत्री और रूसी संघ के राष्ट्रपति के बीच वार्षिक शिखर सम्मेलन वार्तालाप की एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण यांत्रिकी है जिसकी बैठकों का आयोजन प्रतिवर्ष बारी-बारी से रूस और भारत में किया जाता है।

रूस के राष्ट्रपति व्लादीमीर पुतिन दिसंबर 2012 में भारत की यात्रा पर आए थे और प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह से मिले थे। उनकी इस भारत यात्रा के दौरान आर्थिक संबंधों को मजबूती देने का प्रयास किया गया। रूस समर्थित दो बिलियन डॉलर से बनने वाले निवेश कोष के संबंध में समझौता किया गया। भारत एवं रूस दोनों देश व्यापक आर्थिक सहभागिता समझौता के लिए बातचीत करने पर भी राजी हो गए हैं। इस समझौता में बेलारूस एवं कजाकिस्तान को भी शामिल किया जा सकता है। रूसी राष्ट्रपति पुतिन की इस भारत यात्रा के दौरान 20 हजार करोड़ के दो सैन्य समझौतों पर भी हस्ताक्षर किए गए थे जिन पर अभी कार्य किए जा रहे हैं।

दिसंबर 2012 के 13वें भारत-रूस शिखर सम्मेलन के दौरान कई समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए। जिनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं-

- 2013-14 के लिए विदेश कार्यालय वार्तालाप से संबंधित प्रोटोकॉल। यह प्रोटोकॉल एक ऐसा यंत्र है जिसके माध्यम से दोनों देशों के बीच नजदीकी राजनीतिक वार्तालाप की जाती है। यह दोनों देशों के विदेश कार्यालयों के विभिन्न प्रभागों के बीच व्यापक समझ विकसित करता है।
- भारत के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय तथा रूस के शिक्षा एवं विज्ञान मंत्रालय के बीच विज्ञान, तकनीकी एवं नवप्रवर्तन दस्तावेज पर समझौता। यह शैक्षिक, अनुसंधान एवं विकास तथा औद्योगिक संस्थाओं से संबंधित संयुक्त परियोजनाओं एवं कार्यक्रमों के माध्यम से नवप्रवर्तन तथा विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्र में सहयोग को बढ़ावा देता है।
- वर्ष 2013-15 के लिए सांस्कृतिक विनियम कार्यक्रम। इसके तहत कला, फिल्म, संग्रहालय, अभिलेखागार, साहित्य एवं भाषा के माध्यम से सांस्कृतिक संबंधों को बढ़ावा दिया जाता है।
- भारत एवं रूस के बीच प्रत्यक्ष निवेश को प्रोत्साहित करने हेतु समझौता ज्ञापन।
- भारत संचार निगम लिमिटेड, महानगर टेलीफोन निगम लिमिटेड तथा निस-ग्लोनास (NIS - GLONASS) के बीच उपग्रह आधारित नौवहन सेवा (Navigation Services) उपलब्ध कराने हेतु समझौता ज्ञापन किया गया।
- 71 एम आई 17V - 5 हेलिकॉप्टर की आपूर्ति के संबंध में समझौता।
- सूखोई - 30 एम के आई लड़ाकू विमान के लाइसेंस के अंतर्गत 42 तकनीकी किट की आपूर्ति संबंधी समझौता।

व्यापारिक स्तर के समझौतों के अंतर्गत टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेज लिमिटेड तथा रूस के संयुक्त स्टॉक कंपनी नेविगेशन इन्फार्मेशन सिस्टम (NIS) के बीच सामरिक सहयोग समझौता। इस समझौता से इन दो उद्यमों के बीच सॉफ्टवेयर विकास, सिस्टम इंटीग्रेशन, प्रोडक्ट इंजीनियरिंग आदि के क्षेत्र में तकनीकी सहभागिता को मजबूत बनाया जाएगा।

- इलकॉम सिस्टम प्राइवेट लिमिटेड तथा ओ ए ओ जे एस सी हेलिकाप्टर्स रूसिया के बीच संयुक्त उद्यम संबंधी समझौता। इस संयुक्त उद्यम का लक्ष्य भारत में रूस के आधुनिकतम हेलिकाप्टर्स निर्माण के लिए एक आधुनिक औद्योगिक उद्यम की स्थापना करना है।

- एल्डर फार्मास्यूटिकल्स लिमिटेड, मुम्बई तथा रूस की फार्म इको के बीच संयुक्त उद्यम की स्थापना हेतु समझौता ज्ञापन। यह संयुक्त उद्यम रूस एवं अन्य देशों में दवाओं का निर्माण, विपणन एवं वितरण करेगी। इस संयुक्त उद्यम में फार्म इको की 51 प्रतिशत तथा एल्डर फार्मास्यूटिकल की 49 प्रतिशत हिस्सेदारी होगी।

भारत-रूस रक्षा सहयोग (India-Russia Defence Cooperation)

- भारत, रूस के रक्षा उपकरणों का सबसे बड़ा क्र्रेता बना हुआ है। रक्षा क्षेत्र में भारत-रूस सहयोग मात्र क्र्रेता-विक्रेता का न होकर उससे आगे बढ़ गया है और इस क्षेत्र में व्यापक सहयोग सम्मिलित है। जिसमें संयुक्त उपक्रम, रक्षा से संबंधित प्रौद्योगिकी का उत्पादन एवं विपणन आदि सम्मिलित हैं। ब्रह्मोस प्रक्षेपास्त्र प्रणाली इस प्रकार के संयुक्त उद्यम का सबसे शानदार उदाहरण है। वर्तमान में इसी प्रकार की संयुक्त विकास परियोजनाएँ जैसे- 5वीं पीढ़ी के युद्धक विमान, SU-30 विमान, बहुल भूमिका निभाने वाले माल वाहक विमान (Multi Transport Aircraft – MTA) और टी-90 टैंक आदि का उत्पादन हो रहा है।
- सैन्य तकनीकी सहयोग हेतु भारत-रूस अंतरसरकारी आयोग (The India-Russia Intergovernmental Commission on Military Technical Cooperation, IRIGC-MTC) की सह-अध्यक्षता भारत के रक्षा मंत्री और रूस के रक्षा मंत्री द्वारा की जा रही है जो इस क्षेत्र में अन्तर्क्रिया (Interaction) की प्रमुख संस्थागत यांत्रिकी है।
- भारतीय प्रधानमंत्री के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार एवं रूसी सुरक्षा परिषद् सचिव नियमित संपर्क में रहते हैं।

भारत एवं रूस के बीच इन्द्र (INDRA) शीर्षक के अंतर्गत थलसेना एवं नौसेना का संयुक्त सैनिक अभ्यास किया जाता है। दोनों देशों की सेनाओं के बीच नवीनतम इन्द्र सैन्याभ्यास अगस्त 2012 में हुआ था। इसी तरह दोनों देशों की नौसेना के बीच दिसंबर 2012 में मुम्बई तट पर संयुक्त अभ्यास किया गया था। भारत रूस रक्षा संबंधों के अंतर्गत आपसी रक्षा संबंध विक्रेता-खरीददार संबंध से आगे बढ़कर आज संयुक्त अनुसंधान, डिजाइन विकास, आधुनिकतम सैन्य अस्त्रों का उत्पादन तक पहुँच गया है।

विदेश कार्यालय परामर्श (Foreign Office Consultations)

- रणनीतिक भागीदारी की घोषणा (2000) के अन्तर्गत विदेश कार्यालयों के बीच नियमित परामर्श के लिए एक प्रणाली की स्थापना की गयी है। विदेश कार्यालय स्तर पर एक द्विवार्षिक बैठक का निर्णय लिया गया है जो विशेष रूप से चिन्हित विषयों पर परामर्श के लिए आयोजित की जाती है। इसके अतिरिक्त भारत के विदेश सचिव और रूसी उप विदेश मंत्री के बीच नियमित रूप से परामर्श बैठकों का आयोजन किया जा रहा है।

परमाणु ऊर्जा सहयोग (Nuclear Energy Cooperation)

परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में रूस लम्बे समय से भारत का भागीदार रहा है। कुडनकुलम (Kudankulam) परमाणु ऊर्जा परियोजना का निर्माण कार्य चल रहा है। वर्ष 2009 में सरकार ने हरीपुर (पश्चिम बंगाल) में रूसी सहयोग से परमाणु ऊर्जा संयंत्र के निर्माण हेतु एक अतिरिक्त स्थल का निर्धारण किया है। मार्च 2010 में तत्कालीन रूसी प्रधानमंत्री व्लादीमीर पुतिन की भारत यात्रा के समय शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिए परमाणु ऊर्जा सहयोग की रूपरेखा पर एक अंतरसरकारी (Intergovernmental) समझौता किया गया था।

दोनों देशों ने ऊर्जा क्षेत्र में अपनी भागीदारी का आगे विस्तार करने के प्रति भी वचनबद्धता व्यक्त की है। भारत अब सखालिन में निवेश करने से आगे बढ़ते हुए प्रत्यक्ष व्यापार में शामिल हो गया है। भारत अब प्रतिप्रवाह (Upstream) तथा अनुप्रवाह (Down Stream) क्षेत्रों में संयुक्त निवेश करने की भी तैयारी कर रहा है। भारत साइबेरिया के वर्तमान एवं भविष्य की परियोजनाओं में ओ एन जी सी - ओ वी एल के माध्यम से शेयर आधारित भागीदारी करना चाहता है। इसके अतिरिक्त भारत रूस की प्रस्तावित द्रवित प्राकृतिक गैस (Liquefied Natural Gas) परियोजनाओं, रूस की दूर-दराज एवं आर्कटिक शेल्फ (Arctic Shelf) की परियोजनाओं में भी भागीदारी करना चाहता है।

अंतरिक्ष (Space)

भारत ने रूस के साथ उच्च तकनीक आधारित विभिन्न अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी परियोजनाओं पर मिलकर काम किया है। भारत एवं रूस के बीच चन्द्रायन-2, मानव अंतरिक्षयान कार्यक्रम एवं यूथसैट प्रोजेक्ट पर सहयोग किया जा रहा है। 20 अप्रैल, 2011 को भारतीय एवं रूसी छात्रों के सहयोग से विकसित 'युथसैट' को पी.एस.एल.वी. रॉकेट से अंतरिक्ष में छोड़ा गया। भारत एवं रूस दोनों संयुक्त रूप से रूसी सैटेलाइट नेवीगेशन सिस्टम 'ग्लोनास' (GLONASS) को विकसित एवं प्रक्षेपित करने का प्रयास कर रहे हैं।

भारत एवं रूस ने उपग्रहों की सही स्थिति दर्शाने वाली रेंजिंग स्टेशन (Ranging Station) के संचालन के संबंध में भी कदम उठाया है।

स्थिति के कारण उत्पन्न चुनौतियों का मुकाबला करने और अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में समन्वय को बढ़ावा देने में मदद मिली है। साथ ही दोनों देशों के बीच पारंपरिक मैत्री की भावना, व्यापारिक, आर्थिक, प्रतिरक्षा, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से संबद्ध परियोजनाओं के कार्यान्वयन, मानवीय एवं सांस्कृतिक आदान-प्रदान एवं लोगों के बीच संपर्क को बढ़ावा देने में भी सहयोग मिला है।

- ध्यान देने योग्य है कि रूस ही वह पहला देश था जिसके साथ भारत ने वर्ष 2000 में सामरिक भागीदारी समझौता (Strategic Partnership Agreement) किया था। वर्ष 2010 के वार्षिक शिखर सम्मेलन में इस भागीदारी को आगे बढ़ाकर विशेष एवं विशेषाधिकृत सामरिक भागीदारी (Special and Privileged Strategic Partnership) का दर्जा दिया गया है। इस समझौते में यह बात निहित है कि भारत एवं रूस आपसी संबंधों को असाधारण गहराई देना चाहते हैं।
- भारत तथा रूस के बीच दोनों देशों के नागरिकों की कतिपय श्रेणियों के लिए यात्रा दस्तावेजों के पारस्परिक सरलीकरण से संबद्ध समझौता लागू होने से भारत और रूस के बीच व्यापक वाणिज्यिक एवं वैज्ञानिक सहयोग को बढ़ावा मिलेगा और व्यवसायियों, छात्रों तथा अन्य समूहों का आवागमन बढ़ेगा। वर्ष 2012 के दौरान भारत और रूस के बीच राजनयिक संबंधों की स्थापना की 65वीं वर्षगांठ मनायी जा रही है।

द्विपक्षीय व्यापार, निवेश एवं नवप्रवर्तन सहयोग संवर्धन

(Enhancement of Bilateral Trade, Investment and Innovation Cooperation)

- व्यापारिक, आर्थिक, वैज्ञानिक, प्रौद्योगिकीय एवं सांस्कृतिक सहयोग से संबद्ध भारत-रूस अंतरसरकारी आयोग (India-Russia Intergovernmental Commission on Trade, Economic, Scientific, Technical and Cultural Cooperation) द्वारा अनेक उपयोगी कार्य किये जा रहे हैं। अंतरसरकारी आयोग द्वारा द्विपक्षीय आर्थिक संबंधों का विकास सुनिश्चित करने के उद्देश्य से लिए गए निर्णयों में नवीन एवं उच्च प्रौद्योगिकी (Innovative and High Technology) तथा निवेश परियोजनाओं (Investment Projects) पर विशेष बल दिया गया जिससे दोनों देशों की अर्थव्यवस्थाओं के आधुनिकीकरण एवं विकास में योगदान मिले। भारत ने विश्व व्यापार संगठन में रूस के प्रवेश का स्वागत किया है।

दोनों देशों ने भारत एवं बेलारूस-कजाखिस्तान-रूस सीमा शुल्क संघ (Belarus-Kazakhstan-Russia Custom Union) के बीच व्यापक आर्थिक सहयोग समझौता संपन्न किए जाने की संभावना का अध्ययन करने का निर्णय लिया है। दोनों देशों ने वाणिज्यिक मिशनों का आदान-प्रदान करने और भारत में औद्योगिक आधुनिकीकरण पर कार्य करने का निर्णय लिया है। भारत एवं रूस ने संयुक्त निवेश कोष (Joint Investment Fund) की स्थापना किए जाने की संभावना का पता लगाने और दोनों देशों के विभिन्न क्षेत्रों के बीच सहयोग बढ़ाने का निर्णय लिया है। दोनों देशों के बीच हाइड्रोकार्बन, इस्पात, खनन, ऑटोमोबाइल एवं उर्वरक क्षेत्र की अनेक संयुक्त परियोजनाओं पर सहयोग किया जा रहा है।

ऊर्जा सहयोग (Energy Cooperation)

- ऊर्जा क्षेत्र में किया जा रहा सहयोग भारत-रूस सामरिक भागीदारी की महत्वपूर्ण आधारशिलाओं में से एक है। असैनिक परमाणु ऊर्जा क्षेत्र और हाइड्रोकार्बन क्षेत्र में दीर्घावधिक संयुक्त सहयोग के प्रति दोनों देश प्रतिबद्ध हैं।
- दोनों देश शांतिपूर्ण प्रयोजनों के लिए परमाणु ऊर्जा का उपयोग किए जाने से संबद्ध समझौता और 12 मार्च, 2010 को संपन्न परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग हेतु भारत एवं रूस के बीच व्यापक सहयोग संवर्धन रूपरेखा में परिकल्पित दीर्घावधिक भागीदारी की योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए कार्य कर रहे हैं।
- दोनों देशों के बीच शांतिपूर्ण प्रयोजनों के लिए परमाणु ऊर्जा के विकास हेतु सहयोग किया जा रहा है और परमाणु प्रौद्योगिकियों की सुरक्षा हेतु सर्वोच्च मानकों को (Highest Standards for Safety of Nuclear Technologies) अपनाया जा रहा है। दोनों देशों ने डिजाइन एवं तकनीकी सहायता में रूसी संगठनों की क्षमता एवं उनके समृद्ध अनुभवों और परमाणु ऊर्जा संयंत्रों के निर्माण एवं तकनीक में भारतीय संगठनों की विशेषज्ञता का उपयोग किया है।
- 21 दिसंबर, 2010 को हस्ताक्षरित भारत एवं रूस के बीच तेल और गैस क्षेत्र में संवर्धित सहयोग से संबंधित रूपरेखा समझौते (Framework agreement for enhanced cooperation in Oil and gas) के अनुसरण में हाइड्रोकार्बन क्षेत्र में सहयोग किया जा रहा है। भारत ने रूस की नई परियोजनाओं में ओएनजीसी-ओवीएल (ONGC-OVL) के जरिए भागीदारी करने में अपनी रुचि दिखाई है।

अंतरिक्ष अनुसंधान (Space Research)

- अंतरिक्ष विज्ञान अध्ययन के लिए संयुक्त रूप से निर्मित यूथसैट (Youthsat) का भारत द्वारा सफल प्रक्षेपण किया गया है। संयुक्त चंद्र अन्वेषण परियोजना (Joint Lunar Exploration Project) पर कार्य किया जा रहा है। दोनों देशों ने उपग्रह

आर्थिक सहयोग (Economic Cooperation)

भारत-रूस के बीच 2011-12 के दौरान द्विपक्षीय व्यापार में 24.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। 2012 में द्विपक्षीय व्यापार 11.4 बिलियन डॉलर पर पहुँच गया है जो कि अभी भी दोनों देशों की क्षमता से काफी कम है। भारत एवं रूस के बीच व्यापार की तीव्र गति से बढ़ावा ब्लादीमीर पुतिन के लिए मुख्य चुनौती है। बिना ठोस आर्थिक आधार के दोनों देशों के बीच वर्तमान उच्च स्तरीय "विशेष एवं विशेषाधिकृत रणनीतिक भागीदारी" को बनाए रखना काफी कठिन होगा। आर्थिक सहयोग का अधीक्षण करने वाले मुख्य संस्थागत तंत्र 'व्यापारिक आर्थिक, वैज्ञानिक तकनीकी एवं सांस्कृतिक सहयोग हेतु भारत-रूस अंतरसरकारी आयोग (The Indo-Russian Inter-Governmental Commission on Trade, Economic, Scientific Technological and Cultural Cooperation (IRIGC-TEC)' की सह-अध्यक्षता भारत के विदेश मंत्री एवं रूसी उप-प्रधानमंत्री करते हैं। आईआरआईजीसी-टीईसी (IRIGC-TEC), आर्थिक-व्यापारिक सहयोग, खनिज और लौह कार्य (Mines and Metallurgy), ऊर्जा, पर्यटन और संस्कृति, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी तथा सूचना प्रौद्योगिकी से संबंधित 6 कार्य दलों के द्वारा प्रदान किये गये सुझावों के साथ समन्वय स्थापित करता है।

दोनों देशों ने व्यवसाय से संबंधित अंतर्क्रियाकलापों को बढ़ाने और संपूर्ण व्यापार एवं निवेश की वृद्धि को दृष्टिगत रखते हुए प्राथमिक क्षेत्र पर ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता को चिन्हित किया है। वर्ष 2015 के लिए नया व्यापार लक्ष्य 20 बिलियन अमेरिकी डॉलर तय किया गया है। इसके पूर्व 2010 में 10 बिलियन अमेरिकी डॉलर का लक्ष्य निर्धारित किया गया था।

हाल ही में सृजित किये गये दो यांत्रिकी 'व्यापार और निवेश हेतु भारत-रूस मंच-2007' (Indo-Russian Forum on Trade and Investment-2007) और 'भारत-रूस सी ई ओ परिषद (Indo-Russia CEO Council) का गठन सीधे व्यवसायिक संपर्कों का संबंधन करने हेतु किया गया है। इसके अतिरिक्त भारत-रूस व्यवसाय परिषद (India-Russia Business Council), भारत-रूस व्यापार निवेश एवं प्रौद्योगिकी संबंधन परिषद (India-Russia Trade, Investment and Technology Promotion Council) जैसे निकायों का गठन भी व्यवसायिक गतिविधियों को बढ़ाने के लिए किया गया है।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी (Science and Technology)

विज्ञान एवं तकनीक संबंधी कार्यकारी समूह (Working Group) समन्वित दीर्घकालिक कार्यक्रम (Integrated Long Term Programme-ILTP) तथा आईआरआईजीसी-टीईसी (IRIGC-TEC) के अंतर्गत कार्य करते हैं। ये ही दो संस्थान भारत एवं रूस के बीच विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्र में सहयोग के लिए मुख्य तंत्र (Main Mechanism) के रूप में कार्य करते हैं। कार्यकारी समूह पारस्परिक सहमति से प्राथमिकताओं का निर्धारण करता है। इनमें अभी जैव तकनीक, भवन निर्माण सामग्री, औद्योगिक तकनीक, चिकित्सीय अनुसंधान, माप पद्धति एवं मानकीकरण (Metrology & Standardization), मौसम विज्ञान, समुद्र विज्ञान (Oceanography) और भूकम्प विज्ञान (Seismology) शामिल हैं। समन्वित दीर्घकालीन कार्यक्रम (Integrated Long-Term Programme - ILTP) के तहत आधारभूत विज्ञान (Basic Sciences) एवं अंतर-अकादमिक आदान-प्रदान कार्यक्रम (Inter-academy Exchange Programmes) संबंधी पारस्परिक अनुसंधान पर ध्यान दिया जाता है। समन्वित दीर्घकालीन कार्यक्रम को 2009 से आगामी 10 वर्षों के लिए विस्तारित कर दिया गया है। आई एल टी पी संयुक्त परिषद (ILTP Joint Council) भारत एवं रूस में स्थापित संयुक्त उत्कृष्ट केंद्रों (Joint centres of excellence) की कामकाज की समीक्षा करती है।

सांस्कृतिक सहयोग (Cultural Cooperation)

रूस में भारत अध्ययन (Indology) की एक सशक्त परम्परा है। भारतीय अध्ययन में संलग्न अनेक सुप्रसिद्ध रूसी शिक्षाविदों एवं विद्वानों को पद्म पुरस्कार प्रदान किया गया है। दूतावास (Embassy) का जवाहर लाल नेहरू सांस्कृतिक केन्द्र रूसी अध्ययन संस्थानों के साथ निकट संबंध बनाये हुए है। भारतीय नृत्य एवं संगीत में भी रूसी लोग व्यापक रुचि लेते हैं। योग रूस में अत्यंत लोकप्रिय है। जवाहरलाल नेहरू संस्थान योग, नृत्य, संगीत और हिन्दी आदि में लगभग 800 छात्रों के लिए कक्षाओं का संचालन करता है। 2012 में भारत में रूसी सांस्कृतिक उत्सव का आयोजन किया गया था।

भारत-रूस विशेष एवं विशेषाधिकृत सामरिक भागीदारी (India-Russia Special and Privileged Strategic Partnership)

- प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने 15-17 दिसंबर, 2011 को रूस का आधिकारिक दौरा किया। डॉ. मनमोहन सिंह ने तत्कालीन रूसी राष्ट्रपति दमित्री मेदवेदेव और प्रधानमंत्री ब्लादीमीर पुतिन के साथ बातचीत की। बातचीत के दौरान दोनों देशों ने भारत और रूस के बीच विद्यमान सामरिक भागीदारी के उन्नयन एवं संवर्धन की सहमति की। दोनों देशों ने माना कि दिसंबर 2010 में आयोजित वार्षिक शिखर बैठक के बाद से की गई गहन वार्ता एवं नियमित उच्च स्तरीय बैठकों से तेजी से बदलती वैश्विक

नौवहन (Satellite Navigation) एवं मानव अंतरिक्ष मिशन (Manned Missions) सहित अंतरिक्ष क्षेत्र में सहयोग जारी रखने पर अपनी सहमति व्यक्त की है। दोनों देशों ने रूसी उपग्रह नौवहन प्रणाली (Satellite Navigation System) 'ग्लोनास (GLONASS)' का उपयोग करने में पारस्परिक रुचि का प्रदर्शन किया है और असैनिक उपयोग के लिए उपग्रह नौवहन उपकरणों (Satellite Navigation Equipment) के संयुक्त उत्पादन में सहयोग कर रहे हैं।

सैन्य-तकनीकी सहयोग (Military-Technical Cooperation)

- भारत में विमान वाहक पोत आईएनएस विक्रमादित्य (एडमिरल गोरशकोव) का पुनर्निर्धारण (Refitment), बहुउद्देशीय परिवहन विमान (Multi Role Transport Aircraft), 5वीं पीढ़ी के लड़ाकू विमानों के संयुक्त विकास एवं उत्पादन, रूसी मूल के रक्षा उपकरणों एवं हथियारों के लाइसेंसयुक्त निर्माण जैसी महत्वपूर्ण संयुक्त रक्षा परियोजनाओं पर कार्य किया जा रहा है।

वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीय सहयोग (Scientific and Technological Cooperation)

- विज्ञान और प्रौद्योगिकी क्षेत्र में भारत और रूस के बीच सहयोग का मुख्य तंत्र 'वर्ष 2020 तक की अवधि के लिए विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं नवप्रवर्तन क्षेत्रों में सहयोग' से संबद्ध समेकित दीर्घावधिक कार्यक्रम (ILTP) ही है। भारत-रूस विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी केन्द्र (India-Russia Science and Technology Centre – IRSTC) का मास्को कार्यालय प्रौद्योगिकियों के व्यवसायीकरण से संबंधित महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है। दोनों देशों ने जैव-चिकित्सा प्रौद्योगिकी (Bio-medical Technology), नैनो प्रौद्योगिकी, महासागरीय तकनीक तथा सूचना-प्रौद्योगिकी जैसे क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी गहन कार्यक्रमों को आगे बढ़ाने का निर्णय किया है।

शिक्षा (Education)

- दोनों देशों ने चिकित्सा दस्तावेजों एवं डिग्रियों सहित अन्य शैक्षिक दस्तावेजों की पारस्परिक मान्यता एवं समकक्षता से संबंधित नए समझौते पर चर्चा आयोजित करने हेतु विशेषज्ञ प्रतिनिधिमण्डलों के आदान-प्रदान तथा इस मुद्दे पर अपनी रचनात्मक चर्चा जारी रखने और दोनों देशों के बीच शैक्षिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देने पर अपनी सहमति व्यक्त की है।

सांस्कृतिक आदान-प्रदान (Cultural Exchanges)

- दोनों देशों के बीच गहरे एवं समृद्ध सांस्कृतिक तथा मैत्री संबंध विद्यमान हैं। दोनों देशों ने भारत के संस्कृति और पर्यटन मंत्रालय एवं रूस के संस्कृति मंत्रालय के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम आयोजित करने का समझौता किया है। मास्को, सेंट पीटर्सबर्ग एवं कज़ान में भारतीय सांस्कृतिक महोत्सव का आयोजन किया गया है। वर्ष 2012 में भारत में रूसी सांस्कृतिक महोत्सव (Festival of Russian Culture) आयोजित किए जाने का कार्यक्रम है।

संयुक्त राष्ट्र में समन्वय (Coordination at the United Nations)

- सामरिक भागीदारी के एक महत्वपूर्ण तत्व के रूप में दोनों देशों ने अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और शांति की स्थापना हेतु संयुक्त राष्ट्र की केन्द्रीय समन्वयकारी भूमिका बढ़ाने की बात कही है। इस संदर्भ में उन्होंने संयुक्त राष्ट्र में सुधार से जुड़े मुद्दों पर सहयोग बढ़ाने पर अपनी सहमति व्यक्त की है और इस बात पर बल दिया है कि संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में इस प्रकार सुधार लाया जाए कि यह निकाय वर्तमान समय की उभरती चुनौतियों का मुकाबला करने में और भी प्रभावी बन सके।
रूस ने विस्तारित संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत के लिए समर्थन व्यक्त किया है। दोनों देशों ने 1 जनवरी, 2011 से संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में किए गए सहयोग पर संतोष व्यक्त किया है। इसी समय भारत ने अस्थायी सदस्य के रूप में परिषद में अपना कार्य आरंभ किया।

अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एवं आर्थिक संरचना (International Financial and Economic Architecture)

- भारत एवं रूस दोनों विश्व अर्थव्यवस्था में आई नकारात्मक प्रवृत्तियों से चिन्तित हैं। दोनों मानते हैं कि यूरो ज़ोन (Euro Zone) की वित्तीय एवं आर्थिक स्थिति विशेष रूप से चिन्तनीय है। दोनों देशों ने जी-20 के केन्स शिखर सम्मेलन में विशेषकर विश्व अर्थव्यवस्था के सतत एवं संतुलित विकास के संबंध में लिए गए निर्णयों का स्वागत किया है तथा इस बात पर बल दिया है कि सभी देशों द्वारा सक्रिय एवं समन्वित तरीके से इस योजना को कार्यान्वित किए जाने की आवश्यकता है।
- दोनों देशों ने अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं में सुधार के एक महत्वपूर्ण तत्व के रूप में जी-20 की बैठक में तय शर्तों एवं विनियमों के आधार पर अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) में सुधार का स्वागत किया है।

मध्य-पूर्व और उत्तरी अफ्रीका की स्थिति (Situation of the Middle East and North Africa)

- मध्य पूर्व और उत्तरी अफ्रीका की स्थिति के संदर्भ में दोनों देशों का मानना है कि कानून के अनुरूप शांतिपूर्ण तरीके से हिंसा और बाह्य हस्तक्षेप से बचते हुए लोगों की वैध आकांक्षाओं को ध्यान में रखकर लोकतांत्रिक सुधारों हेतु राष्ट्रीय संवाद होना चाहिए।
- मध्य-पूर्व और उत्तरी अफ्रीका के राज्यों में हो रहे बदलाव का उपयोग, संघर्षों के समाधान में विलंब करने के बहाने के रूप में नहीं चल्कि इसके समाधान की दिशा में एक प्रोत्साहन के रूप में करने तथा अंतर्राष्ट्रीय विधि के आधार पर अरब-इजराइल संघर्ष का न्यायसंगत समाधान करने की बात दोनों देश करते हैं। दोनों देशों ने फिलिस्तीन एवं इजरायल के बीच वार्ता को शीघ्रताशीघ्र बहाल किए जाने का समर्थन किया है ताकि एक स्वतंत्र फिलिस्तीन राज्य बने जिसमें पारस्परिक वार्ता के आधार पर क्षेत्रों का आदान-प्रदान किया जाए। यह बातचीत एवं समझौता अंतर्राष्ट्रीय मध्यस्थों के मध्य-पूर्व क्वार्टेट (Middle-East Quartet of International Mediators) के संयुक्त प्रयासों के अनुरूप हो। दोनों देशों ने फिलिस्तीन में शीघ्रताशीघ्र एकता बहाल किए जाने का भी आह्वान किया है। फिलिस्तीन मुक्ति संगठन (Palestine Liberation Organization – PLO) के सिद्धांतों तथा अरब शांति पहल (Arab Peace Initiative) पर आधारित फिलिस्तीन के निर्माण से इस क्षेत्र के सभी देशों के लिए शांति एवं सुरक्षा सुनिश्चित करने में सहयोग मिलेगा।

एशियाई क्षेत्र तथा हिंद और प्रशांत महासागरों में सुरक्षा एवं सहयोग

(Security and cooperation in the region of Asia and the Indian and Pacific Oceans)

- दोनों देश अंतर्राष्ट्रीय कानून के तहत मान्यता प्राप्त सिद्धांतों एवं सभी राज्यों के उपयुक्त हितों के सम्मान पर आधारित सुरक्षा और सहयोग का एक पारदर्शी, मुक्त, व्यापक एवं संतुलित ढांचा सृजित करने की बात करते हैं। दोनों देश सुरक्षा की अलंघ्यता, अन्य राज्यों की कीमत पर सुरक्षा संवर्धन प्रयासों की अस्वीकार्यता और नए विभाजक मुद्दों के संरक्षण एवं सृजन की अस्वीकार्यता के प्रति एकमत हैं।
दोनों देशों ने सुरक्षा खतरों जैसे- आतंकवाद, उग्रवाद, व्यापक विनाश के हथियारों के प्रसार, नशीले पदार्थों की तस्करी, संगठित अपराध और जल दस्युता का मिलकर मुकाबला करने की आवश्यकता को स्वीकार किया है। उन्होंने पूर्व एशिया शिखर सम्मेलन (East Asia Summit – EAS) की रूपरेखा के अंतर्गत मिलकर कार्य करने की इच्छा व्यक्त की है। वे इसे पूर्व एशिया में शांति, स्थायित्व एवं आर्थिक समृद्धि के संवर्धन हेतु व्यापक रणनीतिक, राजनैतिक एवं आर्थिक संवाद का एक मंच मानते हैं।
- भारत एवं रूस इस बात को मानते हैं कि शंघाई सहयोग संगठन (Shanghai Cooperation Organization – SCO) क्षेत्रीय सुरक्षा एवं सहयोग का एक महत्वपूर्ण कारक बन गया है। रूस ने पूर्णकालिक सदस्य के रूप में इस संगठन में भाग लेने की भारत की इच्छा का स्वागत किया है और विश्वास व्यक्त किया है कि भारत की भागीदारी से शंघाई सहयोग संगठन के राजनैतिक महत्व में वृद्धि होगी। रूस ने कहा कि वह इस संगठन में भारत की पूर्ण सदस्यता की प्रक्रिया में तेजी लाने के लिए शंघाई सहयोग संगठन के अन्य सदस्यों के साथ मिलकर कार्य करने के लिए तैयार है।
- एशिया तथा हिंद एवं प्रशांत महासागर क्षेत्र में सफल क्षेत्रीय सहयोग प्रारूपों के अनेक उदाहरण पहले से विद्यमान हैं जिसमें रूस-भारत-चीन (Russia-India-China – RIC) प्रारूप भी शामिल है।

ब्रिक्स सहयोग का विकास (Development of BRICS Cooperation)

- दोनों देश ब्रिक्स (Brazil, Russia, India, China, South Africa – BRICS) देशों के बीच सहयोग बढ़ाने को महत्वपूर्ण मानते हैं। अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक एवं आर्थिक जीवन में ब्रिक्स की भूमिका निरंतर बढ़ती जा रही है। दोनों देशों ने वित्त, व्यापार, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, कृषि एवं स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों में सहयोग पर ब्रिक्स रूपरेखा के भीतर हुई प्रगति पर संतोष व्यक्त किया है। जनता के लाभार्थ ब्रिक्स देशों के भीतर सहयोग बढ़ाने हेतु संयुक्त योगदान देने की इच्छा भी दोनों देशों ने व्यक्त की है।

निःशस्त्रीकरण एवं अप्रसार (Disarmament and non-proliferation)

- परमाणु प्रौद्योगिकियों से संपन्न जिम्मेदार देश के रूप में भारत और रूस सामूहिक विनाश के हथियारों एवं उनकी प्रक्षेपण प्रणाली के अप्रसार के उद्देश्यों को स्वीकार करते हैं। इसमें आतंकवादी गुटों तक इन हथियारों की पहुँच को रोकना भी शामिल है। दोनों देशों ने वैश्विक परमाणु निःशस्त्रीकरण की दिशा में त्वरित एवं ठोस प्रगति करने की आवश्यकता बतायी है। दोनों देशों ने माना कि परमाणु निःशस्त्रीकरण इस प्रकार से होना चाहिए कि इससे अंतर्राष्ट्रीय स्थायित्व एवं शांति को बढ़ावा मिल सके।

- वैश्विक अप्रसार व्यवस्था के एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में बहुपक्षीय निर्यात नियंत्रण व्यवस्थाओं (Multilateral Export Control Regims) को सुदृढ़ बनाने की आवश्यकता दोनों देश स्वीकार करते हैं। इस संबंध में रूस ने परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह (Nuclear Suppliers Group – NSG) में भारत की पूर्ण सदस्यता पर चर्चा किए जाने तथा सकारात्मक निर्णय लिए जाने में सहायता करने की बात कही है। एन एस जी की पूर्ण सदस्यता प्राप्त करने की भारत की इच्छा है।

भारत ने परमाणु अप्रसार व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से किए जा रहे अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों में सक्रिय योगदान देने की बात की है। रूस ने मिसाइल टेक्नोलॉजी कंट्रोल रीजिम (Missile Technology Control Regime–MTCR) तथा वासेनार व्यवस्था (Wassenaar Arrangement) का पूर्ण सदस्य बनने संबंधी भारत की रुचि पर भी विचार किया।

- शांतिपूर्ण प्रयोजनों के लिए परमाणु ऊर्जा का उपयोग करने संबंधी विभिन्न देशों के अधिकार को स्वीकार करते हुए भारत और रूस ने सभी राज्यों द्वारा अप्रसार संबंधी जिम्मेदारियों को पूरा किए जाने की आवश्यकता बतायी है।

दोनों देशों ने अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (आईएईए) के अनुसरण में परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण प्रयोग को बढ़ावा देने में इसकी सुरक्षा प्रणाली और इस एजेंसी की केन्द्रीय भूमिका का समर्थन किया है। दोनों देशों ने अप्रसार दायित्वों के कठोर कार्यान्वयन के साथ परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से किए जाने वाले अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों का भी समर्थन किया है।

आतंकवाद विरोध (Combating Terrorism)

- भारत एवं रूस ने अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद को रोकने के लिए 6 नवंबर, 2001 को एक घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किए हैं। दोनों देशों ने आतंकवाद के लिए मुद्दाया करण जा रहे सुरक्षित आश्रयस्थलों की घोर भर्त्सना की है और कहा है कि जो राज्य आतंकवादियों की सहायता करते हैं, उन्हें उकसाते हैं अथवा आश्रय प्रदान करते हैं वे भी आतंकवादियों के समान ही आतंकी कृत्यों के दोषी हैं।
- आतंकवाद का मुकाबला करने के लिए सभी देशों द्वारा संयुक्त प्रयास की आवश्यकता को दोनों देश समझते हैं। भारत एवं रूस दोनों का मानना है कि किसी भी आतंकी कृत्य का कोई औचित्य नहीं हो सकता। बहुलवादी देश होने के कारण भारत और रूस दोनों ही आतंकी कृत्यों के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील हैं क्योंकि आतंकवाद उन मूल्यों पर हमला करता है जो दोनों देशों के समाज की मुख्य विशेषता है। अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद शांति एवं सुरक्षा के समक्ष एक खतरा और मानवता के विरुद्ध अपराध है, ऐसा दोनों देशों का मानना है।

दोनों देशों ने अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद का मुकाबला करने में संयुक्त राष्ट्र संघ की केन्द्रीय भूमिका बतायी और इस संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद के विरुद्ध संयुक्त राष्ट्र व्यापक अभिसमय प्रारूप (UN Draft Comprehensive Convention against International Terrorism) को शीघ्रतिशोघ पारित किए जाने का आह्वान किया है।

मादक पदार्थों की अवैध तस्करी की रोकथाम (Combating Illicit Drug Trafficking)

- दोनों देश मादक पदार्थों की अवैध तस्करी की रोकथाम किए जाने हेतु द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय प्रयासों के महत्व को समझते हैं क्योंकि यह अंतर्राष्ट्रीय शांति और स्थायित्व के लिए एक बड़ा खतरा है। यह आपराधिक व्यवसाय अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद के प्रमुख वित्तीय स्रोतों में से एक है।

ईरान का परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम और अफगानिस्तान मुद्दा

(Iran's Nuclear Energy Programme and Afghanistan Issue)

- भारत और रूस ने ईरान के परमाणु कार्यक्रम के कारण उत्पन्न परिस्थितियों पर गंभीर चिंता व्यक्त की है। दोनों देश वार्ता के आधार पर राजनैतिक एवं राजनयिक माध्यमों से इस मुद्दे का समाधान करने का समर्थन करते हैं। इस संदर्भ में दोनों देशों का मानना है कि एकपक्षीय प्रतिबंध हानिकारक साबित हो सकते हैं। अंतर्राष्ट्रीय दायित्वों के अनुरूप परमाणु ऊर्जा क्षेत्र में अनुसंधान और उत्पादन तथा इसका शांतिपूर्ण उपयोग करने संबंधी ईरान के अधिकारों को दोनों देश स्वीकार करते हैं।

भारत और रूस ने ईरान से संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के प्रासंगिक प्रस्तावों (Resolutions) का अनुपालन करने और अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (आईएईए) को पूरा समर्थन दिए जाने का आग्रह किया है।

- दोनों देशों ने एक ऐसे शांतिपूर्ण, लोकतांत्रिक और स्वतंत्र अफगानिस्तान का समर्थन दिए जाने की इच्छा व्यक्त की है जो आतंकवाद, बाह्य हस्तक्षेप तथा मादक दवाओं से जुड़े अपराधों से मुक्त हो और जिसमें सतत विकास हो। अफगानिस्तान में आतंकी गतिविधियों एवं मादक पदार्थों के उत्पादन में हुई वृद्धि तथा विद्यमान सामाजिक-आर्थिक समस्याओं पर दोनों देश चिंतित हैं।

- अफगानिस्तान के राष्ट्रीय सुरक्षा बलों को देश की जिम्मेदारी हस्तांतरित करने की प्रक्रिया का समर्थन करते हुए दोनों देशों ने उनकी क्षमताओं का विकास करने संबंधी प्रयासों में तेजी लाने का आह्वान किया है। दोनों देशों का मानना है कि अफगानिस्तान में अंतर्राष्ट्रीय सैन्य उपस्थिति को वहाँ की सुरक्षा स्थितियों (Security Situations) से जोड़कर देखा जाना चाहिए। भारत और रूस अफगानिस्तान सरकार द्वारा विरोधियों के साथ शांतिपूर्ण संवाद स्थापित करने के संबंध में किए गए प्रयासों का समर्थन करते हैं बशर्ते कि इस प्रक्रिया का संचालन अफगानिस्तान के नेतृत्व में हो और स्थानीय लड़ाके अंतर्राष्ट्रीय समुदाय द्वारा प्रतिपादित निम्नलिखित मानकों का अनुपालन करें: संविधान का सम्मान, हिंसा का त्याग और अलकायदा एवं अन्य आतंकी संगठनों के साथ संबंधों का त्याग।

दोनों देशों ने अफगानिस्तान के पड़ोसी देशों और इस क्षेत्र के संगठनों द्वारा निभाई जा रही महत्वपूर्ण भूमिका पर संतोष व्यक्त करते हुए और इस क्षेत्र में शंघाई सहयोग संगठन (SCO) और दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (SAARC) जैसे क्षेत्रीय सहयोग संगठनों का विकास और सुधार किए जाने पर बल दिया है और आशा व्यक्त की है कि इस दिशा में किए जा रहे प्रयासों में अंतर्राष्ट्रीय समुदाय इन संगठनों द्वारा लिए गए निर्णयों का सम्मान करेगा।

ब्लादीमीर पुतिन 7 मई, 2012 को पुनः रूस के राष्ट्रपति बन गए हैं। ऐसा माना जा रहा है कि पुतिन के राष्ट्रपति बनने से रूस में स्थायित्व (Stability) को बढ़ावा मिलेगा जबकि अन्य लोगों का मानना है कि उनके सत्ता में आने से अर्थव्यवस्था गतिहीन (Stagnant) हो सकती है। स्थायित्व और सुधार आज रूस की जरूरत है। भारत पश्चिमी देशों की उस अवधारणा से मेल नहीं रखता है जिसमें सभी देशों के मामले में एक ही प्रकार के लोकतंत्र की बात की जाती है। रूस में आर्थिक एवं राजनीतिक सुधार के साथ भ्रष्टाचार एवं लाल-फीताशाही (Red-Tapism) को भी खत्म करने की आवश्यकता है। आज रूस में शक्तियों का अत्यधिक केन्द्रीकरण देखने को मिलता है। न्यायिक व्यवस्था कमजोर है तथा उद्यमशीलता की प्रवृत्ति को हतोत्साहित किया गया है। ये रूस की ऐसी समस्याएँ हैं, जिन्हें अविलम्ब सुधारने की आवश्यकता है। इससे भारत-रूस संबंधों को गहरा बनाने में मदद मिल सकती है। भारत एवं रूस के बीच एक अच्छी बात यह है कि दोनों देशों में सरकारें बदलने पर भी आपसी संबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है। भारत-रूस संबंधों को और भी आगे बढ़ाया जा सकता है इसके लिए आवश्यक है कि लोगों के बीच आपसी संबंधों को बढ़ावा दिया जाए एवं इसके साथ ही सांस्कृतिक एवं शैक्षिक गतिविधियों को और भी ज्यादा सक्रिय किया जाए।

भारत-रूस के बीच कुछ मतभेद भी हैं जिनका दिसंबर 2012 के रूसी राष्ट्रपति ब्लादीमीर पुतिन तथा भारतीय प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह की मुलाकात में भी समाधान न हो सका। इसमें प्रमुख रूप से विमानवाही पोत गोर्शकोव अब तक भारत को न मिलना, रूस में चिकित्सीय परीक्षण (Clinical Trial) में गतिरोध पैदा होना तथा परमाणु सीमित देयता अधिनियम को लेकर है। परमाणु सीमित देयता अधिनियम (Nuclear Limited Liability Act) की प्रासंगिकता इस संदर्भ में और भी महत्वपूर्ण हो जाती है कि रूस भारत के कुंडनकुलम में छह और परमाणु रिएक्टर लगाने वाला है। अन्य मतभेदों में रूसी कंपनी सिस्टेमा एवं सेवेरस्ताल का भारत में अपनी निवेश परियोजनाओं में आगे न बढ़ना तथा रूस में काम करने वाली एक भारतीय कंपनी इम्पेरियल एनर्जी पर कर लगाना शामिल है। विक्रमादित्य विमानवाही पोत के मिलने में एक साल से ज्यादा विलंब होने से भारत चिंतित दिख रहा है। दूसरी ओर रूस सिस्टेमा श्याम टेली सर्विसेज में रूसी कंपनी सिस्टेमा द्वारा निवेश करने में असफलता से रूस नाराज है। सी डी एम ए सर्विसेज देने वाली सिस्टेमा के लाइसेंस को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निरस्त कर दिया गया था। सात सौ मिलियन डॉलर के सरकारी कोष के साथ 3.1 बिलियन डॉलर का निवेश किसी रूसी कंपनी द्वारा भारत में सफलतापूर्वक निवेश का एक-बेहतर उदाहरण था लेकिन अब यह अन्य कंपनियों के लिए हतोत्साहित करने वाला उदाहरण बन सकता है।

भारत-रूस संबंधों में सकारात्मक पक्षों के अंतर्गत सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सिस्टेमा कंपनी के 2G के सभी लाइसेंस रद्द करने के बावजूद इसने ग्लोनास (Glonass) में विश्वास दिखाया है। इससे जुड़ी कंपनी ने उपग्रह क्षेत्र में दो समझौते किए हैं। भारत 34 उपग्रहों से बनने वाले ग्लोनास में पहले ही रुचि ले रहा है। रक्षा संबंधों के अंतर्गत रूस परमाणु पनडुब्बी चक्र (Nuclear Submarine Chakra) को लीज पर देने तथा आधुनिकतम अस्त्र तकनीक के क्षेत्र में भागीदारी करने पर भी राजी हो गया है।

भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका (India and the United States of America)

*** (इस टॉपिक का संबंध मुख्य परीक्षा के प्रश्नपत्र-2 से है। 'दृष्टि' द्वारा वर्गीकृत पाठ्यक्रम के 15 खंडों में से इसका संबंध भाग-7 से है।)

द्विपक्षीय संबंधों का ऐतिहासिक संदर्भ

(Historical Perspective of Bilateral Relations)

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के तुरन्त बाद संसार में दो महाशक्तियों ने शीतयुद्ध को जन्म दिया और विश्व को दो शक्ति गुटों में विभाजित कर दिया। ये दो महाशक्तियाँ थीं— संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ। लगभग उसी समय जब दोनों शक्ति गुटों में शीतयुद्ध ने गति पकड़ी, भारत ब्रिटिश उपनिवेशवाद से स्वतन्त्र होकर एक नवोदित राष्ट्र के रूप में राजनीतिक क्षितिज पर प्रकाशमान हुआ। भारत ने निःसंकोच यह निर्णय लिया कि वह किसी भी गुट में शामिल न होकर स्वतन्त्र विदेश नीति अपनाएगा। भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति इसी निर्णय का परिणाम थी। इस नीति के तहत भारत ने सभी देशों के साथ मित्रता करने का निर्णय लिया।

स्वाभाविक था कि सभी के साथ मित्रता करने के प्रयास में भारत ने न केवल ब्रिटेन के साथ अच्छे संबंध बनाए रखे वरन् दोनों महाशक्तियों के साथ भी मधुर संबंध विकसित करने का प्रयत्न किया। संसार के दो विशाल लोकतान्त्रिक देश होने के नाते भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका में मित्रता की अपेक्षा की गई। दोनों देश संबंध सामान्य बनाने के प्रयास करते भी रहे परन्तु वैसे संबंध देखने को नहीं मिले जैसा कि अपेक्षित था। किन्हीं दो स्वतन्त्र और स्वाभिमानी देशों के बीच ऐसा होना स्वाभाविक भी है। इसी कारण भारत-अमेरिका के बीच आपसी संबंधों में उतार-चढ़ाव आते रहे हैं।

भारत-अमेरिका संबंधों में अमेरिका द्वारा भारत को कभी भी उच्च प्राथमिकता नहीं दी गई। 1962 में चीन द्वारा भारत पर किए गए आक्रमण ने अमेरिका की नीतियों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया। उसके पश्चात् भारत के प्रति अमेरिका की नीति में कुछ परिवर्तन हुआ परन्तु अमेरिका ने अपने राष्ट्रीय हितों को ही ध्यान में रखा और भारत को एक अधोनस्थ देश का दर्जा दिया न कि समकक्ष का। उसने भारत के दृष्टिकोण को समझने और उसके राष्ट्रीय हितों पर ध्यान देने का कष्ट नहीं किया। अमेरिका ने भारत की गुटनिरपेक्षता को सोवियत-समर्थक नीति समझा। सभी प्रमुख देशों में से भारत ही एक ऐसा देश है जिसके साथ संयुक्त राज्य अमेरिका के संबंध उलझन पैदा करने वाले रहे हैं। जब से भारत स्वतन्त्र हुआ भारत-अमेरिका के बीच अनेक बार तनाव उत्पन्न हुआ जिससे अनुकूलता के अवंसर हाथ से निकलते रहे। पूर्व में भारत-अमेरिका संबंधों को "अमैत्रीपूर्ण मित्रों" के संबंध कहा गया।

(ii) शीत युद्ध के समय भारत-अमेरिका संबंध (Indo-U.S. Relations During the Cold War)

स्वतन्त्र भारत का उदय लगभग उसी समय हुआ जब संयुक्त राज्य अमेरिका तथा भूतपूर्व सोवियत संघ महाशक्तियों (Super Powers) के रूप में उभर रहे थे। इन दोनों देशों को अपनी-अपनी विचारधारा और सामाजिक व्यवस्था में इतनी अधिक आस्था थी कि वे एक-दूसरे को शंका की दृष्टि से देखते थे। उन दोनों ने न केवल पृथक् शक्ति गुट (Power Blocs) स्थापित किए और उनके विस्तार के प्रयास किए बल्कि एक-दूसरे को नीचा दिखाने और अपनी सुरक्षा के लिए सैनिक संधियाँ तथा गठबंधन भी किए। इनमें अमेरिका के नेतृत्व में गठित उत्तर अटलांटिक संधि संगठन (North Atlantic Treaty Organization – NATO), दक्षिण पूर्व एशिया संधि संगठन (South East Asia Treaty Organization – SEATO), मध्य पूर्व संधि संगठन (Central Treaty Organization – CENTO) तथा सोवियत नेतृत्व वाला वारसा समझौता (Warsaw Pact) प्रमुख थे। जब भारत आजाद हुआ उस समय उसे किसी भी गुट में सम्मिलित होने की छूट थी। दोनों ही महाशक्तियाँ अपेक्षा कर रही थीं कि भारत उनके गुट में शामिल हो जाएगा परन्तु भारत ने किसी भी गुट में शामिल न होकर स्वतन्त्र विदेश नीति अपनाने का निर्णय किया। जवाहर लाल नेहरू ने सभी देशों के साथ मैत्री की नीति अपनाई। भारत ने अपने आर्थिक विकास के लिए कहीं से भी बिना शर्त मिलने वाली सहायता को स्वीकार करना आरम्भ किया। नेहरू की नीति का आधार था, निर्णय करने की स्वतंत्रता। यह नीति गुटनिरपेक्षता की नीति कहलाई। भारत-अमेरिका संबंध दोनों देशों की परस्पर विरोधी नीतियों से प्रभावित हुए। गुटनिरपेक्षता का अर्थ कभी भी यह नहीं था कि भारत विश्व राजनीति में सक्रिय भूमिका नहीं निभाएगा। भारत ने दोनों महाशक्तियों के मध्य संतुलित आचरण करने का प्रयास किया है।

यद्यपि उसे सदैव इसमें सफलता नहीं मिली।

स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत-अमेरिका संबंधों में अनेक उतार-चढ़ाव आते रहे। भारत-अमेरिका संबंधों में सबसे महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व थे भारत का तीन देशों-पाकिस्तान, चीन और भूतपूर्व सोवियत संघ के साथ उसके संबंधों का स्वरूप तथा सामान्य रूप से एशिया और अफ्रीका के प्रति भारत की नीति। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कुछ समय तक भारत ने अमेरिका के साथ घनिष्ठ संबंधों का विकास किया। भारत के नेताओं ने अमेरिका द्वारा भारत की स्वतंत्रता के लिए अंग्रेजों पर डाले गए दबाव और उसके प्रभाव की सराहना की। अमेरिका की लोकतान्त्रिक प्रणाली और वहाँ विद्यमान विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता से भारतवासी बहुत प्रभावित हुए थे लेकिन भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति से अमेरिका प्रसन्न नहीं था। अमेरिका को यह भी पसंद नहीं आया कि भारत ने उसके नेतृत्व वाली सैनिक संधि पर हस्ताक्षर नहीं किए और साम्यवादी चीन को इतनी शीघ्रता से मान्यता प्रदान कर दी।

भारत ने अमेरिका की साम्यवाद को सीमित करने (Containment of Communism) की नीति और साम्यवाद के विरोध में किए गए सैनिक गठबन्धनों का कभी समर्थन नहीं किया। भारत ने शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति के अनुसार आचरण किया और अमेरिका सहित सभी देशों के साथ सहयोग करने का प्रयास किया। चीन द्वारा जब तिब्बत पर अधिकार किया गया तब जवाहर लाल नेहरू ने खुलकर उसका विरोध नहीं किया। कोरियाई युद्ध के समय चीन को आक्रामक घोषित किए जाने का भारत ने विरोध किया तथा संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा प्रस्तावित शान्ति के लिए एकता प्रस्ताव (Uniting for Peace Resolution), 1950 का समर्थन नहीं किया। सितम्बर 1951 में अमेरिका ने जापान के साथ शान्ति संधि करने के लिए सैन फ्रांसिस्को में जो सम्मेलन बुलाया भारत ने उसमें भाग नहीं लिया तथा अमेरिका द्वारा सम्पादित संधि को एक तरफा कहकर उसका विरोध किया। इस तरह भारत-अमेरिका संबंधों का विकास होता रहा तथा 1951 के भारत-यू.एस.-तकनीकी सहायता कार्यक्रम (Indo-US Technical Cooperation Programme, 1951) के अनुसार अमेरिका भारत को उपयोगी तकनीकी सहायता देता रहा। 1950 के दशक में अमेरिका ने खाद्य सामग्री की कमी की समस्या का सामना करने के लिए भारत को बड़ी मात्रा में खाद्य पदार्थों की आपूर्ति की। जब 1949 में नेहरू अमेरिका की यात्रा पर गए थे तब उनका भव्य स्वागत हुआ था। 1951-54 की अवधि में भारत-अमेरिका संबंध सौहार्दपूर्ण बने रहे जब 1956 में स्वेज नहर के राष्ट्रीयकरण के प्रश्न को लेकर ब्रिटेन, फ्रांस और इजराइल ने मिश्र पर आक्रमण किया तब इन तीनों देशों की विश्व जनमत ने भरपूर निन्दा की। भारत ने भी ऐसा ही किया। अमेरिका द्वारा तुरन्त युद्ध समाप्त करवाने का जो प्रयास किया गए भारत ने उनका पूरा समर्थन किया।

अमेरिका-पाकिस्तान संबंध और भारत (U.S.-Pakistan Relations and India): साम्यवाद के प्रसार को रोकने की अमेरिकी नीति के तहत संयुक्त राज्य अमेरिका ने कई सैनिक संधियाँ सम्पादित की थीं। प्रधानमंत्री नेहरू का कहना था कि सैन्य संगठनों की स्थापना संयुक्त राष्ट्र के उद्देश्यों के विरुद्ध थी। इसी बीच मई 1954 में अमेरिका ने पाकिस्तान के साथ एक सैनिक समझौता करके उसे बड़े स्तर पर सैनिक सामग्री की आपूर्ति करनी आरम्भ कर दी। भारत-अमेरिका संबंध 1954 में उस समय बहुत बिगड़ गए जब अमेरिका-पाकिस्तान सैन्य संबंध स्थापित हुए। पाकिस्तान की अति आधुनिक शस्त्रास्त्र देने में अमेरिका के दो उद्देश्य थे। एक यह कि उसने भारत को अमेरिकी संधि व्यवस्था में शामिल होने से मना करने पर दण्ड दिया। दूसरा यह कि पाकिस्तान के शत्रु भारत की शक्ति को सीमित करके पाकिस्तान को प्रसन्न कर दिया गया। अमेरिका-पाकिस्तान रक्षा समझौते 1959 ने भारत-अमेरिका संबंधों को और भी कटु बना दिया। भारत-पाकिस्तान संबंध पहले से ही सौहार्दपूर्ण नहीं थे। पाकिस्तान को दी जाने वाली अमेरिकी सहायता का भारत द्वारा विरोध किए जाने पर भारत को यह आश्वासन दिया गया कि अमेरिकी शस्त्रास्त्रों का प्रयोग केवल साम्यवाद के प्रसार के विरुद्ध किया जाएगा भारत के विरुद्ध नहीं। व्यवहार में पाकिस्तान ने इन शस्त्रास्त्रों का प्रयोग 1965 और 1971 के युद्धों में भारत के विरुद्ध किया।

अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को अपने गुट में शामिल करने का एक अन्य उद्देश्य दक्षिण एशिया में अमेरिकी ठिकाना स्थापित करना था। यूरोप के बाहर अमेरिका द्वारा अधिकांश सैनिक सहायता इसी उद्देश्य से दी गई है कि वहाँ अमेरिकी विदेश नीति का समर्थन किया जाए। भारत अपने आप को किसी अन्य राष्ट्र की विदेश नीति का प्रवक्ता नहीं बना सकता था।

अमेरिका द्वारा साम्यवाद का विरोध (America's Opposition of Communism): भारत ने ग्रीस और टर्की के संबंध में ट्रुमैन सिद्धान्त (Truman Doctrine), 1947 और मध्य पूर्व के संदर्भ में आइज़नहावर सिद्धान्त (Eisenhower Doctrine), 1957 का भी विरोध किया था। भारत ने लेबनान तथा जोर्डन में अमेरिकी हस्तक्षेप की भी निन्दा की थी। इनसे भी भारत और अमेरिका के संबंधों में तनाव पैदा हुआ। नेहरू निस्संदेह भारत की विदेश नीति के निर्माता थे और उनकी नीतियों का देश की जनता ने प्रायः समर्थन किया था परन्तु 1956 में हंगरी में हुए विद्रोह के प्रश्न पर नेहरू सरकार की जितनी आलोचना भारतीय जनता ने की उतनी शायद अमेरिका में भी नहीं हुई। हंगरी में सोवियत प्रभुत्व के विरुद्ध हुए विद्रोह का दमन करने के लिए सोवियत सेनाओं को हंगरी भेजा गया। वहाँ सोवियत सेना ने खुलकर दमन चक्र चलाया। इस संकट से भारत किसी भी प्रकार संबद्ध नहीं था परन्तु जब संयुक्त राष्ट्र महासभा में अमेरिका ने एक प्रस्ताव पेश किया जिसमें हंगरी में सोवियत सैन्य हस्तक्षेप की निन्दा की गई थी तब भारत ने

इस प्रस्ताव पर मतदान में भाग न लेकर एक प्रकार से सोवियत संघ का साथ दिया। उससे भी अधिक बढ़ी गलती तब हुई जब भारत ने सोवियत गुट के साथ मिलकर उस प्रस्ताव के विरोध में मत दिया जिसमें हंगरी में स्वतन्त्र चुनाव करवाने की बात कही गई थी। भारत द्वारा स्वतन्त्र चुनाव करवाये जाने के विरुद्ध मतदान करना किसी भी प्रकार से उचित नहीं था। नेहरू सरकार के हंगरी के संबंध में सोवियत-समर्थक मतदान ने भारत-अमेरिका संबंधों को और अधिक कटु बना दिया। इस प्रकार नेहरू के प्रधान मन्त्रित्व काल में अमेरिका के साथ कई प्रश्नों पर तीव्र मतभेद हुए और संबंधों में गिरावट आयी।

गोआ की समस्या (Problem of Goa): गोआ लम्बे समय से पुर्तगाली उपनिवेश था। स्वतन्त्रता के पश्चात् अनेक राजनयिक प्रयासों के बावजूद भारत गोआ को स्वतन्त्र कराकर शेष देश के साथ नहीं मिला सका। पुर्तगाल सरकार भारत के साथ सहयोग करने को तैयार नहीं थी। गोआ के संबंध में अमेरिका का दृष्टिकोण भारत विरोधी था। गोआ के स्वतंत्रता आन्दोलन की अमेरिका में कड़ी आलोचना हुई। यद्यपि अमेरिका अपने आप को उपनिवेशवाद का विरोधी कहता था फिर वह गोआ की स्वाधीनता का समर्थक क्यों नहीं था? इसका एक स्पष्ट कारण यह हो सकता था कि पुर्तगाल नाटो (NATO) का सदस्य था और अमेरिका उसे प्रसन्न रखना चाहता था। अमेरिकी समाचारपत्रों ने यहाँ तक लिख दिया था कि गोआ निवासी तो पुर्तगाली शासन में रहना चाहते हैं, भारत ही युद्ध की नीति अपना रहा है। अमेरिकी विदेश मन्त्री जॉन फॉस्टर डल्लेस (John Foster Dulles) ने गोआ को पुर्तगाल का एक प्रान्त कह दिया। 1961 में जब भारत ने बाध्य होकर सैनिक कार्यवाही करके गोआ को मुक्त करवाया तो संयुक्त राष्ट्र में अमेरिकी प्रतिनिधि ने इसे आक्रमण की संज्ञा दे डाली।

भारत-चीन युद्ध, 1962 (India-China War, 1962): चीन द्वारा 1962 में भारत पर किए गए आक्रमण और उससे उत्पन्न युद्ध ने भारत-अमेरिका संबंधों को एक नया मोड़ प्रदान किया। भारत और अमेरिका दोनों के विरुद्ध चीन की अमैत्रीपूर्ण नीति ने देश में एक नई जागृति उत्पन्न कर दी। जनवरी 1961 में संयुक्त राज्य अमेरिका में जॉन एफ. कनेडी (John F. Kennedy) के राष्ट्रपति बनने के बाद प्रधानमंत्री नेहरू 1961 में अमेरिका की यात्रा पर गए। राष्ट्रपति कनेडी ने सर्वप्रथम सह-अस्तित्व को स्वीकार करते हुए यह माना कि कोई राष्ट्र लोकतन्त्र और साम्यवाद के संघर्ष में तटस्थ भी रह सकता है। इस प्रकार भारत-अमेरिका सम्बन्ध सामान्य होने आरम्भ हुए। कांग्रेस के समक्ष बोलते हुए राष्ट्रपति कनेडी ने नेहरू के उच्च आदर्शवाद की सार्वजनिक प्रशंसा की। जब अक्टूबर 1962 में चीन ने भारत पर आक्रमण किया और भारत ने सहायता का अनुरोध किया तब अमेरिका ने बिना शर्त सहायता के रूप में भारत को युद्ध सामग्री भेजी।

वास्तव में भारत की तत्कालीन चीन नीति दोषपूर्ण थी। जब 1961 में चीन के साथ भारत के संबंध खराब हो गए थे तब भी भारत-सरकार ने देश की सुरक्षा के लिए कोई उचित उपाय नहीं किए। भारत के रक्षा व्यय में वृद्धि करने, रक्षा रणनीति तैयार करने, तथा उत्तर-पूर्व भारत के जनजातीय लोगों का सहयोग प्राप्त करने के लिए कुछ भी नहीं किया गया। ऐसा प्रतीत होता था कि भारत को किसी संघर्ष का आभास ही नहीं था। युद्ध या आक्रमण की सम्भावना को अस्वीकार पर दिया गया था। नेहरू और उनके रक्षामंत्री कृष्ण मेनन को विश्वास था कि भारत को खतरा केवल पाकिस्तान से था चीन से नहीं। नेहरू को विश्वास था कि चीन आक्रमण कर ही नहीं सकता। ऐसी स्थिति में चीन द्वारा किए गए आक्रमण में भारत का पीछे हटना स्वाभाविक था। इस समय अमेरिका द्वारा भारत का नैतिक समर्थन और उसके द्वारा भेजी गई सैन्य सामग्री ने चीन की अभिलाषाओं पर पानी फेर दिया और उसे अपनी आक्रामक सेना वापस बुलानी पड़ी। अमेरिका द्वारा भारत-चीन युद्ध में भारत का पक्ष लेने से देश में जोरदार माँग की गई कि गुटनिरपेक्षता की नीति में परिवर्तन करना आवश्यक हो गया है। यह भी कहा गया कि भारत को अमेरिका के साथ संधि या गठबन्धन कर लेना चाहिए परन्तु सोवियत संघ द्वारा सामान्य रूप से भारत को मिलने वाले समर्थन तथा अमेरिका द्वारा अत्यनुधिक शस्त्रास्त्र देने से इनकार करने के कारण अमेरिका के साथ भारत के संबंधों में घनिष्टता नहीं आ सकी।

चीन द्वारा भारत पर किए गए आक्रमण ने आने वाले कई वर्षों तक भारत के विदेश नीति संबंधी निर्णयों को प्रभावित किया। कनेडी प्रशासन के समय भारत-अमेरिका संबंध काफी सामान्य बने रहे। मई 1960 में चार वर्ष की अवधि के लिए पी.एल.-480 नामक एक समझौता हुआ जिसके अन्तर्गत अमेरिका ने भारत को पर्याप्त मात्रा में खाद्यान्न उपलब्ध करवाए। सन् 1963 में भारत के विभिन्न भागों में भारत, ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया और अमेरिका के वायु सैनिकों ने सम्मिलित रूप से "अभ्यास शिक्षा" (Exercise Shiksha) में भाग लिया। इस सैन्य अभ्यास के माध्यम से ब्रिटेन द्वारा भारत को दिए गए राडार एवं संचार प्रणालियों का परीक्षण किया गया था। 1964 में भारत और अमेरिका के बीच नई दिल्ली में एक समझौता हुआ जिसके अनुसार अमेरिका ने भारत को तारापुर में परमाणु शक्ति संयंत्र स्थापित करने के लिए धन उपलब्ध करवाया। इस बीच नेहरू की मई 1964 में मृत्यु के पश्चात् लाल बहादुर शास्त्री प्रधानमंत्री बने। विदेश नीति में उनका विशेष अनुभव न होने के बावजूद उनके नेतृत्व में भारत ने न केवल दृढ़ता से गुटनिरपेक्षता का पालन किया बल्कि भारत-पाक युद्ध में पाकिस्तान को पराजित भी किया।

शास्त्री जी के शासन काल में विदेश मन्त्री के रूप में सरदार स्वर्ण सिंह ने सरकार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसी अवधि में अमेरिका ने उत्तरी वियतनाम पर भारी बमबारी करना आरम्भ कर दिया। भारत ने इसके लिए अमेरिका को कटु आलोचना की जिसके कारण संयुक्त राज्य अमेरिका में भारत के विरुद्ध तीव्र प्रतिक्रिया हुई। फलस्वरूप अमेरिकी राष्ट्रपति जॉनसन ने शास्त्री की

प्रस्तावित मई 1965 की अमेरिका यात्रा को यह कह कर स्थगित कर दिया कि वह व्यस्तता के कारण भारतीय प्रधानमंत्री की यात्रा के कार्यक्रम को पूरा नहीं कर सकेंगे। इस प्रकार अगर देखा जाए तो शास्त्री जी के संक्षिप्त शासन काल में अमेरिका के साथ संबंध कुछ खराब ही हुए।

भारत-पाकिस्तान युद्ध, 1965 (India-Pakistan War, 1965): 1962 में चीन द्वारा भारत की अपमानजनक पराजय ने पाकिस्तान को यह विश्वास दिला दिया कि भारत की सामरिक स्थिति इतनी कमजोर है कि वह स्वयं भारत को पराजित करके जम्मू-कश्मीर राज्य पर अधिकार कर सकता है। परिणामस्वरूप सितम्बर 1965 में भारत और पाकिस्तान के मध्य जो युद्ध हुआ उसमें पाकिस्तान ने खुलकर अमेरिकी शस्त्रास्त्रों का प्रयोग किया। यद्यपि अमेरिका द्वारा भारत को विश्वास दिलाया गया था कि पाकिस्तान द्वारा उन शस्त्रास्त्रों का प्रयोग भारत के विरुद्ध नहीं किया जाएगा। भारत ने अमेरिका का ध्यान पाकिस्तान द्वारा अमेरिकी शस्त्रास्त्रों के युद्ध में प्रयोग की ओर दिलाते हुए इस पर आपत्ति जताई परन्तु अमेरिकी प्रशासन ने इस आपत्ति की अवहेलना करते हुए अपनी नीति में कोई परिवर्तन नहीं किया। अमेरिका की इस नीति ने भारत-अमेरिका संबंधों में पुनः तनाव उत्पन्न कर दिया। अमेरिका ने भारत और पाकिस्तान को समान स्तर पर रखने की नीति के अधीन दोनों देशों को दी जाने वाली आर्थिक सहायता और सैनिक साजो-समान की आपूर्ति स्थगित करने का निर्णय किया। उस समय भारत में खाद्यान्नों की भारी कमी थी अतः अमेरिकी खाद्यान्नों की आपूर्ति स्थगित करना भारत के प्रति अमेरिका की कठोरता का प्रतीक था। परन्तु महत्वपूर्ण यह है कि अमेरिका ने 1965 के भारत-पाक युद्ध में तटस्थता बनाए रखी और पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खान की अमेरिका से उसके पक्ष में हस्तक्षेप करने की प्रार्थना को राष्ट्रपति जॉनसन ने ठुकरा दिया। उस समय तक चीन और पाकिस्तान में प्रगाढ़ मैत्री हो चुकी थी। अतः अमेरिका ने अनौपचारिक रूप से चीन को चेतावनी दी कि वह युद्ध में हस्तक्षेप न करे अन्यथा अमेरिका स्वयं भारत को सैनिक सहायता उपलब्ध कराएगा। इस धमकी का प्रभाव पड़ा और चीन ने हस्तक्षेप नहीं किया। अमेरिका द्वारा तटस्थ रहने और चीन को चेतावनी देने की भारत में सराहना हुई।

1965 के भारत-पाकिस्तान युद्ध के बाद भारत को आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। खद्य संकट, मुद्रास्फीति (Inflation) तथा विदेशी मुद्रा की तेजी से होती कमी ने अमेरिका पर भारत की निर्भरता काफी बढ़ा दी थी।

इन्दिरा गाँधी और भारत-अमेरिका संबंध (Indira Gandhi and Indo-US Relations): जनवरी 1966 में साल बहादुर शास्त्री और पाकिस्तानी राष्ट्रपति अयूब खान ने ताशकन्द (Tashkent) में शान्ति बहाल करने के लिए एक समझौते पर हस्ताक्षर किए। हस्ताक्षर करने के कुछ ही घंटे बाद शास्त्री जी की हृदय गति रुक जाने से मृत्यु हो गई। नई प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी को अमेरिका से संबंध और भी मैत्रीपूर्ण बनाने का अवसर तो मिला परन्तु 5 वर्ष के अन्दर 1971 में भारत-अमेरिका संबंध जितने कटु हो गए उतने कभी नहीं थे। प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी को राष्ट्रपति जॉनसन ने आर्थिक संकट से निकालने के लिए सहायता का आश्वासन तो दिया साथ ही भारत पर इस बात के लिए दबाव भी डाला कि वह सोवियत संघ के साथ अपने संबंधों में शिथिलता लाए। भारत इस दबाव के आगे नहीं झुका। श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने भारत में विदेशी पूँजी निवेश का स्वागत किया। उन्होंने अमेरिका का ध्यान चीन के आक्रामक इरादों की ओर दिलाया। पाकिस्तान के साथ संबंधों की भी समीक्षा हुई। भारत ने इस आरोप का खण्डन किया कि वह पाकिस्तान के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करता। श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने वियतनाम समस्या के राजनीतिक समाधान पर बल दिया और कहा कि यदि अमेरिका उत्तरी वियतनाम पर बमबारी बन्द कर दे तो राजनीतिक समाधान सरल हो जायगा। श्रीमती गाँधी की 1966 की अमेरिका यात्रा भारत-अमेरिका संबंध सुधारने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था। उस समय विद्यमान अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति जिसमें अमेरिका-सोवियत संघ के बीच तनाव-शीथिल्य (Detente) चीन-सोवियत संघ के बीच मतभेद, चीन के प्रति भारत और अमेरिका दोनों का रोष, अमेरिका द्वारा प्रस्तावित आर्थिक और सैन्य सहायता इत्यादि ऐसे तत्व थे जिससे अमेरिका के साथ दीर्घकालिक मैत्री की अपेक्षा की जा सकती थी।

यद्यपि भारत-पाकिस्तान युद्ध के समय बन्द की गई सहायता पुनः आरम्भ कर दी गई परन्तु सहायता की राशि नगण्य थी। अमेरिका ने 1967 में भारत विरोधी नागा नेताओं को अपने देश में आश्रय दिया। अमेरिका की पाकिस्तान-समर्थक नीति पहले जैसी बनी रही। इन्दिरा गाँधी की अमेरिकी यात्रा से जो सकारात्मक वातावरण बना था उसे उस समय धक्का लगा जब जून 1967 के पश्चिम एशिया युद्ध में श्रीमती गाँधी ने अरब देशों का समर्थन किया। इससे केवल राष्ट्रपति जॉनसन ही असंतुष्ट नहीं हुए बल्कि कांग्रेस के यहूदी सदस्यों ने भी क्रोध प्रकट किया। दोनों देशों के मध्य 1968 में एक उच्च स्तरीय द्विपक्षीय वार्ता हुई। उस समय अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य में परिवर्तन हो रहा था। अमेरिका, वियतनाम युद्ध में व्यस्त था इसीलिए उसके द्वारा भारत को दी जाने वाली सहायता में काफी कटौती करनी पड़ी।

जनवरी 1969 में निक्सन ने अमेरिका के राष्ट्रपति का पदभार संभाला और अगस्त में उन्होंने भारत यात्रा की। निक्सन भारत को भारी सहायता देने के पक्षधर थे। निक्सन की यात्रा ने मतभेदों को कम करने में सहायता तो अवश्य की परन्तु समस्याओं के समाधान हेतु दोनों देशों की मतभिन्नता भी स्पष्ट हो गई। भारत ने 1972 में वियतनाम के साथ राजनयिक संबंध स्थापित किए। लेकिन भारत का यह कार्य अमेरिका को पसंद नहीं आया। श्रीमती गाँधी उस समय अल्पमत सरकार की प्रधानमंत्री थीं। वह साम्यवादियों

को प्रसन्न रखना चाहती थीं इसीलिए वह समाजवाद के नाम पर अनेक कार्य कर रही थीं। उन्हीं दिनों कम्बोडिया में अमेरिकी सैनिकों के प्रवेश का भारत ने विरोध किया। इससे भी भारत-अमेरिका संबंधों में तनाव पैदा हुआ।

जिन मुद्दों पर भारत और अमेरिका संबंधों में तनाव बना रहा उनमें प्रमुख थे— पाकिस्तान को अमेरिकी शस्त्रास्त्रों की आपूर्ति, पश्चिम एशिया तनाव तथा वियतनाम युद्ध में अमेरिका की भूमिका। सामान्य रूप से विकासशील देशों के सन्दर्भ में तीव्र मतभेद बने रहे। चाहे वह कश्मीर का प्रश्न हो या हिन्दमहासागर का, उपनिवेशवाद की समाप्ति का प्रश्न हो या फिर नई अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था का, दोनों देश एक-दूसरे से असहमत रहे। दक्षिण एशिया, दक्षिण-पूर्व एशिया, पश्चिम एशिया तथा अफ्रीका के संबंध में भारत और अमेरिका के दृष्टिकोण परस्पर विरोधी बने रहे।

बांग्लादेश का संकट (The Bangladesh Crisis): बांग्लादेश का संकट पाकिस्तान की आंतरिक राजनीति से आरम्भ हुआ था परन्तु कुछ ही महीनों में इसने गम्भीर रूप ले लिया और दिसम्बर 1971 में वह भारत-पाकिस्तान युद्ध में परिवर्तित हो गया। इस युद्ध में यद्यपि अमेरिका ने हस्तक्षेप तो नहीं किया परन्तु उसने पाकिस्तान की ओर से भारत के विरुद्ध हस्तक्षेप करने की धमकी अवश्य दी थी। वास्तव में भारत-अमेरिका सम्बन्धों में समय-समय पर जो तनाव उत्पन्न होता रहा उसके मूल में सदा ही पाकिस्तान रहा है। आरम्भ से ही पाकिस्तान, भारत-अमेरिका सम्बन्धों में एक अवरोध के रूप में रहा है। वास्तव में अमेरिका के प्रति भारत की बेरुखी ने पाकिस्तान को अमेरिका के साथ जुड़ने का अवसर दिया। जब भारत ने अमेरिका के साथ संधि करना अस्वीकार कर दिया तब उसने पाकिस्तान को अपने सैनिक गठबन्धन में शामिल करने के लिए आमन्त्रित किया। पाकिस्तान ने इसे सहर्ष स्वीकार कर लिया। 1954 से ही पाकिस्तान अमेरिकी सैन्य सामग्री पर निर्भर रहा है। पाकिस्तान को मिलने वाली अमेरिकी सैनिक सहायता का प्रयोग 1965 में भारत के विरुद्ध किया गया था और 1971 में भी ऐसा ही हुआ। 1965 के युद्ध में अमेरिका पूरी तरह तटस्थ रहा था परन्तु 1971 में वह खुलकर पाकिस्तान के साथ था। यही नहीं 1971 में चीन, पाकिस्तान और अमेरिका का विचित्र सहयोग दिखाई दिया।

अमेरिकी सरकार ने 1970 में पाकिस्तान को बमवर्षक विमान तथा अन्य युद्ध सामग्री देने की घोषणा की थी। भारत में अमेरिकी राजदूत ने कहा था कि पाकिस्तान को अमेरिका द्वारा सहायता देने का उद्देश्य चीन और सोवियत संघ पर पाकिस्तान की निर्भरता कम करना है। दुर्भाग्यवश उस समय अमेरिका, चीन और सोवियत संघ तीनों देश पाकिस्तान को शस्त्रास्त्र देने की होड़ में लगे थे। भारत के लिए यह चिंतनीय विषय था। अमेरिका का यह कहना कि उसके द्वारा दी गई सहायता पाकिस्तान की साम्यवादी देशों पर निर्भरता कम करेगी, भारत को सन्तुष्ट नहीं दे सकी। इसी बीच पूर्वी बंगाल जो उस समय पाकिस्तान का भाग था और पूर्वी पाकिस्तान कहलाता था, पाकिस्तानी राजनीति का मंच बन गया। संसद के चुनाव में शेख मुजीबुर्रहमान की पार्टी अवंामी लीग को बहुमत मिला। इस पार्टी का जनाधार पूर्वी-पाकिस्तान में काफी मजबूत था। पाकिस्तान के राष्ट्रपति याह्या ख़ाँ तथा उनके अधिकांश परामर्शदाता पश्चिमी पाकिस्तान के थे। प्रधानमंत्री पद पर शेख मुजीबुर्रहमान को नियुक्त न करके राष्ट्रपति ने पूर्वी पाकिस्तान के साथ भेदभाव किया। मुजीबुर्रहमान को प्रधानमंत्री पद पर नियुक्त करने की बजाय जेल में डाल दिया गया। इससे पूर्वी पाकिस्तान में विद्रोह शुरू हो गया। पाकिस्तान को अमेरिका से मिलने वाली सैनिक सहायता तथा उसका राजनीतिक समर्थन पाकिस्तान को भारत के साथ युद्ध करने के लिए प्रेरित करने के लिए पर्याप्त था। राजनीति उथल-पुथल के दौर में बांग्लादेश से लगभग एक करोड़ शरणार्थी भारत आ गए और उनका बोझ सहन करना भारत के लिए असम्भव हो गया। बांग्लादेश के स्वतन्त्रता आन्दोलन का याह्या ख़ाँ सरकार ने निर्दयता से दमन करना आरम्भ कर दिया था। बांग्ला युवकों ने मुक्तिवाहिनी नामक सेना का गठन किया परन्तु पाकिस्तान ने यह कहना आरम्भ कर दिया कि भारतीय सैनिक मुक्तिवाहिनी के नाम से संघर्ष कर रहे हैं। बांग्लादेश संकट ने अन्ततः भारत-पाकिस्तान युद्ध का रूप ले लिया जिसमें पाकिस्तान की पराजय हुई। इस युद्ध के दौरान भारत-अमेरिका संबंध पूरी तरह बिगड़ गए। अमेरिकी राष्ट्रपति ने यह भी कह दिया कि वह पाकिस्तान का समर्थन जारी रखेंगे और यदि युद्ध हुआ तो अमेरिका पाकिस्तान के पक्ष में हस्तक्षेप कर सकता है। ऐसी स्थिति में भारत ने अगस्त 1971 में सोवियत संघ के साथ मित्रता और सहयोग की संधि पर हस्ताक्षर किया। इस संधि के कारण भारत राजनीतिक रूप से आश्वस्त हुआ। अमेरिका ने धमकी अवश्य दी परन्तु दिसम्बर 1971 के युद्ध में उसने हस्तक्षेप नहीं किया। 3 दिसम्बर, 1971 को युद्ध आरम्भ हो गया परन्तु पाकिस्तानी सेना को आत्मसमर्पण करना पड़ा और बांग्लादेश की स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में स्थापना हुई।

इस समय तक भारत-अमेरिका संबंध अत्यंत खराब हो चुके थे। निक्सन का पाकिस्तान की ओर झुकाव इस बात से स्पष्ट था कि उन्होंने पूर्वी पाकिस्तान में चल रहे दमन चक्र की ओर ध्यान ही नहीं दिया। निक्सन हर कीमत पर पाकिस्तान का साथ देना चाहते थे। सीनेट की विदेशी मामलों की समिति की चेतावनी के बावजूद निक्सन प्रशासन पाकिस्तान को शस्त्रास्त्र भेजता रहा। विदेश मंत्री हेनरी किस्सिंजर (Henry Kissinger) याह्या ख़ाँ के माध्यम से चीन के साथ सम्पर्क स्थापित करने में व्यस्त थे।

अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को खुलकर दी गई सहायता का भारत में तीव्र विरोध हुआ। अब भारत, सोवियत संघ के और भी निकट आ गया। सुरक्षा परिषद् में सोवियत संघ ने भारत-विरोधी उस प्रस्ताव पर निषेधाधिकार का प्रयोग किया जिसमें उससे बांग्लादेश से अपनी सेनाएँ वापस बुलाने को कहा गया था। अमेरिका भारत विरोधी व्यवहार करके भी पाकिस्तान का विभाजन नहीं रोक सका।

बांग्लादेश संकट के पश्चात् भारत-अमेरिका संबंध (Indo-US Relations after the Bangladesh Crisis): भारत ने मई 1974 में राजस्थान के पोखरण नामक स्थान पर प्रथम परमाणु परीक्षण किया। भारत ने पहले ही यह स्पष्ट कर दिया था कि उसका परमाणु कार्यक्रम शान्तिपूर्ण कार्यों के लिए है परन्तु अमेरिका ने इस परीक्षण की कड़ी आलोचना करते हुए कहा कि इस परमाणु विस्फोट के परिणामस्वरूप दक्षिण एशिया में परमाणु प्रसार को बढ़ावा मिल सकता है। इसके बावजूद अक्टूबर 1974 में अमेरिकी विदेश मंत्री हेनरी किस्सिंजर की भारत यात्रा ने तनाव में कमी लाने का कार्य किया। 1975 में हेलसिंकी (Helsinki) में हुए 35 देशों के सम्मेलन ने शीतयुद्ध को कम करके तनाव-शैथिल्य का वातावरण उत्पन्न किया था परन्तु 1979 में सोवियत संघ द्वारा अफगानिस्तान में सैन्य हस्तक्षेप के चलते पुनः नव शीतयुद्ध आरम्भ हो गया।

इस बीच दोनों देशों में सत्ता परिवर्तन हुआ। अमेरिका में जनवरी 1977 में जिम्मी कार्टर ने राष्ट्रपति पद संभाला और मार्च 1977 में मोरारजी देसाई भारत के प्रधानमंत्री बने। कुछ समय के लिए दोनों देशों के संबंधों को नई दिशा मिली। जनवरी 1978 में जिमी कार्टर ने भारत की यात्रा की और उसी वर्ष जून में मोरार जी देसाई अमेरिकी दौरे पर गए। इन यात्राओं के परिणामस्वरूप कुछ मिथ्या धारणाएँ दूर की गईं। अमेरिका ने आर्थिक सहयोग बढ़ाने का आश्वासन दिया लेकिन भारत ने परमाणु अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर करने के कार्टर के आग्रह को स्वीकार नहीं किया। विदेश मंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने अपनी अमेरिका यात्रा के दौरान तारापुर परमाणु संयंत्र के लिए ईंधन की आपूर्ति बनाए रखने और पाकिस्तान के परमाणु कार्यक्रम तथा हिन्द महासागर को शान्ति क्षेत्र घोषित करवाने जैसे प्रश्नों पर अमेरिकी नेताओं को प्रभावित करने का प्रयास किया।

इस बीच अमेरिका ने पाकिस्तान को अग्रिम पंक्ति के राज्य (Front-Line State) का दर्जा दे दिया। इस प्रकार पाकिस्तान दक्षिण एशिया क्षेत्र में अमेरिका का अड़्डा बन गया। बड़े पैमाने पर पाकिस्तान को मिली अमेरिकी सहायता ने भारत-अमेरिका संबंधों को पुनः बिगाड़ दिया। पाकिस्तान को अमेरिका से मिसाइलें, पिस्टल, शस्त्रास्त्र, बॉल्स आधुनिकतम शस्त्रास्त्र प्राप्त हो रहे थे। दूसरी ओर भारत ने स्पष्ट शब्दों में अफगानिस्तान में हस्तक्षेप के लिए सोवियत संघ की निन्दा नहीं की। परिणामस्वरूप भारत की इस नीति ने अमेरिका को और असंतुष्ट कर दिया।

कानकून (Cancun) में अक्टूबर 1981 में हुए विकसित और विकासशील देशों के शिखर सम्मेलन के अवसर पर श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने अमेरिकी राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन (Ronald Reagan) से भेंट की। इस भेंट के पश्चात् राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन (Ronald Reagan) ने भारत की विदेश नीति को गहराई से समझने का प्रयास किया। अमेरिकी विदेश नीति निर्माताओं की दो पूर्व धारणाओं (Assumptions) का स्पष्टीकरण आवश्यक था। ये पूर्व धारणाएँ थी- प्रथम, भारत की सोवियत संघ के साथ घनिष्ठ मैत्री का निश्चय ही यह अर्थ लगाया जाना कि पश्चिमी देशों के प्रति भारत के संबंध शत्रुतापूर्ण थे तथा द्वितीय यह कि एक महाशक्ति के साथ भारत की मित्रता का अर्थ यह था कि दूसरी महाशक्ति के साथ मित्रता हो ही नहीं सकती। भारत ने अमेरिका को विश्वास दिलाने का प्रयास किया कि उसकी दोनों धारणाएँ मिथ्या थीं। कानकून सम्मेलन के पश्चात् अमेरिका के दृष्टिकोण में परिवर्तन दिखाई दिया और दोनों देशों के संबंधों में कुछ सुधार हुआ। श्रीमती गाँधी की यात्रा का एक निश्चित परिणाम यह निकला कि लम्बे समय से तारापुर परमाणु संयंत्र के लिए परिष्कृत यूरैनियम की आपूर्ति के विषय में चल रही समस्या का निदान करके दोनों देशों ने एक समझौता किया। इसके अनुसार अमेरिका द्वारा यूरैनियम की आपूर्ति करने की व्यवस्था की गई। परन्तु कुछ विषय ऐसे थे जिन पर मतभेद बने रहे। इनमें पहला, पाकिस्तान को मिलती रहने वाली अमेरिकी सैन्य सहायता जिसके लिए भारत में रोष था और दूसरा, अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को इस बात के लिए सचेत किया जाना कि भारत उसके परमाणु प्रतिष्ठानों पर हमला कर सकता है। तीसरा, पंजाब में बढ़ रहा उग्रवाद तथा उन पृथक्तावादियों के प्रति अमेरिका का दृष्टिकोण जिनके संगठनात्मक और वित्तीय संबंध ब्रिटेन, अमेरिका और कनाडा से थे।

पाकिस्तान को सैनिक सहायता (Military Assistance to Pakistan): राष्ट्रपति जिमी कार्टर के प्रशासन को जब यह पता चला कि पाकिस्तान गोपनीय रूप से परमाणु अस्त्रों का निर्माण करना चाहता है। तब अप्रैल 1979 में अमेरिका द्वारा पाकिस्तान को दी जाने वाली आर्थिक और सैन्य सहायता पर रोक लगा दी गई परन्तु जब 1979 के अंत में अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप हुआ तब कार्टर प्रशासन ने पुनः पाकिस्तान को सैनिक सहायता देने का निर्णय किया। अगले 5 वर्षों में 1 अरब 60 करोड़ डॉलर की सैनिक सहायता की घोषणा की गई तथा 40 एफ-16 लड़ाकू विमान बेचने के निर्णय की घोषणा की गई। भारत ने इन निर्णयों पर तीव्र आपत्ति व्यक्त की परन्तु उसकी चिन्ता किए बिना अमेरिका ने साम्यवाद के खतरे से पाकिस्तान की सुरक्षा के नाम पर अपने निर्णय को न्यायोचित ठहराया। राष्ट्रपति रीगन के 1981 में पद संभालने पर पाकिस्तान को पहले से भी अधिक सहायता दी गई। रीगन की एशिया में साम्यवाद के प्रसार को रोकने की नीति के अधीन 1981 में अमेरिका ने पाकिस्तान को मिलने वाली सहायता को मात्रा और भी बढ़ा दी। परमाणु प्रसार को रोकने के उपाय पाकिस्तान के लिए लागू होते दिखाई नहीं दिए। पाकिस्तान के परमाणु वैज्ञानिक डॉ. अब्दुल कादिर ख़ाँ के 1984 के एक वक्तव्य से यह स्पष्ट हो गया था कि पाकिस्तान के पास परमाणु क्षमता थी। भारत द्वारा निरन्तर उठाई गई आपत्तियों के बावजूद राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन और जार्ज बुश पाकिस्तान की सहायता करते ही रहे।

श्रीमती इन्दिरा गाँधी की 1984 में हत्या के पश्चात् उनके पुत्र राजीव गाँधी के प्रधानमंत्री बनने पर राजनीतिक स्तर पर अमेरिका

के साथ संबंध सामान्य बनाने के प्रयास किए गए। राजीव गाँधी ने 1985 में अमेरिका यात्रा के पश्चात् कहा कि हम अपने मतभेद भूलकर स्वतन्त्रता और लोकतन्त्र के समान आदर्शों के लिए मिलकर कार्य कर सकते हैं। परन्तु शीघ्र ही उत्साह निराशा में बदल गया। राजीव गाँधी की क्यूबा और सोवियत संघ की यात्रा ने अमेरिका को निराश किया और रीगन प्रशासन पूर्ववत् पाकिस्तान को अपना समर्थन देता रहा। अमेरिका के विदेश सहायता कानून (Foreign Assistance Act) में 1985 में सीनेटर प्रेसलर द्वारा प्रस्तावित एक संशोधन (Pressler Amendment) पारित किया गया। इसके अनुसार पाकिस्तान को कोई भी सैनिक सहायता देने से पूर्व राष्ट्रपति को यह प्रमाणित करना आवश्यक था कि पाकिस्तान के पास कोई परमाणु शस्त्र नहीं हैं। अफगानिस्तान से सोवियत सेनाओं की वापसी के बाद शीत युद्ध की समाप्ति तथा सोवियत संघ के विघटन की संभावनाओं के उत्पन्न होने पर 1990 में राष्ट्रपति बुश ने 1991-92 के लिए पाकिस्तान को दी जाने वाली आर्थिक और सैनिक सहायता पर रोक लगा दी। इस प्रकार प्रेसलर संशोधन के अधीन बुश ने पहली बार पाकिस्तान को दंडित किया। अमेरिकी राष्ट्रपति के 1992 के चुनाव अभियान के समय बिल क्लिंटन (Bill Clinton) ने अनेक ऐसे संकेत दिए थे जो भारत से संबंध सुधारने की दिशा में महत्वपूर्ण हो सकते थे।

शीतयुद्ध के समाप्त होते-होते भारत ने अमेरिका से कुछ हद तक संबंध सुधार लिए थे परन्तु प्रेक्षकों ने कहा कि भारत आवश्यकता से अधिक आशावादी दिखाई दे रहा है। राजीव गाँधी और रोनल्ड रीगन के प्रयासों से दोनों देशों में सीमित स्तर पर सैनिक सहयोग आरम्भ हुआ। लम्बे समय के पश्चात् भारत और अमेरिका की नौसेनाओं ने संयुक्त अभ्यास किए। 1991 में खाड़ी युद्ध के समय दक्षिण-पूर्व एशिया से खाड़ी की ओर उड़ान भर रहे विमानों को चन्द्रशेखर सरकार ने भारत में ईंधन के लिए उतरने की अनुमति दी। अमेरिका ने इसकी सराहना की। जार्ज बुश ने राष्ट्रपति बनने पर 1989 में ही यह घोषणा की थी कि अमेरिका भारत को यथासम्भव सहायता देता रहेगा। उन्होंने भारत और अमेरिका के सकाएतक संबंधों पर बल दिया और कहा कि अमेरिका, भारत के औद्योगिकी क्षेत्र में वैसे ही सहायता करेगा जैसा उसने कृषि क्षेत्र में हरित क्रांति को सफल बनाने के लिए सहायता की थी।

(iii) शीत युद्ध के पश्चात् भारत-अमेरिका संबंध (Indo-US Relations after Cold War)

शीत युद्ध द्वितीय विश्व युद्ध के तुरन्त बाद शुरू हुआ था और 1990 के अन्त में समाप्त हो गया। दोनों महाशक्तियों ने परस्पर टकराव का मार्ग छोड़ दिया परन्तु शीघ्र ही सोवियत संघ डगमगाने लगा तथा 1991 के अन्त में उसका विघटन हो गया। भारत सहित संसार के अधिकांश देश इस नई स्थिति के लिए तैयार नहीं थे। इस आकस्मिक घटना ने संयुक्त राज्य अमेरिका को एकमात्र महाशक्ति के रूप में स्थापित कर दिया। सभी देशों द्वारा अपने राजनय और अपनी नीतियों का पुनर्विलोकन करना आवश्यक हो गया था। स्वाभाविक था कि भारत-अमेरिका संबंधों में भी परिवर्तन होता। 1990 के दशक के आरम्भ में एक ऐसा नया संसार उभर कर आया जो कि पहले से कहीं ज्यादा अव्यवस्थित था। संसार दो शक्ति गुटों में विभाजित नहीं रह गया। शीतयुद्ध की समाप्ति के साथ ही पूर्व और पश्चिम के बीच वैचारिक मुकाबला (Ideological Confrontation) भी समाप्त हो गया। आज संसार में शायद ही ऐसे देश बचे हैं जो लोकतन्त्र की शपथ नहीं लेते अर्थात् लगभग सभी देश लोकतान्त्रिक प्रणाली को अपना रहे हैं। नियन्त्रित अर्थव्यवस्थाओं का स्थान बाजार अर्थव्यवस्थाओं (Market Economies) ने ले लिया है। सोवियत संघ के विघटन के पश्चात् अमेरिका के साथ भारत के संबंधों में निश्चय ही परिवर्तन हुआ है।

1996 से पहले भारत, चीन और पाकिस्तान दोनों से अपनी सुरक्षा के लिए खतरा अनुभव करता था। इस खतरे की प्रबलता समय-समय पर कम या अधिक होती रही परन्तु भारत ने कभी भी अमेरिका की ओर से अपनी सुरक्षा के लिए खतरा अनुभव नहीं किया। हालांकि भारत ने यह अनुभव किया है कि पाकिस्तान के साथ अमेरिका की घनिष्ठ मैत्री के कारण भारत के लिए अमेरिका की ओर से अप्रत्यक्ष संकट अवश्य आता रहा है। दीर्घकाल तक भारत अपनी रक्षा आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिए सोवियत संघ पर निर्भर रहा। संयुक्त राज्य अमेरिका ने हमेशा ही सोवियत संघ के साथ भारत के विशेष संबंधों को शीतयुद्ध के संदर्भ में देखा। उसका यह निष्कर्ष था कि भारत-सोवियत मैत्री से दक्षिण-एशिया में सोवियत संघ की स्थिति मजबूत होती थी। अमेरिका की यह धारणा भारत-अमेरिका संबंधों के सामान्यीकरण में दीर्घकाल तक बाधा बनी रही। अमेरिका को इस बात पर विशेष आपत्ति थी कि भारत ने अफगानिस्तान में सोवियत हस्तक्षेप की निन्दा न करके एक प्रकार से उसका समर्थन किया था। अमेरिका द्वारा अफगानिस्तान संकट के समय पाकिस्तान को बड़ी मात्रा में सैनिक सहायता देने से भारत को अपनी सुरक्षा के लिए गम्भीर खतरा प्रतीत हुआ। इस प्रकार भारत-अमेरिका-पाकिस्तान-सोवियत संघ के बीच विचित्र संबंध बन गए थे। शीतयुद्ध की समाप्ति पर विचित्र संबंधों का भी अन्त हो गया। 1989 में अफगानिस्तान से सोवियत सेनाओं को वापस बुला लिया गया। सोवियत संघ के विघटन के पश्चात् पश्चिमी देशों के साथ घनिष्ठ और मैत्रीपूर्ण संबंधों का विकास करना रूस के लिए आवश्यक हो गया था। जैसे-जैसे अमेरिका और रूस एक दूसरे के निकट आते गए वैसे-वैसे भारत सख्खे सोवियत संघ के परम्परागत मित्रों की अवहेलना होने लगी। भारत-रूस संबंधों में कमजोरी का दोनों देशों के व्यापार पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा।

अप्रैल 1993 में संयुक्त राज्य अमेरिका के विदेश मंत्री वारेन क्रिस्टोफर (Warren Cristopher) ने कहा था कि रूस के लिए सहायता कार्यक्रम से अमेरिका के राष्ट्रीय हितों को सुरक्षित रखा जा सकेगा तथा अमेरिका के श्रमिकों, कृषकों और व्यापारियों के लिए नए बाजार खोले जा सकेंगे। उत्तर-शीतयुद्ध काल में अमेरिका और रूस संबंधों में अप्रत्याशित सुधार से भारत और पाकिस्तान

के साथ अमेरिका के संबंध नकारात्मक रूप से प्रभावित हुए। अफगानिस्तान से सोवियत सेनाओं की वापसी के परिणामस्वरूप अमेरिका के लिए पाकिस्तान का सामरिक महत्व कम हुआ। शीतयुद्ध की समाप्ति के पश्चात् अमेरिका ने इस बात पर बल दिया कि दक्षिण एशिया में उसकी नीति 'क्षेत्रीय शान्ति और स्थायित्व' स्थापित करने की है। इस पृष्ठभूमि में अमेरिका ने परमाणु अप्रसार के मुद्दे को दक्षिण एशिया में उच्च प्राथमिकता प्रदान की।

परमाणु मुद्दा (Nuclear Issue): भारत का यह निर्णय कि वह अपने परमाणु कार्यक्रम को बन्द नहीं करेगा, भारत-अमेरिका संबंधों में विवाद का एक प्रमुख मुद्दा रहा है। इस संदर्भ में भारत का यह मानना है कि वह अपना परमाणु कार्यक्रम केवल इस शर्त पर समाप्त कर सकता है कि पूर्ण परमाणु निःशस्त्रीकरण के लिए सभी राष्ट्रों द्वारा प्रतिबद्धता व्यक्त की जाए। भारत के इस विचार को अमेरिका ने कभी भी गंभीरता से नहीं लिया, बल्कि इस संबंध में उसका मानना रहा है कि यदि भारत अपना परमाणु कार्यक्रम छोड़ दे तभी उसकी वास्तविक सुरक्षा सुनिश्चित हो सकेगी। राष्ट्रपति जिमी कार्टर (1977-81) के शासन काल से ही अमेरिका का निरन्तर यह प्रयास रहा है कि भारत और पाकिस्तान दोनों परमाणु अप्रसार संधि (Non-proliferation Treaty – NPT) पर हस्ताक्षर करें। भारत ने इस संधि को भेदभाव पर आधारित बताते हुए हस्ताक्षर नहीं किए। पाकिस्तान ने अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश और बिल क्लिंटन दोनों को यह स्पष्ट कह दिया था कि वह अप्रसार संधि पर तभी हस्ताक्षर करेगा जब भारत पहले हस्ताक्षर करे। दबाव के बावजूद भारत ने अग्नि और पृथ्वी जैसे मिसाइल कार्यक्रमों को भी निलंबित नहीं किया। भारत ने व्यापक परमाणु परीक्षण निषेध संधि (Comprehensive Nuclear-Test Ban Treaty – CTBT) पर भी भेदभाव पर आधारित बताकर हस्ताक्षर नहीं किए। शीतयुद्ध समाप्त होने के पश्चात् भी परमाणु अप्रसार संधि (Nuclear Non-Proliferation Treaty – NPT), व्यापक परमाणु परीक्षण निषेध संधि (Comprehensive Nuclear-Test Ban Treaty – CTBT), कश्मीर तथा मानव अधिकार जैसे मुद्दों पर भारत और अमेरिका के बीच मतभेद बने हुए थे। कश्मीर मुद्दे पर अमेरिका की स्थिति में मात्र इतना परिवर्तन हुआ कि अब वह यह मान गया है कि इस प्रश्न को अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर न उठाकर द्विपक्षीय वार्ता के द्वारा सुलझाया जाए। यद्यपि अमेरिका अब भी कश्मीर को विवादास्पद क्षेत्र ही मानता है।

मानवाधिकारों का मुद्दा (Issue of Human Rights): मानवाधिकारों के विषय में भारत और अमेरिका के बीच मतभेद है। पश्चिमी देश भारत की मानवाधिकार संबंधी घटनाओं के विषय में बहुत चिन्तित रहते हैं। एमनेस्टी इंटरनेशनल (Amnesty International) जैसे संगठन भारत की सेनाओं द्वारा मानव अधिकारों के हनन का प्रश्न निरन्तर उठाते रहते हैं। अमेरिकी कांग्रेस भी समय-समय पर भारत में मानव अधिकारों के हनन के प्रश्न पर चिन्ता व्यक्त करती रही है। भारत एक लोकतन्त्र है और वहाँ मानव अधिकारों को वैसा ही महत्व प्राप्त है जैसा कि संयुक्त राज्य अमेरिका में। लोकमत से प्रभावित होकर भारत ने एक राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की स्थापना की है। यह आयोग सर्वोच्च न्यायालय के अवकाश प्राप्त मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता में कार्य करता है और मानवाधिकारों के हनन के आरोपों को जाँच करके इस संबंध में सुझाव देता है।

पाकिस्तान को उत्तर-शीत युद्ध काल में अमेरिकी सहायता (American Assistance to Pakistan in the Post-Cold War Period): 1985 में पारित प्रेसलर संशोधन ने पाकिस्तान को सहायता देने से पहले राष्ट्रपति के लिए यह अनिवार्य कर दिया था कि वह प्रमाणित करे कि पाकिस्तान के पास परमाणु शक्ति नहीं है। राष्ट्रपति बुश के द्वारा 1990 में यह प्रमाणित न करने के कारण 1991-92 में पाकिस्तान को दी जाने वाली सहायता पर रोक लगा दी गई। पाकिस्तान ने जिन उपकरणों को खरीदने के लिए धन राशि दी हुई थी उनका निर्यात भी रोक गया। प्रेसलर संशोधन के विरुद्ध 1991 से ही पाकिस्तान ने अभियान आरम्भ कर दिया था। इस उद्देश्य से पाकिस्तान ने दक्षिण एशिया को परमाणु-मुक्त क्षेत्र घोषित करवाने का विचार प्रस्तुत किया। अपने 1992 के चुनाव अभियान में बिल क्लिंटन ने भारतीय समुदाय का समर्थन पाने के लिए जो घोषणाएँ की थीं, उनसे भारत से संबंधों में सुधार की आशा उत्पन्न हुई परन्तु व्यवहार में क्लिंटन ने ऐसा कोई ठोस कदम नहीं उठाया जिससे संबंधों में सुधार हो सकता। सितम्बर 1995 में विदेश सहायता कानून में प्रेसलर संशोधन को अप्रभावी करने के लिए ब्राउन संशोधन पारित होने से पाकिस्तान को एक बार फिर छूट मिली और अमेरिका ने पाकिस्तान द्वारा खरीदे गए विमानों तथा सहायता स्वरूप शस्त्रास्त्रों की आपूर्ति की। पाकिस्तान को मिली सहायता ने भारत की सुरक्षा पर प्रश्न चिह्न लगा दिया क्योंकि अतीत में भी जब अमेरिका ने पाकिस्तान को आधुनिक शस्त्रास्त्र दिए तब भी उसने इनका प्रयोग भारत के विरुद्ध ही किया। ऐसा 1965 और 1971 के युद्धों में देखा गया। क्लिंटन प्रशासन द्वारा पाकिस्तान को भारी मात्रा में सैन्य सामग्री की आपूर्ति भारत के लिए द्वितीय विषय था। अमेरिका किसी न किसी रूप में पाकिस्तान को सशक्त बनाने का प्रयास करता रहता था।

संयुक्त राज्य अमेरिका भारत के साथ किस प्रकार का संबंध रखना चाहता है, इस विषय पर न केवल विद्वानों में मतभेद है बल्कि स्वयं अमेरिका भी अलग-अलग संदेश देता रहा है। 1996 में इस बात के संकेत प्राप्त हो रहे थे कि अमेरिका भारत के और अधिक निकट आना चाहता है। उस समय भारत, पाकिस्तान की अपेक्षा अधिक अच्छी स्थिति में था और वह स्वाभाविक रूप से विकासशील संसार के नेतृत्व के लिए सबसे उपयुक्त था। शीतयुद्ध की समाप्ति के पश्चात् इस बात के संकेत थे कि अमेरिका अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन करके भारत के साथ मित्रता करना चाहता है।

भारत में आर्थिक उदारीकरण और अमेरिका (Economic Liberalisation in India and United States): भारत में

आर्थिक उदारीकरण की प्रक्रिया नरसिंह राव सरकार ने 1991 में आरम्भ की थी। अमेरिका ने इस प्रक्रिया का स्वागत किया और यह आशा व्यक्त की कि आर्थिक सहयोग के द्वारा भारत और अमेरिका एक दूसरे के निकट आएंगे। भारत में अमेरिका से पूँजी निवेश में तेजी से वृद्धि हुई। इस संबंध में कुछ लोगों का विचार है कि भारत को अमेरिकी पूँजी की आवश्यकता है, न कि अमेरिका को अपनी पूँजी भारत में निवेश करने की। वास्तव में व्यापार दोनों के लाभ के लिए किया जाता है। उत्तर-शीत युद्ध काल में अमेरिका के लिए चीन नहीं बल्कि भारत पूँजी निवेश की दृष्टि से प्रथम गन्तव्य बन गया था। क्लिन्टन प्रशासन ने भारत को 10 उभरते बाजारों में से एक स्वीकार कर लिया था। अमेरिकी सरकार ने विश्व बैंक तथा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से भारत के लिए सहायता का जोरदार समर्थन किया। क्लिन्टन प्रशासन के दूसरे कार्यकाल में अमेरिका ने कहा कि वह भारत के साथ और भी अच्छे आर्थिक संबंधों के लिए कार्य करता रहेगा।

(iv) भारत-अमेरिका परमाणु समझौता (Indo-US Nuclear Deal)

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की अमेरिका यात्रा के दौरान 18 जुलाई, 2005 को भारत-अमेरिका परमाणु समझौते पर हस्ताक्षर किए गए। भारत-अमेरिका परमाणु समझौते के अनुसार भारत ने यह स्वीकार किया कि वह अपने सैनिक एवं असैनिक परमाणु ठिकानों (Facilities) को अलग-अलग कर देगा। इस समझौते के माध्यम से अमेरिका 1974 में भारत के प्रथम परमाणु परीक्षण के बाद से निलम्बित परमाणु सहयोग पुनः आरंभ करने पर राजी हुआ। असैनिक परमाणु सहयोग के लिए भारत कुछ शर्तें पूरी करेगा तथा अमेरिका की कांग्रेस उस देश के कानूनों में परिवर्तन करेगी तथा समझौते को वास्तविक रूप दिया जा सकेगा। अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज बुश ने आशा व्यक्त की कि उन्नत परमाणु प्रौद्योगिकी वाले उत्तरदायी देश (Responsible State with Advanced Nuclear Technology) के रूप में भारत को वही सुविधाएँ तथा लाभ प्राप्त होंगे जो कि इस श्रेणी के अन्य देशों को उपलब्ध हैं।

समझौते के अनुसार भारत को वही उत्तरदायित्व होगा जो कि अन्य उन्नत परमाणु कार्यक्रम वाले देशों के है इसलिए भारत ने निम्नलिखित व्यवस्थाओं का स्वीकार किया है।

- भारत अपने सैनिक और असैनिक प्रतिष्ठानों की पहचान करेगा और अपने असैनिक प्रतिष्ठानों के विषय में अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (International Atomic Energy Agency - IAEA) के समक्ष ज्योर प्रस्तुत करेगा।
- भारत स्वेच्छा से अपने असैनिक परमाणु प्रतिष्ठानों को अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी के संरक्षण में रखेगा।
- असैनिक परमाणु प्रतिष्ठानों के विषय पर एक अतिरिक्त प्रोटोकॉल (Additional Protocol) पर हस्ताक्षर करेगा और उसका पालन करेगा।
- परमाणु परीक्षणों पर स्वेच्छा से रोक लगाएगा।
- संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ मिलकर विषमशील (Fissile) सामग्री को नियंत्रित करने वाली संधि के लिए कार्य करेगा।
- उन देशों को परीक्षण और पुनर्संसाधन (Enrichment and Reprocessing) प्रौद्योगिकी का हस्तांतरण नहीं करेगा जिनके पास यह उपलब्ध नहीं है।
- भारत परमाणु सामग्रियों तथा प्रौद्योगिकी को निर्यात नियंत्रण दफ्तरों द्वारा सुरक्षित रखेगा और प्रक्षेपास्त्र प्रौद्योगिकी नियंत्रण व्यवस्था (Missile Technology Control Regime - MTCR) एवं परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह (Nuclear Suppliers Group - NSG) के नियमों का पालन करेगा।

समझौते के अनुसार अमेरिका—

- कानूनों को कांग्रेस की स्वीकृति से परिवर्तित करेगा।
- अपने मित्रों के साथ मिलकर अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था से सामंजस्य स्थापित (Adjustment) करने के लिए कार्य करेगा ताकि भारत के साथ असैनिक परमाणु ऊर्जा सहयोग को सुनिश्चित किया जा सके।
- अपने सहयोगियों के साथ इंटरनेशनल थर्मोन्यूक्लियर एक्सपेरिमेंटल रिएक्टर (International Thermonuclear Experimental Reactor) में भारत की भागीदारी को लेकर बातचीत करेगा।

संयुक्त राज्य अमेरिका आज भी भारत को परमाणु शस्त्र सम्पन्न देश (Nuclear Weapon State - NWS) स्वीकार नहीं करता परंतु वह भारत को उन्नत परमाणु प्रौद्योगिकी (Advanced Nuclear Technology) वाला देश कहता है। भारत ने स्वीकार कर लिया कि वह सैनिक प्रतिष्ठानों को असैनिक परमाणु प्रतिष्ठानों (Civil Nuclear Facilities) से पृथक् करेगा और असैनिक प्रतिष्ठानों को अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (आईएईए) के संरक्षण में रखेगा। व्यवहार में सभी देश जानते हैं कि भारत के पास परमाणु अस्त्र हैं और वह न्यूनतम परमाणु अवरोधक (Minimum Nuclear Deterrence) अपने पास बनाए रखेगा। भारत ने 1998 में ही यह

घोषणा की थी कि भविष्य में वह और कोई परमाणु परीक्षण नहीं करेगा। समझौते के अनुसार अमेरिका ने स्वयं स्वीकार किया कि भारत परमाणु परीक्षणों पर एकतरफा स्थगन (Moratorium) जारी रखेगा।

मार्च 2006 में राष्ट्रपति बुश की भारत यात्रा के दौरान पृथक्करण योजना की घोषणा कर दी गई। भारतीय नेतृत्व इस बात से प्रसन्न था कि संयुक्त राज्य अमेरिका भारत के असेैनिक परमाणु कार्यक्रम के साथ सहयोग करेगा जिसमें प्रौद्योगिकी हस्तांतरण भी शामिल होगा और वह सुनिश्चित करेगा कि 44 देशों के परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह (Nuclear Suppliers Group – NSG) से भारत को परमाणु ईंधन की आपूर्ति होती रहे। यह भी तय किया गया कि भारत के 22 संयंत्रों में से 12 असेैनिक ईकाइयों को अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (आईएईए) के संरक्षण में कर दिया जाए। यह प्रक्रिया विभिन्न चरणों में 2014 तक पूर्ण हो जाएगी परंतु भारत अपने प्रोटोटाइप फास्ट ब्रीडर रिएक्टर (Prototype Fast Breeder Reactors) को अन्तर्राष्ट्रीय संरक्षण में नहीं रखेगा।

समझौते के अनुसार अमेरिका ने स्वीकार किया कि वह भारत को परमाणु सामग्री और संयंत्र बेचेगा और उसे उन्नत अनुसंधान कार्यक्रम में भागीदार बनाएगा। भारत उन्हीं उत्तरदायित्वों को स्वीकार करेगा तथा वही लाभ प्राप्त करेगा जो कि अन्य उन्नत परमाणु प्रौद्योगिकी वाले देशों के लिए निर्धारित हैं। व्यवहार में इसका आशय यह हुआ कि भारत परमाणु शस्त्र सम्पन्न देश है चाहे अमेरिका इसे स्वीकार करे या नहीं। वह निस्संदेह भारत के साथ परमाणु-शस्त्र सम्पन्न देश जैसा ही आचरण करता है।

परमाणु समझौते की आलोचना (Criticism of Nuclear Deal): पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने सैनिक और असेैनिक परमाणु प्रतिष्ठानों के प्रस्तावित पृथक्करण पर चिंता व्यक्त की थी। पूर्व विदेश मंत्री जसवंत सिंह ने कहा कि ऐसा प्रतीत होता है कि शायद भारत-अमेरिका परमाणु समझौता विदेश नीति के मामले में बुश प्रशासन की एकमात्र उपलब्धि है परंतु भारत को इससे सावधान रहना चाहिए। अमेरिकी कांग्रेस द्वारा सुभाषित संशोधनों को पारित किए जाने के बाद भी अमेरिका के राष्ट्रपति को प्रति वर्ष यह प्रमाणित करना पड़ेगा कि वह परमाणु मामले में भारत के व्यवहार और कार्यक्रम से संतुष्ट है। भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग के पूर्व अध्यक्ष डॉ. पी.के. अयंगर का विचार था कि यह भारत की न्यूनतम परमाणु प्रतिरोधक क्षमता को भी सीमित कर देगा। यह भारत के सामरिक कार्यक्रम पर प्रतिबंध जैसा होगा। सुप्रसिद्ध परमाणु वैज्ञानिक होमी सेथना ने तो यहाँ तक कहा कि भारत के लिए भेदभाव पर आधारित परमाणु अप्रसार संधि (एनपीटी) पर हस्ताक्षर करना इस समझौते से बेहतर होगा क्योंकि उस संधि से तो बाहर आने की अनुमति होगी जबकि भारत-अमेरिका परमाणु समझौता सदा के लिए भारत को बांध कर रखेगा।

15.2 भारत-अमेरिका संबंधों में उतार-चढ़ाव (Ups and Downs in India-US Relations)

नई सहस्राब्दी के शुरू होने तक भारत-अमेरिका संबंध उतने सौहार्दपूर्ण और सहज नहीं थे। शीतयुद्ध के दौरान और पाखरण-2 के बाद यह संबंध गलतफहमी और संदेह से भरे हुए थे। वर्ष 1998 में सबसे ज्यादा तनावपूर्ण स्थिति उत्पन्न हो गई जब अमेरिका ने भारत के परमाणु परीक्षण के बाद कड़े आर्थिक प्रतिबंध लागू कर दिए। सन् 2000 से राष्ट्रपति बिल क्लिंटन की भारत यात्रा से दोनों देशों के संबंधों में कुछ सुधार हुआ। भारत-अमेरिका संबंधों को एक नई ऊँचाई पर ले जाने का श्रेय जॉर्ज बुश जूनियर और प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह को जाता है। 21वीं शताब्दी के पहले 10 वर्षों में भारत और अमेरिका के बीच नई रणनीतिक साझेदारी आगे बढ़ी। दक्षिण एशिया में अमेरिकी हितों के विस्तार के फलस्वरूप भारत उसके लिए महत्वपूर्ण बन गया। बुश प्रशासन ने दक्षिण एशिया को अवसरों से भरपूर मानते हुए उसे अमेरिकी विदेश नीति के एजेंडे में सर्वोच्च प्राथमिकता दी। चूंकि भारत दक्षिण एशिया का महत्वपूर्ण राष्ट्र था इसलिए अमेरिका ने उस पर गंभीरता से ध्यान दिया।

9/11 के बाद दोनों देशों ने आतंकवाद के खिलाफ युद्ध, वैश्विक आर्थिक मंदी और एशिया में उभरते नए शक्ति समीकरण सरीखी घटनाओं के परिदृश्य में अपने संबंधों को फिर से परिभाषित करने की आवश्यकता महसूस की। भारत ने अपनी गुटनिरपेक्ष नीति से परे भी देखना शुरू कर दिया। दूसरी तरफ अमेरिका ने स्वीकार किया कि 21वीं शताब्दी में भारत में विश्व शक्ति बनने की क्षमता है। उसने भारत की चिंताओं को भी समझने का प्रयास किया और उसके आर्थिक विकास, व्यापार एवं बाजार क्षमता, बौद्धिक पूंजी, लोकतंत्र, बहुलवाद, परमाणु अप्रसार में योगदान, आतंकवाद से लड़ने की प्रतिबद्धता और दुनियाभर में अपनी संस्कृति फैलाने की क्षमता की सराहना की। तत्कालीन अमेरिकी विदेश मंत्री कोण्डालीजा राइस ने मार्च 2005 में अपनी भारत यात्रा के दौरान सार्वजनिक रूप से कहा था कि अमेरिका की नीति 21वीं शताब्दी में प्रमुख विश्व शक्ति (World Power) बनने में भारत की मदद करना है। तब इसे एशिया में चीन को प्रति संतुलित करने के कदम के रूप में देखा गया था।

इस तरह प्रधानमंत्री डॉ॰ मनमोहन सिंह और राष्ट्रपति जॉर्ज बुश ने शीत युद्ध के समय उत्पन्न संदेहों को त्यागकर साझा मूल्यों पर आधारित नए संबंधों की शुरुआत की। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की जुलाई 2005 की वाशिंगटन यात्रा और राष्ट्रपति बुश की मार्च 2006 की भारत यात्रा ने कृषि संबंधी ज्ञान की साझेदारी से लेकर संयुक्त उद्यमों, परियोजनाओं, विस्तारित रक्षा संबंधों, विज्ञान एवं तकनीक में सहयोग का रास्ता साफ कर दिया।

इस तरह की आपसी समझ का एक महत्वपूर्ण नतीजा यह निकला कि अमेरिका ने मार्च 2006 में भारत के साथ परमाणु ऊर्जा सहयोग का एक उल्लेखनीय समझौता किया। इस समझौते को दोनों देशों के बीच एक ऐतिहासिक रणनीतिक उपलब्धि कहा गया। वस्तुतः इस पहल के साथ अमेरिका ने भारत को परमाणु शक्ति मान लिया। इससे भारत की ऊर्जा सुरक्षा संबंधी चिंताओं को दूर करने के लिए राष्ट्रपति जॉर्ज बुश की प्रतिबद्धता स्पष्ट हो गई। हालांकि अमेरिका की परमाणु अप्रसार लॉबी ने भारत के साथ हुए समझौते पर कई आपत्तियाँ उठाई थीं। उस समय जॉर्ज बुश की यह कहते हुए आलोचना की गई थी कि उन्होंने नई दिल्ली में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के साथ होने वाली शिखर बैठक को सफल बनाने के लिए परमाणु समझौते में बहुत कुछ दे दिया। श्री बुश इतने प्रतिबद्ध थे कि उन्होंने नागरिक (Civil) और सैन्य (Military) परमाणु रिएक्टरों में से केवल नागरिक परमाणु रिएक्टरों को अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (आईईए) की निगरानी में रखने की माँग भी मान ली। राष्ट्रपति जॉर्ज बुश के आग्रह पर अमेरिकी कांग्रेस, परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह (Nuclear Suppliers Group – NSG) और जी-8 देशों ने भारत- अमेरिका परमाणु समझौते के प्रति सकारात्मक रुख दिखाया। यह भी सत्य है कि किसी भी दूसरे परमाणु शक्ति संपन्न राष्ट्र के मुकाबले अप्रसार से संबंधित भारत का रिकॉर्ड अच्छा है। दूसरी तरफ परमाणु अप्रसार संधि पर दस्तखत करने वाले देशों का रिकॉर्ड दागदार रहा है। भारत ने अपने को एक मजबूत और जिम्मेदार देश के रूप में स्थापित किया है।

परमाणु समझौते के अतिरिक्त राष्ट्रपति बुश की यात्रा से दूसरे संकेत भी मिले जो भारत के बारे में दुनिया के अन्य देशों का नजरिया बदल सकते हैं। उनके कार्यकाल में भारत को अमेरिका के एक प्रमुख व्यापारिक भागीदार (Trading Partner) का दर्जा दिया गया। दोनों देशों के बीच रक्षा सहयोग को बढ़ावा मिला। इसके परिणामस्वरूप पाँच साल की अवधि में कई संयुक्त सैन्य अभ्यास हुए। जॉर्ज बुश ने भारत के पक्ष में आउटसोर्सिंग करने के लिए अपने देश में सुरक्षावादी लॉबी का सफलतापूर्वक प्रतिरोध किया। उन्होंने यह कहते हुए मुक्त व्यापार (Free Trade) का बचाव किया कि इससे अमेरिका को लाभ होगा और रोजगार सृजन में मदद मिलेगी।

भारत-पाकिस्तान संबंधों पर जूनियर बुश ने स्पष्ट रवैया अपनाया। एक तरफ उन्होंने आतंकवाद के खिलाफ युद्ध में मदद करने के लिए पाकिस्तान की सहायता की और दूसरी तरफ कश्मीर मुद्दे पर भारत-पाकिस्तान के बीच प्रथमस्थता करने से इनकार कर दिया। उन्होंने भारत और पाकिस्तान को आपसी मुद्दों के हल के लिए बातचीत का सुझाव दिया। वे सीमा पार आतंकवाद के खिलाफ थे। उन्होंने जमरल परवेज मुशरफ को कड़े शब्दों में चेताया था कि पाकिस्तानी जमीन से संचालित होने वाले आतंकवादी समूहों की मदद बंद की जानी चाहिए और उनके प्रशिक्षण शिविरों को खत्म करने के लिए कड़े उपाय किए जाने चाहिए। उन्होंने युद्ध से जर्जर अफगानिस्तान के पुनर्निर्माण में भारत के योगदान की सराहना की।

इस तरह जॉर्ज बुश के शासन काल में भारत-अमेरिका संबंधों में भारी बदलाव आया। भारत-अमेरिका संबंध दोनों देशों के साझेदारी और राष्ट्रीय हितों पर आधारित थे। इससे किसी तीसरे देश के खिलाफ गठबंधन की नहीं बल्कि भारत-अमेरिका के बीच रणनीतिक साझेदारी की नींव पड़ी। अमेरिका ने एशिया में चीन की तुलना में भारत को अधिक महत्व दिया।

15.3 ओबामा और भारत-अमेरिका संबंध (Obama and India-US Relations)

20 जनवरी, 2009 को बराक ओबामा ने अमेरिका के 44वाँ राष्ट्रपति के रूप में कार्यभार ग्रहण किया। वे एक नए एजेंडे पर दुनिया के सबसे ताकतवर पद के लिए निर्वाचित हुए थे। उस समय वैश्विक आर्थिक मंदी के कारण अमेरिका में 40 लाख लोग बेरोजगार हो गए थे। इराक और अफगानिस्तान में आतंकवाद के खिलाफ युद्ध में अमेरिका को एक तरह का झटका लग चुका था। भारत ने ओबामा के निर्वाचन को अमेरिका में चल रहे सामाजिक बदलाव की मिशाल बताया। भारत की जनता ने एक ऐसे व्यक्ति की जीत का स्वागत किया जो अपने को महात्मा गांधी का अनुयायी होने का दावा करता है। राष्ट्रपति बनने के साथ ही ओबामा से उम्मीदें बढ़ गईं लेकिन आशंकाएँ भी दिखने लगीं।

ओबामा कार्यकाल के शुरू में बहुचर्चित भारत-अमेरिका संबंधों में उतार-चढ़ाव दिखाई दिया। उनके शासन काल के शुरुआती महीनों के दौरान उनकी वरीयता सूची से भारत नदारद था। भारत में नए राजदूत की नियुक्ति में विलंब किया गया। अमेरिकी विदेश मंत्री (Secretary of State) हिलेरी क्लिंटन की पहली एशिया यात्रा में चीन शामिल था भारत नहीं। इसी तरह उपराष्ट्रपति जोए बिडेन (Joe Biden) ने नई दिल्ली की उपेक्षा करते हुए इस्लामाबाद की यात्रा की। राष्ट्रपति ओबामा ने भी कश्मीर समस्या के हल के लिए बिन माँगी राय देकर भारत को उलझन में डाल दिया था। यह राय अफगानिस्तान में पाकिस्तान के विश्वसनीय योगदान के एक्ज में दी गई थी। भारत को अफगानिस्तान-पाकिस्तान नीति (Afghanistan-Pakistan Policy) के तहत आतंकवाद के खिलाफ युद्ध में अफगानिस्तान और पाकिस्तान के साथ जोड़ दिया गया था। बहुचर्चित भारत-अमेरिका परमाणु समझौते के प्रभावी होने पर सवालिया निशान लग गया था क्योंकि ओबामा प्रशासन समझौते को कार्यान्वित करने के लिए पर्याप्त कदम नहीं उठा रहा था। ऐसा माना जा रहा था कि परमाणु अप्रसार संधि (NPT) और व्यापक परमाणु परीक्षण निषेध संधि (CTBT) पर दस्तखत करने के लिए

भारत पर दबाव डाला जाएगा। 15 से 17 नवंबर, 2009 के दौरान ओबामा की चीन यात्रा और 'ओबामा-जिंताओं के संयुक्त घोषणा पत्र' को भारत ने इस रूप में लिया मानो एशिया में चीन को महत्व देने के साथ एशियाई समस्याओं के हल के लिए उस पर भरोसा किया जा रहा है। आर्थिक मोर्चे पर ओबामा प्रशासन अमेरिकी कंपनियों द्वारा भारत में आउटसोर्सिंग किए जाने का विरोधी था। इन परिस्थितियों में यह आशंका व्यक्त की जाने लगी थी कि क्या भारत-अमेरिका संबंध खत्म होने के कगार पर हैं?

ओबामा कार्यकाल के शुरुआती उतार-चढ़ाव के बाद अमेरिका और भारत के बीच द्विपक्षीय संबंध निर्बाध गति से आगे बढ़ रहे हैं। इसका श्रेय तीन महत्वपूर्ण घटनाओं को दिया जा सकता है। जुलाई 2009 में हिलेरी क्लिंटन की भारत यात्रा, नवंबर 2009 में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की ओबामा प्रशासन के प्रथम राजकीय अतिथि के रूप में वाशिंगटन यात्रा और नवंबर 2010 में ओबामा की भारत यात्रा। हिलेरी क्लिंटन की यात्रा ने भारत-अमेरिका संबंधों को आगे बढ़ाने के लिए रोड मैप तय कर दिया। उन्होंने भारत को आश्वासन दिया कि परमाणु समझौते का समय पर कार्यान्वयन किया जाएगा। उन्होंने भारत के साथ हथियार सौदों के लिए कुछ पहल भी की। कुल मिलाकर उनकी यात्रा से इस उपमहाद्वीप में अमेरिकी नीति में संपादित परिवर्तन संबंधी भारत की सभी आशंकाएँ दूर हो गईं। इसके बाद प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ओबामा प्रशासन के प्रथम राजकीय अतिथि के रूप में वाशिंगटन यात्रा पर गए। उन्हें दिया गया यह सर्वोच्च सम्मान इस बात का प्रमाण है कि अमेरिका भारत को उभरती हुई विश्व शक्ति के साथ-साथ अपना नया करीबी मित्र देश मानता है। इस यात्रा के दौरान दोनों राष्ट्र प्रमुखों के बीच हुई शिखर वार्ता से स्पष्ट था कि ओबामा प्रशासन भारत के साथ रणनीतिक संबंधों को मजबूत बनाना चाहता है। जॉर्ज बुश जूनियर के रास्ते पर चलते हुए ओबामा ने डॉ॰ मनमोहन सिंह के साथ एक संयुक्त प्रेस कान्फ्रेंस में भारत को 'उन्नत परमाणु तकनीक (Advanced Nuclear Technology) वाला देश' बताया और परमाणु प्रसार के खिलाफ अभियान में उसका सहयोग मांगा। दोनों देशों के बीच कृषि और शिक्षा क्षेत्र के लिए कुछ ठोस कदम भी उठाए गए। चीन की तरफ अमेरिका के रणनीतिक झुकाव के बारे में बराक ओबामा ने स्पष्ट किया कि एशिया में अमेरिका का ध्यान विश्व शक्ति के रूप में उभरते हुए भारत पर है न कि चीन पर। उन्होंने इस क्षेत्र में शांति और स्थिरता के लिए भारत की भूमिका को महत्वपूर्ण बताया। ओबामा के इस रुख से कश्मीर मुद्दे पर भारत की सारी आशंकाएँ खत्म हो गईं।

नवंबर 2009 में मनमोहन की वाशिंगटन यात्रा से लेकर नवंबर 2010 में ओबामा की भारत यात्रा तक कई महत्वपूर्ण घटनाएँ हुई हैं। हालाँकि अमेरिका आतंकवाद के खिलाफ अपनी लड़ाई में पाकिस्तान को अहम देश मानता है लेकिन उसने उसके खिलाफ सख्त खैया भी अपनाया हुआ है। उसने स्पष्ट कहा है कि यदि आतंकवादी संगठनों को खत्म करने में पाकिस्तानी कदम अप्रभावी और अप्रत्याप्त साबित हुए तो वह भारत या अफगानिस्तान के खिलाफ काम करने वाले अल-कायदा और तालिबान के आतंकवादी ठिकानों पर कार्रवाई करेगा। वह पाकिस्तान से 26/11 के दोषियों के खिलाफ कार्रवाई में भारत की सहायता करने का आग्रह करता रहा है। अक्टूबर 2010 में वाशिंगटन में आयोजित उच्चस्तरीय रणनीतिक वार्ता में अमेरिका ने पाकिस्तान के उस अनुरोध को ठुकरा दिया कि उसके साथ भी भारत की तरह नागरिक परमाणु समझौता किया जाए। हिलेरी क्लिंटन ने भारत और अफगानिस्तान के खिलाफ पाकिस्तान द्वारा अपने बचाव के रूप में आतंकवाद का इस्तेमाल किए जाने संबंधी खबर पर चिंता व्यक्त की।

ओबामा की 6-9 नवंबर, 2010 तक भारत यात्रा ऐसे समय में हुई जब वे कांग्रेस के मध्यावधि चुनावों में अपनी पार्टी के निराशाजनक प्रदर्शन से परेशान थे। इन चुनावों के कारण कांग्रेस में डेमोक्रेटिक पार्टी का सफाया हो गया था। कुछ लोगों ने इस हार की वजह ओबामा की आर्थिक नीतियों की विफलता बताई। इसलिए उम्मीद लगाई गई थी कि उनकी भारत यात्रा की प्राथमिकता भू-राजनीतिक की बजाय आर्थिक अधिक होगी। इस तरह की व्याख्या स्वाभाविक थी क्योंकि उनके साथ अमेरिका से मुख्य कार्यकारी अधिकारियों और कॉर्पोरेट प्रमुखों की अब तक की संभवतः सबसे बड़ी टीम आई थी लेकिन ओबामा ने तीन दिवसीय भारत यात्रा के दौरान अपनी घोषणाओं से सबको चकित कर दिया। उनकी कुछ घोषणाएँ रणनीतिक रूप से बहुत महत्वपूर्ण और अभूतपूर्व थीं। उन्होंने घोषणा की कि भारत उभरते हुए राष्ट्र की बजाय विश्व शक्ति के रूप में उभर चुका है। उन्होंने यह भी ऐलान किया कि अमेरिका पुनर्गठित संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (United Nations Security Council – UNSC) में स्थायी सदस्य के रूप में भारत की उम्मीदवारी का समर्थन करेगा। इस तरह ओबामा ने भारत के प्रति अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट कर दिया। संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता के लिए भारत की आकांक्षाओं का समर्थन कर ओबामा ने संकेत दिया कि अमेरिका के लिए भारत महत्वपूर्ण है। उन्होंने भारत के बढ़ते वैश्विक प्रभाव की भी सराहना की।

रणनीतिक क्षेत्र में वाणिज्यिक वृद्धि के लिए ओबामा ने अमेरिकी निर्यात प्रतिबंधों में ढील देने की इच्छा व्यक्त की जिससे दोनों देश रक्षा एवं अंतरिक्ष जैसे उच्च प्रौद्योगिकी (High-Tech) क्षेत्रों में सहयोग कर सकेंगे। उल्लेखनीय है कि 1998 में भारत के परमाणु परीक्षणों के बाद अमेरिका ने भारत के इन क्षेत्रों से संबंधित संगठनों को काली सूची में डाल दिया था। ओबामा ने भरोसा दिलाया कि वह रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (DRDO), भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (ISRO) और भारत डायनामिक्स लिमिटेड (BDL) जैसे भारत के रक्षा एवं अंतरिक्ष से संबंधित संगठनों को अमेरिका की एटिटी लिस्ट से हटा देंगे। इससे ये संगठन अपना कार्य सुचारु रूप से कर सकेंगे।

ओबामा की यात्रा के दौरान उनके प्रशासन से दूसरा महत्वपूर्ण संकेत यह आया कि अमेरिका 45 सदस्यीय नाभिकीय अमूर्तिकर्ता

समूह (Nuclear Suppliers Group – NSG) सहित चार बहुपक्षीय निर्यात नियंत्रण संगठनों (Multilateral export Control Regimes) में भारत की पूर्ण सदस्यता का समर्थन करेगा। इससे भारत के लिए इन संगठनों के सदस्य देशों से दोहरे इस्तेमाल वाली टेक्नोलॉजी हासिल करना आसान हो जाएगा। इस तरह के अन्य संगठन हैं: प्रक्षेपास्त्र प्रौद्योगिकी निबंधन व्यवस्था (Missile Technology Control Regime – MTCR), ऑस्ट्रेलिया ग्रुप (Australia Group) और वासेनार प्रावधान (Wassenaar Arrangement)। ये संगठन रासायनिक, जैविक और परंपरागत हथियारों और दोहरे इस्तेमाल वाली टेक्नोलॉजी के क्षेत्र में काम करते हैं। इन संगठनों की सदस्यता से न केवल भारत की रणनीतिक क्षमताएँ और व्यापार बढ़ेगा बल्कि वह निर्यात नियंत्रण नियमों के निर्माण में दखल भी दे सकेगा। इन संगठनों में भारत का प्रवेश सुगम बनाने के लिए अमेरिका ने आश्वासन दिया है कि वह इनके सदस्यों को अपने मुख्य सिद्धांतों के अनुरूप एक समन्वयशील सदस्यता मानदंड विकसित करने के लिए प्रोत्साहित करेगा।

अपनी यात्रा के दौरान ओबामा ने अमेरिका और भारत के साझेदारी में दोनों देशों के बीच व्यापार बढ़ाने पर भी जोर दिया। इसके परिणामस्वरूप अमेरिकी और भारतीय कंपनियों ने 15 अरब डॉलर के विभिन्न सौदों पर दस्तखत किए। इन सौदों में 10 सी-17 ग्लोब मास्टर मिलिटरी ट्रांसपोर्ट एअरक्राफ्ट्स की बिक्री शामिल है। भारतीय उद्योग की सराहना करते हुए उन्होंने कहा कि वह अमेरिकी रोजगारों को छीनने की बजाय नए रोजगारों के सृजन में मदद कर रहा है। 26/11-नरसंहार का केन्द्र मुंबई का ताज होटल था। इस होटल में ओबामा का ठहरना इस मायने में सांकेतिक था कि दोनों देशों को किसी भी हालत में आतंकवादियों के सामने झुकना नहीं चाहिए। उन्होंने 2008 की उस भयावह घटना के शिकार लोगों के प्रति अमेरिकी जनता की तरफ से सहानुभूति व्यक्त की।

पाकिस्तान और कश्मीर के संबंध में उनका दृष्टिकोण इस बार अधिक स्पष्ट था। उन्होंने पाकिस्तानी भर्ती से आतंकवादी गतिविधियाँ चलाने वाले भारत-निरोधी आतंकवादी संगठनों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई न करने पर पाकिस्तान को फटकार लगाई। हिलेरी क्लिंटन ने भी भारत के खिलाफ पाकिस्तान की गलत कार्रवाई की स्वीकार किया। उन्होंने इस बात पर संदेह व्यक्त किया कि पाकिस्तान ने भारत के खिलाफ आतंकी कार्रवाई बंद कर दी है। राष्ट्रपति बराक ओबामा ने अपने यात्रा कार्यक्रम में पाकिस्तान को जगह नहीं दी फिर भी भारत इस बात से चिंतित है कि अमेरिका आतंकवाद से लड़ने के नाम पर पाकिस्तान की हथियार और वित्तीय सहायता दे रहा है। उसे आशंका है कि समुचित जाँच पड़ताल के बिना दिए जा रहे इन हथियारों का इस्तेमाल भारत के खिलाफ किया जा सकता है।

ओबामा ने अफगानिस्तान के पुनर्निर्माण में साझेदार के रूप में भारत की भूमिका का समर्थन किया। कश्मीर मुद्दे को उन्होंने एक द्विपक्षीय समस्या बताया। ऐसा लगता है कि अमेरिका चीन की संवेदनशीलता के प्रति बहुत सतर्क है इसलिए वह भारत और चीन के बीच कुछ विवादामय मुद्दों पर चुप है। अमेरिका के स्वाभाविक साझेदार भारत को उसकी यह नीति पसंद नहीं है। इस संदर्भ में जूनियर बुश का दृष्टिकोण इसके ठीक विपरीत था। अपनी तीन दिवसीय यात्रा के दौरान अमेरिकी राष्ट्रपति ने लगभग हर वह काम किया जो भारत चाहता था। उन्होंने न केवल भारत के बढ़ते महत्व की पुष्टि की बल्कि उसे नई वैश्विक शक्ति के रूप में स्वीकार भी किया। इस तरह बराक ओबामा अपने दो पूर्ववर्ती राष्ट्रपतियों की विरासत को ठोस रूप देते दिख रहे हैं। यह बात अलग है कि कुछ मुद्दों पर उनका दृष्टिकोण भिन्न है।

15.4 द्विपक्षीय संबंधों का हालिया संवर्धन (Current Status of Bilateral Relations)

भारत-अमेरिका संबंधों में विगत एक दशक में उल्लेखनीय बदलाव आया है। दोनों देशों ने 21वीं शताब्दी की वैश्विक चुनौतियों का सामना करने के लिए साझे आदर्शों में अपनी वचनबद्धता स्पष्ट की है और इन्हीं आधारों पर एशिया में समृद्धि, शांति और स्थिरता एवं पारस्परिक हितों के लिए संयुक्त राज्य-भारत वैश्विक भागीदारी का निर्माण हुआ। भारत-अमेरिका संबंधों को सशक्त बनाने के लिए दोनों देशों में व्यापक रूप से राजनैतिक सर्वानुमति प्रतिबिम्बित होती है। भारत और अमेरिका के बीच परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग के लिए किया गया समझौता द्विपक्षीय संबंधों के चरम बिंदु को दर्शाता है। सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक दोनों रूपों में भारत-संयुक्त राज्य संबंध और अधिक मजबूत हुए हैं। हाल के वर्षों में दोनों देशों के बीच निकट सम्पर्क बने हुए हैं। दोनों देशों के बीच अंतर्राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और पारस्परिक हितों के द्विपक्षीय विषयों पर संवाद स्थापित किये जा रहे हैं।

द्विपक्षीय सहयोग के प्रमुख क्षेत्र (Major Areas of Bilateral Cooperation)

भारत और अमेरिका अपने संबंधों का अनुपालन करने के लिए वचनबद्ध हैं जो वैश्विक समृद्धि और स्थिरता के विस्तार में सहायक सिद्ध होगा। 'बेहतर विश्व के लिए भारत-संयुक्त राज्य भागीदारी' (India and the United States Partnership for a Better World) शीर्षक से भारतीय प्रधानमंत्री और अमेरिकी राष्ट्रपति ओबामा द्वारा 24 नवम्बर, 2009 को जारी की गयी संयुक्त विज्ञप्ति में सहयोग के प्रमुख क्षेत्रों का उल्लेख किया गया था। दोनों देशों ने भारत-संयुक्त राज्य भागीदारी को 'वैश्विक शांति और सुरक्षा के लिए भागीदारी' (Partnership for Global Peace and Security) की संज्ञा दी और अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद से उत्पन्न

क्षेत्रीय और वैश्विक सुरक्षा के संकट को साझा संकट माना। संयुक्त वक्तव्य में व्यापार और निवेश, स्वच्छ एवं दक्ष ऊर्जा, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, अंतरिक्ष, उच्च प्रौद्योगिकी, शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि और आतंकवाद आदि विषयों पर प्रकाश डाला गया है। दोनों देशों ने 10 मिलियन अमेरिकी डॉलर के कोष के साथ एक ज्ञान पहल (Knowledge Initiative) का शुभारम्भ किया है। विश्वविद्यालयों के बीच सम्पर्क बढ़ाने के लिए तथा कनिष्ठ संकाय विकास (Junior Faculty Development) आदि के लिए कोष आवंटित किया जायेगा। आर्थिक, वित्तीय और निवेश संबंधित मुद्दों पर संबंधों को और अधिक मजबूत बनाने के लिए एक ढाँचा विकसित (To Develop a Framework for Cooperation on Trade and Investment) करने पर भी सहमति हुई है।

दोनों देशों ने नागरिक परमाणु समझौते के प्रावधानों को यथाशीघ्र संचालित करने तथा आगे बढ़ाने के लिए अपने मंत्रियों को दोहराया है। दोनों देशों ने वैश्विक अर्थव्यवस्था एवं वित्तीय संस्थानों को प्रभावशाली बनाने के लिए जी-20, विश्व बैंक (World Bank) तथा अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (International Monetary Fund – IMF) में सुधार करने तथा 21वीं शताब्दी की वास्तविकताओं की झलक मिल सके इसके लिए संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (United Nations Security Council) में सुधार की बात कही है।

दोनों देशों के बीच शिक्षा, अंतरिक्ष, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, ऊर्जा सुरक्षा और जलवायु परिवर्तन पर सहयोग हेतु विचार किया गया है। 24 नवम्बर, 2009 को दोनों देशों द्वारा ऊर्जा सुरक्षा, ऊर्जा दक्षता, स्वच्छ ऊर्जा और जलवायु परिवर्तन पर सहयोग को विस्तार देने के लिए एक संयुक्त विज्ञप्ति पर हस्ताक्षर भी किए गए।

अमेरिकी विदेश मंत्री (Secretary of State) हिलेरी क्लिंटन की भारत यात्रा के समय जुलाई 2009 में भारत एवं अमेरिका ने 'रणनीतिक संवाद' (Strategic Dialogue) की स्थापना की थी जिसका अनुपालन पाँच प्रमुख क्षेत्रों में गठित कार्यदलों द्वारा किया जाना है। इन क्षेत्रों में शस्त्र-प्रसार को रोकने के लिए रणनीतिक सहयोग, आतंकवाद का सामना, ऊर्जा और जलवायु परिवर्तन, शिक्षा और विकास, शिक्षा और महिला सशक्तीकरण आदि शामिल हैं। अर्थव्यवस्था, व्यापार और कृषि, व्यवसाय, व्यापार और खाद्य सुरक्षा, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, वैश्विक स्वास्थ्य चुनौतियाँ आदि सहयोग के अन्य क्षेत्र हैं। दोनों देशों ने प्रौद्योगिकी सुरक्षा समझौते पर हस्ताक्षर किये हैं। दोनों देशों ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से संबंधित परियोजनाओं के लिए 30 मिलियन अमेरिकी डॉलर का एक स्थायी कोष गठित किया है। इससे रक्षा सहयोग में सुविधा मिलने की संभावना है।

भारत-संयुक्त राज्य रक्षा सहयोग (India-US Defence Cooperation)

प्रधानमंत्री की अमेरिका यात्रा के समय दोनों देशों ने रक्षा सहयोग को पहले से विद्यमान सुरक्षा संवाद (Security Dialogue), सेवा स्तरीय आदान-प्रदान (Service Level Exchanges), रक्षा अभ्यासों (Defence Exercises) और व्यापार तथा प्रौद्योगिकी हस्तांतरण एवं सहयोग आदि के माध्यम से अनुपालन करने की सहमति दी थी।

भारत-संयुक्त राज्य रक्षा संबंधों की नई संरचना (New Framework for India-US Defence Relationship) पर दोनों देशों के बीच 28 जून, 2005 को हस्ताक्षर किये गये थे जबकि भारत-संयुक्त राज्य जहाजरानी सुरक्षा सहयोग की संरचना पर मार्च 2006 में हस्ताक्षर किये गये थे जिसके परिणामस्वरूप भारत-संयुक्त राज्य रक्षा संबंधों में गतिशीलता आयी है। दोनों देशों की तीनों सेनाओं के बीच संयुक्त अभ्यासों की तीव्रता बढ़ी है और उनके मानक (Standard) में सुधार आया है। संयुक्त राज्य से भारत ने राडार, जहाजरानी निगरानी विमान, परिवहन विमान और जहाजरानी प्रक्षेपास्त्र जैसे रक्षा उपकरणों की खरीद के लिए अनुबंध किया है। दोनों देश गुप्त सूचनाओं की साझेदारी, संयुक्त रूप से तकनीकी विकास तथा सुरक्षा एवं मानवीय मुद्दों का समाधान करने पर भी राजी हैं। नौवहन की सुरक्षा (Safety of Navigation) तथा व्यापार पर भी दोनों देश एकमत हैं। समुद्री डाके (Piracy) को रोकने, शस्त्रों एवं नशीली दवाओं (Drugs) की तस्करी रोकने पर भी दोनों देश मिलकर काम कर रहे हैं।

भारत-संयुक्त राज्य अंतरिक्ष सहयोग (India-US Space Cooperation)

भारत-अमेरिका के बीच बहुत पहले से अंतरिक्ष क्षेत्र में सहयोग किया जा रहा है। अंतरिक्ष क्षेत्र में सहयोग करने के लिए एक द्विपक्षीय संयुक्त कार्यकारी दल (Bilateral Joint Working Group) का गठन किया गया है। अंतरिक्ष क्षेत्र की संयुक्त गतिविधियों पर चर्चा करने के लिए यह एक मंच का कार्य करता है। 28 जुलाई, 2008 भारत ने नासा (National Aeronautics and Space Administration – NASA) के साथ चन्द्र अभियान के लिए को एक समझौते पर हस्ताक्षर किए थे। 22 अक्टूबर, 2008 भारत का प्रथम मानव रहित लूनर मिशन चन्द्रायन-1 सफलतापूर्वक श्रीहरिकोटा से को छोड़ा गया था और जिसमें नासा (NASA) के दो पेलोड लगे थे। एक मिनिअचर सिंथेटिक अपर्चर राडार (Miniature Synthetic Aperture Radar) चंद्रमा की सतह पर जमी बर्फ का खाका तैयार करने और दूसरा मून मिनेरलॉजी मैपर (Moon Mineralogy Mapper) चंद्रमा के खनिज संसाधनों का आकलन करने के लिए गया था। अंतरिक्ष क्षेत्र में सहयोग के अंतर्गत वैज्ञानिकों का आदान-प्रदान एवं उनके बीच सहयोग शामिल रहा है। दोनों देशों के बीच नैनो तकनीक, कार्बन/इकोसिस्टम मॉनिटरिंग, इन्टरनेशनल स्पेस स्टेशन, ग्लोबल नेविगेशन सैटेलाइट सिस्टम तथा अंतरिक्ष अनुसंधान के क्षेत्र में सहयोग किया जा रहा है।

शिक्षा के क्षेत्र में भारत और संयुक्त राज्य सहयोग (India-US Cooperation in Education Sector)

एक अनुमान के अनुसार लगभग 1,00,000 भारतीय मूल के छात्र अमेरिका के उच्च शिक्षण संस्थानों एवं विश्वविद्यालयों में अध्ययन कर रहे हैं। भारत-संयुक्त राज्य शिक्षा संवाद (India-US Education Dialogue) की घोषणा भारत और संयुक्त राज्य द्वारा 20 जुलाई, 2009 को की गयी थी। भारत एवं अमेरिका के उच्च शिक्षण संस्थाओं के बीच भागीदारी को बढ़ावा दिया जा रहा है। भारत के योग्य छात्रों को छात्रवृत्ति प्रदान करने के लिए 'आमर्त्य सेन छात्रवृत्ति कोष' (Amartya Sen Scholarship Fund) की संस्थापना दिसम्बर 2008 में हार्वर्ड विश्वविद्यालय में की गई। भारतीय अध्ययन केन्द्र की स्थापना पेंसिलवानिया विश्वविद्यालय में की गयी है। भारत सरकार ने विदेशों में भारतीय उच्च शिक्षा संवर्धन के लिए अनेक पहलों की हैं। छात्रवृत्तियाँ प्रदान करने की शुरुआत भी की गई है जिसमें निगमिय क्षेत्रों के माध्यम से दी जाने वाली छात्रवृत्तियाँ भी सम्मिलित हैं। संयुक्त राज्य के चिकित्सीय विद्यालयों में आयुर्वेद की शिक्षा और भारत-संयुक्त राज्य ई-शिक्षा सहयोग भी विद्यमान है। भारत से 103260 छात्र संयुक्त राज्य में अध्ययनरत हैं जो संयुक्त राज्य अमेरिका में अध्ययनरत कुल विदेशी छात्रों का 15.4 प्रतिशत है।

नवंबर 2009 में भारतीय प्रधानमंत्री की वाशिंगटन यात्रा के समय 'ओबामा-सिंह 21वीं शताब्दी ज्ञान पहल (Obama-Singh 21st Century Knowledge Initiative)' का शुभारम्भ किया गया था। भारत और संयुक्त राज्य ने नये फुलब्राइट समझौते पर हस्ताक्षर किये हैं। समझौते के अंतर्गत भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका छात्रवृत्ति राशि में बराबर-बराबर की भागीदारी करेंगे। फुलब्राइट-नेहरू छात्रवृत्ति उन भारतीय लोगों के लिए है जो अध्यापन अथवा अनुसंधान के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका जाते हैं।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में सहयोग (Cooperation in Science and Technology)

भारत और संयुक्त राज्य ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी समझौते (Science and Technology Agreement) पर अक्टूबर 2005 में हस्ताक्षर किए थे जो संयुक्त अनुसंधान तथा प्रशिक्षण (Joint Research and Training) और सार्वजनिक-निजी भागीदारी को बढ़ावा देता है। जुलाई 2009 में विज्ञान एवं तकनीक, अनुसंधान, विकास एवं नवोन्मेषण की संयुक्त उन्नति के लिए 30 मिलियन अमेरिकी डॉलर की सहायता से एक विज्ञान एवं तकनीकी कोष की स्थापना की गई है। 'अर्थ अप्रैजर्वेशन एण्ड अर्थ साइसेस' के लिए एक संयुक्त विज्ञान पर भू-विज्ञान मंत्रालय (Ministry of Earth Sciences - MOES) और यू एस नेशनल ओसिएनिक एण्ड एटमोस्फेरिक एडमिनिस्ट्रेशन (National Oceanic and Atmospheric Administration - NOAA) के बीच वर्ष 2010 में हस्ताक्षर किए गए थे। इसके तहत चक्रवात व सुनामी जैसी घटनाओं के अध्ययन, अनुसंधान और भविष्यवाणी पर संयुक्त रूप से कार्य किया जा रहा है। मौसम भविष्यवाणी के क्षेत्र में भी दोनों देश मिलकर काम कर रहे हैं। गणित के क्षेत्र में संयुक्त अनुसंधान किया जा रहा है। इसके लिए वर्चुअल मैथमैटिकल इंस्टीट्यूट (Virtual Mathematical Institute) की स्थापना की गई है।

स्वास्थ्य क्षेत्र में सहयोग (Cooperation in Health Sector)

दोनों देशों के बीच 'स्वास्थ्य संवाद (Health Dialogue)' की स्थापना जुलाई 2009 में की गयी थी जो 'भारत-यू एस रणनीतिक संवाद' (India-US Strategic Dialogue) का एक हिस्सा है। 'परम्परागत ज्ञान डिजिटल पुस्तकालय पहुँच के समझौते' [Traditional Knowledge Digital Library (TKDL) Access Agreement] पर सी एस आई आर, (भारत) और यू एस पेटेंट एण्ड ट्रेड मार्क कार्यालय द्वारा हस्ताक्षर किये गए हैं ताकि भारत के परम्परागत ज्ञान को घोटाले से बचाया जा सके। यू एस स्वास्थ्य विभाग और भारत के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के बीच एक समझौता ज्ञापन (Memorandum of Understanding) पर हस्ताक्षर किए गए हैं। इसके अलावा भारत-अमेरिका के बीच बाल एवं मातृ स्वास्थ्य, संक्रामक बीमारियों की रोकथाम तथा स्वास्थ्य संस्थाओं को मजबूत बनाने के लिए सहयोग किया जा रहा है।

आतंकवाद को रोकने के लिए सहयोग (Cooperation for Counter Terrorism)

दोनों देशों द्वारा वर्ष 2010 में भारत-यू एस आतंकवाद निरोधी सहयोग पहल (India-US Counter Terrorism Cooperative Initiative) संबंधी समझौते पर हस्ताक्षर किए गए थे जो आतंकवाद का सामना करने के लिए संयुक्त प्रयासों, सूचनाओं की भागीदारी और क्षमता निर्माण आदि को बल प्रदान करता है। आतंकवाद का सामना करने के लिए संयुक्त कार्य दल की स्थापना की गई है और मुम्बई आतंकी हमले के बाद दोनों देशों ने आतंकवाद को समाप्त करने का संकल्प व्यक्त किया है।

सांस्कृतिक संबंध (Cultural Relations)

भारतीय संगीत, नृत्य, कला तथा साहित्य अमेरिका में प्रसिद्ध हैं। अमेरिका का कैंनेडी सेंटर एवं भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद मिलकर भारतीय पर्व (Festival of India) का आयोजन करते हैं जिसमें उभरते हुए कलाकारों और कलाकृतियों पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित किया जाता है। समय-समय पर प्रदर्शिनियों, व्याख्यान और प्रदर्शनों का भी आयोजन किया जाता है। कैंनेडी सेंटर भारतीय पर्व (Festival of India) का शैक्षणिक कार्यक्रमों के माध्यम से प्रदर्शन करता है जिसकी पहुँच इण्टरनेट और उपग्रहों

के माध्यम से विद्यालयों तक बनी रहती है। दूतावास प्रमुख भारतीय पवों को मनाने के लिए विशेष आयोजन करता है भारतीय समुदाय संस्कृति के प्रोन्नयन के लिए सक्रिय रूप से कार्य करता है।

भारतीय-अमेरिकी समुदाय की भूमिका (Role of Indian-American Community)

2.84 मिलियन की संख्या वाला भारतीय-अमेरिकी समुदाय समृद्ध एवं राजनैतिक रूप से ताकतवर है और एक ऐसी ताकत के रूप में विकसित हुआ है जो दोनों देशों के बीच निकट और सशक्त संबंधों की कड़ी है। इस समुदाय ने हेनरी जे हाइड अधिनियम (भारत-अमेरिका परमाणु समझौता के कार्यान्वयन से संबंधित कानून) को काँग्रेस द्वारा सफलतापूर्वक पारित किये जाने में उल्लेखनीय योगदान दिया है। वस्तुतः परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोगों के लिए भारत और संयुक्त राज्य के बीच सहयोग के लिए समझौते पर हस्ताक्षर किये जाने में भी इसी समुदाय का योगदान है। अनेक भारतीय अमेरिका में उच्च स्तरीय पदों जैसे गवर्नर, संसद के प्रतिनिधि और प्रशासनिक पदों पर आसीन हैं। उनके सक्रिय सहयोग ने दोनों देशों के बीच संबंधों को उच्च स्तर पर ले जाने का काम किया है।

15.5 भारत-अमेरिका रणनीतिक संवाद (India-US Strategic Dialogue)

भारत के विदेश मंत्री श्री एस. एम. कृष्णा और अमेरिकी विदेश मंत्री (Secretary of State) हिलेरी क्लिंटन ने तृतीय वार्षिक अमेरिका-भारत रणनीतिक संवाद के लिए 13 जून, 2012 को वाशिंगटन में मुलाकात की। दोनों नेताओं ने वर्ष 2010 में आयोजित पहले रणनीतिक संवाद के बाद से द्विपक्षीय संबंधों में हुए उल्लेखनीय विस्तार और प्रगति की समीक्षा की। उन्होंने अमेरिका-भारत वैश्विक रणनीतिक भागीदारी को और स्थापक एवं गहन बनाने की प्रतिबद्धता व्यक्त की तथा साझी समृद्धि, शांति एवं स्थायित्व पर आधारित भावी दृष्टिकोण प्रस्तुत किया। इस रणनीतिक वार्ता में निम्नलिखित मुद्दे शामिल हैं- वैश्विक मुद्दे मंच (Global Issues Forum); विज्ञान और प्रौद्योगिकी संयुक्त आयोग बैठक (Science and Technology Joint Commission Meeting); आतंकवाद का मुकाबला करने पर संयुक्त कार्यकारी दल (Joint Working Group on Counter-Terrorism); उच्च शिक्षा संवाद (Higher Education Dialogue); साइबर परामर्श (Cyber Consultations); सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी कार्यदल (Information and Communication Technology Working Group); महिला सशक्तीकरण समूह (Women's Empowerment Group); आंतरिक सुरक्षा परामर्श (Homeland Security Consultations)।

भारत-अमेरिका संबंधों को साझे मूल्यों से ताकत और गतिशीलता मिलती है। दोनों देशों ने लोगों के बीच घनिष्ठ संबंधों को बढ़ावा देने और सार्वजनिक-निजी सहयोग संबंधित करने के कार्य को रणनीतिक संवाद के केन्द्र में रखने का निर्णय लिया है।

रणनीतिक सहयोग (Strategic Cooperation)

एशिया और हिंद महासागर क्षेत्र तथा प्रशांत क्षेत्र में शांति, स्थायित्व और समृद्धि के संदर्भ में अमेरिका और भारत का सामान्य दृष्टिकोण है और दोनों ही देश एक-दूसरे के साथ तथा इस क्षेत्र के अन्य देशों के साथ मिलकर कार्य करने के लिए तैयार हैं ताकि विकास हेतु एक मुक्त, संतुलित एवं समावेशी रूपरेखा विकसित की जा सके। भारत एवं अमेरिका ने पूर्व-एशिया शिखर सम्मेलन (East Asia Summit), आसियान क्षेत्रीय मंच (ASEAN Regional Forum) और आसियान रक्षा मंत्री स्तरीय बैठक (ASEAN Defence Minister Meeting) जैसे क्षेत्रीय मंचों के प्रति अपने समर्थन को स्पष्ट किया है। दोनों देशों ने जुलाई 2011 में आयोजित दूसरे रणनीतिक संवाद (Strategic Dialogue) के बाद आरंभ की गई भारत, अमेरिका और जापान के बीच त्रिपक्षीय संवाद के दो दौर संपन्न किए जाने तथा पूर्व-एशिया वार्ता (East Asia Dialogue) का स्वागत किया। संयुक्त राज्य अमेरिका ने क्षेत्रीय आर्थिक संपर्क व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने की दिशा में भारत द्वारा किए गए कार्यों की सराहना की। दोनों देश क्षेत्रीय व्यापार, पारगमन (Transit) और ऊर्जा सम्पर्क (Energy Linkages) को बढ़ावा देना चाहते हैं। हिलेरी क्लिंटन ने एशिया-प्रशांत के देशों के साथ भारत की बढ़ती अंतर्क्रिया को सही उठराया है। भारत ने हिंद महासागर तटीय क्षेत्रीय सहयोग संगठन (Indian Ocean Rim Association for Regional Cooperation - IOR - ARC) का वार्ता भागीदार बनने में अमेरिका की रुचि का स्वागत किया है। वर्तमान अध्यक्ष के रूप में भारत इस मुद्दे को आईओआर-एआरसी (IOR - ARC) के अन्य सदस्यों के साथ उठाएगा। अमेरिका और भारत ने अंतर्राष्ट्रीय कानून के अनुसरण में सामुद्रिक सुरक्षा (Maritime Security), अबाध व्यापार (Unimpeded Commerce), नौवहन की स्वतंत्रता (Freedom of Navigation) तथा सामुद्रिक क्षेत्र से संबंधित विवादों का शांतिपूर्ण समाधान (Peaceful Settlement of Maritime Disputes) किए जाने पर सहमति व्यक्त की है।

दोनों देश मादक पदार्थों की तस्करी पर रोक (Counter Narcotics), जलदस्युता का मुकाबला (Countering Piracy), समुद्री सुरक्षा (Maritime Security) एवं मानवीय सहायता/आपदा राहत (Humanitarian Assistance/Disaster Relief) जैसे विषयों पर द्विपक्षीय आदान-प्रदान एवं सूचना बाँटने सहित अन्य मुद्दों पर संपर्क करने हेतु सहमत हैं। सोमालिया तट पर जल दस्युता की समस्या

पर रोक लगाने के लिए दोनों सरकारें समन्वय कर रही हैं। दोनों देशों ने जल दरयुओं द्वारा बंधक बनाए जाने जैसी समस्या का समाधान करने में भी सहयोग करने की योजना बनाई है। दोनों देशों ने अफगानिस्तान के प्रति सतत् अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धता (Sustained International Commitment) के महत्व पर बल दिया है क्योंकि अब अफगानिस्तान अपने शासन, विकास और सुरक्षा की पूरी जिम्मेदारी ग्रहण करने जा रहा है। भारत और अमेरिका ने अफगानिस्तान के साथ सामरिक समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं। दोनों देश एक स्थिर, लोकतांत्रिक, एकीकृत (United), संप्रभु (Sovereign) एवं समृद्ध (Prosperous) अफगानिस्तान के लिए एक-दूसरे से सहयोग करना चाहते हैं। अफगानिस्तान के विकास को बढ़ावा देने हेतु कृषि, खनन, ऊर्जा, क्षमता निर्माण और अवसंरचना इत्यादि क्षेत्रों में मिलकर कार्य करना चाहते हैं। अफगानिस्तान की सफलता के लिए महिला आर्थिक सशक्तीकरण के महत्व को समझते हुए व्यावसायिक प्रशिक्षण एवं सशक्तीकरण पहल में दोनों भागीदारी कर रहे हैं।

दोनों देशों ने 2012 में शिकागो में आयोजित नाटो शिखर सम्मेलन में सुरक्षा अंतरण प्रक्रिया (Security Transition Process) में प्रगति और रूपांतरण दशक (Transformation Decade) (2015-2024) के दौरान अफगानिस्तान की सुरक्षा एवं विकास जरूरतों के प्रति सहभागी देशों की प्रतिबद्धता को आवश्यक बताया है। अमेरिकी विदेश मंत्री (Secretary of State) हिलेरी क्लिंटन ने नई दिल्ली में भारत द्वारा आयोजित किए जाने वाले अफगानिस्तान निवेश शिखर सम्मेलन (Afghanistan Investment Summit) का स्वागत किया है। दोनों देश दक्षिण एवं मध्य एशिया के जरिए संवर्धित क्षेत्रीय संपर्क व्यवस्था (Enhanced Regional Connectivity) को आगे बढ़ाना चाहते हैं। अफगानिस्तान में निजी निवेश और व्यापार को बढ़ावा देने हेतु ठोस उपाय किए जाने पर दोनों देश सहमत हैं। दोनों पक्षों द्वारा इस बात को भी स्वीकार किया गया है कि अपने आपको संरक्षित रखने की अफगानिस्तान की क्षमता निर्माण के अतिरिक्त अफगानिस्तान की सफलता इस बात पर भी निर्भर करती है कि राष्ट्रीय सुलह प्रक्रिया (National Reconciliation Process) अफगानिस्तान के नेतृत्व में हो। दोनों देशों ने माना कि अफगानिस्तान तथा क्षेत्रीय और वैश्विक सुरक्षा की सफलता के लिए अफगानिस्तान और पाकिस्तान में आतंकवाद एवं हिंसक, उग्रवाद को बढ़ावा देने के लिए विद्यमान सुरक्षित आश्रय स्थलों एवं बुनियादी ढाँचे को नष्ट किए जाने की आवश्यकता है। दोनों देशों ने पश्चिम एशिया के संबंध में भी बातचीत जारी रखने पर सहमति व्यक्त की।

भारत को सतत् सैन्य आधुनिकीकरण के प्रति अमेरिकी समर्थन के लिए दोनों देशों ने संवर्धित प्रौद्योगिकी अंतरण (Increased Technology Transfer), सहकारी संयुक्त अनुसंधान एवं विकास (Collaborative Joint Research and Development) तथा रक्षा सामग्रियों के सह-उत्पादन (Co-production of Joint Items) के जरिए रक्षा सहयोग को सुदृढ़ बनाने पर सहमति जतायी है। दोनों देशों के बीच राजनैतिक-सैन्य परामर्शों (Political-Military Consultations) की बहाली की गई है।

वाशिंगटन में फरवरी 2012 में आयोजित रणनीतिक सुरक्षा संवाद (Strategic Security Dialogue) जिसमें अंतर्राष्ट्रीय शस्त्र नियंत्रण, निःशस्त्रीकरण तथा अप्रसार जैसे विविध मुद्दों पर चर्चा की गई। मार्च 2012 में सियोल परमाणु सुरक्षा शिखर सम्मेलन (Seoul Nuclear Security Summit) के निष्कर्षों को दोनों देश सही मानते हैं। दोनों देशों ने निःशस्त्रीकरण सम्मेलन में विखण्डनीय पदार्थ नियंत्रण संधि (Fissile Material Cut-off Treaty) पर होने वाली वार्ताएँ शीघ्रताशीघ्र आरंभ किए जाने के प्रति अपना समर्थन दिया है। भारत ने 4 बहुपक्षीय निर्यात नियंत्रण व्यवस्थाओं-परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह, मिसाइल प्रौद्योगिकी नियंत्रण समझौता, वासेनर व्यवस्था और आस्ट्रेलिया समूह- में भारत की पूर्ण सदस्यता के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा दिए गए ठोस समर्थन की सराहना की है।

आतंकवाद का मुकाबला, आसूचना, आंतरिक सुरक्षा तथा साइबर-सुरक्षा (Counter Terrorism, Intelligence, Internal Security and Cyber Security)

आतंकवाद का मुकाबला करने में सहयोग और इससे संबद्ध आंतरिक सुरक्षा मुद्दों पर हुई प्रगति से आगे बढ़ते हुए अमेरिका और भारत ने एक विस्तृत कार्य योजना के प्रति अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त की है। इसका उद्देश्य सर्वोत्तम उपायों का आदान-प्रदान करना, कार्यात्मक नजरिए के आदान-प्रदान को सुविधाजनक बनाना तथा अपने-अपने देशों की सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु ठोस क्षमता निर्माण कार्यक्रमों (Concrete Capacity Building Programmes) को बढ़ावा देना शामिल है।

दोनों देश बंदरगाह एवं समुद्री सीमा से जुड़े मुद्दों, परिवहन, गैरकानूनी धन, नकली मुद्रा, साइबर अपराध, महानगर पुलिस व्यवस्था (Megacity Policing) और क्षमता निर्माण जैसे सुरक्षा से जुड़े सभी मुद्दों पर बातचीत करते रहते हैं। अमेरिका और भारत विज्ञान और प्रौद्योगिकी सहित सुरक्षा से जुड़े अन्य तकनीकी मुद्दों पर घनिष्ठ सहयोग जारी रखे हुए हैं। अमेरिका और भारत आतंकवाद का मुकाबला करने और विधि प्रवर्तन के लिए डिजिटल साक्ष्य एवं सूचना का प्रभावी एवं समयबद्ध आदान-प्रदान करने और समग्र सुरक्षा को बढ़ावा देने के लिए साइबर सुरक्षा से जुड़े सभी मुद्दों पर विचारों एवं सर्वोत्तम उपायों का आदान-प्रदान करने पर राजी हैं। दोनों देशों ने अमेरिकी विदेश मंत्रालय और भारतीय विदेश मंत्रालय के नेतृत्व में एक कार्यदल की स्थापना किए जाने पर अपनी सहमति व्यक्त की है जिसका उद्देश्य साइबर स्पेस (Cyber Space) और वैश्विक इंटरनेट शासन (Global Internet Governance) में अंतर्राष्ट्रीय मानदण्डों से संबंधित मुद्दों पर चर्चा करना है। यह कार्यदल साइबर स्पेस से संबंधित अन्य महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय

कार्यक्रमों के पूर्व विचार-विमर्श करने का एक मंच भी उपलब्ध कराएगा। भारत एवं अमेरिका साइबर सुरक्षा क्षेत्र में उत्कृष्टता केन्द्र (Centre of Excellence in Cyber Security) स्थापित किए जाने के संबंध में भारत के मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा लिए गए निर्णय और प्रस्तावित केन्द्र में भारत और अमेरिका के प्रमुख विश्वविद्यालयों के बीच संवाद स्थापित किए जाने पर सहमत हैं। खुफिया जानकारी के आदान-प्रदान (Intelligence Sharing), सूचना के आदान-प्रदान (Information Exchange), प्रचालनात्मक सहयोग (Operational Cooperation) तथा उन्नत आतंकवाद रोधी प्रौद्योगिकी एवं उपकरणों (Advanced Counter Terrorism Technology and Equipments) सहित अन्य माध्यमों से आतंकवाद को खत्म करने में एक-दूसरे को सहयोग कर रहे हैं।

ऊर्जा एवं जलवायु परिवर्तन (Energy and Climate Change)

स्वच्छ एवं नवीकरणीय ऊर्जा (Clean and Renewable Energy) तथा ऊर्जा संरक्षण एवं प्रभाविता (Energy Conservation and Efficiency) सहित समग्र ऊर्जा क्षेत्र में भारत-अमेरिका के बीच सहयोग किया जा रहा है। अमेरिका-भारत संयुक्त स्वच्छ ऊर्जा अनुसंधान एवं विकास केन्द्र (US-India Joint Clean Energy Research and Development Centre) के अंतर्गत वित्त पोषित किए जाने के लिए तीन सार्वजनिक-निजी संघों का चयन करने के लिए दोनों सरकारों द्वारा वार्षिक तौर पर 5-5 मिलियन अमेरिकी डॉलर का अंशदान करने पर सहमति हुई है और साथ ही चयनित संघ द्वारा निजी तौर पर भी इतनी ही राशि का अंशदान दिया जाता है। इसका उद्देश्य उन्नत जैव ईंधन (Advanced Bio Fuels), सौर ऊर्जा (Solar Energy) तथा भवनों में ऊर्जा प्रभाविता (Energy Efficiency in Buildings) जैसे क्षेत्रों में अनुसंधान एवं विकास को बढ़ावा देना है। स्वच्छ ऊर्जा प्रौद्योगिकियों को बढ़ावा देने के लिए यूएसएआईडी (USAID) तथा भारत के विद्युत मंत्रालय और भारत का नई एवं नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय (Ministry of New and Renewable Energy) के बीच 20 मिलियन अमेरिकी डॉलर का एक नई पंचवर्षीय तकनीकी सहायता हेतु भागीदारी की गयी है। दोनों देश भारत में शैल (Shale) तथा अन्य पारंपरिक गैस संसाधनों और हिंद महासागर सहित अन्य क्षेत्रों की हाइड्रोकार्बन क्षमताओं तथा वैश्विक ऊर्जा सुरक्षा पर इसके प्रभावों का आकलन करने के लिए विचार-विमर्श करते रहते हैं। भारत ने अमेरिका से द्रवित प्राकृतिक गैस (Liquefied Natural Gas - LNG) आयात किए जाने में रुचि जताई है और अमेरिका से भारत में इसका निर्यात किए जाने की अनुमति प्रदान करने का अनुरोध किया है।

दोनों देशों द्वारा जलवायु परिवर्तन से संबद्ध विविध कार्यक्रमों में व्यापक सहयोग किया जा रहा है। इसका उद्देश्य जलवायु परिवर्तन की समस्या के प्रति अनुकूलन स्थापित करना (Addressing Adaptation to Climate Change), वनों का स्थायी प्रबंधन करना, वन क्षरण पर रोक लगाना, अमेरिका-भारत हाइड्रोफ्लोरोकार्बन कार्य बल (US-India Task Force on Hydrofluorocarbons) बनाना तथा ब्लैक कार्बन (Black Carbon) क्षेत्र में अपने-अपने घरेलू अनुसंधान कार्यक्रमों को समर्थन देना है। दोनों देश दिसंबर 2011 में डरबन में आयोजित जलवायु परिवर्तन सम्मेलन में हुई प्रगति से संतुष्ट हैं। जलवायु परिवर्तन से संबद्ध संयुक्त राष्ट्र रूपरेखा अभिसमय (UN Framework Convention on Climate Change) के अंतर्गत संबंधित कार्रवाई के लिए डरबन मंच से संबद्ध तदर्थ कार्यदल (Adhoc Working Group on Durban Platform) के कार्यों तथा अन्य कार्यकलापों के जरिए जलवायु परिवर्तन की समस्या का समाधान करने के लिए दोनों देश प्रतिबद्ध हैं। अंतर्राष्ट्रीय नागर विमानन (International Civil Aviation) और समुद्री क्षेत्रों से होने वाले उत्सर्जनों की समस्या का समाधान करने के लिए उपयुक्त बहुपक्षीय निकायों के तहत अंतर्राष्ट्रीय सहयोग बढ़ाए जाने की आवश्यकता पर भी दोनों देश एकमत हैं।

शिक्षा और विकास (Education and Development)

अमेरिका-भारत उच्च शिक्षा संवाद (US-India Higher Education Dialogue) का विस्तार करने के फलस्वरूप दोनों देशों के बीच उच्च शिक्षा अनुसंधान एवं नवाचार तथा सामुदायिक कालेजों से संबंधित सहयोग को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है। वर्ष 2013 का वार्षिक उच्च-शिक्षा संवाद भारत में आयोजित होगा। ओबामा-सिंह ज्ञान पहल (Obama-Singh Knowledge Initiative) के अंतर्गत अनुदान दिए जाने का प्रावधान किया गया है, जिसका उद्देश्य विश्वविद्यालयों के बीच संपर्क एवं कनिष्ठ संकाय विकास (Junior Faculty Development) के जरिए अमेरिकी और भारतीय संस्थानों में शिक्षण, अनुसंधान और प्रशासन को सुदृढ़ बनाना है। नए प्रस्तावों के लिए दोनों देश अगले पाँच वर्षों के दौरान 5 मिलियन अमेरिकी डॉलर की राशि व्यय करने पर राजी हैं। छात्रों एवं विद्वानों के लिए फुलब्राइट-नेहरू कार्यक्रम तथा अन्य कार्यक्रमों के जरिए दोनों सरकारों द्वारा शैक्षणिक अवसरों एवं सहयोग हेतु भारत में 100 सामुदायिक कॉलेजों की स्थापना और सी. वी. रमन अभ्येतावृत्ति (C.V. Raman Fellowship) की घोषणा की गई है जिसके अंतर्गत 300 कनिष्ठ संकाय सदस्यों के पहले दल को डॉक्टरेट पश्चात् अनुसंधान (Post Doctoral Research) के लिए अमेरिकी उच्च शिक्षा संस्थानों में भेजा जाएगा। भारतीय विश्वविद्यालयों में अधिक से अधिक अमेरिकी छात्रों को आकर्षित करने के लिए भारत के नए कनेक्ट टू इण्डिया कार्यक्रम (Connect to India Programme) के जरिए सूचना का प्रसार

और शैक्षिक एवं अनुसंधान सहयोग के लिए एक मंच के रूप में भारत द्वारा उच्च शिक्षा वेब पोर्टल (Higher Education Web Portal) शुरू किया गया है। महिलाओं के सामाजिक एवं आर्थिक सशक्तीकरण, राजनैतिक सहभागिता, बाल शिक्षा, महिलाओं एवं बालिकाओं के लिए कौशल विकास से संबंधित संस्थागत संबंधों और आदान-प्रदान को बढ़ावा दिया जा रहा है।

आर्थिक व्यापार और कृषि (Economic Trade and Agriculture)

भारत एवं अमेरिका के बीच वस्तुओं और सेवाओं के व्यापार में लगातार वृद्धि हो रही है और आशा है कि वर्ष 2012 के अंत तक यह आँकड़ा 100 बिलियन अमेरिकी डॉलर तक पहुँच जाएगा। भारत में दो बिलियन अमेरिकी डॉलर की स्थाई निधि के साथ प्रथम अवसंरचना ऋण कोष (First Infrastructure Debt Fund) की स्थापना की गई है जिसमें अमेरिकी वित्तीय संस्थानों की भी भागीदारी है। अवसंरचना क्षेत्र में एक ट्रिलियन अमेरिकी डॉलर का निवेश करने की भारत की योजना है। इसमें अमेरिकी कम्पनियों भी भागीदारी करेगी। व्यापार और निवेश को बढ़ावा देने के उपाय किए गए हैं। इन उपायों में व्यावसायिक और निवेशकों की आवाजों को सुविधानजनक बनाना तथा अनुसंधान और नवाचार को प्रोत्साहन देना शामिल है जिससे दोनों देशों के बीच आर्थिक भागीदारी और सुदृढ़ होगी। भारत एवं अमेरिका ने उच्च मानक वाली द्विपक्षीय निवेश संधि (Bilateral Investment Treaty) संपन्न करने की दिशा में कदम बढ़ाया है जिससे कि आर्थिक संबंधों को गहन बनाकर निवेशकों की विश्वास बहाली और दोनों देशों के बीच आर्थिक विकास को बढ़ावा दिया जा सके।

फरवरी 2012 में अमेरिकी श्रम मंत्रालय एवं भारत के श्रम और रोजगार मंत्रालय के बीच कौशल विकास (Skill Development), युवा विकास, व्यावसायिक सुरक्षा एवं स्वास्थ्य (Health) तथा खनन सुरक्षा एवं स्वास्थ्य (Mining Safety and Health) से संबंधित समझौता संपन्न हुआ है। कृषि संवाद (Agriculture Dialogue) में यथा परिकल्पित कृषि विशेषकर कृषि उत्पादकता बढ़ाने से संबंधित अनुसंधान, विकास और नवाचार (Innovation) हेतु सहयोग किया जा रहा है। कृषि अनुसंधान के लिए भारत और अमेरिका के कृषि विश्वविद्यालयों के बीच सहयोग और हैदराबाद स्थित राष्ट्रीय पौध स्वास्थ्य प्रबंधन संस्थान (National Institute of Plant Health Management) में क्षेत्रीय उत्कृष्टता केन्द्र (Regional Centre of Excellence) की स्थापना करने में सहयोग किया जा रहा है। 21वीं सदी में शहरी चुनौतियों एवं उनके समाधानों पर चर्चा करने तथा दोनों देशों के लोगों के बीच बेहतर आर्थिक संबंध, समझबुझ और मैत्री को बढ़ावा देने के उद्देश्य से 2012 के अंत में 'नगरों के बीच संवाद (Conversation between Cities)' आयोजित करने की भारत की योजना है।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी, स्वास्थ्य और नव-प्रवर्तन (Science and Technology, Health and Innovation)

भारत एवं अमेरिका के बीच बुनियादी एवं अनुप्रयुक्त विज्ञान (Basic and Applied Sciences), वायुमण्डल, पर्यावरण एवं पृथ्वी विज्ञान, स्वास्थ्य सेवाएँ, सामाजिक प्रभाव हेतु तकनीकी व्यवसायीकरण को सुविधानजनक बनाए जाने तथा विज्ञान एवं इंजीनियरिंग क्षेत्र में महिलाओं को आगे बढ़ाने जैसे मुद्दों पर सहयोग एवं विचार-विमर्श किया जा रहा है। किसानों के उत्पादों को ताज़ा बनाए रखने के लिए शीत भण्डार गृह (Cold-Storage) का निर्माण करने संबंधी भागीदारी भी इसमें शामिल है। अमेरिका-भारत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंच (US-India Science and Technology Forum) 11 हजार भारतीय एवं अमेरिकी वैज्ञानिकों तथा प्रौद्योगिकीविदों (Technologists) को एक साथ लाने में सफल रहा है।

सामाजिक चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोग पर दोनों देशों के विश्वविद्यालयों एवं संस्थानों के बीच किए जाने वाले सहयोग के लिए इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग तथा अमेरिकी राष्ट्रीय विज्ञान फाउण्डेशन (US National Science Foundation) के बीच संयुक्त वित्त पोषण हेतु पहल की गई है जिसके फलस्वरूप वन्य जीव प्रबंधन, वायु गुणवत्ता, जल सततता, स्वास्थ्य एवं स्मार्ट इलेक्ट्रिक ग्रिडों इत्यादि के क्षेत्र में सहयोग किया गया है। कैलीफोर्निया इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी की 30 मीटर लम्बी दूरबीन परियोजना के लिए 100 मिलियन अमेरिकी डॉलर से अधिक राशि की भारत की प्रतिबद्धता; सिविल स्पेस कार्यदल के तहत मौसम एवं मानसून पूर्वानुमान, जलवायु परिवर्तन से संबंधित सूचनाओं का आदान-प्रदान तथा 100 मिलियन अमेरिकी डॉलर के भारतीय योगदान से एक लेजर इण्टरफेरोमीटर ग्रेविटेशनल वेब ऑब्जर्वेटरी का विकास करने हेतु अमेरिकी राष्ट्रीय विज्ञान प्रतिष्ठान एवं भारतीय परमाणु ऊर्जा विभाग और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के बीच एक परियोजना की शुरुआत की गई है। दोनों देश भूमिजल सूचना प्रणालियों (Underground water Information Systems) एवं निर्णय सहायक प्रणालियों (Decision Support Systems) का अध्ययन करने में सहयोग कर रहे हैं जिसका उद्देश्य भूमिजल संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोग करना है।

उन्नत अनुप्रयोगों के विकास हेतु वैश्विक रिंग नेटवर्क (Global Ring Network for Advanced Applications Development - GLORIAD) तथा भारत एवं अमेरिका के बीच आँकड़ों के तीव्र प्रवाह के लिए यू.एस.-भारत उन्नत विज्ञान एवं शिक्षा नेटवर्क

(US-India Advanced Science and Education Network) की शुरुआत की गई है।

टीकाकरण कार्ययोजना (Vaccine Action Plan) के 25 वर्ष पूरे हो चुके हैं। यह दोनों देशों के बीच एक सहकारी अनुसंधान उपक्रम है। वैश्विक रोग निदान केन्द्र भारत (Global Disease Detection Centre India) की भी स्थापना की गई है। भारत के जैव प्रौद्योगिकी विभाग और अमेरिकी स्वास्थ्य एवं मानव सेवा मंत्रालय के बीच स्टेम कोशिका पुनरुत्पादक औषधि अनुसंधान (Stem Cell Regenerative Medicine Research) किया जा रहा है। अमेरिकी स्वास्थ्य एवं मानव सेवा मंत्रालय तथा भारत के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय के बीच मधुमेह अनुसंधान पर सहयोग किया जा रहा है।

सहस्राब्दि गठबंधन (Millennium Alliance) स्थापित करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय विकास हेतु संयुक्त राष्ट्र अभिकरण (United States Agency for International Development – USAID) तथा भारतीय वाणिज्य एवं उद्योग परिसंघ (Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry – FICCI) के बीच सहयोग किया गया है। यह गठबंधन भारतीय सृजनात्मकता, विशेषज्ञता और संसाधनों का उपयोग करने से संबंधित एक नई विकास अवधारणा है जिसके जरिए भारत और संपूर्ण विश्व में कमजोर तबकों के लाभार्थ कार्य किया जाता है।

वैश्विक भागीदारी (Global Partnership)

भारत एवं अमेरिका के बीच विकास एवं क्षमता-निर्माण के लिए अंतर्राष्ट्रीय भागीदारी पहल (The Initiatives for International Partnership for Development and Capacity Building) को कार्यान्वित किया गया है। "ओपन गवर्नमेंट प्लेटफॉर्म" (Open Government Platform – OGP) नामक मुक्त स्रोत वेब पोर्टल (Open Source Web Portal) की मार्च महीने में शुरुआत की गई है। इसका विकास पाददर्शी सरकार से संबंधित भारत-अमेरिका संवाद के तहत किया गया है। ओजीपीएल के जरिए कोई भी देश नि:शुल्क सॉफ्टवेयर डाउनलोड कर सकता है और ऐसी साइट बना सकता है जो उसके नागरिकों को नवप्रवर्तन (Innovation), आर्थिक विकास तथा पारदर्शिता (Transparency) से संबंधित सरकारी आंकड़े उपलब्ध करा सके। रवाण्डा (Rwanda) से आरंभ करते हुए अन्य देशों में ओजीपीएल का विस्तार किए जाने की योजना है। चुनाव प्रबंधन में रुचि रखने वाले देशों के लिए क्षमता निर्माण एवं प्रशिक्षण संबंधी संयुक्त पहल भी की जा रही है। भारत एवं अमेरिका द्वारा बाल मृत्यु पर रोक लगाने के लिए एक वैश्विक आंदोलन-अ प्रॉमिस टू कीप (A Promise to Keep) की शुरुआत की जाएगी।

लोगों के बीच संपर्क (People to People Contact)

वाशिंगटन में एक सांस्कृतिक केन्द्र खोलने की भारत की योजना है। उल्लेखनीय है कि अमेरिका में रहने वाले लगभग 3 मिलियन अमेरिकी-भारतीय और विभिन्न अमेरिकी विश्वविद्यालयों में अध्ययनरत एक लाख से अधिक भारतीय छात्र अमेरिका-भारत संबंधों को मजबूती प्रदान करते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका ने एक नया ऑनलाइन लोक-हितैषी प्लेटफॉर्म (Online Philanthropy Platform) का शुभारंभ किए जाने की भी घोषणा की है जो अमेरिका और भारत के बीच जनसंपर्क बढ़ाएगा और भारत के गैर-सरकारी संगठनों के लिए अंशदान करने के बारे में सूचनाएं उपलब्ध कराएगा। अमेरिकी और भारतीय नागरिकों की आवाजों की अधिक सुविधाजनक बनाने के लिए वर्ष 2012 में अटलांटा में भारत द्वारा वाणिज्य दूतावास (Consulate) खोले जाने की योजना है।

भारत-अमेरिका संबंध

1. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए—

- (i) गुटनिरपेक्षता की नीति का अनुसरण करते हुए भारत ने किसी भी शक्ति गुट में शामिल होने के बजाय स्वतंत्र विदेश नीति को अपनाने का निर्णय लिया।
- (ii) शीत युद्ध काल में अमेरिका ने भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति को सोवियत समर्थक नीति बताया।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
- (3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

2. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए—

- (i) भारत ने हमेशा अमेरिका की साम्यवाद को सीमित करने की नीति को प्रति-तटस्थ रखा अपनाया।
- (ii) भारत ने शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति का अनुसरण करते हुए अमेरिका सोवियत संघ के साथ-साथ सभी देशों के साथ सहयोग करने की प्रयास किया।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
- (3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

3. निम्नलिखित में कौन-सा कथन सही नहीं है?

- (1) चीन द्वारा तिब्बत पर अधिकार करने पर भारतीय प्रधानमंत्री ने उसका खुलकर विरोध किया।
- (2) कोरियाई युद्ध के समय चीन को आक्रामक देश घोषित किए जाने का भारत ने विरोध किया।
- (3) सितंबर 1951 में अमेरिका द्वारा जापान के साथ शांति संधि करने के लिए सेन फ्रांसिस्को में आयोजित सम्मेलन में भारत ने भाग नहीं लिया।
- (4) 1950 के दशक में अमेरिका ने भारत को बड़ी मात्रा में खाद्यान्नों की आपूर्ति की।

4. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए—

- (i) 1956 में स्वेज नहर के राष्ट्रीयकरण के प्रश्न को लेकर ब्रिटेन, फ्रांस और इजराइल द्वारा मिस्र पर किए गए आक्रमण की भारत ने निंदा की।
- (ii) इस युद्ध को समाप्त करवाने के अमेरिकी प्रयासों को भारत ने पूरा समर्थन दिया।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
- (3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

5. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए—

- (i) भारत ने ग्रीस के संदर्भ में अमेरिका के आइज़नहावर सिद्धांत का विरोध किया।

- (ii) भारत ने लेबनान एवं जॉर्डन में अमेरिकी हस्तक्षेप की निंदा की।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
- (3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

6. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए—

- (i) वर्ष 1956 में सोवियत संघ द्वारा हंगरी में किए गए हस्तक्षेप को लेकर भारतीय प्रधानमंत्री को अप्रतिक्रियावादी रुख की भारतीय जनता ने कड़ी आलोचना की।
- (ii) सोवियत संघ के इस हस्तक्षेप के विरोध में संयुक्त राष्ट्र महासभा में लाए गए प्रस्ताव के पक्ष में भारत ने मतदान किया था।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
- (3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

7. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए—

- (i) गोवा पर पुर्तगाली अधिकार के संबंध में अमेरिका का रुख समर्थनकारी था।
- (ii) भारत द्वारा गोवा को मुक्त कराने के लिए की गई सैन्य कार्यवाही को संयुक्त राष्ट्र में अमेरिका द्वारा आलोचना की गई।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
- (3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

8. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए—

- (i) अक्टूबर 1962 में भारत-चीन युद्ध के समय भारत द्वारा अमेरिका से सहायता मांगने पर अमेरिका ने भारत को सशत सहायता के रूप में युद्ध सामग्री उपलब्ध कराई।

- (ii) 1964 में भारत-अमेरिका के बीच नई दिल्ली में संपन्न समझौते के तहत अमेरिका ने भारत को तारापुर में परमाणु संयंत्र स्थापित करने के लिए धन उपलब्ध करवाने के लिए सहमति व्यक्त की।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
- (3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

9. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए—

- (i) उत्तरी वियतनाम पर अमेरिकी बमबारी की भारत द्वारा तीव्र आलोचना करने के चलते अमेरिकी राष्ट्रपति ने अपनी आगामी भारत यात्रा स्थगित कर दी।

- (ii) लाल बहादुर शास्त्री के शासनकाल में भारत-अमेरिका संबंध अच्छे नहीं रहे।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
(3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

10. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए-

- (i) 1965 के भारत-पाक युद्ध के समय अमेरिका ने तटस्थ रवैया अपनाया।
(ii) 1965 के भारत-पाक युद्ध में अमेरिका ने पाक-चीन की बढ़ती प्रगाढ़ता के मद्देनजर चीन को औपचारिक रूप से युद्ध में हस्तक्षेप न करने की चेतावनी दी थी।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
(3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

11. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए-

- (i) वर्ष 1965 एवं 1971 के भारत-पाक युद्धों के समय अमेरिका ने खुलकर पाकिस्तान को सहायता की।
(ii) वर्ष 1979 में हेलसिंकी में हुए 35 देशों के सम्मेलन ने शीतयुद्ध को कम करके तनाव शीथिल्य को वास्तविक उत्पन्न किया।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
(3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

12. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए-

- (i) अक्टूबर 1981 में कानकून में हुए विकासशील देशों के शिखर सम्मेलन में इंदिरा गांधी ने अमेरिकी राष्ट्रपति रोनल्ड रेगन से मुलाकात की।
(ii) अप्रैल 1979 में अमेरिका ने पाकिस्तान को दी जाने वाली आर्थिक व सैन्य सहायता पर रोक लगा दी थी।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
(3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

13. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए-

- (i) 1985 में अमेरिका में पारित प्रेसलर संशोधन ने पाकिस्तान को सहायता देने से पहले राष्ट्रपति के लिए यह अनिवार्य कर दिया कि वह प्रमाणित करे कि पाकिस्तान के पास परमाणु शक्ति नहीं है।
(ii) पाकिस्तान ने 1991 से ही प्रेसलर संशोधन के विरुद्ध अभियान की शुरुआत कर दी।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
(3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

14. भारत-अमेरिका परमाणु समझौते के अनुसार भारत के लिए निर्धारित किए गए दायित्वों के संबंध में निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए-

- (i) भारत अपने सैन्य एवं असैन्य प्रतिष्ठानों की पहचान करेगा।
(ii) भारत परमाणु परीक्षणों पर स्वेच्छा से प्रतिबंध लगाएगा।
(iii) संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ मिलकर भारत विखण्डनीय सामग्री को नियंत्रित करने वाली संधि के लिए कार्य करेगा।
(iv) अमेरिका कांग्रेस की स्वीकृति से कानूनों को परिवर्तित करेगा।

उपरोक्त में कौन-सा/से प्रावधान सही है/हैं?

- (1) (i) और (ii) (2) (i), (ii) और (iii)
(3) (i) और (iii) (4) उपरोक्त सभी

15. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए-

- (i) भारत-अमेरिका परमाणु समझौते के अनुसार भारत ने अपने सैन्य परमाणु प्रतिष्ठानों को अंतर्राष्ट्रीय परमाणु कक्षा एजेंसी की निगरानी में रखने की बात को स्वीकारा।
(ii) वर्ष 1998 में भारत ने घोषणा की थी कि भविष्य में वह कोई और परमाणु परीक्षण नहीं करेगा।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
(3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

16. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए-

- (i) अक्टूबर 2010 में वाशिंगटन में आयोजित वार्ता में अमेरिका ने पाकिस्तान को उस अनुरोध को अस्वीकार कर दिया कि उसके साथ थी भारत को तरह नागरिक परमाणु समझौता किया जाए।
(ii) वर्ष 1998 के परमाणु परीक्षण के बाद अमेरिका ने भारत के रक्षा एवं अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी से जुड़े संगठनों को काली सूची में डाल दिया।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
(3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

17. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए-

- (i) नवंबर 2010 की भारत यात्रा के दौरान बराक ओबामा ने भारत के रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (डी आर डी ओ) तथा भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) को अमेरिका की एंटीटी लिस्ट में शामिल करने की बात स्वीकार कर ली।
(ii) इसी यात्रा के दौरान ओबामा ने 54 सदस्यीय नाभिकीय आपूर्तिकर्ता समूह में भारत की पूर्ण सदस्यता का समर्थन करने का आश्वासन दिया।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
(3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

18. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए—

- (i) योग्य भारतीय छात्रों को छात्रवृत्ति प्रदान करने के लिए पेंसिल्वानिया विश्वविद्यालय में दिसंबर 2008 में 'आमर्त्य सेन छात्रवृत्ति कोष' की स्थापना की गई।
(ii) भारतीय उच्च शिक्षा संवर्धन के लिए हार्वर्ड विश्वविद्यालय में भारतीय अध्ययन केन्द्र की स्थापना की गई।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
(3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

19. निम्नलिखित कथनों पर विचार कीजिए—

- (i) वर्ष 2010 में भारत के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय तथा अमेरिका की अंतरिक्ष एजेंसी नासा (NASA) के बीच 'अर्थ ऑब्जर्वेशन एण्ड अर्थ साइसेंस' के लिए एक संयुक्त विज्ञापन पर हस्ताक्षर हुए।

- (ii) कॅनेडी सेंटर और भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद मिलकर अमेरिका में 'भारतीय पर्व' का आयोजन करते हैं।

उपरोक्त कथनों में कौन-सा/से सत्य है/हैं?

- (1) केवल (i) (2) केवल (ii)
(3) (i) और (ii) दोनों (4) न तो (i) और न ही (ii)

20. निम्नलिखित कथनों में से कौन सा सही नहीं है?

- (1) भारत और अमेरिका आसियान रक्षा मंत्री स्तरीय बैठक और आसियान क्षेत्रीय मंच जैसे क्षेत्रीय मंचों के प्रति अपना समर्थन व्यक्त करते हैं।
(2) भारत ने हिंद महासागर तटीय क्षेत्रीय सहयोग संगठन (IOR-ARC) का सदस्य बनने के प्रति अमेरिकी रुचि का समर्थन किया है।
(3) भारत और अमेरिका ने उच्च मानक वाली द्विपक्षीय निवेश संधि संपन्न करने की दिशा में कदम बढ़ाया है।
(4) भारत-अमेरिका के बीच 'ओपन गवर्नमेंट प्लेटफॉर्म' नामक मुक्त प्रोत वेब पोर्टल की शुरुआत की गई है।

दृष्टि
The Vision

भारत-यूरोपीय संघ (India-European Union)

*** (इस टॉपिक का संबंध मुख्य परीक्षा के प्रश्नपत्र-2 से है। 'दृष्टि' द्वारा वर्गीकृत पाठ्यक्रम के 15 खंडों में से इसका संबंध भाग-7 से है।)

यूरोपीय संघ 27 देशों का आर्थिक एवं राजनीतिक संगठन है। ये मुख्यतः यूरोपीय देश हैं। यूरोपीय संघ की कुल आबादी लगभग 50 करोड़ तथा क्षेत्रफल लगभग 4 लाख 32 हजार वर्ग किलोमीटर है। वर्तमान 27 सदस्य देशों में ऑस्ट्रिया, बेल्जियम, बुल्गारिया, साइप्रस (Cyprus), चेक गणराज्य, डेनमार्क, इस्टोनिया, फिनलैंड, फ्रांस, जर्मनी, ग्रीक, हंगरी, आयरलैंड, इटली, लाटविया, लिथुआनिया, लक्जेंमबर्ग, माल्टा, नीदरलैंड, पोलैंड, पुर्तगाल, रोमानिया, स्लोवाकिया, स्लोवेनिया, स्पेन, स्वीडन, यूनाइटेड किंगडम शामिल हैं। उम्मीद की जा रही है कि जून 2013 में क्रोएशिया (Croatia) यूरोपीय संघ का 28वाँ सदस्य देश बन जाएगा। यूरोपीय संघ अपना कार्य यूरोपीय संसद, यूरोपीय परिषद्, यूरोपीय आयोग, यूरोपीय केन्द्रीय बैंक तथा यूरोपीय न्यायालय के माध्यम से करती है। यूरोपीय संघ की शुरुआत यूरोपीय कोयला एवं इस्पात समुदाय (European Coal and Steel Community-ECSC) एवं यूरोपीय आर्थिक समुदाय (European Economic Community-EEC) के रूप में क्रमशः 1951 एवं 1958 में हुआ था। शुरुआत में इसके 6 सदस्य थे। समय के साथ सदस्यों की बढ़ती गई। वर्तमान त्रिमंसे (यूरोपीय संघ) इसका गठन 1993 की मास्ट्रिख्ट संधि (Maastricht Treaty) के अंतर्गत 1 नवंबर 1993 को किया गया। यूरोपीय संघ ने कानूनी प्रावधानों के माध्यम से सारे सदस्य देशों के लिए एकल बाजार (Single Market) की स्थापना की है। यूरोपीय संघ की नीतियाँ यह सुनिश्चित करती हैं कि यूरोपीय संघ के अंतर्गत व्यक्ति, वस्तुओं, सेवाओं एवं पूँजी का मुक्त प्रवाह हो। व्यापार, आंतरिक नीतियाँ एवं न्याय से संबंधित सामान्य नीतियाँ तय की गई हैं। 1999 में यूरोपीय संघ के 12 सदस्य देशों द्वारा वित्तीय उद्देश्यों हेतु यूरोज़ोन (Eurozone) का गठन किया गया था। यूरोपीय संघ एकीकृत विदेश एवं सुरक्षा नीति के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय संबंधों का निर्धारण करता है।

यूरोपीय संघ आज विश्व का सबसे बड़ा क्षेत्रीय आर्थिक संगठन है। दूसरी ओर भारत जनसंख्या की दृष्टि से विश्व का दूसरा सबसे बड़ा देश है। इसकी अर्थव्यवस्था तेजी से आगे बढ़ रही है। भारत सूचना तकनीकी एवं सेवा के क्षेत्र में अग्रणी देश बनता जा रहा है। वैश्विक आर्थिक मंदी के दौर में भी भारतीय अर्थव्यवस्था अपनी गतिशीलता बनाए हुए है। भारत में आधारभूत संरचना के विकास में निवेश के प्रयास अवरुद्ध हैं। भारत की 1 अरब 20 करोड़ की आबादी पर विश्व के सभी बड़े देशों की नजर है। भारत में मध्यम वर्ग का आकार लगातार बढ़ता जा रहा है। इस मामले में यूरोप थोड़ी देर से भारतीय बाजार की क्षमता को समझ सका। भारत में एक बड़ा तबका कुशल मानव संसाधन का रूप धारण कर चुका है और भारतीय अर्थव्यवस्था दिनोदिन विश्व अर्थव्यवस्था के साथ एकीकृत होती जा रही है। भारत विश्व की एक आर्थिक महाशक्ति बनने की राह पर आगे बढ़ रहा है। इन सभी बातों से प्रभावित होकर यूरोपीय संघ की यूरोपीय सुरक्षा रणनीति दस्तावेज़ 2003 (European Security Strategy Document of 2003) में भारत के साथ अमेरिका, रूस, जापान, चीन एवं कनाडा की तरह सामरिक सहभागिता (Strategic Partnership) स्थापित करने की बात कही गई। आजकल सामरिक सहभागिता की समान मूल्य (Shared Value) और आपसी लाभ (Mutual Benefits) पर आधारित माना जाता है। विश्व में यूरोपीय संघ की जैसे-जैसे राजनीतिक एवं सामरिक हैसियत बढ़ती जा रही है वैसे-वैसे इस सामरिक भागीदारी की प्रकृति भी बदलती जा रही है। यूरोपीय संघ कई वर्षों तक भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार बना रहा एवं अभी भी प्रमुख निवेशक बना हुआ है। वह भारत के सामाजिक एवं आर्थिक विकास के क्षेत्रों में भी सहयोग कर रहा है। वर्तमान समय में भारत एवं यूरोपीय संघ सामरिक भागीदार हैं। लेकिन दोनों ने अभी तक संबंधों को सुदृढ़ बनाने की दिशा में अपनी क्षमताओं का पूर्ण उपयोग नहीं किया है। भारत की क्षमता (Capability) तथा यूरोपीय संघ की विशेषज्ञता (Expertise) का अब तक पूर्ण उपयोग नहीं किया जा सका है। दोनों के उद्देश्यों एवं काम करने के तरीकों में कई तरह की भिन्नताएँ हैं, लेकिन दोनों विश्व की शक्ति-राजनीति (Power Politics) में अपनी भूमिका सुनिश्चित करने के लिए आपसी सहयोग बढ़ाना चाहते हैं। जहाँ भारत नई तरीके से विश्व के साथ जुड़ रहा है वहीं यूरोपीय संघ वैश्विक महाशक्ति बनना चाहता है। शीतयुद्ध समाप्ति के बाद भारत की लगभग सारी सरकारों ने अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की वास्तविकताओं एवं यथार्थवाद पर ही बल देने का प्रयास किया है। पिछले कुछ वर्षों में भारत की अंतर्राष्ट्रीय राजनीति एवं अर्थव्यवस्था में धाक बढ़ी है। भारत का यह भी मानना है कि विश्व में अभी 6 ही शक्तियाँ हैं। इनमें अमेरिका, रूस, चीन, जापान, यूरोपीय संघ एवं भारत शामिल हैं। भारत का विश्व शक्ति के रूप में उभरना कुछ देशों के लिए खुशी की बात है तो कुछ देशों के लिए यह शंका का कारण भी बना हुआ है। फिलहाल भारत दक्षिण एशियाई क्षेत्र के साथ-साथ विश्व के अनेक मंचों पर आतंक के विरुद्ध युद्ध (War on Terror), परमाणु अप्रसार, जलवायु परिवर्तन, ऊर्जा सुरक्षा, विश्व व्यापार संगठन के मंच पर व्यापार वार्तालाप तथा संयुक्त राष्ट्र संघ सुधार से संबंधित गतिविधियों में शामिल है।

भारत एक तरफ तो वैश्विक मामलों में अपनी भूमिका बढ़ा रहा है दूसरी ओर सामरिक सहभागिता की स्थापना के बावजूद यूरोपीय संघ भारत के साथ अपने संबंधों को लेकर उतना संजोदा दिखाई नहीं पड़ रहा है जितना कि उससे उम्मीद की जाती है।

यूरोपीय संघ मूल्यों (Values) पर आधारित विदेश नीति का पालन करता है। यह विश्वास एवं सहयोग बढ़ाने तथा युद्ध रोकने के प्रयासों पर बल देता है। यह राजनीतिक रूप से प्रभावी, आर्थिक रूप से सशक्त तथा जनसांख्यिकी की दृष्टिकोण से विविध क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करना चाहता है। यह बहुपक्षीय अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में प्रभावी भूमिका निभाना चाहता है। इसलिए यूरोपीय संघ के हित में यह चाहता है कि एक मजबूत अंतर्राष्ट्रीय समाज का निर्माण हो, सामान्य रूप से कार्य करती अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएँ हो तथा कानून आधारित अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था हो। इन स्थितियों के उपलब्ध होने से यूरोपीय संघ को अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में प्रभावी भूमिका निभाने में आसानी होगी। यूरोपीय संघ ने अब तक मदद (aid), विकास, एवं मानवीय कार्यक्रमों के माध्यम से विश्व में नम्र शक्ति (Soft Power) के रूप में अपनी पहचान बनाई है। यूरोपीय संघ आज भी अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान हेतु मानवीय उपायों (Humanitarian Approach) पर बल देता है। यूरोपीय संघ की विश्व राजनीति में एशिया को उच्च स्थान प्राप्त है। इसकी एशियाई नीति लोकतंत्र को बढ़ावा, मानवाधिकारों की रक्षा, क्षेत्रीय समस्याओं का शांतिपूर्ण समाधान, सुरक्षा सुदृढ़ बनाना, व्यापार एवं निवेश का विकास, बाजार सुधार, गरीब देशों को विकास सहायता तथा युद्ध से क्षतिग्रस्त देशों के पुनर्निर्माण आदि पर आधारित है। फिलहाल एशिया के अंदर यूरोपीय संघ भारत एवं चीन पर विशेष ध्यान दे रहा है। इसका कारण आर्थिक गतिशीलता एवं भू-राजनीति है।

भारत-यूरोपीय संघ संबंध-ऐतिहासिक संदर्भ

(India-European Union Relations: Historical Perspective)

भारत एवं यूरोपीय देशों के बीच मजबूत सांस्कृतिक, सभ्यतागत एवं ऐतिहासिक संबंध रहे हैं। भारत एवं यूरोपीय संघ के बीच 15वीं शताब्दी से भी पूर्व से संबंध चले आ रहे हैं। इसी समय से पुर्तगाली, डच, अंग्रेज एवं फ्रांसिसी व्यापारियों ने भारत के साथ व्यापारिक संबंध कायम किए। स्वतंत्रतापूर्व भारत यूरोपीय देशों का उपनिवेश था। यूरोपीय विचारों से प्रभावित होकर भारत में स्वतंत्रता आंदोलन की शुरुआत हुई। स्वतंत्रता के बाद भी भारतीय राजनीतिक संस्कृति को प्रभावित करने में यूरोपीय विशेषकर ब्रिटिश विचारों का महत्वपूर्ण योगदान रहा। संसदीय लोकतंत्र, न्यायपालिका एवं नौकरशाही का गठन भारत में ब्रिटिश प्रणाली पर ही किया गया है। स्वतंत्रता के बाद भारत ने आत्मनिर्भरता (Self Reliance) पर बल देना शुरू किया और उसी के अनुसार बाहरी देशों के साथ अपने संबंध निर्धारित करना शुरू किया। शीतयुद्ध के दौर में हालाँकि भारत सोवियत संघ के काफी नजदीक रहा फिर भी इसने 1963 से ही यूरोपीय आर्थिक समुदाय (European Economic Community-EEC) के साथ संपर्क बनाए रखा। लेकिन इस संपर्क में मुख्यतः पर व्यापारिक-आर्थिक संबंधों पर बल दिया जाता था। जब यूरोपीय समुदाय दक्षिण एशिया को शीत युद्ध की नज़रों से देखने लगा तो आपसी संपर्क निम्नतम स्तर पर पहुँच गया। राजनीतिक वातावरण के बराबर होने लगी। लेकिन 1973 के वाणिज्यिक सहयोग समझौता (Commercial Cooperation Agreement-CCA) तथा 1980 के वाणिज्यिक एवं आर्थिक सहयोग समझौता (Commercial and Economic Cooperation Agreement-CECA) संपन्न होने से दोनों के बीच आपसी संपर्कों में थोड़ा सुधार आया। आगे चलकर यूरोपीय समुदाय भारत का मुख्य व्यापारिक सहयोगी बना। लेकिन यूरोपीय समुदाय द्वारा संरक्षणवादी नीतियाँ अपनाएँ जाने के फलस्वरूप आपसी व्यापार यूरोपीय समुदाय के पक्ष में झुका। राजनीतिक स्तर पर कश्मीर मुद्दे पर यूरोपीय समुदाय के विचार, मानवाधिकार, परमाणु अस्त्र जैसे कुछ ऐसे मुद्दे थे, जो भारत-यूरोपीय समुदाय के बीच आपसी संबंधों में कड़वाहट पैदा करते रहे। लेकिन 21वीं शताब्दी के शुरुआत में कुछ ऐसे परिवर्तन हुए जिसने भारत एवं यूरोपीय संघ के बीच आपसी संबंधों को निर्धारित करने का कार्य किया। सोवियत संघ के आर्थिक रूप से सशक्त न होने तथा यूरोपीय संघ के उभार ने भारत के समक्ष कई चुनौतियाँ एवं अवसर साथ लेकर आया। व्यवहारिकता (Pragmatism) एवं उत्तर-दक्षिण सहयोग (North-South Cooperation) पर आधारित भारत की नई विदेश नीति ने भारत-यूरोपीय संघ के बीच आपसी संबंधों को सुधारने का महत्वपूर्ण कार्य किया। उसके बाद भी भारतीय विदेश नीति का ध्यान यूरोपीय संघ से कहीं ज्यादा दक्षिण-पूर्व एशिया, खाड़ी के देश, मध्य एशिया, एवं अमेरिका पर रहा। लेकिन भारत की आर्थिक सुधार एवं विदेशी पूँजी की आवश्यकता ने यूरोपीय संघ के साथ संबंधों को सुधारना अवश्यभावी बना दिया।

भारत-यूरोपीय संघ सामरिक सहभागिता (India-European Union Strategic Partnership)

दिसंबर 1993 में यूरोपीय संघ के साथ सहयोग समझौता हस्ताक्षर करने के बाद भारत ने न केवल आर्थिक संबंध बल्कि राजनीतिक संबंध को भी आगे बढ़ाने का कार्य किया। सबसे पहले समान मूल्यों एवं आकांक्षाओं पर आधारित बहुपक्षीय एवं परिष्कृत सामरिक सहयोग के लिए जून 2000 में लिस्बन (Lisbon) में भारत-यूरोपीय संघ शिखर सम्मेलन हुआ। 2000 के बाद से दोनों के बीच नियमित वार्षिक शिखर बैठकें हो रही हैं। इसमें कई संयुक्त कार्यदल भागीदारी करते हैं। दोनों के बीच शिखर बैठकों में

क्षेत्रीय सुरक्षा (Regional Security), आतंक के विरुद्ध युद्ध (War on Terror), आर्थिक एवं सांस्कृतिक संबंधों को मजबूत बनाने जैसे विषय शामिल रहे हैं। जून 2004 में भारत-यूरोपीय संघ के बीच नई सामरिक सहभागिता समझौता (New Strategic Partnership Agreement) किया गया जिसमें मुख्य तौर पर सहयोग के लिए पाँच प्राथमिकता वाले क्षेत्रों की पहचान की गई है।

- अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में बहुपक्षीय सहयोग जिसके अंतर्गत संघर्ष रोकथाम (Conflict Prevention), आतंकवाद-रोधी सहयोग (Anti-terrorism Cooperation), अप्रसार (Non-Proliferation), लोकतंत्र को बढ़ावा, मानवाधिकारों की रक्षा पर बल देना।
- क्षेत्रवार वार्तालाप (Sectoral Dialogue) तथा संयुक्त तौर पर तैयार की गई विनियामक नीतियाँ (Regulatory Policies) के माध्यम से आर्थिक सहयोग को मजबूत बनाना।
- संयुक्त राष्ट्र द्वारा तय की गई सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों (Millennium Development Goals) की प्राप्ति के लिए विकास में सहयोग करना।
- बौद्धिक एवं सांस्कृतिक विनिमय (Intellectual and Cultural Exchange) में बढ़ोतरी करना।
- भारत-यूरोप संबंधों को सुधारने के लिए संस्थात्मक ढाँचा (Institutional Framework) में सुधार करना।

भारत ने यूरोपीय संघ के साथ अपने संबंधों को सुधारने की दिशा में कदम बढ़ाते हुए अपनी पहली रणनीति (Strategy) की उद्घोषणा की। इसमें इस बात को स्वीकार किया है कि सामरिक भागीदारी का निर्माण समान मूल्यों (Shared Values) तथा परस्पर लाभ (Mutual Benefit) के आधार पर की जाएगी। इसी पृष्ठभूमि में 8 नवंबर 2004 को हेग में पाँचवीं भारत-यूरोपीय शिखर वार्ता के दौरान भारत-यूरोप सामरिक भागीदारी की घोषणा की गई। भारत-यूरोपीय संघ सामरिक संबंध को एक नयी ताकत तब प्राप्त हुई जब सितंबर 2005 में नई दिल्ली के भारत-यूरोपीय संघ शिखर सम्मेलन के दौरान एक राजनीतिक घोषणा-पत्र के साथ व्यापक संयुक्त कार्य योजना (Joint Action Plan) अपनाया गया। आगे आने वाले शिखर सम्मेलनों के दौरान भी दोनों पक्षों ने इस भागीदारी और गहरा बनाने का निर्णय किया। यह बात दोनों पक्षों को समझ में आ गई कि राजनीतिक संबंधों को सुधारने बिना आर्थिक संबंधों को ठोस रूप नहीं दिया जा सकता है। आर्थिक संबंधों को राजनीतिक संबंधों से अलग नहीं किया जा सकता है। 2006 में यूरोपीय संघ की देश विशिष्ट रणनीति पत्र (Country Specific Strategy Paper) में भारत के साथ सहयोग की बात ने दोनों के बीच सहयोग के नए अवसर खोल दिए। सितंबर 2008 के मार्सिले (Marseille) शिखर सम्मेलन के दौरान नये क्षेत्रों में सामरिक सहभागिता को विस्तृत करने के लिए एक नई संशोधित संयुक्त कार्य योजना का अनुमोदन किया गया। 3 सितंबर 2009 में यूरोपीय संसद में भारतीय प्रतिनिधि मंडल को नियुक्ति से यह सहयोग और मजबूत हुआ। भारत-यूरोपीय संघ संबंध के संदर्भ में जहाँ राजनीतिक अभिजन (Political Elites) समान मूल्यों एवं सामाजिक संगठनों पर ध्यान केंद्रित करते हैं, वहीं ज्यादातर शिक्षाविद् (Academics) मानवाधिकारों, पर्यावरण, खाद्य सुरक्षा के संबंध में यूरोपीय संघ की सकारात्मक भूमिका पर बल देते हैं। लेकिन अब जबकि भारत एवं यूरोपीय संघ एक-दूसरे को नैसर्गिक सहयोगी (Natural Partner) मानते हैं ऐसे में यूरोपीय संघ की एशिया के प्रति नीति एवं सामरिक वार्तालाप को संस्थात्मक रूप देने में भारत के साथ संबंध निर्धारित करने में एक महत्वपूर्ण कारक सिद्ध होगा। इस आपसी संबंध की प्रवृत्ति द्विपक्षीय, क्षेत्रीय एवं वैश्विक महत्व के मुद्दों को सुलझाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करेगा।

भारत-यूरोपीय संघ सुरक्षा संबंध (Indian-European Union Security Cooperation)

भारत-यूरोपीय संघ के बीच सामरिक संबंधों को ठोस रूप दिया जाए इसके लिए जरूरी है कि दोनों के बीच आतंकवाद, निरस्त्रीकरण (Disarmament) तथा अप्रसार (Non-Proliferation) जैसे क्षेत्रीय सुरक्षा के मुद्दों पर विचार-विमर्श किया जाए। मई 2006 से शुरू हुई यूरोपीय संघ-भारत सुरक्षा वार्तालाप (The EU-India Security Dialogue) गंभीर विचार-विमर्श के लिए महत्वपूर्ण मंच के रूप में उभरा है। अमेरिका में 9/11 की आतंकवादी घटना तथा 13 दिसंबर 2001 की भारतीय संसद भवन पर आतंकवादी घटना ने आतंकवाद जैसे विषय को विश्व स्तर पर बहुत महत्वपूर्ण बना दिया। दोनों पक्षों के बीच आतंकवाद से संबंधित संयुक्त कार्य दल की नियमित बैठक हो रही है। इन बैठकों में मनी लाउंडरिंग (Money Laundering) तथा आतंकवादियों के वित्तीय श्रोतों पर रोक लगाने के उपायों पर चर्चा की जाती है। भारत ने युरोपोल (Europol) जैसी कई एजेंसियों से आतंकवादी घटनाओं को रोकने के लिए मदद मांगी है। यूरोपीय संघ एवं भारत के बीच 12वां शिखर सम्मेलन 10 फरवरी 2012 को नई दिल्ली में हुआ। इस बैठक में सामरिक संबंधों को ठोस रूप देने पर बल दिया गया। दोनों पक्षों ने सुरक्षा विशेषकर आतंकवाद-विरोधी उपाय, साइबर सुरक्षा (Cyber Security) तथा समुद्री डकैती (Piracy) रोकने पर विशेष जोर दिया। जनवरी 2012 में दोनों पक्षों ने राजनीतिक संबंध को मजबूत बनाने के लिए वार्षिक विदेश नीति वार्तालाप (Annual Foreign Policy Consultation) करने का निर्णय किया। दोनों पक्षों ने संयुक्त राष्ट्र आतंकवाद-रोधी समिति (United Nation Counter Terrorism Committee) की गतिविधियों की महत्ता को समझा है। भारत इस समिति का अध्यक्ष है। दोनों ही पक्ष अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद संबंधी व्यापक सविदा (Comprehensive Convention On International Terrorism) से संबंधित वार्तालाप को जल्द से जल्द निष्कर्ष पर पहुँचाना चाहते हैं।

भारत-यूरोपीय संघ आर्थिक एवं विकास सहयोग (Indian-European Union Economic and Development Cooperation)

भारत एवं यूरोपीय संघ दोनों एक ऐसे आर्थिक मॉडल को आगे बढ़ाना चाहते हैं जो समता को बढ़ावा दे। दोनों व्यापक रूप से समावेशी (Inclusive) विकास को बढ़ावा देना चाहते हैं। निर्गत (Output), पूंजी, मानव संसाधन, वस्तुओं एवं सेवाओं के व्यापार के संबंध में दोनों की अर्थव्यवस्थाएँ एक-दूसरे की संपूरक (Complementary) हैं। भारत एवं यूरोपीय संघ द्वारा प्रमुख तौर पर नागरिक उड़यन (Civil Aviation), विज्ञान एवं तकनीक, पर्यावरण, जलवायु परिवर्तन, ऊर्जा, क्षेत्रवार विकास (Sectoral Development) व्यापार, निवेश तथा परिवहन पर ध्यान दिया जा रहा है।

भारत-यूरोपीय संघ के बहुआयामी संबंधों (Multidimensional Relations) में व्यापार एवं निवेश (Trade and Investment) अपना प्रमुख स्थान बनाए हुए है। यूरोपीय संघ विकासशील देशों को अंतर्राष्ट्रीय व्यापार प्रणाली (International Trading System) में द्विपक्षीय, बहुपक्षीय तथा अधिमानों की सामान्यीकृत प्रणाली (Generalised System of Preferences-GSP) के माध्यम से भागीदारी का पक्षधर है जो विकासशील एवं अल्प विकसित देशों (Least Developed Countries) के उत्पादों को गैर-पारस्परिक आधार पर शुल्क छूट, (Duty Reduction) शुल्क मुक्त (Duty Free) तथा कोटा मुक्त (Quota Free) बाजार पहुँच सुनिश्चित करता है। भारत पहला देश था जिसने यूरोपीय संघ की अधिमानों की सामान्यीकृत प्रणाली (Generalized System of Preference-GSP) स्कीम का लाभ उठाया था, लेकिन कुछ अध्ययनों में यह बात साफ हुआ है कि संरचनात्मक अड़चनों (Structural Rigidities) एवं संवेदनशील वस्तुओं की सूची के कारण इस स्कीम का प्रभाव सीमित रहा है।

भारत-यूरोपीय संघ आर्थिक-सहयोग को 1993 के सहभागिता एवं विकास हेतु सहयोग समझौता (Cooperation agreement on Partnership and Development) तथा 2004 के यूरोपीय संघ-भारत सामरिक सहभागिता (The EU-India Strategic Partnership) से बल प्राप्त होता है। वार्षिक शिखर सम्मेलनों से भी इसे मजबूती मिलती है। भारत-यूरोपीय संघ की पहली शिखर वार्ता से यह बात स्पष्ट हुई कि व्यापार एवं निवेश बढ़ाने के लिए संयुक्त प्रयास आवश्यक है। यूरोपीय संघ की कंपनियों के वैश्विक प्रतिस्पर्द्धा क्षमता को बढ़ाने के लिए यूरोपीय संघ की वैश्विक रणनीति में भारत के साथ संबंध बढ़ाना एक महत्वपूर्ण पहलू है। बहुत से मतभेदों के बावजूद भारत एवं यूरोपीय संघ विश्व व्यापार संघ (World Trade Organization) के अंतर्गत वार्ता के सफल परिणाम के प्रति आशान्वित हैं। दोनों के बीच इस बात पर समझ बन गई है कि द्विपक्षीय व्यापार संबंध बहुपक्षीय सहयोग के लिए मार्ग तैयार करेंगे न कि उसके लिए अवरोधक का कार्य करेंगे। भारत एवं यूरोपीय संघ इस बात के प्रति आशान्वित हैं कि मुक्त व्यापार समझौता संपन्न होने पर वस्तु एवं सेवा क्षेत्र में व्यापार बढ़ेगा। भारत एवं यूरोपीय संघ के बीच मुक्त व्यापार समझौता के लिए 2007 से वार्तालाप जारी है जिसे अंतिम रूप देने में कुछ और भी समय लग सकता है। वर्तमान समय में भारत की ओर यूरोपीय निवेशकों के आकर्षण का मुख्य कारण कुशल श्रमिक (Skilled Labour), तकनीकी संपन्न मानव संसाधन, वैश्विक स्तर के वस्तुओं की विकास की क्षमता, प्रतिस्पर्द्धात्मकता (Competitiveness) तथा स्थिरता (Stability) है। भारत यूरो संकट (Euro Crisis) तथा हॉल के आर्थिक मंदी से बहुत ज्यादा प्रभावित नहीं हुआ है। यूरोपीय संघ के साथ भारत का 2011-2012 में 91547.48 बिलियन अमरीकी डॉलर का व्यापार हुआ था। जबकि 2009-10 के दौरान 38523.34 बिलियन अमरीकी डॉलर का व्यापार हुआ था। यूरोपीय संघ भारत को मुख्यतया रत्न, आभूषण, मशीनरी, इलेक्ट्रॉनिक सामान, रसायन, लोहा, इस्पात एवं एल्युमिनम का निर्यात करता है जबकि भारत यूरोपीय संघ को प्रमुख तौर से कपड़ा, मूल्यवान रत्न (Precious Stones), मशीनरी औषध (Pharmaceuticals), कार्बनिक रसायन, कृषि उत्पाद तथा चमड़े का सामान निर्यात करता है। हाल के दिनों में दोनों के बीच सेवाओं के व्यापार में भी बढ़ोतरी हुई है। यूरोपीय संघ भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (Foreign Direct Investment-FDI) का एक प्रमुख स्रोत है। लेकिन अभी भी भारत यूरोपीय संघ द्वारा वैश्विक स्तर पर किया जाने वाले कुल प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का 1 प्रतिशत से भी कम आकर्षित कर पाता है। जिसे भारत की क्षमताओं के अनुकूल नहीं कहा जा सकता है। भारत के आधारभूत संरचना, सेवा क्षेत्र, खुदरा उद्योग तथा सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में यूरोपीय निवेशकों के लिए व्यापक संभावनाएँ हैं। यूरोपीय संघ के अंतर्गत जर्मनी, फ्रांस, इटली तथा ब्रिटेन भारत में निवेश करने वाले प्रमुख देश हैं। यूरोपीय संघ भारत को तकनीकी स्थानांतरण (Technology Transfer) करने वाला भी प्रमुख स्रोत है। भारत भी अपने कुल निवेश का 40 प्रतिशत यूरोपीय संघ में ही करता है। इन सबके बावजूद भारत-यूरोपीय संघ के बीच वर्तमान व्यापार एवं निवेश को संतोषजनक नहीं कहा जा सकता है। यह दोनों की क्षमताओं से काफी कम है। यूरोपीय संघ भारत पर यह आरोप लगाता रहा है कि भारत की व्यापारिक पद्धति काफी प्रतिबंधात्मक (Restrictive) और वह मात्रात्मक प्रतिबंधों (Quantitative Restrictions) आयत लाइसेंस, अनिवार्य परीक्षण (Mandatory Testing), तथा बड़ी संख्या में वस्तुओं के प्रमाणीकरण (Certification) के रूप में गैर-प्रशुल्क बाधाएँ खड़ी करता है। इसके अलावा यूरोपीय संघ भारत के जटिल एवं उबाउ सीमा-शुल्क प्रक्रिया (Customs Procedure) को लेकर भी शिकायत करता है। भारत के यूरोपीय संघ के साथ विश्व व्यापार संगठन वार्ताओं के समय भी कई तरह के विवाद रहे हैं। भारत शिकायत करता रहा है कि यूरोपीय संघ भारत के छोटे किसानों के हितों की अनदेखी करता रहा है। भारत का मानना रहा है कि यूरोपीय संघ जो अपने कृषि क्षेत्र को सब्सिडी देता है उसके कारण भारतीय किसानों को अतार्किक एवं अनुचित वैश्विक प्रतिस्पर्द्धा का सामना करना पड़ता है। यूरोपीय संघ-भारत व्यापारिक उप-आयोग

(India-EU Subcommission on Trade) का गठन विभिन्न मुद्दों पर बातचीत के लिए किया गया है। दोनों पक्ष अतार्किक व्यापार बाधाओं को कम कर वृद्धि दर, रोजगार एवं सतत विकास को बढ़ावा दे सकते हैं। भारत एवं यूरोपीय संघ के बीच व्यापार एवं निवेश बढ़ाने में कई तरह की बाधाएँ हैं। यूरोपीय संघ जहाँ एक ओर भारत में ज्यादा से ज्यादा बाजार पहुँच (Market Access) चाहता है वहीं भारत इस मामले में ज्यादा छूट देने की स्थिति में नहीं है। यूरोपीय संघ आटोमोबाइल एवं शराब पर ज्यादा प्रशुल्क छूट (Tariff Concession) चाहता है। दोनों के बीच अन्य सेवाओं (Services), कृषि, रसायन, बौद्धिक संपदा अधिकार (Intellectual Property Rights) एवं सरकारी खरीद (Government Procurement) जैसे विषयों पर कई तरह के मतभेद हैं।

भारत एक संगठन के रूप यूरोपीय संघ से तो अपना संबंध मजबूत कर ही रहा है, वह इसके सदस्य देशों विशेषकर ब्रिटेन, फ्रांस एवं जर्मनी जैसे देशों के साथ भी अपने संबंध सुदृढ़ कर रहा है। भारत विशेषकर फ्रांस के साथ अपने को सहज पाता जिसने कई क्षेत्रीय एवं वैश्विक मुद्दों पर भारत का समर्थन किया है। वह अंतर्राष्ट्रीय संगठनों की पुनर्रचना तथा बहुध्रुवीय (Multi-Polar) विश्व व्यवस्था, जिसमें भारत की एक संतुलनकारी भूमिका हो, का भी समर्थक है। भारत, प्रवासी भारतीयों की मदद से ब्रिटेन, फ्रांस नीदरलैंड जैसे देशों के साथ अपने संबंध को विस्तृत कर रहा है।

भारत-यूरोपीय संघ के बीच मुख्य विवाद (Major Irritants between India-European Union)

यह बात सच है कि भारत और यूरोपीय संघ द्विपक्षीय संबंधों को मजबूती देने की प्रक्रिया से गुजर रहे हैं। दोनों के बीच समान मूल्यों एवं सामरिक सहभागिता स्थापित होने के बावजूद भी दोनों के बीच अंतर्क्रिया क्षमता से काफी कम है। कई राजनीतिक विश्लेषकों का तो यह भी मानना है कि भारत-यूरोपीय संघ को एक-दूसरे से जोड़ने वाली चीजों के मुकाबले एक-दूसरे से दूर करने वाली चीजों की संख्या ज्यादा है। आतंकवाद से लड़ने के तरीके, अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था का स्वरूप, कश्मीर एवं परमाणु जैसे मुद्दे हैं, जिन पर दोनों के मतों में भिन्नता पायी जाती है। यह भी आरोप लगाया जाता है कि भले ही भारत ने यूरोपीय संघ के साथ सामरिक सहभागिता (Strategic Partnership) कायम की हो लेकिन वह यूरोपीय संघ के साथ मुख्य सहयोगी के रूप में बर्ताव नहीं करता है। भारत के व्यापारिक एवं राजनीतिक अभिजन (Business and Political Elites) यूरोपीय संघ के अलग-अलग प्रमुख सदस्य देशों के साथ अपने को ज्यादा सहज पाते हैं। भारत यह भी समझता है कि यूरोपीय संघ इतना शक्तिशाली और साधन संपन्न नहीं है कि वह वास्तविक रूप से अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में कोई प्रभावी भूमिका निभा सके। भारत में ऐसे कई लोग हैं जो यह समझते हैं कि यूरोप अपनी नैतिक एवं बौद्धिक क्षमता खो चुका है और इसका जनकल्याणकारी स्वरूप भी अपने ढलान पर है। भारत-यूरोपीय संघ की विदेश नीति की असंगतता (Inconsistency) को भी आलोचना करता है। भारत का मानना है कि यूरोप अभी भी अपनी अंतर्राष्ट्रीय भूमिका की तलाश कर रहा है। वह अपने आंतरिक विवादों के कारण अपनी शक्ति को विश्वसनीय रूप से विश्व के सामने पेश नहीं कर सका है। लेकिन दूसरी ओर यूरोपीय लोग यह चाहते हैं कि यूरोपीय संघ विश्व में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएँ। यूरोपीय संघ धीरे-धीरे अपनी विदेश एवं सुरक्षा नीति को ठोस रूप देने का प्रयास कर रहा है। ऐसी स्थिति को भारतीय यथार्थवादी (States Quoiist) कहते हैं। भारतीय यह भी समझते हैं कि यूरोपीय संघ अमेरिका की तरह अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं को प्रभावित करने के लिए राजनीतिक जोखिम (Political Risks) लेने में सक्षम नहीं है। यह बात भारत-अमेरिका नागरिक परमाणु समझौता से साफ झलकता है। भारत पर आतंकवादी हमले या भारत-पाक तनाव के क्षणों में भी यूरोपीय संघ की यही मनोवृत्ति दिखाई पड़ती है। यह भी कहा जाता है कि भारत जैसी उभरती शक्ति के प्रति यूरोपीय संघ की यह मनोवृत्ति उसके वैश्विक भूमिका निभाने की महत्वाकांक्षा पर प्रश्नचिह्न लगाता है। भारत के साथ अंतर्क्रियाओं (Engagements) में कमी से यह बात साफ झलकती है कि यूरोपीय संघ की विदेश नीति में भारत किस जगह है। यूरोपीय संघ बहुपक्षीय विश्व व्यवस्था का समर्थन करता है और वह इस व्यवस्था के अंतर्गत बड़ी भूमिका निभाना चाहता है। दूसरी ओर भारत यूरोपीय संघ को एक आर्थिक संगठन ही ज्यादा मानता है और बहुपक्षीय विश्व व्यवस्था में उभरती ताकत के रूप उसे गंभीरता से नहीं लेता है।

यूरोपीय संघ के प्रति भारत की पूर्व में भी शिकायतें रही हैं। यूरोपीय संघ कश्मीर में मानवाधिकारों को लेकर भारत की कठोर आलोचना करता रहा है। लेकिन फिलहाल वह भारत की कश्मीर नीति के प्रति सद्भावना व्यक्त करता है। संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् में भारत की स्थायी सदस्यता के प्रति भी यूरोपीय संघ एकमत नहीं है। यह केवल संयुक्त राष्ट्र संस्थाओं में सुधार के भारतीय दृष्टिकोण का समर्थन करता है। भारत आज भी ब्रिटेन फ्रांस एवं जर्मनी जैसी सहयोगियों से यह अपेक्षा करता है कि वे भारत की सुरक्षा परिषद् की स्थायी सदस्यता के दावे का समर्थन करेंगे। सीमापार आतंकवाद जैसे मुद्दों पर भी यूरोपीय संघ के मुकाबले अमेरिका भारतीय चिंताओं के प्रति ज्यादा मुखर रहा है। उस समय भी जब अमेरिका परमाणु क्षेत्र में भारत के साथ सहयोग हेतु समझौता कर चुका है, यूरोपीय संघ अभी भी भारत को परमाणु अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर करने के लिए कह रहा है। वह भारत की परमाणु शस्त्र से जुड़ी सुरक्षा मजबूरियों को समझने में अक्षम रहा है। इसी तरह से जलवायु परिवर्तन (Climate Change) से संबंधित 2009 के कोपेनहेगेन शिखर सम्मेलन के दौरान दोनों के दृष्टिकोणों में साफ अंतर देखने को मिला था।

यूरोपीय संघ के साथ संबंधों को परिभाषित करने में एक समस्या यह भी आती है कि अलग-अलग देशों से मिलकर बनने वाला संगठन होने के कारण वह एक आवाज (One Voice) में अपनी बात नहीं रख पाता है। उसमें आपसी सहमति का अभाव

है क्योंकि सदस्य देशों की अलग-अलग प्राथमिकताएँ (Priorities) एवं क्षमताएँ (Capabilities) हैं। भारत के साथ समस्या यही आती है कि जहाँ एक ओर उसे यूरोपीय संघ के साथ सामूहिक अंतर्क्रिया करना होता है वहीं अलग-अलग सदस्य देशों के साथ द्विपक्षीय संबंध भी निर्धारित करना होता है। यही कारण है कि भारत ने भी यूरोपीय संघ एवं उसके सदस्य देशों के साथ अंतर्क्रिया हेतु अलग-अलग क्षेत्रों एवं प्राथमिकताओं का चयन कर रखा है। यूरोपीय संघ के साथ जहाँ भारत व्यापारिक बातें करता है वहीं सुरक्षा से संबंधित मामलों में वह ब्रिटेन, फ्रांस एवं जर्मनी जैसे सदस्य देशों के साथ वार्तालाप करना ज्यादा सार्थक समझता है। भारत-यूरोपीय संघ सामरिक सहभागिता में अभी भी मजबूत सुरक्षा घटकों का अभाव है। भारत में कुछ लोग यह भी मानते हैं कि भारत-यूरोपीय संघ वार्षिक शिखर सम्मेलन बिना किसी ठोस तैयारी के किया जाने वाला एक वार्षिक रिवाज (Annual Ritual) बन गया है। यदि संक्षेप में कहें तो भारत आर्थिक रूप से यूरोपीय संघ को एक आर्थिक विश्वशक्ति समझता है वहीं राजनीतिक रूप से उसे बौना (Dwarf) ही समझता है।

बहुत सारे ऐसे मुद्दे हैं जिन पर यूरोपीय संघ एवं भारत की समझ अलग-अलग है। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में बल प्रयोग का सिद्धांत, बहुपक्षीयतावाद (Multilateralism), अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, मानवाधिकार, पर्यावरणीय समस्याएँ तथा अप्रसार (Non-Proliferation) जैसे कई मुद्दे हैं जिन पर भारत एवं यूरोपीय संघ के विचार अलग-अलग हैं। भारत क्षेत्रीय अखंडता (Territorial Integrity), अलगाव आंदोलनों, सीमा सुरक्षा जैसे मुद्दों पर बल देता है वहीं यूरोपीय संघ अवैध अप्रवासन (Illegal Immigration), संगठित अपराध, साइबर अपराध एवं जलवायु परिवर्तन जैसे गैर-परंपरागत खतरों पर ज्यादा बल देता है। यूरोपीय संघ एक ऐसी शासन व्यवस्था का समर्थन करता है जो अंतर्राष्ट्रीय कानून एवं बहुपक्षीय संस्थाओं से संचालित होता हो लेकिन भारत अंतर्राष्ट्रीय कानून एवं बहुपक्षीय संस्थाओं के साथ-साथ अमेरिका जैसे देशों के साथ भी अपने को जोड़ता है जो अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में शक्ति प्रयोग के खिलाफ नहीं है।

यदि यूरोपीय संघ के चीन के साथ संबंधों की समीक्षा की जाए तो स्पष्ट होता है कि उसका चीन के साथ भारत के मुकाबले गहरा संबंध है। इसका कारण यह है कि यूरोपीय संघ के हितों को चीन द्वारा भारत के मुकाबले ज्यादा पूरा किया जाता है। यही कारण है कि यूरोपीय संघ भारत के मुकाबले चीन में 20 गुणा ज्यादा निवेश करता है। यूरोपीय संघ, अमेरिका की उस नीति से भी सहमत नहीं है जिसमें वह चीन को संतुलित करने के लिए भारत की भूमिका को राजनीतिक महत्व देता है। भारत अब तक इस बात को नहीं समझ सका कि यूरोपीय संघ चीन के साथ अपने संबंधों को इतना महत्व क्यों देता है जबकि चीन न तो एक लोकतांत्रिक देश है न तो वहाँ मानवाधिकारों या कानून के शासन को महत्व दिया जाता है जबकि यूरोपीय संघ हर जगह इन्हीं का प्रवचन देता रहता है।

भारत-यूरोपीय संघ विज्ञान एवं तकनीकी सहयोग

(India-European Union Science and Technology Cooperation)

भारत-यूरोपीय संघ सामरिक सहभागिता के अंतर्गत विज्ञान एवं तकनीकी सहयोग एक प्रमुख घटक है। भारत एवं यूरोपीय संघ के बीच 1980 के मध्य दशक से ही अनुसंधान (Research) के क्षेत्र में सहयोग किया जा रहा है। दोनों के बीच 2001 में विज्ञान एवं तकनीकी सहयोग समझौता (Science and Technology Cooperation Agreement) हुआ था। 2009 में इसे विस्तारित कर दिया गया। यूरोपीय संघ के 2007 से 2013 के लिए 7^{वाँ} विज्ञान एवं तकनीकी विकास ढाँचागत कार्यक्रम (7th EU Framework programme For Science and Technological Development for 2007-2013) के अंतर्गत भारत यूरोपीय संघ के साथ सहभागिता करने वाला चौथा सबसे बड़ा अंतर्राष्ट्रीय सहयोगी बन गया है। कई भारतीय संगठन विभिन्न तकनीकी क्षेत्रों से संबंधित अनुसंधान कार्यक्रमों में भागीदारी कर रहे हैं। इनमें प्रमुख तौर पर स्वास्थ्य, पर्यावरण, खाद्यान्न, कृषि, जैव तकनीकी, सूचना एवं संचार तकनीक शामिल हैं। भारत परमाणु संलयन (Nuclear Fusion) पर आधारित अंतर्राष्ट्रीय तापीय परमाणु प्रयोगिक रिएक्टर (International Thermonuclear Experimental Reactor - ITER) प्रोजेक्ट में पूर्ण भागीदार बन गया है। भारत-यूरोपीय संघ के बीच 2009 में संयुक्त रूप से सौर ऊर्जा अनुसंधान (Solar Energy Research) के लिए प्रस्ताव किया गया है। इसमें दोनों पक्ष 5-5 मिलियन यूरो का योगदान करेंगे। गैर-यूरोपीय देशों के प्रति यूरोप की अंतर्राष्ट्रीय अनुसंधान नीति को और ज्यादा प्रभावी और सुसंगत बनाने के लिए प्रायोगिक रूप से शुरुआत के तौर पर अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान एवं तकनीक सहयोग सामरिक मंच (Strategic Forum for Science and Technology cooperation) का गठन किया गया है। इसके अंतर्गत यूरोपीय देशों एवं उनके प्रमुख वैश्विक भागीदारों के बीच वार्तालाप एवं सहयोग को बढ़ावा दिया जाएगा। इसने पहले प्रायोगिक शुरुआत (First Pilot Initiative) के लिए भारत को सामरिक भागीदार (Strategic Partner) के रूप में चयन किया है।

अनुसंधान एवं नवप्रवर्तन सहयोग संबंधी संयुक्त घोषणा-पत्र

(Joint Declaration on Research and Innovation Cooperation)

-अनुसंधान एवं नवप्रवर्तन सहयोग संबंधी संयुक्त घोषणा-पत्र पर 10 फरवरी 2012 को हस्ताक्षर किया गया है। इसका उद्देश्य अनुसंधान एवं नवप्रवर्तन में सहयोग को व्यापक एवं प्रभावी बनाना, सामान्य सामाजिक चुनौतियों पर ध्यान देना, भारत एवं यूरोपीय

संघ के बीच सहक्रिया (Synergies) को बढ़ावा देना है। इसके अंतर्गत समावेशी, सतत् एवं वहनीय नवप्रवर्तन पर जोर दिया जाएगा, जिससे कि जलवायु परिवर्तन, निरंतर कम होती ऊर्जा, जल संसाधन, कच्चे माल (Raw Materials) की सुरक्षा, प्राकृतिक आपदा प्रबंधन, जनकिकी (Demography) सतत् परिवहन तथा गतिशीलता (Sustainable Transport and Mobility), स्वास्थ्य एवं रोग नियंत्रण, उच्च गुणवत्ता एवं वहनीय भोजन जैसी ठपकती सामाजिक चुनौतियों का समाधान किया जा सके।

जलवायु परिवर्तन तथा ऊर्जा सहयोग (Climate Change and Energy Cooperation)

यूरोपीय संघ भारत के सतत् विकास को बढ़ावा देने संबंधी प्रयासों का समर्थन करता है। पर्यावरणीय क्षेत्र में सहयोग को गहरा बनाने के लिए भारत एवं यूरोपीय संघ ने 2008 में स्वच्छ विकास एवं जलवायु परिवर्तन संबंधी संयुक्त कार्यक्रम (Joint Programme on Clean Development and Climate Change) की शुरुआत है। नवंबर 2009 में भारत एवं यूरोपीय संघ जलवायु परिवर्तन शमन (Climate Change Mitigation), स्वच्छ ऊर्जा, ऊर्जा दक्षता (Energy Efficiency) तथा नवीकरणीय ऊर्जा विशेषकर सौर ऊर्जा के क्षेत्र में सहयोग गतिविधियों को बढ़ाने पर सहमत हुए थे। दोनों पक्ष ऊर्जा पर संबद्धित सहयोग हेतु घोषणा-पत्र (Declaration on Enhanced Cooperation on Energy) को आने वाले दिनों में सहमति दे सकते हैं। इससे भविष्य में स्वच्छ कोयला (Clean Coal), उत्पादों की ऊर्जा दक्षता, भवनों की ऊर्जा दक्षता, स्मार्ट पावर ग्रिड, नवीकरणीय ऊर्जा, परमाणु सुरक्षा तथा अपतटीय खुदाई सुरक्षा (Off shore Drilling safety) के क्षेत्र में संयुक्त सहयोग गतिविधियों को बढ़ावा मिल सकता है।

निष्कर्ष (Conclusion)

भारत यूरोपीय संघ के मुकाबले अमेरिका के साथ अपने संबंधों को ज्यादा महत्व देता है। अभी तक यह देखने में आया है कि यूरोपीय संघ के साथ सामरिक सहभागिता केवल उद्घोषणाओं तक ही सीमित है। इन उद्घोषणाओं का ठोस कार्यान्वयन नहीं हो पाता है। इन सब समस्याओं के बावजूद दोनों पक्ष अपने राजनीतिक एवं आर्थिक संबंधों को आगे बढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं। कई लोगों का तो यह भी मानना है कि दोनों पक्ष अभी बहुत मारी बातें एक-दूसरे से सोख रहे हैं। लेकिन यह भी सत्य है कि केवल व्यापारिक संबंधों से दोनों एक-दूसरे के गहरा मित्र नहीं हो सकते। सामरिक सहभागिता के लिए यह जरूरी है कि दोनों व्यापार एवं बाजार से आगे बढ़कर सहयोग करें। इसके लिए जरूरी है कि दोनों एक-दूसरे के प्रति अपने सोच में बदलाव लाएं और आपसी संबंधों को विविधता प्रदान करें। यूरोपीय संघ को चीन और भारत के साथ अपने संबंधों को भी संतुलित करना चाहिए जो अभी स्पष्टतः चीन की ओर झुका है। इसे ठीक करने के लिए जरूरी है कि वह भारत के संदर्भ में ठोस कार्यनीति तैयार करे। आपसी संबंध मजबूत हो इसके लिए छात्रों एवं पेशेवरों के लिए ज्यादा मात्रा में वीजा जारी किया जाना चाहिए, जो अब तक भारत-यूरोपीय संघ के बीच एक जटिल मुद्दा रहा है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि भारत-यूरोपीय संघ संबंध को मजबूती देने के लिए सुरक्षा आयाम (Security Dimension) को जोड़ना आवश्यक है ताकि सामरिक सहभागिता अपनी महत्ता बनाए रख सके तथा दोनों पक्षों की अंतराष्ट्रीय महत्त्वकांक्षाओं की पूर्ति हो सके।

यूरोप के आर्थिक एकीकरण तथा भारत द्वारा आर्थिक उदारीकरण की प्रक्रिया शुरू करने से दोनों के लिए जबरदस्त अवसर पैदा हुआ है और यदि तमाम मतभेदों के बावजूद दोनों लोकतंत्रों के बीच सहयोग गहरा होता है, तो इसे अंतराष्ट्रीय संगठनों की मजबूती ही मिलेगी। भारत-यूरोपीय संघ सामरिक भागीदारी एक ऐसी संस्थागत व्यवस्था है जिसके माध्यम से एक-दूसरे की चिंताओं को दूर किया जा सकता है। लेकिन उससे भी महत्वपूर्ण बात यह कि अब तक दोनों के बीच हुई उद्घोषणाओं एवं नीतिगत दस्तावेजों (Declarations and Policy Documents) को लागू किया जाए। अतः यही कहा जा सकता है कि भारत-यूरोपीय संघ संबंध का भविष्य सिर्फ समान मूल्यों पर नहीं टिक सकता बल्कि इसे समान हितों पर आधारित करना होगा।

प्रवासी भारतीय (Indian Diaspora)

विश्व के विभिन्न देशों में 2 करोड़ से अधिक भारतीय रहते हैं। इनकी दो श्रेणियाँ हैं। पहली श्रेणी उन लोगों की है जो ब्रिटिश शासन के दौरान कल-कारखानों, बाग-बगीचों, खानों (Mining) आदि में कार्य करने के लिए ले जाए गए थे। अफ्रीका, फीजी आदि देशों में ले जाए गए लोग इसी श्रेणी के हैं। इन्हें सामान्यतौर पर भारतीय मूल के लोग (People of Indian Origin-PIO) कहा जाता है। दूसरी श्रेणी उन लोगों की है जो स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए विदेशों में गए। अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, कनाडा या ब्रिटेन गए ज्यादातर लोग इसी श्रेणी में शामिल हैं। इन्हें अप्रवासी भारतीय (Non-Resident Indian - NRI) कहा जाता है। इन दोनों तरह के लोगों का भारत से संबंध है लेकिन जहाँ पहली श्रेणी के लोगों का भारत के साथ भावनात्मक जुड़ाव (Emotional Attachment) है, वहीं दूसरी श्रेणी के लोगों को संयुक्त रूप से प्रवासी भारतीय के रूप में जाना जाता है। आजादी के समय और आज के समय को यदि देखा जाए तो भारत के प्रति इनकी भूमिका और योगदान में महत्वपूर्ण बदलाव देखने को मिलता है। 1950 के दशक में प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने कहा था कि प्रवासी भारतीय उसी देश के हो जाए जिस देश में वे रहते हैं। यही विचार 1997 में भारतीय प्रधान मंत्री इंदर कुमार गुजराल ने दक्षिण अफ्रीका में बसे भारतीयों के संदर्भ में व्यक्त किया था। उस समय दोहरी नागरिकता (Dual Citizenship) का सुझाव स्वीकार नहीं किया गया था। परंतु समय बीतने, संचार एवं परिवहन के साधनों के विस्तार के साथ दूरियों घटने, उदारीकरण के दौर में निवेश की माँग बढ़ने के साथ प्रवासी भारतीयों का भारत के साथ जुड़ाव की भावना प्रबल होती जा रही है। वैश्वीकरण ने सरकार को प्रवासी भारतीयों के बारे में दृष्टिकोण बदलने को मजबूर कर दिया है। इस स्पष्ट भूमि में प्रवासी भारतीय लोगों का प्रतिनिधित्व करने वाले संगठनों की सोच भी भारत के प्रति बदली है। 1999 में भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व में गठित राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (National Democratic Alliance) की सरकार ने प्रवासी भारतीयों के मुसला पर विचार करने के लिए डॉ. लक्ष्मीमल सिन्घवी की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया था। इस समिति की सिफारिश पर प्रत्येक वर्ष 9 जनवरी को प्रवासी भारतीय दिवस मनाने का फैसला किया गया। 2003 से निरंतर प्रवासी भारतीय दिवस का आयोजन किया जा रहा है। इसमें भारतीय मूल के प्रमुख लोगों एवं प्रवासी भारतीयों को सम्मानित किया जाता है।

उल्लेखनीय है कि प्रवासी भारतीय विदेश नीति के निर्धारण एवं अन्य देशों के साथ भारत के संबंध निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहण करने लगे हैं। प्रवासी भारतीयों ने एक महत्वपूर्ण समूह का रूप धारण कर लिया है। उदाहरणस्वरूप अमेरिका में बसे भारतीय काफी संगठित हैं। भारत के प्रति अमेरिकी दृष्टिकोण में बदलाव लाने से उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहण किया है। इसका प्रमाण इस बात से मिलता है कि 1993 में बिल क्लिंटन के अमेरिकी राष्ट्रपति बनने पर भारत के प्रति विदेश नीति एवं द्विपक्षीय संबंधों के हर पहलू का इस्तेमाल कश्मीर, परमाणु शस्त्र और मानवाधिकार जैसे मुद्दों पर भारत दबाव डालने के लिए किया था परंतु 2000 तक स्थिति ऐसी बन गई थी कि भारत के हित में लोकतंत्र एवं इसकी सुरक्षा, सुरक्षा संबंधी मुद्दों पर विवाद होकर भारत ने मह 1998 से परमाणु परीक्षण किया तथा सीमा पार से होने वाली आतंकवाद को जारू करने लगे। क्लिंटन सरकार को भारत के प्रति बदली इस दृष्टिकोण के पीछे अमेरिका भी रह रहा प्रवासी भारतीयों की महत्वपूर्ण भूमिका थी।

उदारीकरण के फलस्वरूप प्रवासियों की संख्या तेजी से बढ़ी है। इंस्टीट्यूट ऑफ माइग्रेशन स्टडीज (Institute of Migration Studies) के अनुसार, वर्तमान समय में विश्व में अभी 20 करोड़ प्रवासी कार्य कर रहे हैं। विश्व का ध्यान प्रवासी लोगों की तरफ तब गया जब पश्चिम एशिया संबंधी अमेरिकी नीति को बदलवाने में अमेरिका में रह रहे यहूदी प्रवासियों (Jewish Diaspora) तथा चीन के तीव्र गति से आर्थिक विकास करने में चीनी प्रवासियों की महत्वपूर्ण भूमिका देखी गयी। इससे विश्व के देशों का प्रवासियों के महत्व का पता चला। भारत भी इसका अपवाद नहीं है। प्रवासी भारतीय भी भारत की विदेश नीति तय करने, आर्थिक विकास निर्धारित करने तथा ज्ञान विनिमय (Knowledge Transfer) में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। वे सलाना लगभग 56 बिलियन डॉलर से ज्यादा की राशि भारत भेजकर विदेशी मुद्रा विनिमय प्रबंधन (Foreign Exchange Management) में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ज्ञान आधारित उद्योगों में अपनी क्षमता साबित कर प्रवासी भारतीयों ने भारत का सम्मान बढ़ाया है। लेकिन श्रीलंका में तमिलों की दयनीय स्थिति तथा एलटीटीई की कार्रवाई तथा भारत के पंजाब में अलगाववादी आंदोलन से यह बात भी साबित होती है कि देश की रक्षा एवं विदेश नीति को निर्धारित करने में भी प्रवासियों की कितनी बड़ी भूमिका है। हाल में दो बच्चों के संरक्षण (Custody) को लेकर भारत एवं नार्वे के बीच उत्पन्न राजनयिक विवाद ने भी यह और भी स्पष्ट कर दिया है कि विदेश संबंध निर्धारित में प्रवासियों की कितनी महत्वपूर्ण भूमिका है।

यदि ऐतिहासिक रूप से देखें तो यह स्पष्ट होता है कि ब्रिटिश, फ्रांसिसी एवं डच उपनिवेशों में दासता (Slavery) की समाप्ति के साथ बड़ी संख्या में भारतीय विश्व के विभिन्न भागों में प्रवास कर गए। एशिया, अफ्रीका, कैरीबियन देशों में श्रमिकों को बागवानी, खनन (Mining) के लिए करावानामें के तहत (Indentured Labour) ले जाया गया। इनके अलावा व्यापारी एवं पेशेवर भी दूसरे देशों में चले गए। उपनिवेशवाद के कारण कुछ भारतीय ब्रिटेन, अमेरिका, कनाडा एवं ऑस्ट्रेलिया में भी बस गए। अमेरिकी

कांग्रेस द्वारा 1946 में बनाए गए अधिनियम से कुछ भारतीयों को अमरीकी नागरिकता भी प्राप्त हो गई। द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण श्रमिकों की संख्या में आयी गिरावट के कारण कुछ भारतीयों को ब्रिटेन ले जाया गया। आगे चलकर अमेरिका का उच्च शिक्षा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में उभरने के कारण भी प्रवासन को बढ़ावा मिला। 1970 के दशक में खाड़ी के देशों में तेल उत्पादन में अचानक वृद्धि (Oil boom) के कारण बड़ी संख्या में भारतीय इन देशों में चले गए। अभी लगभग 50 लाख भारतीय खाड़ी के देशों में काम कर रहे हैं और इनके द्वारा वापस भेजा जाने वाला धन (Remittances) विदेशी मुद्रा विनिमय संकट (Foreign Exchange Crisis) से निपटने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत में आर्थिक विकास की दर बढ़ने तथा सूचना तकनीकी जैसे क्षेत्रों का विस्तार होने से प्रवासन को बढ़ावा मिला है। बड़ी संख्या में छात्र अमेरिका एवं ऑस्ट्रेलिया में अध्ययन हेतु जाते हैं और कई तो अध्ययनोपरांत वहीं बस जाते हैं।

प्रवासी भारतीयों के लिए आधिकारिक नीति (Official Policy for Indian Diaspora)

उत्के पर ले जाए गए मजदूरों के शोषण एवं उनके प्रति बरती जाने वाली क्रूरतापूर्ण घटनाओं को देखते हुए 1937 में एक अधिनियम बनाया गया था। जिसके माध्यम से सरकार ने प्रवासी भारतीयों के मामलों में रुचि लेना शुरू किया। इस अधिनियम में प्रवासी भारतीयों के लिए जनकल्याण के कार्य आरम्भ किए गए। प्रवासी मजदूरों के हितों की रक्षा के लिए प्रोटेक्टोरेट जनरल (Protectorate General) का कार्यालय खोला गया था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (Indian National Congress) ने भी प्रवासी भारतीयों के मामलों में रुचि लेना शुरू किया और कांग्रेस के कई अधिवेशनों में प्रवासी भारतीयों से संबंधित मामलों को उठाया जाने लगा था। प्रवासी श्रमिकों को लेकर महात्मा गांधी अत्यधिक चिंतित थे। उन्होंने प्रवासी भारतीयों की स्थिति की जानकारी के लिए सी.एफ.एण्ड्रयू (C.F. Andrews) को भिजा तथा मुहिलाल डाक्टर को मारोशस भेजा था। बढ़ते जनदबाव एवं जनमत के कारण सरकार ने 1917 में उत्के पर मजदूर बलिष्मन की (Indentured Labour) नीति समाप्त कर दी। जवाहर लाल नेहरू ने भी प्रवासी भारतीय समुदाय के प्रति गहरी दिलचस्पी प्रकट की थी और उनके कल्याण के लिए उन्होंने व्यावहारिक प्रयास भी किए। हालाँकि स्वतंत्रता के बाद उन्होंने विदेशी नीति के व्यापक नीतियों पर ध्यान देना शुरू कर दिया। उन्होंने प्रवासी मामलों के मंत्रालय (Overseal Indian affairs) को समाप्त कर दिया तथा प्रवासी भारतीयों को यह सलाह दी की वे पूरी तरह अपने निवास के देश के साथ अपने को जोड़ लें। लोकसभा में एक सवाल का जवाब देते हुए उन्होंने कहा था कि प्रवासी भारतीयों के प्रति हमारी रुचि संस्कृति एवं मानवीय कारणों से है, न कि राजनीतिक कारणों से। बर्मा (वर्तमान म्यांमार) में जनरल ने विन (Ne Win) की नीतियों से प्रभावित होकर बड़ी संख्या में भारतीय बर्मा छोड़ने पर बाध्य हुए थे। लेकिन इस संदर्भ में जवाहर लाल नेहरू की गतिविधियों निराश ही हुए थे। श्री लंका में भारतीय अंतर्मुखों से संबंधित समस्याओं को हल करने के लिए लाल बहादूर शास्त्री तथा लाल कृष्ण प्रसाद श्रीमोवो भंडारनायक (Srimovo Bhandarnaike) के साथ समझौता किया था। पूर्वी अफ्रीका के देश युगांडा (Uganda) से भारतीयों के निष्क्रमण (Exodus) से इंदिरा गांधी को समस्या हुई थी। इंदिरा गांधी ने वेसी भारतीयों को आश्रय दिया था जो भारत आना चाहते थे। कई दूर की बातलापके बाद युगांडा अल्पमात्रा में ही क्षतिपूर्ति (Compensation) देकर भारतीयों को आश्रय दिया। फिर भी प्रवासी भारतीयों को यह लगा था कि भारत ने उनके लिए जरूरत के वक्त पर्याप्त सहायता नहीं की। आगे चलकर जब खाड़ी के देशों में भारतीयों की संख्या बढ़ी और भारत से विदेशी मुद्रा की कमी बढ़ती, भारत ने अपने नीति में कुछ बदलाव किए। भारत का यह प्रयास था कि प्रवासी भारतीयों के माध्यम से धन भारत आए। 20वीं शताब्दी में भारत के लक्ष्यों में प्रवासी भारतीयों की भूमिका को सबसे पहले राजीव गांधी ने समझा। उन्होंने भारत के विकास के लिए कुछ प्रवासी भारतीयों को भारत लाने का प्रयास भी किया। इन्हीं में से एक सैम पित्रोदा (Sam Pitroda) थे जिन्होंने भारत में सूचना एवं संचार तकनीकों के क्षेत्र में अपना योगदान किया। भारत में स्वास्थ्य के क्षेत्र में अपोलो वेदांता एवं एस्कॉर्ट (Escort) जैसे अस्पतालों का निर्माण प्रवासी भारतीयों द्वारा ही किया गया है।

प्रवासी भारतीयों के साथ राजनीतिक संबंध (Political Engagement With the Diaspora)

1975 में भारत में आपातकाल (Emergency) लगाए जाने के प्रति ब्रिटेन एवं अमेरिका के अप्रवासी भारतीयों में जबरदस्त प्रतिक्रिया देखी गई थी। उसके बाद से भारत सरकार ने प्रवासी भारतीयों के साथ राजनीतिक संबंध बढ़ाने की नीति अपनाई। पंजाब में अलगाववादी आंदोलन शुरू होने के साथ इस नीति को और भी विस्तृत किया गया। प्रथम पीढ़ी के प्रवासी भारतीय ने अपनी सफलता से प्रोत्साहित होकर अमेरिका, ब्रिटेन और कनाडा जैसे देशों में मुख्यधारा की गतिविधियों में शामिल होने लगे। चुनाव के अवसरों पर वे राजनीतिक दलों को धन उपलब्ध कराने लगे। अमेरिका में कई ऐसे संगठन बन गए, जो भारत विरोधी गतिविधियों को रोकने एवं इसके हितों को आगे बढ़ाने के लिए लॉबींग (Lobbying) का कार्य करने लगे।

अमेरिकी कांग्रेस में भारत विरोधी संशोधनों को रोकने के लिए प्रवासी भारतीय समुदाय हमेशा सक्रिय रहा। 1998 के परमाणु परीक्षण तथा 1999 के कारगिल युद्ध के दौरान भी भारत के पक्ष में अंतर्राष्ट्रीय जनमत के निर्माण में प्रवासी भारतीय समुदाय ने योगदान किया। यह प्रवासी भारतीयों द्वारा किए गए अथक लॉबींग का ही नतीजा था कि कई अड़चनों के बावजूद भारत-अमरीकी नागरिक परमाणु सहयोग समझौता (Indo-US Civil Nuclear Co-operation Agreement) हो सका।

आगे चलकर राजनीतिक सक्रियता का नतीजा यह निकला कि प्रवासी भारतीय भारत की चुनावी राजनीति में रुचि लेने लगे। विभिन्न धार्मिक एवं जातीय समूह (Religious and Ethnic Groups) अपने-अपने समुदाय के हितों की रक्षा के लिए लॉबींग करने लगे। अयोध्या, गुजरात, एवं कंधामल (Kandhamal) जैसी घटनाओं ने प्रवासी भारतीय समुदाय में विभाजन पैदा करने का भी कार्य किया। इस विभाजन का फायदा समय-समय पर विदेशी गुप्तचर एजेंसियों ने भी उठाया। इन एजेंसियों ने भारत से गोपनीय जानकारी प्राप्त करने के लिए इस समुदाय का उपयोग किया। ब्रिटेन, अमेरिका एवं कनाडा जैसे देशों में बड़ी संख्या में प्रवासी भारतीयों की उपस्थिति एवं उनके प्रभाव के कारण इन देशों के राजनीतिज्ञों ने भारत की चुनावी राजनीति में भी रुचि लेनी शुरू कर दी। लेकिन भारत में भी कुछ ऐसे समुदाय एवं दल हैं जो अपने हितों की प्राप्ति के लिए प्रवासी भारतीय समुदाय का उपयोग करने लगे।

शीतयुद्ध समाप्त होने, सोवियत संघ के विखण्डन तथा भारत में विदेशी मुद्रा संकट के फलस्वरूप भारत ने नब्बे के दशक में अपनी विदेश एवं आर्थिक नीतियों में महत्वपूर्ण बदलाव किए। अस्सी एवं नब्बे के दशक में शुरू किए गए तकनीक आधारित आर्थिक विकास में तकनीकी पेशेवरों की महत्वपूर्ण उपलब्धियों ने प्रवासी भारतीयों (Indian Diaspora) को फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। नब्बे के दशक में कई भारतीय अमेरिका में उच्च पदों पर आसीन हो गए। अफ्रीका के गुजराती प्रवासी ब्रिटेन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लगे। अमर्त्स सेन, भीखू पारेख (Bhikhu Parekh), जगदीश एन. भगवती मेघनाथ देसाई, इंदिरा न्यूी, रघुराम राजन, स्वर्गीय कल्पना चावला तथा सुनीता विलियम्स जैसे प्रवासी भारतीयों की महत्वपूर्ण उपलब्धि एवं भारत द्वारा शुरू किए गए आर्थिक उदारीकरण एवं वैश्वीकरण की नीति ने दोनों के बीच सहयोग के नए अवसर उपलब्ध करा दिए। 1991 के विदेशी मुद्रा संकट (Foreign Exchange Crisis) के समय भारत ने प्रवासी भारतीयों के धन का उपयोग किया। प्रवासी भारतीयों ने इंडिया डेवलपमेंट बॉण्ड (India Development Bond) तथा मिलेनियम बॉण्ड (Millennium Bond) में महत्वपूर्ण योगदान किया। राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन (National Democratic Alliance - NDA) सरकार ने मार्च 1999 में महत्वपूर्ण कदम उठाते हुए पीआईओ कार्ड (PIO Card) की शुरुआत की। सितंबर 2000 में सरकार ने डॉ. एल.एम. सिधुवी की अध्यक्षता में प्रवासी भारतीय से संबंधित एक उच्च स्तरीय समिति का गठन किया। इस समिति ने बड़ी संख्या में रहने वाले प्रवासी भारतीयों वाले 21 देशों का दौरा किया और इस समुदाय से जुड़े नेताओं एवं संगठनों से विस्तृत विचार-विमर्श किया। इस उच्च स्तरीय समिति ने तीन महत्वपूर्ण अंतरिम सुझाव दिए-

- पीआईओ कार्ड स्कीम में सुधार एवं इसके फीस में कटौती।
- 9 जनवरी को प्रवासी भारतीय दिवस घोषित करना।
- प्रवासी भारतीय सम्मान पुरस्कार का गठन करना।

सरकार ने इन तीनों अंतरिम सुझावों को स्वीकार कर लिया। इस समिति ने भारतीय विदेशी नीति के लक्ष्यों की प्राप्ति, आर्थिक विकास, निवेश, अंतराष्ट्रीय व्यापार, औद्योगिक विकास, पर्यटन, ज्ञान का आदान-प्रदान, शिक्षा, स्वास्थ्य, विज्ञान, एतदुक्तों की तथा कल्याण (Philanthropy) आदि के क्षेत्र में प्रवासी भारतीयों की भूमिका पर भी विचार-विमर्श किया था।

2003 से पूर्व प्रवासी भारतीय विभिन्न स्वयंसेवक संगठनों के माध्यम से अपने-अपने को संगठित किए हुए थे। उदाहरण स्वरूप भारतीय मूल के लोगों का विश्विक संगठन (Global Organisation of Peoples of Indian Origin) प्रवासी भारतीयों में एकता स्थापित करने एवं उनके हितों को आगे बढ़ाने के लिए 1989 में पहली बैठक आयोजित की थी। इसी तरह से मजबोर एवं गुजराती प्रवासी भारतीयों ने विश्वभर के लोगों को जोड़ने के लिए संघ (Associations) बना रखे थे। इसके पहले तेलुगू प्रवासी भारतीयों ने विश्वभर के तेलुगू लोगों को जोड़ने के लिए 1975 में विश्व तेलुगू सम्मेलन (World Telugu Conference) का आयोजन किया था। जो आगे चलकर 1992 में विश्व तेलुगू संघ (World Telugu Federation) में बदल गया।

आज प्रवासी भारतीय धर्म, क्षेत्र एवं जाति को भूलकर एक-दूसरे से जुड़ने का प्रयास कर रहे हैं। विशेषकर नई पीढ़ी के प्रवासी भारतीयों में एक-दूसरे से जुड़ने की प्रवृत्ति ब्यादा दिखाई दे रही है। वैश्वीकरण से इस प्रक्रिया को और बल प्राप्त हुआ है। आज लोग इंटरनेट जैसे आधुनिक जनसंचार माध्यमों से एक-दूसरे के साथ तेजी से जुड़ते जा रहे हैं। वे भारत में अपने जन्म स्थान को ढूँढ रहे हैं और मौका मिलते ही भारत स्थित अपने पूर्वजों की जन्मभूमि देखने आते हैं।

इस विकासमान दुनिया में किसी देश की संवृद्धि (Growth) एवं प्रतिस्पर्धात्मकता (Competitiveness) इस बात से तय होती है कि वह कितनी मात्रा एवं गुणवत्ता में ज्ञान का अनुप्रयोग कर पा रहा है। बढ़ते वैश्वीकरण के दौर में नये ज्ञान सीखने के लिए बाहरी देशों से जुड़ना अत्यावश्यक हो गया है। वैश्वीकरण के इस दौर में, विश्व के देशों के मध्य वस्तुओं, सेवाओं, पूँजी एवं ज्ञान का मुक्त प्रवाह बना हुआ है, जोकि आधुनिक विश्व व्यवस्था का एक विशिष्ट गुण है। आजकल प्रत्येक देश द्वारा बचत (Savings), निवेश (Investment) तथा मौँग बढ़ाने पर बल दिया जाता है। विकास के लिए ज्ञान (Knowledge), प्रतिभा (Talent) एवं कौशल का गतिशील होना महत्वपूर्ण है।

हाल के वर्षों में बड़ी संख्या में प्रवासी भारतीयों के उभरने से दो बातों का पता चलता है। पहला- यह कि उभरती अर्थव्यवस्था वाले देशों से बड़ी संख्या में लोग विकसित देशों में जाकर रहने लगे हैं। दूसरा यह कि ये प्रवासी लोग अपने जन्म स्थान वाले देशों के

विकास लिए महत्वपूर्ण संसाधन का कार्य करते हैं। उच्च कौशल (High Skilled) एवं निम्न कौशल (Low Skilled) प्राप्त व्यक्ति विकसित देशों में चले जाते हैं और फिर अपने जन्म स्थान वाले देशों के विकास के लिए अनेक अवसर उपलब्ध कराते हैं।

लेकिन प्रवासी भारतीयों को केवल पैसा वापस भेजने (Remittances) या निवेश करने वाले व्यक्ति के तौर पर नहीं देखा जाना चाहिए। इस दृष्टिकोण से प्रवासी भारतीयों को देखना संकीर्ण मानसिकता का परिचय देने के बराबर होगा। प्रवासी भारतीयों के योगदान को केवल वित्तीय योगदान के दृष्टिकोण से नहीं देखा जाना चाहिए। बदलती अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के संदर्भ में प्रवासी भारतीयों को अन्य कई तरह का कूटनीतिक योगदान होता है। प्रवासी भारतीय देश के लिए ज्ञान, विशेषज्ञता (Expertise), संसाधन (Resources) एवं बाजार की उपलब्धता सुनिश्चित करने में अपना योगदान देते हैं। इन रूपों में उनका योगदान इस बात से निर्धारित होता है कि वे जिस देश में रहते हैं वहाँ वे किस स्तर पर संगठित हैं, किस क्षेत्र में उन्होंने अपनी पहचान बनाई है और अपने मूल देश के प्रति वे कितने उत्प्रेरित (Motivated) हैं। यह इस बात पर भी निर्भर करता है कि स्वयं भारत किसी विशेष देश के साथ किस स्तर पर और किस रूप में संबंध स्थापित करना चाहता है। भारत के साथ-साथ अन्य उभरते देश भी यह पहसूस करने लगे हैं कि प्रवासी लोगों को देश के विकास में भागीदार बनाया जाना चाहिए। प्रवासी लोगों की संख्या के मामले में भारत विश्व में दूसरे स्थान पर है। लगभग ढाई करोड़ (25 Million) प्रवासी भारतीय विश्व के सभी प्रमुख क्षेत्रों में विद्यमान हैं। विदेशों में भारतीयों का बसना कई कारणों से प्रवासन (Migration) का नतीजा है। जिसमें प्रमुख तौर पर वाणिज्यवाद (Mercantilism), उपनिवेशवाद (Colonialism) तथा वैश्वीकरण (Globalisation) है। शुरुआत में कुछ भारतीयों को दंड एवं दुख पहुँचाने के लिए देश से बाहर ले जाया गया, जहाँ उन्होंने संघर्ष एवं मेहनत के बल पर अपनी अस्मिता कायम की। लेकिन 20वीं शताब्दी के अंतिम तीन दशकों के प्रवासन के चरित्र में मूलभूत बदलाव देखा गया है। उच्च कौशल पेशेवर (High Skilled Professionals) प्राप्त व्यक्ति उच्च जीवन स्तर की आशा में पश्चिमी देशों को ओर जा रहे हैं। वहीं कौशल (Skilled) अर्ध-कौशल (Semi-Skilled) या अन्य छोटे-मोटे कार्यों के उत्सुक खाड़ी एवं दक्षिण एवं एशिया के देशों में जा रहे हैं। इस तरह से देखा जाए तो प्रवासी भारतीयों में क्षेत्र, भाषा, संस्कृति या विश्वास के आधार पर कुछ भिन्नताएँ देखा जा सकती हैं। लेकिन इन सबको जो एक बात इकट्ठा करती है वह भारत के प्रति लगाव की भावना है। प्रवासी भारतीय अब विश्व के सबसे शिक्षित एवं सफल समुदाय में शामिल हैं। विश्व के किसी भी क्षेत्र में प्रवासी भारतीयों का सम्मान उनके कठिन मेहनत (Hard work), अनुशासन (Discipline), अहंश्रुति (Non-interference) तथा स्थानीय समुदायों के साथ सफलतापूर्वक घुलने-मिलने के कारण की जाती है।

प्रवासी भारतीयों ने अपने निवास के देशों के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया है। ज्ञान (Knowledge) एवं नवाचार (Innovation) को बढ़ावा दिया है। लेकिन यह भी सच है प्रवासी भारतीयों ने भारत से अपनी लगन को कम नहीं होने दिया है। उन्होंने सदियों से अपनी भाषा, संस्कृति एवं परंपराओं को बनाए रखा है और इसे समय के साथ आक्रामक (Vibrant) एवं अद्वितीय (Unique) बनाया है। प्रवासी भारतीयों के बीच भारतीय फिल्में, नृत्य, संगीत, कला एवं संस्कृति बहुत प्रसिद्ध हो गई है। बड़ी मात्रा में धन वापस भारत भेज रहे हैं। कई प्रवासी भारतीय रहने एवं काम करने वापस भारत आ रहे हैं। इस तरह भारत के साथ उनका जुड़ाव लगातार बढ़ता जा रहा है। एक नई सहभागिता विकसित होने के कारण प्रवासी भारतीयों भारत के लिए भी अत्यधिक महत्वपूर्ण हो गए हैं। अब प्रवासी भारतीयों के साथ कई क्षेत्रों में नए सहयोग का विकल्प पैदा हो रहा है। यह संबंध सहजीवित (Symbiotic) पर आधारित है। एक लोचदार (Resilient) तथा स्वस्थ (Robust) संबंध बनाए रखने के लिए दोनों तरफ से प्रयास जारी रखने होंगे। आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक क्षेत्रों में स्तव (Sustainable) एवं आपसी लाभ पर आधारित (Mutually Rewarding manner) संबंध को बनाए रखने के लिए लगातार प्रयास करने होंगे।

प्रवासी भारतीयों की संख्या (Numbers of Indian Diaspora)

विश्व के 191 देशों में लगभग 2 करोड़ 50 लाख प्रवासी भारतीय एवं भारतीय मूल के व्यक्ति रहते हैं। प्रवासी भारतीयों की बड़ी संख्या ऑस्ट्रेलिया, बहरीन, कनाडा, फिजी, गुयाना (Guyana) कुवैत, मलेशिया, मॉरीशस (Mauritius), म्यांमार, नेपाल, नीदरलैंड, न्यूजीलैंड, ओमान, कतर, सऊदी अरब, सिंगापुर, दक्षिण अफ्रीका, श्रीलंका, सुरिनाम, थाईलैंड, त्रिनिडाड एवं टोबैगो (Trinidad & Tobago), यूएई (UAE), यूनाइटेड किंगडम (United Kingdom), संयुक्त राज्य अमेरिका तथा यमन जैसी में रहती हैं।

प्रवासी भारतीयों के प्रमुख संगठन (Indian Association Abroad)

- | | |
|--|----------|
| ● कनाडा-भारत फाउंडेशन (Canada-India Foundation) | - कनाडा |
| ● भारत-कनाडा वाणिज्य संघ (India-Canada Chambers of Commerce) | - कनाडा |
| ● गुजराती हिन्दू सीनियर सोसाइटी (Gujrati Hindu Senior Society) | - कनाडा |
| ● भारतीय मूल के व्यक्तियों का वैश्विक संगठन
(Global Organization of People of India Origin) | - गुयाना |

- मलेशिया भारतीय कांग्रेस (Malaysia Indian Congress) - मलेशिया
- भारतीय मूल के व्यक्तियों का वैश्विक संगठन (Global Organisation of People of Indian Origin – GOPIO) - मॉरीशस
- म्यांमार की भारतीय सभा (Indian Association of Myanmar) - म्यांमार
- रूस-भारत क्लब (Russian-Indian Club) - रूस
- सिंगापुर भारतीय सभा (Singapore Indian Association) - सिंगापुर
- श्रीलंका-भारत सांस्कृतिक सभा (The Sri Lanka – India Cultural Association) - श्रीलंका
- भारतीय सभा बर्न (Indian Association Berne) - स्विट्जरलैंड
- हिन्दू आकांक्षाओं की प्राप्ति के लिए कार्य कर रही समाज (Society Working for Advancement of Hindu Aspirations – SWAHA) - त्रिनिडाड एवं टोबैगो
- भारतीय कामगार सभा (Indian Workers Association) - यूनाइटेड किंगडम
- भारतीय समुदाय केंद्र (Indian Community Centre) - अमेरिका
- सिलिकॉन वैली भारतीय पेशेवर सभा (Silicon Valley Indian Professionals Association – SIPA) - अमेरिका
- भारतीय-अमेरिकी मित्रता संघ (Indo-American Friendship Forum) - अमेरिका

भारत एवं प्रवासी भारतीयों के बीच बढ़ती अंतर्क्रिया को देखते हुए उनका इतिहास को ध्यान में रखते हुए 2004 में प्रवासी भारतीय मंत्रालय की स्थापना की गई। इस मंत्रालय के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

- प्रवासी भारतीयों की भारत से जुड़ाव को सुविधा उपलब्ध कराना ताकि सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक रूप से वे भारत के साथ जुड़े रहें।
- राष्ट्रीय विकास प्रयासों में प्रवासी भारतीयों की निजी एवं सामुदायिक भूमिका के लिए संस्थागत व्यवस्था करना।
- भारत एवं प्रवासी भारतीयों के बीच संबंध सुदृढ़ करना।
- अंतर्गत आर्थिक हस्तक्षेप एवं अंतराष्ट्रीय सहयोग से उत्पादन प्रबंधन को प्रोत्साहित एवं सुगम बनाना।

भारतीय प्रवासी रोजगार परिषद (Indian Council for Overseas Employment)

प्रवासी भारतीय मंत्रालय ने प्रवासी भारतीयों के रोजगार संवर्द्धन के लिए सोसाइटीज एक्ट 1860 के तहत भारतीय प्रवासी रोजगार परिषद की स्थापना की है। यह परिषद अंतराष्ट्रीय श्रम बाजार में निजीकरण संस्था (Think Tank) के रूप में कार्य करती है। यह परिषद प्रवासी भारतीयों को अंतराष्ट्रीय श्रम बाजार में रोजगार संवर्द्धन के लिए प्रेरित करने में सक्रिय है। परिषद के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं-

- विदेशों में रोजगार अवसरों को आकर्षक बनाना।
 - अंतराष्ट्रीय श्रम बाजार में श्रम आपूर्ति रिक्रियर्स तथा उनके अनुसार दक्षता की पहचान करना ताकि उन्हें भरा जा सके।
 - कौशल (Skills) का विकास तथा उसे अद्यतन बनाए रखना, विदेश जाने से पूर्व विभिन्न श्रेणी के श्रमिकों के लिए परिस्थितियों के अनुसार अनुस्थापना कार्यक्रम (Orientation Programme) आयोजित करना।
 - विदेशी नियोक्तकों, रोजगार संवर्द्धन एजेंसियों, मानव संसाधन आपूर्ति आदि के बीच तालमेल बनाए रखना।
 - अंतराष्ट्रीय श्रम बाजार, उसकी गतिशीलता, भारत एवं विदेशों में भारतीय श्रमिकों की कठिनाइयाँ, दूसरे देशों में कार्य कर रहे मजदूरों की स्थिति तथा संबंधित नीतियों पर नजर रखना एवं इन मुद्दों से जुड़े विषयों पर अध्ययन करना।
- यह परिषद स्वायत्त संस्था के रूप में कार्य करती है। यह प्रयास करता है कि अंतराष्ट्रीय रोजगार अवसरों का अधिक लाभ भारत के श्रमिकों को मिले। जो श्रमिक विदेश में कार्य करते हैं उनसे संबंधित कई शिकायतें भी प्राप्त होती हैं, जैसे- मजदूरी नहीं मिलना या देर से मिलना, ठेका शर्तों के अनुसार काम नहीं मिलना आदि।
- मंत्रालय द्वारा सभी राज्य सरकारों तथा केंद्र शासित प्रदेशों के प्रशासकों को सलाह दी गई है कि वे अनियमितता बरतने वाले एजेंटों के प्रति सतर्क रहें। विदेश जाकर अकुशल कार्य करने वाले लोगों को कोई परेशानी न उठाना पड़े इसके लिए प्रवासी मामलों के मंत्रालय ने कई ठोस कदम उठाए हैं-

- इमिग्रेशन चेक रेक्वायर्ड (Emigration Check Required) वाले देशों में कार्य के लिए जाने वाली महिला की उम्र 30 वर्ष होना जरूरी है।
- यदि विदेशी नियोजता प्रत्यक्ष रूप से नियुक्त करता है, तो उसे 25000 डॉलर सुरक्षा राशि (Security Money) जमा करनी होगी।
- रोजगार से संबंध दस्तावेज का सत्यापन आवश्यक है।
- उत्प्रवासन (संशोधन) विधेयक, 2009 के द्वारा नियुक्ति एजेंसियों के दायित्वों एवं कर्तव्यों का दायरा सुनिश्चित किया गया है।

भारतीय समुदाय कल्याण कोष (Indian Community Welfare Fund)

भारतीय समुदाय कल्याण कोष प्रारंभ में इमिग्रेशन चेक रेक्वायर्ड (Emigration Check Required) देशों के लिए था। अब इसका विस्तार कर विश्व के 43 भारतीय मिशनों (Indian Missions) को इसमें शामिल कर लिया गया है। इस कोष का उपयोग भारतीय मिशन प्रवासी भारतीयों के कल्याण से संबंधित गतिविधियों पर किए जाने वाले आकस्मिक व्यय को पूरा करने के लिए करते हैं। विदेशी धरती पर किसी संकट में फँसे श्रमिकों के कल्याण के लिए भी इस कोष का उपयोग होता है। इस कोष का उद्देश्य आवश्यकतानुसार कुछ प्रमुख सेवाओं के लिए धन की व्यवस्था करना है, जैसे-

- घरेलू एवं अर्द्धकुशल श्रमिकों में से व्यथित परिवारों के लिए रहने की व्यवस्था करना।
- दिवंगत प्रवासी भारतीय के शरीर को उसके प्रायोजक या परिवार द्वारा भारत अथवा प्रमशान भूमि तक ले जाने में अक्षम रहने पर, इस कार्य हेतु वित्तीय मदद देना या खर्च उठाना।
- जरूरतमंद प्रवासी भारतीयों को चिकित्सा सुविधा उपलब्ध करवाना।
- किसी देश में किसी कारणों से फँसे प्रवासी भारतीयों को हवाई जहाज से निकालने की व्यवस्था करना।
- जरूरतमंद प्रवासी भारतीयों को आवश्यक मामलों में प्राथमिक कानूनी सहायता उपलब्ध कराना।

इस कोष के लिए अधिक स्रोत पासपोर्ट वीजा, ओसीआई और वीजा फ्री पर दातावास सेवा, विविध सेवा शुल्क जैसा भारतीय प्रवासी मामलों पर मंत्रालय द्वारा दी जाने वाली धनराशि है।

पिछले प्रन्द्व वर्षों में भारत से रोजगार की तलाश में विदेश जाने वाले लोगों की संख्या में वृद्धि हुई है। विदेशों के अनेक देशों में भारतीय श्रमिकों की मांग बढ़ रही है। आने वाले दिनों में इनकी मांग और भी बढ़ सकती है। ऐसी स्थिति में भी अनेक प्रकार की समस्याओं से जूझने के लिए मीडिया के माध्यम से जागरूकता अभियान चलाया जा रहा है। इसके अतिरिक्त मुख्यतः निम्नलिखित समस्याओं के प्रति आगाह किया जाता है।

- वैधानिक उत्प्रवासन प्रक्रिया एवं विदेश गए श्रमिकों की समस्या।
- विदेश में भारतीय घरेलू श्रमिकों एवं एनआईआई राहियों से संबंधित समस्याओं के प्रति आगाह किया जाता है।

प्रवासी भारतीय मंत्रालय प्रस्थान एवं अनुस्थापन (Orientation) कोशिका के माध्यम से निम्नलिखित कार्य करता है-

- भारतीय श्रमिक जिस देश में जा रहे हैं, उस देश के कानूनों, भाषा, संस्कृति आदि के बारे में जानकारी देना।
- भारतीय श्रमिकों को इस रूप में तैयार करना ताकि वे बाहरी परिवेश के साथ सामंजस्य स्थापित कर सकें और बेहतर महसूस कर सकें।
- विदेशों में भारतीय श्रमिकों के लिए रोजगार का विकल्प प्रदान करना तथा उनकी उत्पादकता (Productivity), संपन्नता एवं प्रसन्नता में कमी नहीं आने देना।
- वैश्विक मानकों के अनुरूप देश में दक्षता का विकास करना तथा असंगठित क्षेत्र के लिए दक्षता विकास कार्यक्रम की योजना बनाना उसका कार्यान्वयन एवं निगरानी करना।

प्रवासी भारतीय मंत्रालय ने विदेशों में रहने वाले प्रवासी भारतीय श्रमिकों के हितों की रक्षा के लिए कई देशों के साथ द्विपक्षीय सहमति बनाई है। मलेशिया तथा खाड़ी के देशों जार्डन, कतार, यूएई, कुवैत, ओमान, बहरीन के साथ भारत ने श्रमिकों के हितों की रक्षा के लिए द्विपक्षीय सहयोग रोजगार अवसरों को बढ़ाने, नियुक्ति प्रक्रिया के आधुनिकीकरण, द्विपक्षीय श्रमिक समस्याओं का समाधान संयुक्त समिति से करने आदि का प्रयास किया गया है।

मानव संसाधन गतिशीलता भागीदारी (Human Resource Mobility Partnership – HRMP)

भारत में उपलब्ध युवा एवं कुशल कार्यबल का सदुपयोग वे देश कर सकते हैं जहाँ कार्यबल की कमी है। श्रम गतिशीलता भागीदारी के माध्यम से श्रम गतिशीलता को लाभकारी बनाने, इसके खतरों को कम करने तथा श्रम उत्प्राप्ति के लिए सार्थक प्रयास किया जाता है। मंत्रालय यूरोपीय संघ के देशों के साथ ऐसी भागीदारी समझौता करने का प्रयास कर रहा है।

द्विपक्षीय सामाजिक सुरक्षा समझौता (Bilateral Social Security Agreement)

द्विपक्षीय सामाजिक सुरक्षा समझौतों से दोतरफा आधार पर श्रमिकों को मेजबान देश (जिस देश में श्रमिक कार्य कर रहा हो) में देश के कानून के अंतर्गत सामाजिक सुरक्षा योगदान से छूट मिल सकती है बशर्ते श्रमिक स्वदेश में सामाजिक सुरक्षा प्रणाली के अंतर्गत आता हो और विदेश में नियुक्ति के दौरान उसने उस प्रणाली के तहत निरंतर अपना अंशदान किया हो। अन्य श्रेणियों के अंतर्गत उन श्रमिकों के लिए पेंशन की व्यवस्था की जा सकती है जिन्होंने मेजबान देश के कानून के अनुसार सामाजिक सुरक्षा अंशदान किया हो। न्यूनतम अंशदान अवधि के नाम पर अंशदान की क्षति रोकने के लिए उन्हें दोनों देशों के कानूनों के अंतर्गत अंशदान अवधियों को जोड़ने की सुविधा दी जाएगी।

भारतीय प्रवासी नागरिकता योजना (Overseas Citizenship at India Scheme)

उत्तरी अमेरिका एवं अन्य विकसित देशों में रहने वाले प्रवासी भारतीयों की लगातार माँग को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने वर्ष 2005 में भारतीय नागरिकता अधिनियम, 1955 में संशोधन कर दोहरा नागरिकता का प्रावधान लागू किया था। इससे यह आशा बनी, कि प्रवासी भारतीयों की आशाओं एवं आकांक्षाओं को पूर्ण किया जा सकेगा। वर्ष 2006 में नई दिल्ली में आयोजित प्रवासी भारतीय दिवस के अवसर पर इस योजना का शुभारंभ किया गया था। इस योजना के अंतर्गत नागरिकता अधिकारों सहित केंद्र सरकार द्वारा सरकारी राजपत्र में निर्दिष्ट किए गए देशों को छोड़कर सभी देशों के भारतीय मूल के व्यक्तियों को भी कि भारत के नागरिक थे अथवा 26 जनवरी, 1950 को या उसके बाद भारत के नागरिक बनने के पात्र थे का प्रवासी भारतीय नागरिकता कानून में पंजीकरण कराने की सुविधा देने की व्यवस्था है। भारत में पंजीकृत प्रवासी नागरिकों को वह प्रवेश, वह आयामी धातु प्रमाण के लिए आजीवन बीजा की सुविधा दी जाती है। भारत में किसी भी अवधि तक रहने के लिए प्रवासी विदेश पंजीकरण अधिकारी अथवा विदेश पंजीकरण अधिकारी के यहाँ उन्हें पंजीकरण कराने की आवश्यकता नहीं है। अप्रवासी मामलों के मंत्रालय ने अधिसूचित किया है कि उन्हें भारत के अंदर घरेलू क्षेत्र में हवाई टिकट शुल्क, निरातल पाके अत्यावश्यक देखने के लिए शुल्क तथा देश में भारतीय बच्चा गोद लेने के मामले में अप्रवासी भारतीयों को समान माना जाएगा। उन्हें अप्रवासी भारतीयों के समान आर्थिक, वित्तीय तथा शैक्षिक क्षेत्रों में सभी सुविधाएँ उपलब्ध होंगी।

प्रवासी भारतीयों के लिए भारत की जाँची कार्यक्रम (Know India Programme for Overseas Indians)

भारत की जाँची कार्यक्रम के अंतर्गत 18-26 आयु वर्ग के प्रवासी भारतीय (Indian Diaspora) को देश के बहुमुखी विकास तथा उपलब्धियों से अवगत कराया जाता है। भारत की जाँची कार्यक्रम को आयोजन प्रवासी भारतीय मंत्रालय द्वारा की जाती है। यह कार्यक्रम युवा प्रवासी भारतीय छात्रों तथा युवा पेशवरों को भारत आने तथा निवास के आदान-प्रदान के लिए एक मंच प्रदान करता है। इसका उद्देश्य उनके वंशजों की भूमि के नजदीक लाना है।

प्रवासी भारतीय सम्मान पुरस्कार (Pravasi Bharatiya Samman Award)

प्रवासी भारतीय सम्मान पुरस्कार का आरंभ भारत सरकार द्वारा 2003 में किया गया। प्रत्येक वर्ष प्रवासी भारतीय दिवस सम्मेलन के अवसर पर प्रतिष्ठित प्रवासी भारतीयों को इस पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है। प्रवासी भारतीय सम्मान पुरस्कार की संशोधित मार्ग दर्शिकाओं के अनुसार यह पुरस्कार किसी अप्रवासी भारतीय, भारतीय मूल के व्यक्ति, संगठन, संस्थान जिसे अप्रवासी भारतीयों अथवा भारतीय मूल के व्यक्तियों द्वारा स्थापित किया गया हो और जिसने निम्नलिखित कार्य किए हों, को दिया जाता है।

- भारत के साथ विदेशों की सूझबूझ बढ़ाने में योगदान किया हो, भारत के उद्देश्यों एवं चिंताओं को दूर करने प्रति वास्तविक रूप में सहायता की हो।
- प्रवासी भारतीयों (Indian Diaspora) के कल्याण के लिए कार्य किया हो।
- भारत एवं विदेशों में लोकोपकारी, धर्मार्थ, सामाजिक या मानवीय कार्यों में योगदान किया हो।
- भारत एवं प्रवासी भारतीयों (Indian Diaspora) के बीच संबंधों को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से आर्थिक, सांस्कृतिक एवं वैज्ञानिक क्षेत्रों में उल्लेखनीय योगदान किया हो।
- अपने निवास के देश में किसी क्षेत्र में ऐसा उल्लेखनीय कार्य किया हो, जिससे भारत की प्रतिष्ठा बढ़ी हो।

- ये पुरस्कार राष्ट्रपति द्वारा प्रदान किए जाते हैं। प्रवासी भारतीय सम्मान पुरस्कार प्रवासी भारतीयों को दिया जाने वाला सर्वाधिक महत्वपूर्ण सम्मान है।

प्रधानमंत्री की प्रवासी भारतीयों की वैश्विक सलाहकार परिषद् (Prime Minister's Global Advisory Council of Overseas Indians)

प्रवासी भारतीय मामलों के मंत्रालय ने एक ऐसी परिषद् गठित की है जिसमें दुनियाभर के प्रवासी भारतीय एवं भारतीय मूल के विविध क्षेत्रों के प्रतिष्ठित व्यक्ति शामिल होते हैं। इस परिषद् का नाम प्रधानमंत्री की प्रवासी भारतीयों की वैश्विक सलाहकार परिषद् है। प्रधानमंत्री इस परिषद् के अध्यक्ष हैं।

इस परिषद् के निम्नलिखित कार्य हैं-

- अनुभवी तथा शिक्षित प्रवासी भारतीयों के लिए एक मंच प्रदान करना।
- भारतीय तथा प्रवासी भारतीय के बीच दोतरफा नियुक्ति एजेंडा तैयार करना।
- भारत के विकास लक्ष्यों को हासिल करने में प्रवासी भारतीयों को निवेश की सुविधा प्रदान करना।
- प्रवासी भारतीयों की आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक जरूरतों के मद्देनजर भारत में संस्था का निर्माण करना। परिषद् के गठन से प्रवासी भारतीयों को एक ऐसा मंच मिला है, जहाँ वे अपने विचारों का आदान-प्रदान कर सकते हैं। यह परिषद् योजना निर्माण एवं योजना कार्यान्वयन के रूप में कार्य करती है।

परिषद् की बैठकों में सामाजिक एवं परंपरागत से संबंधित कार्यों को प्रभावशाली शिक्षा एवं रक्षा विकास, अकादमिक तथा वैज्ञानिक सहयोग, भारत में निवेश की सुविधाएं तथा युवा प्रवासी भारतीयों को उनकी जड़ों से जोड़ना जैसे विषयों पर बातचीत की जाती है।

प्रवासी भारतीय सुविधा केंद्र (Overseas Indian Facilitation Centre—OIFC)

प्रवासी भारतीय सुविधा केंद्र एक अत्याधुनिक संस्था है। इसकी स्थापना भारतीय उद्योग परिषद् की प्रागोदर से की गई है। यह केंद्र भारत में प्रवासी भारतीयों को निवेश को प्रोत्साहित करने के लिए एकलक्षित की के रूप में कार्य करता है। यह केंद्र प्रवासी भारतीयों को विविध प्रकार के व्यापार से संबंधित जानकारी, परामर्श सेवाएँ तथा ज्ञान नेटवर्क की सुविधा प्रदान करता है। इस केंद्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- प्रामाणिक और सम-समयिक जानकारी प्रदान करते हुए भारत में प्रवासी भारतीय निवेश को प्रोत्साहित करना।
- उन प्रवासी भारतीयों के लिए जो ज्ञान फ्लो का कार्य करेंगे और जिनके ज्ञान संसाधनों का इस्तेमाल आईसीटी प्लेटफॉर्म द्वारा किया जाएगा, के बारे में डाय बेस तैयार करना। डायस्पॉरा नॉलेज नेटवर्क (Diaspora Knowledge Network—DKN) की स्थापना और उसका संचालन करना।
- आधारभूत संरचना एवं सामाजिक क्षेत्रों में प्रवासी भारतीयों के निवेश अवसरों को प्रदर्शित करने में भारत में राज्यों की सहायता करना।
- प्रवासी भारतीय सुविधा केंद्र का उद्देश्य भारतीय राज्यों, भारतीय व्यापारियों एवं संभावित प्रवासी निवेशकों को समान प्लेटफॉर्म पर लाना तथा निवेशकों को निवेश के अवसर की पहचान में मदद करना है।
- भारतीय मूल के व्यक्तियों (Peoples of Indian Origin—PIO) एवं अप्रवासी भारतीयों (Non-Resident Indians) को परामर्श सेवाएँ प्रदान करना। दूतावास संबंधी मामले, भारत में प्रवास, निवेश एवं वित्तीय मुद्दों पर परामर्श सेवाएँ दी जा सकती हैं।
- निवेश संबंधी समस्त जानकारी के लिए समाशोधन गृह (Clearing House) के रूप में कार्य करना।

इस कार्य को अपने अंतिम परिणति तक पहुँचाने के लिए आईसीटी प्लेटफॉर्म के जरिए वास्तविक समयाधार पर कार्रवाई की जाएगी।

प्रवासी भारतीयों का भारत विकास फाउंडेशन

(India Development Foundation for Overseas Indian)

प्रवासी भारतीयों द्वारा गठित विकास फाउंडेशन, एक अलाभकारी न्यास के रूप में कार्य करता है। फाउंडेशन का लक्ष्य प्रवासी भारतीयों को परोपकारिक गतिविधियों में सुविधा पहुँचाना है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए नवीन परियोजनाओं और साधनों का सहारा लिया जाता है। जैसे ग्रामीण उद्यमियों के लिए लघु ऋण उपलब्धता, महिलाओं के आर्थिक सशक्तीकरण के लिए स्वयं सहायता समूह का गठन करना, प्राथमिक शिक्षा में उत्कृष्ट उपाय करना और ग्रामीण वितरण में प्रौद्योगिकी संबंधी उपाय।

फाउंडेशन का संचालन प्रमुख न्यासियों के बोर्ड (Board of Trustees) के द्वारा की जाती है। फाउंडेशन का उद्देश्य दानदाताओं और भारत में सामाजिक क्षेत्र में काम करने वाले भरोसेमंद गैर सरकारी और अलाभकारी स्वयं संगठनों के बीच भागीदारी बनाते हुए प्रमुख प्रवासी भारतीयों की परोपकारिता पूँजी को भारत के सामाजिक क्षेत्र में लगाना है। संक्षेप में फाउंडेशन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- प्रवासी भारतीयों को भारत में जनकल्याणकारी कार्यों के लिए प्रेरित करना, उन्हें एकल खिड़की सुविधा के जरिए भागीदारी में मदद पहुँचाना तथा सार्वजनिक-निजी भागीदारी कायम करना।
- भारत में सामाजिक पूँजी और परोपकारिता नेटवर्क की स्थापना एवं रखरखाव, जो भरोसेमंद संस्थानों, परियोजनाओं और कार्यक्रमों की सूची प्रदान कर सके।
- परोपकारिता संबंधी जानकारी के लिए समाशोधन गृह (Clearing House) के रूप में कार्य करना।
- भारत में राज्यों से भागीदारी और भरोसेमंद भारतीय परोपकारिता संगठनों को प्रोत्साहित करना ताकि वे ग्रामीण महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु ऐसे क्षेत्रों में प्रवासी भारतीयों के समक्ष सामाजिक विकास के अवसरों को प्रदर्शित कर सके, जो राष्ट्रीय प्राथमिकताओं से बेहतर ढंग से मेल खाते हैं।

ज्ञान का वैश्विक भारतीय नेटवर्क (Global Indian Network of Knowledge)

ज्ञान का वैश्विक भारतीय नेटवर्क एक इलेक्ट्रॉनिक मंच है जो भारतीय मूल के लोगों को जोड़ने का कार्य करता है। इस नेटवर्क का विकास टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेज के द्वारा किया गया है। यह नेटवर्क प्रवासी भारतीयों एवं भारत के बीच ज्ञान के आदान-प्रदान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। इस आदान-प्रदान का महत्वपूर्ण लक्ष्य भारतीय डायस्पारा का इलेक्ट्रॉनिक जालजोड़ कायम करना और भारत में लक्षित एवं व्यापक नीतियों के साथ ग्लोबल-भाति डिजाइन की गई परियोजनाओं के जरिए विभिन्न क्षेत्रों एवं क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी एवं मौलिकता का विकास करना है। इसका अतिमहत्वपूर्ण विकास के बारे में विचारों का अन्तर्गत विकास को चुनौतियों को पुरास्कारों में महत्वपूर्ण तत्वों की पहचान, मौलिक एवं प्रौद्योगिकी संबंधी उपायों के जरिए समाधान, वितरण और उनकी रूपरेखा तैयार करना है।

प्रवासी भारतीय दिवस (Pravasi Bharatiya Divas)

प्रवासी भारतीयों से संबंधित उच्च स्तरीय समिति की अनुशंसाओं के अनुसार सरकार ने 9-11 जनवरी, 2003 को नई दिल्ली में पहला प्रवासी भारतीय दिवस का आयोजन किया। प्रत्येक वर्ष आयोजित किए जाने वाले प्रवासी भारतीय दिवस के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- भारत एवं प्रवासी भारतीयों के बीच संपर्क को बढ़ाना।
- भारतीयों एवं प्रवासी भारतीयों के बीच एक-दूसरे के बारे में जागरूकता सृजन करना।
- प्रवासी भारतीयों के प्रति भारत की नई सोच (Approach) को परिभाषित करना।
- प्रवासी भारतीयों से संबंधित महत्वपूर्ण घोषणाएँ करना।

इस अवसर पर भारतीय प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने भारतीय प्रवासी नागरिकता योजना (Scheme For Overseas Citizenship) की शुरुआत की। प्रवासी भारतीय दिवस के आयोजन से प्रवासी भारतीयों के प्रति भारत की एक नई सोच विकसित हुई तथा उनके साथ संबंधों में एक नए अध्याय की शुरुआत हुई। 2004 में संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन की सरकार बनने के उपरांत भी प्रवासी भारतीयों के साथ जुड़ने का यह प्रयास जारी है। संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन की सरकार ने कुछ महत्वपूर्ण कदम भी उठाए हैं। जैसे-

- दोहरी नागरिकता का उद्घाटन।
- डायस्पोरा नॉलेज नेटवर्क (Diaspora Knowledge Network) की स्थापना।
- स्वदेश धन भेजने की सुविधा प्रदान करना।

- पीआईओ विश्वविद्यालय (PIO University) की स्थापना का प्रयास।
- भारतीय व्यापार संघ (Confederation of Indian Industry – CII) के साथ मिलकर प्रवासी भारतीय सुविधा केंद्र (Indian Overseas Facilitation Centre) की स्थापना।
- विदेशों में रोजगार अवसर बढ़ाने के लिए एक परिषद् की स्थापना।
- भारतीय विकास कोष (Indian Development fund) की स्थापना के साथ प्रवासियों में जनकल्याण (Diaspora Philanthropy) को बढ़ावा।
- प्रवासी भारतीय संसाधन केंद्र (Overseas Workers Resource Centre) की स्थापना।
- भारतीय समुदाय कल्याण केंद्र (Indian Community Welfare Fund) की स्थापना।
- भारतीय मूल के व्यक्तियों को परामर्श देने के लिए वैश्विक परामर्श परिषद् (Global Advisory Council) की स्थापना।

9 जनवरी को प्रवासी भारतीय दिवस मनाने का निर्णय इसलिए किया गया कि इसी दिन (9 जनवरी, 1915) महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के खिलाफ लम्बा संघर्ष चलाकर भारत लौटे थे और स्वतंत्रता आंदोलन का नेतृत्व किया था जिससे भारतीयों का जीवन हमेशा के लिए परिवर्तित हो गया।

विभिन्न प्रवासी भारतीय दिवस सम्मेलन, स्थल एवं वर्ष

क्रम	वर्ष	आयोजन स्थल	मुख्य अतिथि
पहला	2003	नई दिल्ली	श्री अनिरुद्ध जगन्नाथ प्रधानमंत्री, मॉरीशस
दूसरा	2004	नई दिल्ली	श्री भारत जगदेव राष्ट्रपति, गुयाना।
तीसरा	2005	मुम्बई	श्री जे.आर. अजोयिया उपराष्ट्रपति, सरीनाम।
चौथा	2006	हैदराबाद	श्री अहमद कदमदा राजनीतिक कार्यकर्ता, दक्षिण अफ्रीका
पांचवां	2007	नई दिल्ली	श्री एस. जयकुमार उपप्रधानमंत्री, सिंगापर
छठा	2008	नई दिल्ली	डॉ. नवीनचन्द्र रामगुलाम प्रधानमंत्री, मॉरीशस
सातवां	2009	चेन्नई	डॉ. रामदीन सैरदजोई उपराष्ट्रपति, सरीनाम
आठवां	2010	नई दिल्ली	डॉ. खालिद हामिद अध्यक्ष अल्फा डॉस्पिटल ग्रुप, ब्रिटेन
नौवां	2011	नई दिल्ली	सर आनंद सुत्यानंद, गवर्नर जनरल, न्यूजीलैंड
दसवां	2012	जयपुर	सुश्री कमला बिसस प्रधानमंत्री, त्रिनिडाड एवं टोबैगो
ग्यारहवां	2013	कोच्चि	राजकेश्वर परमाणु राष्ट्रपति, मॉरीशस

प्रवासी भारतीय बच्चों के लिए छात्रवृत्ति कार्यक्रम (Scholarship Programmes for Diaspora Children)

प्रवासी भारतीय बच्चों के लिए छात्रवृत्ति कार्यक्रम की शुरुआत 2006-07 के शैक्षिक सत्र से की गई थी। इस कार्यक्रम का मुख्य लक्ष्य भारत में उच्च शिक्षा तक प्रवासी भारतीय बच्चों को पहुँच सुनिश्चित करना तथा उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भारत को एक महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में पहचान दिलाना है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत प्रतिवर्ष 100 भारतीय मूल/प्रवासी भारतीय छात्रों को इंजीनियरिंग, तकनीकी, मानविकी, वाणिज्य, प्रबंधन, पत्रकारिता, होटल प्रबंधन, कृषि पशुपालन (Animal Husbandry) तथा कुछ अन्य स्नातक पाठ्यक्रमों को पूरा करने के लिए 4000 अमरीकी डॉलर दिए जाते हैं। इस योजना के अंतर्गत 40 देशों को शामिल किया गया है।

प्रवासी भारतीयों को मतदान का अधिकार (Voting Rights to Non-Resident Indians)

वर्ष 2010 के प्रवासी भारतीय दिवस के अवसर पर प्रधानमंत्री ने लगभग 1 करोड़ गैर-प्रवासी भारतीयों को मतदान का अधिकार देने की घोषणा की। इसके लिए जनप्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 में संसद द्वारा आवश्यक संशोधन किया गया है। इस अधिकार का प्रयोग करने के लिए यह जरूरी है कि पासपोर्टधारी प्रवासी भारतीय अपने पासपोर्ट में उल्लेखित पता वाले क्षेत्र के निर्वाचक नामावली (Electoral Rolls) में अपना नाम पंजीकृत करवाये। 3 फरवरी, 2011 को निर्वाचक पंजीकरण नियम, 1960 (Registration of Electoral Rules, 1960) को संशोधित करने से संबंधित अधिसूचना जारी कर दी गई थी। ताकि प्रवासी भारतीय मतदाता देश के चुनाव प्रक्रिया में भागीदारी कर सकें।

निष्कर्ष (Conclusion)

प्रवासी भारतीयों के साथ भारत का संबंध समयानुसार परिवर्तित होता रहा है। विविधता एवं व्यापक फैलाव के कारण जुड़ाव की प्रक्रिया को लचीला (Flexible) बनाए रखना पड़ता है ताकि प्रवासी भारतीयों के प्रत्येक वर्ग को इसमें शामिल किया जा सके। जहाँ खाड़ी के देशों में काम करने वाले कामगारों के प्रति कल्याण (Welfare) एवं धन वापस भेजने (Remittances) पर केंद्रित नीति है वहीं विकसित देशों के प्रवासी भारतीयों के प्रति बहुआयामी एवं भारत को ज्ञान शक्ति (Knowledge Power) बनाए जाने पर केंद्रित है। प्रवासी भारतीयों की ताकत का उपयोग राजनीतिक लॉबींग (Political Lobbying), छवि सुधार (Image Projection) तथा भारत के आर्थिक विकास में करना चाहिए। जिन देशों में भारतीयों को श्रमिक के रूप में ले जाया गया था उनके प्रति हमारी नीति कुछ इस प्रकार की होनी चाहिए कि वे भारत से अपने सांस्कृतिक एवं सभ्यतागत जुड़ाव को बनाए रख सकें। उनमें भारत को लेकर एक सुरक्षा का भाव हो। इन देशों में रह रहे प्रवासी भारतीयों को विशेषकर शिक्षा के क्षेत्र में मदद देने की आवश्यकता है। जिससे कि वे आगे बढ़ सकें। अमेरिका, ब्रिटेन तथा फ्रांस जैसी बड़ी शक्तियाँ अपने प्रवासियों की तकलीफ के समय रक्षा के लिए अपने आर्थिक एवं सैन्य ताकत का इस्तेमाल करती हैं। उपलब्ध आँकड़ों से यह मालूम हुआ है कि प्रवासी भारतीयों द्वारा जो निवेश भारत में किया जा रहा है वह ज्यादातर दिखावे की वस्तुओं (Conspicuous Consumption), रिएल इस्टेट (Real Estate) कारोबार, निजी शिक्षा एवं निजी स्वास्थ्य के क्षेत्रों में किया जा रहा है। दिल्ली के शहरी क्षेत्रों में एक करोड़ से ज्यादा लागत वाली 20 प्रतिशत संपत्ति (Property) प्रवासी भारतीयों द्वारा खरीदी गई है या उसमें पैसा लगाया गया है। एक बात और देखने में आई है कि प्रवासी भारतीयों द्वारा जो धन भारत भेजा जाता है या निवेश किया जाता है उसने क्षेत्रीय असमानता (Regional Disparities) को बढ़ाया है। जिस पर ध्यान दिए जाने की जरूरत है। भारत एवं प्रवासी भारतीयों का भाव एक-दूसरे के साथ जुड़ा है। हमारी विकास प्रक्रिया में प्रवासी भारतीयों की जात्रकारी विशेषज्ञता अनुभव एवं योगदान का विशिष्ट महत्व है। लेकिन उनके योगदान को सार्थक करने के लिए एक उचित पर्यावरण बनाए जाने की जरूरत है।

प्रवासी भारतीयों को व्यापक रूप से भारत के साथ जोड़ने के लिए कुछ अनुकूल दृष्टियों का निर्माण करना होगा साथ ही विभिन्न क्षेत्रों में सहभागिता को बढ़ावा देना होगा एवं इसके लिए आवश्यक संस्थाओं का निर्माण करना होगा। सभी कार्यक्रमों एवं गतिविधियों में उन्हें उचित जगह देनी होगी। अब जबकि एक नये तरह के विश्वास से हमारे भारत विश्व में एक नया स्थान बनाना चाहता है। ऐसे में प्रवासी भारतीयों के साथ संबंध महत्वपूर्ण सिद्ध होंगे। आज प्रवासी भारतीयों को प्रतिभा प्रलायन (Brain Drain) के लिए जिम्मेदार नहीं समझा जाता बल्कि प्रतिभा प्राप्ति (Brain Gain) का साधन समझा जाने लगा है।



महत्त्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय संस्थान, संस्थाएँ और मंच- उनकी संरचना, अधिदेश (Important International Institutions, Agencies and fora-their Structure, Mandate)

राष्ट्रमंडल राष्ट्र (The Commonwealth)

यह उन 54 संप्रभु देशों का स्वैच्छिक संगठन है जो कभी ब्रिटिश साम्राज्य/उपनिवेश के अधीन थे। इस संगठन का मुख्यालय लंदन में है। इसकी स्थापना 1949 में हुई थी। इस संगठन का उद्देश्य सदस्य देशों के बीच लोकतंत्र और विकास के मुद्दे पर सहयोग की भावना स्थापित करना है। इस संगठन के अंतर्गत शामिल राष्ट्रों में 2 अरब लोग निवास करते हैं। इसमें उनके धर्मों एवं नृजाति के लोग शामिल हैं। इसमें बड़े-छोटे, अमीर-गरीब सभी तरह के देश शामिल हैं। इसमें अफ्रीका के 19, एशिया के 8, अमेरिका के 3, कैरीबियाई के 10 तथा यूरोप के 3 तथा दक्षिण प्रशांत के 11 देश सम्मिलित हैं। 2009 में रवांडा राष्ट्रमंडल का सदस्य बना जबकि मोजाम्बिक (Mozambique) एवं कैमरून (Comeroon) दो ऐसे सदस्य बनने वाले देश हैं जिनका इस संगठन के साथ किसी तरह का ऐतिहासिक या प्रशासनिक जुड़ाव नहीं रहा है। 1949 में सदस्य देशों के प्रधानमंत्रियों ने लंदन घोषणा-पत्र (London Declaration) को अपनाया। इसमें इस बात का उल्लेख किया गया था कि सभी सदस्य देश स्वतंत्र एवं समान रूप से जुड़े हुए हैं। कॉमनवेल्थ की यह मान्यता है कि सबसे अच्छे लोकतंत्र की प्राप्ति सहभागिता (Partnership) के द्वारा हो सकती है। यह सहभागिता सरकार, व्यापारी समूहों एवं नागरिक समाज के बीच होनी चाहिए। इतिहास, भाषा एवं संस्थाओं के अलावा सदस्य देश लोकतंत्र, स्वतंत्रता, शांति, विधि का शासन एवं सभी के लिए अवसर, जैसे संगठन के मूल्यों से भी जुड़े हुए हैं।

कॉमनवेल्थ के सदस्य देश सहयोग, सहभागिता एवं आपसी समझ की भावना से कार्य करते हैं। कॉमनवेल्थ की प्रभावशीलता के लिए खुलापन एवं लचीलापन प्रमुख उत्तरदायी तत्व रहे हैं। समानता पर बल देने के कारण इस संगठन ने विउपनिवेशीकरण, नृजातीय भावना को समाप्त करने तथा सतत विकास को बढ़ावा देने में बड़ी भूमिका निभायी है। प्रत्येक वर्ष मार्च के दूसरे सोमवार को कॉमनवेल्थ दिवस मनाया जाता है।

संरचना (Structure)

इस संगठन की बैठक प्रत्येक 2 वर्षों में होती है। इसे जोगम (IGHOGM - Commonwealth Heads of Government Meetings) कहा जाता है। कॉमनवेल्थ मूल्यों को रक्षा एक ही सदस्यी विदेश मंत्रियों के समूह द्वारा की जाती है। इसकी सदस्यता बारी-बारी (Rotating) से कॉमनवेल्थ सदस्य देशों को मिलती है। विदेश मंत्रियों का समूह इनके उल्लेखन को निर्धारित तथा सदस्य देशों के समक्ष सामूहिक कार्रवाई की अनुमति करता है। कार्रवाई के अंतर्गत सदस्य देशों की सदस्यता निलंबित की जा सकती है या सदस्यता समाप्त की जा सकती है। यदि किसी सदस्य देश को निलंबित किया जाता है तो उसकी निलंबन को निरस्त करने के लिए हरसंभव प्रयास किया जाता है। विदेश मंत्रियों के इस समूह को कॉमनवेल्थ मंत्रि कार्य समूह (Commonwealth Ministerial Action Group - CMAG) कहा जाता है। ब्रिटन की महारानी एलिजाबेथ द्वितीय (Elizabeth II) कॉमनवेल्थ की प्रमुख हैं जबकि भारत के कमलेश शर्मा कॉमनवेल्थ के महासचिव (Secretary General) हैं।

- कॉमनवेल्थ सचिवालय (Commonwealth Secretariat): यह कॉमनवेल्थ शासन प्रमुखों द्वारा लिए जाने वाले निर्णयों के संबंध में आवश्यक तकनीकी सहायता एवं सलाह देता है एवं नीति-विकास (Policy Development) के माध्यम से इन्हें लागू करने का प्रयास करता है।
- कॉमनवेल्थ फाउंडेशन (Commonwealth Foundation): यह सिविल सोसायटी संगठनों को लोकतंत्र को बढ़ावा देने, विकास एवं सांस्कृतिक समझ बढ़ाने के लिए सहायता करती है।
- कॉमनवेल्थ शिक्षण (Commonwealth of Learning): यह विकास को प्रोत्साहन देता है और मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा में भागीदारी करता है।

अधिदेश (Mandate)

राष्ट्रमंडल सदस्य राज्यों में शांति एवं लोकतंत्र को बढ़ावा देने का कार्य करता है। यह संघर्षों को रोककर या उनका समाधान कर लोकतांत्रिक प्रक्रिया एवं विधि के शासन को मजबूत बनाने का कार्य करता है। यह मानवाधिकारों को बढ़ावा देने का कार्य करता है। यह संगठन सतत विकास एवं गरीबों के पक्ष में संवृद्धि (Growth) का समर्थन करता है। इसके अलावा यह आर्थिक मामले, शिक्षा, पर्यावरण, जलवायु परिवर्तन, लैंगिक मामले, स्वास्थ्य, मानव विकास खेल एवं युवा मामले जैसे विषयों पर कार्य करता है।

सरकार प्रमुखों तथा शिक्षा, पर्यावरण, सिविल सोसायटी, वित्त, विदेश मामले, लैंगिक मामले, स्वास्थ्य, विधि, पर्यटन, युवा मामलों से संबंधित मंत्रियों की नियमित बैठक होती है। इससे यह सुनिश्चित होता है कि कॉमनवेल्थ की नीतियों एवं कार्यक्रमों में सदस्य देशों की भागीदारी हो। इससे विभिन्न सरकारों को एक-दूसरे के लक्ष्यों को बेहतर तरीके से समझने में मदद मिलती है।

तकनीकी सहयोग एवं रणनीतिक प्रतिक्रिया समूह

(Technical Cooperation and Strategic Response Group)

राष्ट्रमंडल का प्रमुख उद्देश्य सदस्य देशों में विकास को प्रोत्साहन एवं सहायता देना है। इसमें विशेषकर छोटे एवं सबसे कम विकसित देशों पर विशेष ध्यान दिया जाता है। संगठन महत्वपूर्ण क्षेत्रों से जुड़े स्थानीय, राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय संस्थाओं के क्षमता निर्माण (Capacity Building) पर बल देता है। तकनीकी सहयोग एवं रणनीतिक प्रतिक्रिया समूह की स्थापना 2008 में संस्थात्मक क्षमता विकास (Institutional Capacity Development) कार्यक्रमों के अंतर्गत किया गया था।

इसके अंतर्गत तीन अंतरसरकारी संगठन हैं।

खाड़ी सहयोग परिषद् (Gulf Cooperation Council)

यह मध्यपूर्व या पश्चिम एशिया के देशों का एक क्षेत्रीय संगठन है। इसके सदस्य देशों में कुवैत, ओमान, कतर, सऊदी अरब, यू.ए.ई. और बहरीन शामिल हैं। इसकी स्थापना 1981 में हुई थी तथा इसका मुख्यालय रियाद (सऊदी अरब) में है।

अधिदेश (Mandate)

खाड़ी सहयोग परिषद् के चार्टर में इसकी स्थापना के निम्नलिखित उद्देश्य बताए गए हैं-

- सदस्य देशों के बीच सभी क्षेत्रों में एकता को बढ़ावा देने के लिए समन्वय, एकीकरण एवं अंतर्संबंध को बढ़ावा देना।
- लोगों के बीच संपर्क एवं संबंध को मजबूत बनाना।
- निम्नलिखित क्षेत्रों में एक समान विनियमन सुनिश्चित करना।
 - (i) आर्थिक एवं वित्तीय मामले
 - (ii) वाणिज्य, सीमा शुल्क, संचार
 - (iii) शिक्षा एवं संस्कृति
 - (iv) सामाजिक एवं स्वास्थ्य संबंधी मामले
 - (v) सूचना एवं पर्यटन
 - (vi) विधायी एवं प्रशासनिक मामले
- उद्योग, खनन, कृषि, जल एवं पशु संसाधनों के क्षेत्र में वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास को बढ़ावा देना तथा लोगों की भलाई के लिए निजी क्षेत्र के माध्यम से सहयोग को बढ़ावा देना।

संरचना (Structure)

सर्वोच्च परिषद् (The Supreme Council): सर्वोच्च परिषद्, खाड़ी सहयोग परिषद् का सर्वोच्च प्राधिकार है। यह सदस्य देशों के राज्य प्रमुखों से मिलकर बनता है। इसकी अध्यक्षता सदस्य राज्यों के बीच वर्णानुक्रम (Alphabetical Order) से बदलता रहता है। इसकी बैठक प्रत्येक वर्ष सामान्य सत्र के रूप में होती है। बैठक की बैठक के लिए दो तिहाई सदस्यों की उपस्थिति अनिवार्य होती है। प्रत्येक सदस्य का एक मत होता है। तात्त्विक मामलों (Substantive Matters) में सर्वसम्मति से निर्णय लिए जाते हैं जबकि प्रक्रियात्मक मामलों में (Procedural Matters) सर्वोच्च परिषद् के बहुमत से निर्णय लिए जाते हैं।

सर्वोच्च परिषद् का परामर्शदात्री आयोग (The consultative Commission of the Supreme Council): यह तीस सदस्यों से मिलकर बनता है। प्रत्येक सदस्य राज्य से पाँच सदस्य लिए जाते हैं। इनका कार्यकाल 3 वर्ष का होता है। सर्वोच्च परिषद् द्वारा सौंपे गए मामलों पर यह संस्था कार्य करती है।

विवाद समाधान आयोग (Dispute Settlement Commission): सर्वोच्च परिषद् के अधीन विवाद समाधान आयोग का गठन चार्टर की व्याख्या से संबंधित विवादों के समाधान के लिए किया गया है।

मंत्रियों की परिषद् (The Ministerial Council): मंत्रियों की परिषद् का गठन सदस्य देशों के विदेश मंत्रियों से मिलकर होता है। सर्वोच्च परिषद् के पिछले सामान्य सत्र की अध्यक्षता करने वाला सदस्य देश इसकी अध्यक्षता करता है। प्रत्येक तीन महीने में इसकी एक बार बैठक होती है।

महासचिवालय (The Secretariat General)

महासचिवालय सहयोग, समन्वय, योजना, कार्यक्रम तथा खाड़ी सहयोग परिषद् द्वारा किए जाने वाले कार्यों से संबंधित रिपोर्ट तैयार करती है। महासचिवालय में महासचिव, सहायक महासचिव तथा कार्यकारी प्रभागों के महानिदेशक होते हैं। महासचिव की नियुक्ति सर्वोच्च परिषद् द्वारा 3 वर्ष के लिए की जाती है।

भारत-खाड़ी सहयोग परिषद् (India- The Gulf Cooperation Council)

सामूहिक रूप से खाड़ी सहयोग परिषद् का भारत के लिए काफी महत्व है। खाड़ी सहयोग परिषद् के सदस्य देश भारत के सन्निकट पड़ोसी (Immediate Neighborhood) हैं। इसका कारण यह भारत के लिए काफी महत्वपूर्ण है। अपने आर्थिक एकीकरण प्रयासों के कारण खाड़ी सहयोग परिषद् काफी उन्नति कर रहा है। खाड़ी सहयोग परिषद् अपने सदस्य राज्यों के लिए आर्थिक, राजनीतिक एवं सुरक्षा नीतियों का निर्धारण कर रहा है। खाड़ी सहयोग परिषद् का भारत के निवेश भागीदार के रूप में उभरने की काफी संभावनाएँ हैं। भारत की ऊर्जा आवश्यकताओं के लिए खाड़ी सहयोग परिषद् की रिजर्व तेल एवं गैस का काफी महत्व है। खाड़ी सहयोग परिषद् के सदस्य देशों में काफी संख्या में भारतीय रहते हैं। संक्षेप में कहा जाए तो खाड़ी सहयोग परिषद् व्यापार, निवेश, ऊर्जा, मानव संसाधन के क्षेत्र में सहयोग की व्यापक संभावनाएँ उपलब्ध कराता है।

ग्रीनपीस (GreenPeace)

यह एक अंतर्राष्ट्रीय संगठन है जिसकी स्थापना सन् 1971 में कनाडा में हुई थी। ग्रीनपीस का मुख्यालय एम्सटर्डम (नीदरलैंड) में है। इस संगठन का प्रमुख उद्देश्य पर्यावरण अथवा प्रकृति की रक्षा के लिए सरकारों की उन नीतियों में परिवर्तन लाना है जो पर्यावरण के लिए खतरा उत्पन्न कर सकते हैं। ग्रीनपीस जलवायु परिवर्तन, वन, समुद्री पर्यावरण, कृषि, विषाक्त पर्यावरण एवं परमाणु अप्रसार जैसे मुद्दों पर कार्य करता है। ग्रीन पीस उपरोक्त विषयों पर वैश्विक अभियान चलाने वाला एक स्वतंत्र संगठन है। यह पर्यावरण की सुरक्षा एवं संरक्षण के लिए लोगों की मनोवृत्तियों एवं व्यवहार में परिवर्तन लाने का प्रयास करता है। यह शांति को बढ़ावा देने का भी कार्य करता है। ग्रीनपीस एशिया, अफ्रीका, यूरोप, अमेरिका एवं प्रशांत क्षेत्र के 40 देशों में मौजूद है। अपनी स्वतंत्रता (Independence) को बनाए रखने के लिए ग्रीनपीस सरकारों या निगमों से दान (Donations) स्वीकार नहीं करता है।

ग्रीनपीस 1971 से ही पर्यावरण हानि (Environmental Degradation) को विरुद्ध अभियान चला रहा है। 1971 में अमेरिका द्वारा अलास्का के अमचिता (Amchitka) क्षेत्र में भूमिगत परमाणु परीक्षण करने का प्रयास किया जा रहा था। उसी समय स्वयंसेवकों एवं पत्रकारों का एक छोटा समूह तब द्वारा वहाँ विरोध करने पहुँचा। अहिंसात्मक तरीके से विरोध करने का यह तरीका ग्रीनपीस आज भी अपना रहा है। अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए ग्रीनपीस मुक्तवाद-विचार को बढ़ावा देता है। ग्रीनपीस पर्यावरण की रक्षा के लिए अनुसंधान, लॉबी तथा राजनय का सहारा लेता है। ग्रीनपीस उच्च स्तर पर अहिंसात्मक संघर्ष (High Profile Non-violent Conflict) को भी बढ़ावा देता है जिससे कि समाज में वाद-विवाद एवं विचार-विमर्श को उच्च स्तर पर ले जाया जा सके। ग्रीनपीस के स्वयंसेवक रेंबो वॉरियर (Rainbow Warrior) नामक ध्वज-पात का प्रयोग करते हैं। प्रतीक स्वरूप यह उस समय की दशात है जब मानव के लालच के कारण धरती बिमार हो जाती है और उस समय रेंबो वॉरियर के नाम से जाने जाने वाले लोग उसकी रक्षा के लिए उठ खड़े हुए थे। ग्रीनपीस के स्वयंसेवक अपने कार्यों को जिम्मेवारी स्वयं लेते हैं एवं अहिंसा के प्रति प्रतिबद्ध हैं। ये अपनी अंतरात्मा के अनुसार कार्यवाही करते हैं।

संगठन (Structure)

ग्रीनपीस का गठन एम्सटर्डम में स्थित मुख्यालय तथा 45 देशों में कार्य कर रहे 28 क्षेत्रीय कार्यालयों से मिलकर हुआ है। क्षेत्रीय कार्यालय ग्रीनपीस मुख्यालय की देखरेख से स्वायत्त रूप से कार्य करते हैं। यह ग्रीनपीस के वैश्विक नीतियों एवं रणनीतियों में समन्वय स्थापित करता है। यह नीति निर्माण प्रक्रिया के लिए सुविधा प्रदान करता है। यह ग्रीनपीस के वैश्विक अभियानों का संचालन करता है एवं उनमें समन्वय स्थापित करता है। ग्रीनपीस के वैश्विक रणनीतियों एवं वित्तीय निष्पादन को निगरानी करता है। यह प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में संगठन के लिए ग्रीनपीस की उपस्थिति सुनिश्चित करता है। यह कोष संग्रहण में सहायता तथा ग्रीनपीस ट्रेडमार्क का संरक्षण करता है। राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय कार्यालयों के लिए किराये की सूचना तकनीकी एवं वेब सेवाएँ उपलब्ध कराता है।

ग्रीनपीस निदेशक मंडल (GreenPeace Board of Directors)

इस संस्था का गठन सात सदस्यों से मिलकर बनता है। इसकी भूमिका ग्रीनपीस के बजट की स्वीकृति देना, खातों का लेखांकन करना तथा ग्रीनपीस के निदेशक मंडल की नियुक्ति करना है। यह संगठन के गतिविधियों की निगरानी करने के लिए भी उत्तरदायी है। यह संगठनात्मक नीतियों का निर्णय करता है तथा नए अभियानों की अनुमति प्रदान करता है।

प्रत्येक क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय कार्यालयों का प्रशासन भी एक निदेशक मंडल द्वारा किया जाता है। सामान्य रूप से इनका चुनाव स्वयंसेवकों एवं कार्यकर्ताओं द्वारा किया जाता है। प्रत्येक राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय कार्यालय बोर्ड, ग्रीनपीस अंतर्राष्ट्रीय वार्षिक सामान्य बैठक (Green Peace International Annual General Meeting) के लिए एक न्यासी (Trustee) की नियुक्ति करता है। इस तरह वार्षिक सामान्य बैठक, इस संगठन की प्रभावी निगरानी करता है। न्यासी (Trustees) ग्रीनपीस के अंतर्राष्ट्रीय बोर्ड का चुनाव करता है।

जी-24 (G-24)

यह अंतर्राष्ट्रीय मौद्रिक कार्यकलापों से संबंधित 24 देशों का एक अंतरसरकारी समूह है। इसकी स्थापना 1971 में की गई थी।

अधिदेश (Mandate)

इस समूह का प्रमुख कार्य विकासशील देशों के मौद्रिक एवं विकास से संबंधित मुद्दों पर उनकी स्थिति को सुदृढ़ करना है। इसका यह प्रयास होता है कि अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय व्यवस्था के सुधार में विकासशील देशों की सहभागिता एवं प्रतिनिधित्व में बढ़ोतरी हो। जी-24 मुख्यतया अंतर्राष्ट्रीय मौद्रिक एवं वित्तीय समिति (The International Monetary and Financial Committee – IMFC) तथा विकास समिति (Development Committee – DC) की कार्यसूची में शामिल मुद्दों पर विकासशील देशों की नीतियों में समन्वय स्थापित करता है।

भारत, चीन एवं अर्जेंटीना जैसे सदस्य देशों के वैश्विक आर्थिक शक्ति के रूप में उभरने के कारण जी-24 की भूमिका में महत्वपूर्ण बदलाव आया है। इस कारण जी-24 की जो भूमिका 1970 एवं 1980 के दशक में हुआ करती थी, वह अब नहीं है। भारत ने 1983-84 तथा 2011-12 के दौरान जी-24 की अध्यक्षता की है। विकासशील देशों के बीच वार्तालाप को बढ़ाने तथा वैश्विक आर्थिक एवं वित्तीय सहयोग के साथ-साथ विकास एजेंडा को बढ़ाने में जी-24 की बड़ी भूमिका है। जी-77 के वैसे सदस्य जो जी-24 के सदस्य नहीं हैं, वे भी इसकी बैठकों में भाग ले सकते हैं। चीन विशिष्ट अधिति या आमंत्रित अधिति के रूप में इसकी वार्षिक बैठकों को संबोधित करता है। जी-24 की वार्षिक बैठक को अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा विश्व बैंक के प्रमुखों तथा संयुक्त राष्ट्र संघ के अधिकारियों द्वारा संबोधित किया जाता है। जी-24 में सर्वसम्मति (Consensus) से निर्णय लिए जाते हैं।

संरचना (Structure)

जी-24 के सदस्य देशों को क्षेत्रवार विभाजित किया गया है:-

क्षेत्र-I (अफ्रीका): अल्जीरिया, कोटेडीवोरा, आइवरी, मिस्र, इथियोपिया, गैबोन, घाना, नाइजीरिया, दक्षिण अफ्रीका, कांगो लोकतांत्रिक गणराज्य।

क्षेत्र-II (लैटिन अमरीकी एवं कैरीबियाई): अर्जेंटीना, ब्राजील, कोलंबिया, ग्वाटेमाला, मेक्सिको, पेरू, त्रिनिदाद एवं टोबैगो तथा वेनेजुएला।

क्षेत्र-III (एशियाई): भारत, ईरान, लेबनान, पाकिस्तान, फिलीपींस, श्रीलंका एवं सीरिया।

जी-24 दो स्तरों पर कार्य करता है:-

राजनीतिक स्तर: मंत्री, उनके सहायक (Deputy), व्यूरो तथा वाशिंगटन स्थित अन्य प्रतिनिधि शामिल होते हैं।

कार्यसंचालन स्तर: इस जी-24 समूह का कार्यालय चलाता है एवं इसमें जी-24 सचिवालय तथा अनुसंधान समन्वयक (Research Coordinator) को शामिल करता है। मुद्दों पर सर्वप्रथम सहायकों (Deputies) के स्तर पर विचार-विमर्श किया जाता है तथा दस्तावेजों की स्वीकृति के साथ ही मंत्रीस्तर पर इसका समापन होता है। यह सदस्य देशों के सर्वसम्मति को ध्यान में रखता है। मंत्रीस्तरीय दस्तावेज की बैठक के अंत में प्रेस के माध्यम से सार्वजनिक किया जाता है।

जी-24 व्यूरो (The G-24 Bureau): तीन देश जी-24 व्यूरो का निर्माण करते हैं। एक अध्यक्ष तथा दूसरा एवं तीसरा उपाध्यक्ष। प्रत्येक अध्यक्ष देश भिन्न क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है। सर्वप्रथम निर्वाचित देश दूसरा उपाध्यक्ष का पद 12 महीनों के लिए संभालता है। उसके बाद वह प्रथम उपाध्यक्ष हो जाता है तथा उसके बाद वाले वर्ष में वह अध्यक्ष बन जाता है। अध्यक्ष देश ही उपाध्यक्षों के साथ मिलकर बैठकों की तैयारी तथा प्रेस को संबोधित करने का निर्णय लेता है।

अरब लीग (Arab League)

अरब लीग, उत्तरी एवं उत्तर-पूर्वी अफ्रीका तथा दक्षिण-पश्चिम एशियाई देशों का संगठन है। सन् 1945 में यह संगठन अस्तित्व में आया था। मिस्र, ईराक, जार्डन, लेबनान, सीरिया एवं सऊदी अरब इसके संस्थापक देश थे। वर्तमान में इसमें 22 देश शामिल हैं। 2012 से सीरिया की सदस्यता स्थगित है।

अधिदेश (Mandate)

अरब लीग अपने सदस्यों की आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय एवं धार्मिक हितों की देखभाल करती है। अरब लीग अरब देशों के आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास में मदद कर रहा है। यह संगठन अरब लीग के अन्दर या बाहर भी संघर्ष समाधान में सक्रिय रहता है। अरब लीग के चार्टर के अनुसार यह संगठन सदस्य देशों के बीच संबंधों को मजबूत करता है। उनके बीच सहयोग

बढ़ाने के लिए उनकी नीतियों में समन्वय स्थापित करने का भी प्रयास करता है। यह सदस्य देशों की संप्रभुता एवं स्वतंत्रता की भी रक्षा करता है। इसके कार्यक्षेत्र में वित्त, वाणिज्य, व्यापार, मुद्रा के अलावा सामाजिक, सांस्कृतिक, स्वास्थ्य संबंधी मामले, संचार, यातायात, वीजा, पासपोर्ट एवं राष्ट्रीयता संबंधी मामले भी शामिल होते हैं।

विभिन्न गतिविधियों, अभियानों एवं आधुनिकतम तकनीकों का प्रयोग कर अरब लीग ने अपने युवाओं का कौशल बढ़ाने, महिलाओं द्वारा समानता प्राप्ति के लिए संघर्ष का समर्थन करने, बाल कल्याण को बढ़ावा देने का कार्य किया है। इसने दशकों, पुराने फिलिस्तीन एवं इजराइल के संघर्ष को समाप्त करने का प्रयास किया है। इसके अलावा आस-पास के अन्य मुस्लिम देशों में चल रहे संघर्षों को समाप्त करने का प्रयास किया है।

संरचना (Structure)

अरब लीग में परिषद् (Council), मंत्री-स्तरीय समिति, सामान्य सचिवालय एवं विशिष्ट एजेंसियाँ शामिल हैं। परिषद् प्रमुख राजनीतिक अंग है। इसमें सभी सदस्य देशों के विदेश मंत्री शामिल होते हैं। यह सदस्य देशों के बीच हुए समझौतों के कार्यान्वयन की निगरानी के लिए वर्ष में दो बैठकें करती है। परिषद् आर्थिक, राजनीतिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में अन्य अंतराष्ट्रीय संगठनों के साथ सहयोग स्थापित करने के लिए दिशा-निर्देश तय करती है। परिषद् सदस्य देशों के बीच विद्यमान विवादों का समाधान करती है। परिषद् में प्रत्येक सदस्य का एक मत होता है। निर्णय उन राज्यों के लिए बाध्यकारी होता है जो मतदान में भाग लेते हैं। विशिष्ट समितियाँ परिषद् से संबद्ध होती हैं। वे विनियमन (Regulation) के लिए सामान्य नीतियाँ लाने तथा सूचना, आंतरिक मामले, न्याय, आवास, यातायात, सामाजिक मामले, युवा, खेल, स्वास्थ्य, पर्यावरण, दूर संचार एवं बिजली क्षेत्र में सहयोग को प्रोत्साहित करती हैं। सामान्य सचिवालय का प्रधान महासचिव होता है जिसका चुनाव परिषद् द्वारा 5 वर्षों के लिए होता है। यह परिषद् के निर्णयों का कार्यान्वयन करता है तथा आंतरिक प्रशासन के लिए उत्तरदायी होता है। विशिष्ट एजेंसियाँ अरब लीग के सामान्य हित से जुड़े कुछ विशिष्ट क्षेत्रों के लिए कार्य करती हैं।

जी-10 (G-10)

इसकी स्थापना अंतराष्ट्रीय मुद्रा कोष के 10 सदस्य राष्ट्रों बेलजियम, कनाडा, फ्रांस, जर्मनी, इटली, जापान, नीदरलैंड, स्वीडन, यूके एवं यूएसए द्वारा की गई थी। इसकी स्थापना 1962 में जनरल अरेंजमेंट टू बॉरो (General Arrangement to Borrow – GAB) के द्वारा किया गया था। यद्यपि स्विटजरलैंड 1994 में जी-10 का सदस्य बन गया लेकिन अभी भी इसका नाम जी-10 ही है। इसे पेरिस क्लब (Paris Club) के नाम से भी जाना जाता है। ये देश अंतराष्ट्रीय मुद्रा कोष को एक निश्चित धनसहायता उधार देने के लिए तैयार रहते हैं। जी-10 के सदस्य देश आर्थिक, मोद्रिक एवं वित्तीय मामलों में सहयोग एवं परामर्श करते हैं। जी-10 ने दिसंबर 1971 में स्मिथसोनियन समझौता (Smithsonian Agreement) किया था जिसके तहत स्थिर विनिमय दर (Fixed Exchange Rate) को चल विनिमय दर (Floating Exchange Rate) में बदल दिया गया।

जी-10 के वित्त मंत्री एवं सेंट्रल बैंक के गवर्नर सामान्यतः वर्ष में एक बार मिलते हैं। जी-10 के गवर्नर सामान्य रूप से बैंक फॉर इंटरनेशनल सेटलमेंट (Bank for International Settlement) में द्विमासिक (Bimonthly) बैठक करते हैं। जी-10 के सहायक (Deputies) आवश्यकतानुसार बैठक करते हैं लेकिन सामान्य रूप से वे एक वर्ष में चार बैठकें करते हैं। जी-10 आवश्यकतानुसार तदर्थ समितियों (Adhoc Committees) तथा कार्यकारी दलों (Working Parties) को गठन करता है। बैंक फॉर इंटरनेशनल सेटलमेंट, यूरोपीय आयोग, अंतराष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (Organisation for Economic Cooperation and Development) जी-10 के आधिकारिक पर्यवेक्षक हैं।

जी-77 (G-77)

यह तीसरी दुनिया या विकासशील देशों का सबसे बड़ा संगठन है, जो संयुक्त राष्ट्र संघ के अंतर्गत इन देशों के पारस्परिक हितों के मुद्दों पर कार्य करता है। वर्तमान में इसके 131 सदस्य देश हैं। इसकी स्थापना 77 विकासशील देशों द्वारा सन् 1964 में की गई थी।

अधिदेश (Mandate)

इस संगठन का प्रमुख उद्देश्य विकासशील देशों में सामूहिक आर्थिक हितों की प्राप्ति करना एवं उन्हें प्रोत्साहित करना है। दक्षिण-दक्षिण सहयोग को व्यापक बनाने में यह संगठन केंद्रीय भूमिका निभाता है। जी-77 के संयुक्त घोषणा-पत्र को 1964 के संयुक्त राष्ट्र व्यापार एवं विकास सम्मेलन (United Nations Conference on Trade and Development) के जेनेवा सत्र में अपनाया गया था। जी-77 की प्रथम मंत्रीस्तरीय बैठक 1967 में अल्जीर्स (Algiers) में हुई थी।

जी-77 महासभा (General Assembly), आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् तथा सहायक संस्थाओं से संबंधित समितियों, प्रयोजकों के संबंध में वक्तव्य (Statements) देता है तथा बड़े सम्मेलनों एवं अन्य बैठकों से संबंधित निर्णयों एवं प्रस्तावों पर चर्चा करता है। जी-77 पेर्रेज गुएरेरो ट्रस्ट (Perez Guerrero Trust) के माध्यम से दक्षिण-दक्षिण सहयोग से संबंधित परियोजनाओं का वित्तीयन (Funding) भी करता है।

संरचना (Structure)

जी-77 के कार्यसंचालन एवं गतिविधियों को कई स्थानीय शाखाओं (Chapters) में बाँट दिया गया है। एक अध्यक्ष इसके प्रवक्ता के रूप में कार्य करता है। वह प्रत्येक स्थानीय शाखा के कार्यों में समन्वय स्थापित करता है। जी-77 की संगठनात्मक संरचना में उच्चतम राजनीतिक प्राधिकार अध्यक्षता (Chairmanship) है जो क्षेत्रीय आधार पर अफ्रीकी, एशिया प्रशांत, लैटिन अमरीकी एवं कैरीबियाई देशों के बीच बदलती रहती है। 2013 में जी-77 का अध्यक्ष फिजी है। दक्षिण शिखर सम्मेलन (The South Summit) जी-77 का सर्वोच्च नीति निर्माण संस्था है। पहला एवं दूसरा दक्षिण शिखर सम्मेलन क्रमशः हवाना (2000) तथा कतर (2005) में हुआ था। भौगोलिक आवर्तन सिद्धांत (Principle of Geographical Rotation) के अनुसार तीसरा दक्षिण शिखर सम्मेलन अफ्रीका में होगा। जी-77 के विदेश मंत्रियों की वार्षिक बैठक न्यूयार्क में संयुक्त राष्ट्र महासभा (General Assembly) के नियमित सत्र के शुरुआत में होती है। इसके अलावा आवश्यकतानुसार क्षेत्रवार मंत्री-स्तरीय बैठक (Sectoral Ministerial Meeting) बुलाई जाती है।

आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन

(Organisation of Economic Cooperation and Development – OECD)

इसका गठन 1961 में किया गया था। इसका मुख्यालय पेरिस (फ्रांस) में है।

अधिदेश (Mandate)

आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन का उद्देश्य विश्व के सभी लोगों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में सुधार करना है। आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन एक ऐसे मंच के रूप में कार्य करता है जहाँ सभी सदस्य देश अपने अनुभवों का साझा कर सकते हैं तथा सामान्य समस्याओं का समाधान कर सकते हैं। सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरणीय परिवर्तन के लिए उत्तरदायी कारणों को समझने के लिए यह सरकारों के साथ मिलकर कार्य करता है। यह वैश्विक व्यापार, निवेश एवं उत्पादकता का अध्ययन करता है। यह भविष्य की प्रवृत्तियों का अनुमान लगाने के लिए आँकड़ों का अध्ययन एवं विश्लेषण करता है। यह कृषि, करोधान से लेकर रासायनों की सुरक्षा तक के मामलों में अंतर्राष्ट्रीय मानक (International Standards) तय करता है। आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन सामान्य आदमी को प्रभावित करने वाले सामान्य मुद्दों का भी अध्ययन करता है। जैसे कि एक सामान्य आदमी कौन से या सामाजिक सुरक्षा योजनाओं में कितना योगदान कर सकता है। उन्हें मनोरंजन के लिए कितना समय चाहिए या कितने देशों की स्कूली शिक्षा व्यवस्था उनके युवाओं को आधुनिक जीवन शैली उपलब्ध कराने के लिए तैयार है या कितने देशों की पेंशन व्यवस्था उनके बुजुर्गों को सामाजिक सुरक्षा उपलब्ध कराने में सक्षम है। तथ्यों एवं व्यावहारिक अनुभवों के आधार पर सामान्य व्यक्ति के जीवन को बेहतर बनाने के लिए नीतियों की अनुशंसा करता है। यह व्यापारिक संगठनों, मंचदार संगठनों तथा सिविल सोसायटी के साथ मिलकर कार्य करता है। यह बाजार अर्थव्यवस्था के साथ-साथ लोकतांत्रिक संस्थाओं एवं जनकल्याण को बढ़ावा देता है। यह आतंकवादियों, कर चोरों, धूर्त व्यापारियों तथा समाज के विरुद्ध कार्य करने वाले ग्लोबल के विरुद्ध कठोर कदम भी उठाता है। इसकी उत्पत्ति के पीछे द्वितीय विश्वयुद्ध का विध्वंस जिम्मेदार रहा है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद यूरोपीय सेनाओं का यह मानना था कि स्थायी शांति के लिए हारे हुए पक्ष को दण्डित करने की अपेक्षा सहयोग एवं पुनर्निर्माण सबसे अच्छा उपाय है।

वर्तमान में आर्थिक विकास एवं सहयोग संगठन में 34 देश हैं। अपने बढ़ी हुई सहभागिता कार्यक्रम (Enhanced Engagement Programme) के तहत आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन ने चीन, भारत, ब्राजील, इंडोनेशिया एवं दक्षिण अफ्रीका जैसे देशों के साथ सहभागिता बढ़ाई है। रूस इस संगठन का सदस्य बनने के लिए चर्चा कर रहा है। यदि इन सभी को मिला दिया जाए तो विश्व व्यापार एवं निवेश 80 हिस्सा इसके दायरे में आ जाएगा।

संरचना (Structure)

परिषद् (Council): निर्णय लेने की शक्ति आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन परिषद् में निहित होती है। इसमें प्रत्येक सदस्य देश तथा यूरोपीय आयोग का एक प्रतिनिधि होता है। परिषद् की नियमित बैठक होती है तथा सर्वसम्मति (Consensus) से निर्णय लिए जाते हैं। इन बैठकों की अध्यक्षता संगठन के महासचिव द्वारा की जाती है। ये बैठक संगठन के स्थायी प्रतिनिधियों के स्तर पर होती हैं। मंत्री स्तर पर भी वार्षिक बैठक होती है जो महत्वपूर्ण मुद्दों पर विचार-विमर्श करती है तथा संगठन के कार्यों की प्राथमिकता का निर्धारण करती है। परिषद् द्वारा लिए गए निर्णयों को सचिवालय लागू करता है।

समितियाँ (Committees): आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन के 34 सदस्य देशों के प्रतिनिधि विचारों को आगे बढ़ाने के लिए विशिष्ट समितियों में मिलते हैं। इसके अलावा विशिष्ट नीति क्षेत्रों जैसे अर्थव्यवस्था, व्यापार, विज्ञान, रोजगार, शिक्षा तथा वित्तीय बाजारों में हुए प्रगति की समीक्षा करती हैं।

सचिवालय (Secretariate): पेरिस में स्थित सचिवालय में 2500 कर्मचारी कार्य करते हैं। ये समितियों के कार्यों में सहायता करते हैं तथा परिषद् द्वारा निर्धारित प्राथमिकताओं को पूरा करने का कार्य करते हैं।

दक्षिण-पूर्व एशिया संधि संगठन (South-East Asia Treaty Organisation-SEATO)

8 सितंबर 1954 में संयुक्त राज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया, फ्रांस, ब्रिटेन, न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया, फिलीपींस, थाईलैंड एवं पाकिस्तान ने मिलकर फिलीपींस में सिएटो की स्थापना की थी। इसे मनीला समझौता भी कहा जाता है।

अधिदेश (Mandate)

इस संगठन का मुख्यालय थाईलैंड की राजधानी बैंकाक में था। इसका स्वयं का कोई सैन्य बल नहीं था लेकिन सदस्य देशों को सेना संयुक्त सैन्य अभ्यास में भाग लेती थी। इसके गठन का उद्देश्य क्षेत्र में साम्यवाद के प्रसार को रोकना था। यद्यपि इसे दक्षिण-पूर्व एशिया संधि संगठन कहा जाता था लेकिन दक्षिण-पूर्व एशिया से केवल दो ही देश फिलीपींस एवं थाईलैंड इसमें सम्मिलित हुए थे। फिलीपींस अमेरिका से अमरी नजदीकी के कारण इस संगठन में सम्मिलित हुआ था। फिलीपींस एवं थाईलैंड अपने-अपने देशों में साम्यवाद के उभरने से भी चिंतित थे। क्षेत्र के अन्य देशों में इस प्रकार की कोई समस्या नहीं थी। वियतनाम, कंबोडिया एवं लाओस इस संगठन में औपचारिक तौर पर सम्मिलित तो नहीं हुए थे लेकिन उन्हें इस संगठन में पर्यवेक्षक का दर्जा प्राप्त था। बाकी सभी सदस्य देश अन्य क्षेत्र में स्थित थे लेकिन उनका हित दक्षिण-पूर्व एशियाई क्षेत्र से जुड़ा था। अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण आस्ट्रेलिया एवं न्यूजीलैंड एशियाई मामलों में रुचि लेते थे। ब्रिटेन एवं फ्रांस इस क्षेत्र में काफी लम्बे समय तक अपने-अपने उपनिवेश बना रखे थे तथा वे इस क्षेत्र में होने वाले घटनाक्रमों में काफी रुचि लेते थे। पाकिस्तान भारत के खिलाफ अपनी स्थिति को मजबूत करने के लिए इस संगठन में सम्मिलित हुआ था। जबकि अमेरिका ने तो वैश्विक पैमाने पर साम्यवाद के विरुद्ध लड़ाई छेड़ रखी थी। इसलिए वह स्वाभाविक रूप से इस संगठन में शामिल हुआ था।

सिएटो ने दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों के आर्थिक स्थिति एवं जीवन-स्तर को उठाने का कार्य किया। इसने अनेक ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक विषयों पर बैठक एवं प्रदर्शनी आयोजित की। गैर-एशियाई सदस्यों ने दक्षिण-पूर्व एशियाई क्षेत्र के छात्रों के लिए छात्रवृत्ति भी उपलब्ध कराई थी। 1970 के दशक की शुरुआत में इस संगठन के सदस्य देश पीछे हटने लगे। न तो पाकिस्तान ने न तो फ्रांस ने वियतनाम में अमरीकी हस्तक्षेप की समर्थन किया। पाकिस्तान औपचारिक तौर पर 1973 में इस संगठन से अलग हो गया क्योंकि भारत के विरुद्ध लड़ाई में यह संगठन पाकिस्तान को सहायता करने में असफल रहा था। 1975 में वियतनाम युद्ध की समाप्ति के साथ सिएटो की प्रासंगिकता समाप्त हो गई और अंततः 1977 में सिएटो भंग हो गया। दक्षिण-पूर्व एशिया संधि संगठन को नाटो का दक्षिण-पूर्वी एशिया संस्करण माना जाता था।

संरचना (Structure)

सिएटो का प्रधान महासचिव होता था। महासचिव कार्यालय की स्थापना 1957 में की गई थी। इसके अलावा एक परिषद् भी थी जिसमें सदस्य देशों के प्रतिनिधि होते थे। इसके अलावा आर्थिक, सुरक्षा एवं सूचना समितियाँ भी थीं।

वारसा संधि संगठन (Warsaw Treaty Organisation)

वारसा संधि संगठन की स्थापना 14 मई 1955 को एक राजनीतिक एवं सैन्य गठबंधन के रूप में की गई थी। इसमें मुख्यतः सोवियत संघ एवं पूर्वी यूरोपीय देश शामिल थे। सोवियत संघ ने इस संगठन की स्थापना प्रमुखतः से उत्तर अटलांटिक संधि संगठन को संतुलित (Counter Balance) करने के लिए की थी। जिसमें अमेरिका, कनाडा तथा पश्चिमी यूरोपीय देश शामिल थे। वारसा संधि पर हस्ताक्षर करने वाले प्रमुख देशों में सोवियत संघ, अल्बानिया, पोलैंड, चेकोस्लोवाकिया, हंगरी, बुल्गारिया, रोमानिया तथा जर्मन लोकतांत्रिक गणराज्य शामिल थे। यद्यपि वारसा संधि संगठन में शामिल देशों ने एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने की बात भी कही थी। वारसा के अंतर्गत सामूहिक निर्णय लिए जाते थे लेकिन अंततः सोवियत संघ वारसा के निर्णयों पर हावी होता था। सोवियत संघ ने अपने पूर्वी यूरोपीय देशों में व्याप्त असंतोष (Dissent) को समाप्त करने के लिए भी वारसा सन्धि संगठन का प्रयोग किया। उदाहरण स्वरूप हंगरी (1956), चेकोस्लोवाकिया (1968) तथा पोलैंड (1981) में जन-विद्रोहों को दबाने के लिए वारसा संधि संगठन की मदद ली गई।

1980 के दशक में पूर्वी यूरोपीय देशों में आर्थिक मंदी आई जिसका प्रभाव वारसा संधि संगठन पर भी पड़ा। 1980 के दशक के अंत में कई सदस्य राज्यों में राजनीतिक परिवर्तन हुए जिस कारण वारसा संधि संगठन लगभग निष्प्रभावी हो गया। सितंबर 1990 में पूर्वी-जर्मनी पश्चिम-जर्मनी में शामिल होने के लिए संधि से अलग हो गया। उसके बाद चेकोस्लोवाकिया, हंगरी, पोलैंड भी इस संधि से अलग हो गए हैं। सोवियत संघ के विघटन के बाद जुलाई 1991 में वारसा संधि संगठन औपचारिक तौर पर विघटित हो गया।

अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय (International Criminal Court)

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान हुए भयानक जनसंहार और उसके बाद भी मानवता के विरुद्ध हुई कई घटनाओं ने विश्व समुदाय को यह सोचने पर विवश कर दिया कि युद्ध अपराध, जनसंहार तथा शांति के विरुद्ध कार्य करने वाले लोगों को बिना दण्डित किए न छोड़ने हेतु एक स्वतंत्र, स्थायी आपराधिक न्यायालय की आवश्यकता है। अंतर्राष्ट्रीय समुदाय 17 जुलाई 1998 को इसकी प्राप्ति के लिए ऐतिहासिक समझौता करने पर सहमत हो गया। 120 देशों ने रोम संधि (Rome Statute) को अपनाया। यह स्थायी अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय की स्थापना के लिए कानूनी आधार बना। 60 देशों द्वारा संपुष्टि (Ratification) करने के बाद 1 जुलाई 2002 से रोम संधि प्रभावी हुआ। अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय, अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय (International Court of Justice) से अलग है क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय की अधिकारिता व्यक्तिगत आपराधिक मामलों में नहीं है। अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था का अभिन्न अंग है। जबकि अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था से स्वतंत्र है।

अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय की शुरुआत 2003 में की गई थी। इसका मुख्यालय हेग (नीदरलैंड) में है।

अधिदेश (Mandate)

1 मई 2013 तक इसमें 122 देश शामिल हो चुके हैं। अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय अंतिम उपाय के तौर पर कार्य करता है। यह केवल उन व्यक्तियों पर ही मुकदमा चलाता है जो गंभीर अपराधों (Gravest Crime) के दोषी हों। इसकी स्थापना का मुख्य उद्देश्य कानून के शासन को बढ़ावा देने तथा यह सुनिश्चित करने के लिए की गई है कि गंभीर अपराधों में शामिल व्यक्ति दण्डित होने से बच न पायें। यह न्यायालय केवल उन्हीं अपराधों में दण्ड सुना सकती है जो 1 जुलाई 2002 के बाद किए गए हों। न्यायालय अपनी अधिकारिता का प्रयोग तभी कर सकता है जब राष्ट्रीय न्यायालय संबंधित मामलों में कार्रवाई करने के लिए अनिच्छुक हो या वे जाँच करने में सक्षम न हों। यह न्यायालय राज्यों को दण्डित नहीं कर सकता है बल्कि राज्य के नागरिकों पर ही मुकदमा चला सकता है। यह संयुक्त राष्ट्र शांति अभियानों में शामिल शांति सैनिकों पर भी मुकदमा चला सकता है यदि वे आपराधिक मामलों में शामिल पाए जाते हैं या उन पर जनसंहार, युद्ध अपराध या मानवता के विरुद्ध किए गए अपराध का आरोप लगाया जाता है। राज्य के मामलों में इस न्यायालय की अधिकारिता तभी होगी जब संबंधित राज्य का व्यवहार संदेहास्पद हो या जिस व्यक्ति पर आरोप लगाया गया हो वह संबंधित राज्य का नागरिक हो या जब कोई राज्य रोम संधि (Rome Statute) के अंतर्गत आता हो या कोई मामला सुरक्षा परिषद द्वारा विचारार्थ लाया गया हो।

अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय जिसका संचालन रोम संधि (Rome Statute) के अंतर्गत की जाता है, पहला स्थायी एवं संधि आधारित अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय है। यह एक स्वतंत्र अंतर्राष्ट्रीय संगठन है। यह संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था के अंतर्गत नहीं आता है। इसका खर्च मुख्यतया इसमें भागीदार सदस्यों द्वारा उठाया जाता है लेकिन यह सरकारों, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों, व्यक्तियों, निगमों एवं अन्य संस्थाओं से वैच्छिक सहायता स्वीकार करता है।

यह न्यायालय अपने सभी गतिविधियों में निष्पक्षता एवं विधि की उचित प्रक्रिया के उच्चतम मानदंडों का पालन करने का प्रयास करता है।

संरचना (Structure)

न्यायालय एक स्वतंत्र संगठन है। यह संयुक्त राष्ट्र का भाग नहीं है लेकिन यह संयुक्त राष्ट्र के साथ सहयोगात्मक संबंध बनाए रखता है। न्यायालय के चार प्रमुख भाग अध्यक्षता (Presidency), न्यायिक प्रभाग (Judicial Division), अभियोक्ता कार्यालय (Office of the prosecutor), पंजीयन कार्यालय (Registry) तथा अन्य कार्यालय हैं।

अध्यक्षता (Presidency): अध्यक्षता न्यायालय के संपूर्ण प्रशासन के लिए उत्तरदायी हैं, लेकिन इसके अंतर्गत अभियोक्ता कार्यालय नहीं आता है। अध्यक्षता तीन न्यायाधीशों से मिलकर बनती है। अध्यक्षता के लिए निर्वाचन सहयोगी न्यायाधीशों द्वारा तीन वर्षों के लिए किया जाता है।

न्यायिक प्रभाग (Judicial Division): न्यायिक प्रभाग के अंतर्गत 18 न्यायाधीश शामिल होते हैं जो मुकदमा पूर्व प्रभाग (Pre-Trial Division), मुकदमा प्रभाग (Trial Division) तथा अपील प्रभाग (Appeals Divisions) के अंतर्गत बंटे हैं। विभिन्न

प्रभागों से संबंधित न्यायाधीशों को प्रभागों के कार्यों की प्रकृति अनुसार तथा न्यायाधीशों की योग्यता एवं अनुभव के अनुसार कार्य सौंपे जाते हैं।

अभियोक्ता कार्यालय (Office of Prosecutor): अभियोक्ता कार्यालय, न्यालय के क्षेत्राधिकार में आने वाले अपराधों के संबंध में निर्दिष्ट (Referrals) एवं प्रमाणित सूचनाओं को प्राप्त करता है। कार्यालय ऐसी सूचनाओं की जाँच एवं परीक्षा करती है तथा न्यायालय में अभियोग लगाती है।

पंजीयन कार्यालय (Registry)

पंजीयन प्रशासन के गैर-न्यायिक पहलुओं तथा न्यालय की सेवा कार्य (Servicing) के लिए उत्तरदायी है। पंजीयक (Registrar) इस कार्यालय का प्रमुख होता है, जो न्यायालय का प्रमुख प्रशासनिक अधिकारी है। पंजीयन पंजीयन पंजीयक अपने कार्यों का निर्वहन न्यायालय के अध्यक्ष के प्राधिकार के अंतर्गत करता है। पंजीयक का चुनाव न्यायाधीशों द्वारा पाँच वर्ष के लिए की जाती है।

आर्कटिक परिषद् (Arctic Council)

1996 की ओटावा घोषणा-पत्र से आर्कटिक परिषद् की स्थापना की गई थी। आर्कटिक परिषद् का सचिवालय ट्रॉमसो (Tromsø) नार्वे में है। आर्कटिक परिषद् के सदस्य देशों में कनाडा, डेनमार्क (ग्रीन-लैंड एवं फोरोर्ड द्वीप के साथ) फिनलैंड, आइसलैंड, नार्वे, रूस, स्वीडन तथा अमेरिका शामिल हैं। सदस्य देशों के अलावा आर्कटिक परिषद् में स्थायी सहभागियों (Permanent Participants) की भी एक श्रेणी है। यह आर्कटिक क्षेत्र के देशों के बीच सतत विकास एवं पर्यावरण संरक्षण जैसे विषयों पर सदस्य देशों के बीच सहयोग, समन्वय एवं अंतर्क्रिया को बढ़ावा देता है। इसके अंतर्गत आर्कटिक क्षेत्र में रहने वाले विभिन्न समुदायों एवं अन्य निवासियों की भागीदारी सुनिश्चित करना है।

आने वाले समय में संसाधनों के सतत प्रयोग एवं पर्यावरण संरक्षण आर्कटिक परिषद् का मुख्य विषय होगा। आर्कटिक समुदाय एवं स्थानीय लोगों की आवश्यकताओं के प्रति प्रत्यक्ष ध्यान देने की आवश्यकता है। यह बहुत ही महत्वपूर्ण है कि सभी प्रकार की गतिविधियों में पर्यावरण मानकों को जगह दी जाए तथा प्राकृतिक संसाधनों का सतत प्रयोग सुनिश्चित की जाए। पर्यावरण आज कई वजहों से दबाव में है। इस कारण पर्यावरण प्रबंधन के लिए एक समग्र दृष्टिकोण अपनाए जाने की आवश्यकता है। इसलिए सतत विकास के लिए अंतराष्ट्रीय सहयोग एक पूर्ण आवश्यकता है।

मई-2013 में भारत, चीन, इटली, जापान, दक्षिण कोरिया एवं सिंगापुर को आर्कटिक परिषद् में पर्यवेक्षक राष्ट्र का दर्जा दिया गया है। भारत का मानना है कि आर्कटिक क्षेत्र में उसका अहित केवल वैज्ञानिक अनुसंधान तक ही सीमित है। लेकिन कुछ लोगों का यह मानना है कि भारत जिस तरह से आर्कटिक क्षेत्र के लोमोन्सोव कटक (Lomonosov Ridge) तथा मेंडेलीव कटक (Mendeleev Ridge) पर रूसी दावे का समर्थन करता है, उससे आने वाले दिनों में भारत को विशेषकर हाइड्रोकार्बन क्षेत्र में लाभ हो सकता है। भारत को इस क्षेत्र में गैस उत्खनन का अवसर मिल सकता है। भारत पेट्रोलियम पदार्थों को भी प्राप्त कर सकता है तथा उत्तरीय समुद्री मार्ग (North Sea Route) का भी प्रयोग कर सकता है। कुछ लोगों का यह भी मानना है जिस तरीके से भारत, चीन जैसे देशों ने आर्कटिक क्षेत्र में रुचि लेना शुरू किया है उससे इस क्षेत्र के स्थानीय लोगों का जीवन प्रभावित हो सकता है।

संरचना (Structure)

आर्कटिक परिषद् के कार्य छह कार्यदल में बँटे हैं। प्रत्येक कार्यदल में मंत्रालयों के विशेषज्ञ स्तर के प्रतिनिधि, सरकारी एजेंसियों तथा अनुसंधानकर्ता शामिल हैं। उनके कार्यों में जलवायु परिवर्तन से आपातकालीन प्रबंधन जैसे कई विषय शामिल होते हैं। परिषद् के छह कार्यकारी दलों के नाम निम्नलिखित हैं:-

- आर्कटिक संदूषक कार्यक्रम
- आर्कटिक क्षेत्र के पेड़-पौधों का संरक्षण
- आर्कटिक समुद्री क्षेत्र का संरक्षण
- आर्कटिक निगरानी एवं आकलन कार्यक्रम
- आपातकालीन रोकथाम, तैयारी
- सतत विकास कार्यदल

प्रत्येक कार्यदल का विशिष्ट अधिदेश (Mandate), अध्यक्ष प्रबंधन बोर्ड या संचालन समिति होता है। इन्हें सचिवालय द्वारा मदद दी जाती है।

पर्यवेक्षण देश एवं संगठन कार्यदल की बैठकों में भाग लेते हैं तथा विशिष्ट परियोजनाओं में सहभागिता करते हैं। इसके आलवा कार्यदल अपने बैठकों में अधितियों एवं विशेषज्ञों को आमंत्रित करते हैं।

आर्कटिक परिषद् एवं इसके सहायता निकायों के सभी निर्णय सर्वसम्मति से लिए जाते हैं।

अफ्रीकी संघ (African Union)

अफ्रीकी संघ 1963 में गठित अफ्रीकी एकता के संगठन (Organisation of African Unity) का उत्तराधिकारी संगठन है। यह 1999 में सिर्रे घोषणा-पत्र (The Sirte Declaration) द्वारा अस्तित्व में आया। इसके सदस्य देशों की संख्या 54 है।

अधिदेश (Mandate)

अफ्रीकी एकता के संगठन का प्रमुख उद्देश्य उपनिवेशवाद एवं रंगभेद के अवशेषों को समाप्त कर अफ्रीकी देशों में एकता को बढ़ावा देना, विकास के लिए सहयोग एवं समन्वय को बढ़ावा देना तथा सदस्य देशों की संप्रभुता एवं एकता को बनाए रखना है। संयुक्त राष्ट्र प्रावधानों के अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देना भी इसके उद्देश्यों में शामिल था। इस संगठन ने अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर सामान्य चिंता के विषयों तथा अफ्रीका में सामूहिक कार्रवाई के लिए सदस्य देशों के बीच समान राय स्थापित करने हेतु एक मंच के रूप में कार्य किया। अफ्रीकी संघ एकीकृत, संपन्न एवं शांतिपूर्ण अफ्रीका की प्राप्ति करना चाहता है जिसमें इसके नागरिकों की सहभागिता हो तथा यह वैश्विक मामलों में गतिशील बल (Dynamic Force) के रूप में कार्य कर सके। अफ्रीकी संघ ने अब अपना ध्यान अफ्रीका के विकास एवं एकता की तरफ देना शुरू किया है।

संक्षेप में अफ्रीकी संघ के प्रमुख लक्ष्य निम्नलिखित हैं-

- अफ्रीकी देशों एवं अफ्रीकी लोगों के बीच एकता स्थापित करना।
- सदस्य राज्यों की स्वतंत्रता, संप्रभुता तथा क्षेत्रीय अखंडता को बनाए रखना।
- अफ्रीका महादेश में सामाजिक-आर्थिक तथा राजनीतिक एकीकरण को बढ़ावा देना।
- अफ्रीका एवं इसके लोगों के हितों से जुड़े मुद्दों पर समान राय बनाना।
- संयुक्त राष्ट्र चार्टर एवं मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा-पत्र के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देना।
- अफ्रीका में शांति, सुरक्षा एवं स्थायित्व को बढ़ावा देना।
- लोकतांत्रिक सिद्धांतों, संस्थाओं, जन भागीदारी एवं सुशासन को बढ़ावा देना।
- मानवाधिकारों से संबंधित अफ्रीकी चार्टर एवं मानवाधिकारों से संबंधित अन्य लेखपत्रों के अनुसार मानवाधिकारों को प्रोत्साहन एवं संरक्षण देना।
- ऐसा वातावरण उत्पन्न करना जिससे कि यह संगठन वैश्विक अर्थव्यवस्था एवं अंतर्राष्ट्रीय वार्तालापों में समुचित भूमिका निभा सके।
- आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तर पर सतत विकास को बढ़ावा देना तथा अफ्रीकी अर्थव्यवस्था में एकीकरण को बढ़ावा देना।
- अफ्रीकी लोगों का जीवन-स्तर ऊपर उठाने के लिए मानव गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में सहयोग को बढ़ावा देना।
- अफ्रीकी संघ के लक्ष्यों की धीरे-धीरे प्राप्ति के लिए वर्तमान एवं भविष्य की क्षेत्रीय आर्थिक समुदायों (Regional Economic Communities) के बीच समन्वय एवं सहभाव को बढ़ावा देना।
- सभी क्षेत्रों और विशेषकर विज्ञान एवं तकनीक के क्षेत्र में अनुसंधान के माध्यम से विकास को बढ़ावा देना।
- अफ्रीका में रोगों की समाप्ति तथा अच्छे स्वास्थ्य को बढ़ावा देने के लिए सार्थक अंतर्राष्ट्रीय भागीदारों के साथ मिलकर कार्य करना।

संरचना (Structure)

सभा (The Assembly): सभा, शासन प्रमुखों और राष्ट्राध्यक्षों या उनके द्वारा मान्यता प्राप्त प्रतिनिधित्वों से मिलकर बनती है। शासन प्रमुखों एवं राष्ट्राध्यक्षों की सभा अफ्रीकी संघ का सर्वोच्च अंग है।

कार्यकारिणी परिषद् (The Executive Council): सदस्य देशों की सरकारों द्वारा प्राधिकृत मंत्रियों या अधिकारियों से मिलकर इसका गठन होता है। कार्यकारिणी परिषद् सभा के प्रति उत्तरदायी है।

आयोग (The Commission): आयोग में अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, आठ आयुक्त तथा कर्मचारी होते हैं। प्रत्येक आयुक्त एक विभाग के लिए उत्तरदायी होता है।

शांति एवं सुरक्षा परिषद् (Peace and Security Council): जुलाई 2001 अफ्रीका संघ के अंतर्गत शांति एवं सुरक्षा परिषद् की स्थापना का निर्णय लिया गया है।

अखिल अफ्रीकी संसद (Pan African Parliament): अफ्रीकी लोगों का शासन, विकास एवं आर्थिक एकीकरण में पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए अखिल अफ्रीकी संसद की स्थापना की योजना है। अखिल अफ्रीका संसद के गठन, शक्तियों कार्यों तथा संगठन से संबंधित संधिपत्र (Protocol) पर हस्ताक्षर किया गया है और यह सत्यापन के चरण में है।

अफ्रीकी संघ आयोग (The AU Commission): आयोग, अफ्रीकी संघ के दैनिक प्रबंधन में केन्द्रीय भूमिका निभाने वाला प्रमुख अंग है। अन्य के अलावा यह संघ का प्रतिनिधित्व तथा इसके हितों की रक्षा करता है। यह संघ में सर्वसम्मति बनाने के लिए प्रारूप एवं रणनीतिक योजना तैयार करता है। यह अफ्रीकी संघ के नीतियों एवं कार्यक्रमों का विस्तार करने एवं बढ़ावा देने तथा इनमें समन्वय बैठाने का कार्य करता है।

इस्लामिक देशों का सहयोग संगठन (Organisation of Islamic Cooperation)

इस संगठन को औपचारिक स्थापना 1969 में हुई थी। इसका मुख्यालय जेद्दा (सऊदी अरब) में है। इसके सदस्य देशों की संख्या 25 से शुरू होकर 57 तक पहुँच गई है।

अधिदेश (Mandate)

यह संगठन मुस्लिम समुदाय की सामूहिक आवाज (Collective Voice) उठाने का कार्य करता है। यह विश्व के विभिन्न लोगों के बीच शांति और सद्भावना को बढ़ावा देने के साथ मुस्लिम समुदाय के हितों का संरक्षण सुनिश्चित करता है।

इस संगठन के वर्तमान चार्टर को मार्च 2008 में अपनाया गया था। इसी में इस संगठन के सिद्धांतों और उद्देश्यों का वर्णन किया गया है। इसके अंतर्गत सदस्य राज्यों के बीच एकता एवं सहयोग को बढ़ावा देना सबसे मूलभूत उद्देश्य बताया गया है। मुसलमानों के प्रमुख हितों की रक्षा तथा सदस्य राज्यों के बीच संप्रभु एवं विवादों का समाधान करने के लिए यह संगठन संयुक्त राष्ट्र तथा अन्य अंतरसरकारी संगठनों के साथ परामर्श एवं सहयोग करता है। मुसलमानों एवं इस्लाम के सही मूल्यों की रक्षा करने के लिए तथा भ्रान्तियों को दूर करने हेतु इसने कई कदम उठाए हैं। इसने मुसलमानों के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभाव को समाप्त करने के लिए आवाज उठायी है।

इस्लामिक देशों का सहयोग संगठन के चार्टर में इसके निम्नलिखित उद्देश्य शामिल किए गए हैं:-

- सदस्य राज्यों के बीच एकता एवं भातृत्व को बढ़ावा देना एवं उसे मजबूत बनाना।
- सदस्य राज्यों के समान हितों की सुरक्षा करना तथा सदस्य राज्यों के वैध हितों का समर्थन करना।
- अंतर्राष्ट्रीय समुदाय और विशेषकर मुस्लिम समुदाय द्वारा सामना की जाने वाली चुनौतियों से निपटने के लिए सदस्य राज्यों के प्रयासों में एकता एवं समन्वय स्थापित करना।
- सदस्य राज्यों की स्वतंत्रता, संप्रभुता तथा क्षेत्रीय अखंडता का सम्मान करना तथा घरेलू मामलों में आत्म-निर्णय तथा अहस्तक्षेप का सम्मान करना।
- सदस्य राज्यों की सामान्य हितों की प्राप्ति के लिए वैश्विक राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक निर्णय प्रक्रिया में सदस्य राज्यों की सहभागिता सुनिश्चित करना।
- इस्लामिक कॉमन मार्केट की स्थापना के लिए इस्लामिक देशों के बीच आर्थिक एवं व्यापारिक सहयोग को बढ़ावा देना।
- सदस्य राज्यों में सतत एवं व्यापक मानव विकास तथा आर्थिक कल्याण की प्राप्ति के लिए प्रयास तेज करना।
- इस्लाम की सही स्वरूप की रक्षा करना, इस्लाम की निंदा को रोकना तथा सभ्यताओं एवं धर्मों के बीच वार्तालाप को बढ़ावा देना।
- विज्ञान एवं तकनीकी का विकास करना एवं बढ़ावा देना तथा सदस्य राज्यों के बीच इन क्षेत्रों में सहयोग एवं अनुसंधान को प्रोत्साहित करना।

उपरोक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सदस्य राज्यों ने निम्नलिखित सिद्धांत तय किए हैं:-

- सभी सदस्य राज्य संयुक्त राष्ट्र के उद्देश्यों एवं सिद्धान्तों के प्रति प्रतिबद्ध हैं।
- अधिकारों एवं कर्तव्यों के मामले में सदस्य राज्य संप्रभु, स्वतंत्र तथा समान हैं।
- सभी सदस्य राज्य आपसी संबंधों के निर्धारण में बल प्रयोग नहीं करेंगे।
- सदस्य राज्य अन्य सदस्य राज्यों की स्वतंत्रता, संप्रभुता, एवं क्षेत्रीय अखंडता का सम्मान करेंगे तथा एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करने से परहेज करेंगे।
- सदस्य राज्य राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सुशासन, लोकतंत्र, मानवाधिकार एवं मूलभूत स्वतंत्रताओं तथा विधि के शासन को बढ़ावा देंगे।

संरचना (Structure)

सामान्य सचिवालय (The General Secretariat): सामान्य सचिवालय की स्थापना फरवरी 1970 में की गई थी। सामान्य सचिवालय में एक महासचिव तथा संगठन की आवश्यकतानुसार कर्मचारी होते हैं। महासचिव, संगठन का प्रमुख प्रशासनिक अधिकारी होता है।

महासचिव (The Secretary General): महासचिव का निर्वाचन विदेशी मंत्रियों की परिषद् (Council of Foreign Ministers) द्वारा 5 वर्षों के लिए किया जाता है।

इस संगठन ने इस्लामिक विकास बैंक, इस्लामिक शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन, इस्लामिक प्रसारण संघ, अंतर्राष्ट्रीय इस्लामिक न्यूज एजेंसी की स्थापना कर रखी है।

संगठन एवं सदस्य राज्यों के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण विषयों को आगे बढ़ाने के लिए संगठन ने निम्नलिखित स्थायी समितियों (Standing Committees) का गठन किया है:-

- सूचना एवं सांस्कृतिक मामलों से संबंधित
- आर्थिक एवं वाणिज्यिक सहयोग से संबंधित
- वैज्ञानिक एवं तकनीकी सहयोग से संबंधित

पश्चिमी अफ्रीकी देशों का आर्थिक समुदाय

(Economic Community of West African States-ECOWAS)

यह समुदाय मुख्यतः 15 पश्चिमी अफ्रीकी देशों का एक क्षेत्रीय आर्थिक संगठन है। इसकी स्थापना 1975 में की गई थी। इसका मुख्यालय अबूजा (नाइजीरिया) में है। इसका सदस्य राज्यों में बेनिन, बुर्किना फासो (Burkina Faso), कोमोरोस, कोटे डी आइवरी, गाम्बिया, घाना, गिनी-बिसाऊ, लाइबेरिया, माली, मारितानिया, नाइजर, नाइजीरिया, सेनेगल, सिएरा लियोन तथा टोगो (Togo) है।

अधिदेश (Mandate)

इस संगठन का उद्देश्य आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों में सहयोग करना एवं विकास को बढ़ावा देना, सभी सदस्य राज्यों के लोगों के जीवन स्तर में सुधार करना, आर्थिक स्थायित्व बनाए रखना, राज्यों के संबंधों में सुधार करना तथा अफ्रीका के विकास एवं प्रगति में सहभागिता बनाना है। इस संगठन का अंतिम लक्ष्य आर्थिक एवं भौतिक संघ की स्थापना करना है। यह समुदाय क्षेत्रीय संघर्षों को रोकने तथा समाधान करने का कार्य करता है।

सदस्य देशों के बीच सहयोग, क्षतिपूर्ति एवं विकास के लिए एक कोष की भी स्थापना की गई है। गृह-युद्धों में मध्यस्थता करने के लिए संयुक्त सैन्य विंग के रूप में 1991 में इकोवास निगरानी समूह (Ecowas Monitoring Group-ECOMOG) का गठन किया गया था। 1991 को ही इकोवास राजनैतिक घोषणा-पत्र में मानवाधिकार, लोकतंत्र एवं विधि के शासन के प्रति प्रतिबद्धता व्यक्त की गई है।

संरचना (Structure)

इकोवास संगठन के अंतर्गत निम्नलिखित संस्थाएं कार्य करती हैं:-

आयोग (Commission): आयोग की स्थापना 2006 में की गई थी। पहले यह सचिवालय के रूप में कार्य करता था। आयोग नागरिकों का जीवन स्तर सुधारने, आर्थिक विकास सुनिश्चित करने तथा विकास एवं एकीकरण के लिए उपयुक्त वातावरण निर्माण करने का कार्य करता है। आयोग के विभिन्न आयुक्त स्पष्ट रूप से परिभाषित क्षेत्रों का कार्य देखते हैं।

संसद (Parliament): संसद इस समुदाय के लिए सभा (Assembly) का कार्य करती है। संसद में कुल 115 सीटें हैं। प्रत्येक सदस्य देश के लिए कम से कम 5 सीटें निर्धारित हैं। शेष सीटें जनसंख्या के अनुपात में बाँट दी जाती हैं।

न्यायालय (Court of Justice): न्यायालय में सात स्वतंत्र न्यायाधीश कार्य करते हैं। इनकी नियुक्ति इनके उच्च नैतिक चरित्र के आधार पर शासन प्रमुखों द्वारा सदस्य राज्यों में से की जाती है। इनका कार्यकाल चार वर्ष का होता है। न्यायालय, संगठन के विषय वस्तु (Text) की व्याख्या तथा सदस्य देशों की दायित्वों को लागू करवाने का कार्य करता है।

स्वतंत्र राष्ट्रों का राष्ट्रकुल (Commonwealth of Independent States-CIS)

इस संगठन की स्थापना दिसंबर 1991 में हुई थी। इसमें में शामिल देश समानता के आधार पर एक-दूसरे के साथ अंतर्क्रिया करते हैं। वर्तमान में इसमें अजरबैजान, आर्मेनिया, बेलारूस, जार्जिया, कजाकिस्तान, किर्गिस्तान, मोल्दोवा, रूस ताजिकिस्तान,

तुर्कमेनिस्तान, उज्बेकिस्तान तथा उक्रेन शामिल हैं। इस संगठन का मुख्यालय मिंस्क (Minsk) बेलारूस में है। 2009 में जार्जिया इस संगठन से बाहर हो गया। एस्तोनिया, लातविया और लिथुआनिया इस संगठन में शामिल नहीं हैं। इस संगठन में शामिल सभी देश पूर्व सोवियत संघ के गणराज्य थे। इस संगठन की स्थापना का मुख्य उद्देश्य पूर्व सोवियत संघ के सरकारी कार्यवाहियों एवं संधियों को प्रतिबद्धताओं को सुगमतापूर्वक इन पूर्व गणराज्यों को स्थानांतरित करना था।

अधिदेश (Mandate)

सितंबर 1993 में सीआईएस राष्ट्राध्यक्षों ने वस्तुओं, सेवाओं, श्रम बल, पूंजी, मौद्रिक मामलों में समन्वय, कर, मूल्य, सीमा शुल्क, आर्थिक गतिविधियों में समन्वय तथा प्रत्यक्ष उत्पादन संबंधों के विकास के लिए आर्थिक संगठन के विकास पर सहमत हुए थे। अक्टूबर 2000 में बेलारूस, कजाकिस्तान, किर्गिस्तान, रूस तथा ताजिकिस्तान के राष्ट्राध्यक्षों ने यूरेशियन आर्थिक समुदाय (Eurasian Economic Community) की स्थापना के लिए एक समझौता पर हस्ताक्षर किया था।

1993 में सात सदस्य राज्यों रूस, बेलारूस, आर्मेनिया, कजाकिस्तान, किर्गिस्तान, ताजिकिस्तान एवं उज्बेकिस्तान ने राजनीतिक, आर्थिक, पारिस्थितिकी, मानवीय, सांस्कृतिक तथा अन्य क्षेत्रों में सहायता के लिए तथा मानवाधिकारों एवं स्वतंत्रता को सुनिश्चित करने के लिए एक चार्टर पर हस्ताक्षर किया था। सदस्य राज्यों के बीच आर्थिक लेन-देन के लिए सीआईएस अंतर्राज्यीय बैंक (CIS Interstate Bank) की भी स्थापना की गई है।

संरचना (Structure)

स्वतंत्र राज्यों का राष्ट्रकुल के अंतर्गत निम्नलिखित व्यवस्थाएँ की गई हैं-

राज्य प्रमुखों की परिषद् (Council of the Heads of State): यह सीआईएस की सर्वोच्च संस्था है। यह सदस्य राज्यों या सहभागियों के सामान्य हित से जुड़े मामलों पर चर्चा करती है तथा उनका समाधान करती है।

शासन प्रमुखों की परिषद् (Council of The Heads of Government): यह परिषद् सदस्य राज्यों एवं सहभागियों के आर्थिक, सामाजिक एवं अन्य क्षेत्रों से जुड़े उनके सामान्य हित के मामलों में सहयोग एवं समन्वय स्थापित करती है। राज्यों प्रमुखों की परिषद् तथा शासन प्रमुखों की परिषद् में निर्णय सर्वसम्मति से लिए जाते हैं।

विदेशमंत्रियों की परिषद् (Council of Foreign Ministers): सदस्य राज्यों एवं सहभागियों के आपसी हित शासना प्रमुखों एवं राज्य प्रमुखों की बैठक में लिए गए निर्णयों तथा उनके आदेशों के क्षेत्र में सहयोग स्थापित करने वाली यह प्रमुख कार्यकारिणी संस्था है।

रक्षा मंत्रियों की परिषद् (Council of Defense Ministers): राज्य प्रमुखों की परिषद्, सदस्य देशों एवं सहभागियों के सैन्य नीति के लिए उत्तरदायी है। इसके अंतर्गत एक स्टाफ कार्यालय कार्य करता है। यह सदस्य देशों के सैन्य सहयोग में समन्वय स्थापित करता है। यह रक्षा मंत्रियों की परिषद् की बैठक बुलाता है तथा सैन्य पर्यवेक्षकों की गतिविधियों का विनियमन करता है।

अंतर-संसदीय सभा (Inter-Parliamentary Assembly): इस सभा की स्थापना मार्च 1995 में राष्ट्रमंडल देशों के सर्वोच्च नेताओं द्वारा संसदीय सहयोग तथा सदस्य राज्य के संसदों द्वारा प्रस्तावों का विकास करने के संबंध में परामर्शकारी संस्था के रूप में की गई थी। सभा सदस्य देशों तथा सहभागियों के संसदीय प्रतिनिधिमंडल से बनता है। सभा के कार्यों का निर्वहन सभा परिषद् (Assembly Council) द्वारा की जाती है जो संसदीय प्रतिनिधिमंडल के नेताओं से मिलकर बनता है।

आर्थिक न्यायालय (Economic Court): आर्थिक न्यायालय संगठन के ढाँचे के अंतर्गत आर्थिक वचनबद्धताओं को पूरा करने के उद्देश्य से कार्य करता है।

सामूहिक सुरक्षा संधि संगठन (Collective Security Treaty Organization-CSTO)

सामूहिक सुरक्षा संधि संगठन या ताशकंद संधि (Tashkent Treaty) पर हस्ताक्षर मई 1992 में आर्मेनिया, कजाकिस्तान, किर्गिस्तान, रूस एवं ताजिकिस्तान के बीच की गई थी। बाद में इसमें अजरबैजान, जार्जिया, बेलारूस एवं उज्बेकिस्तान भी शामिल हो गए। शुरुआत में यह संगठन 5 वर्षों के लिए ही बनाई गई थी। 1999 में इसके नवीकरण के समय एजरबैजान, जार्जिया तथा उज्बेकिस्तान ने इस संधि में सम्मिलित होने से इंकार कर दिया। इस संगठन का वर्तमान नाम अक्टूबर 2002 में दिया गया था। इसके पहले इसे सामूहिक सुरक्षा संधि (Collective Security Treaty) के नाम से जाना जाता था। इस संगठन के चार्टर के अनुसार सभी सहभागी देश बल प्रयोग या बल प्रयोग की धमकी से परहेज करेंगे। हस्ताक्षरकर्ता देश अन्य सैन्य संगठनों में सम्मिलित नहीं हो सकते हैं। हस्ताक्षरकर्ता देशों में शामिल किसी भी एक देश पर आक्रमण संगठन में शामिल सभी देशों पर आक्रमण माना जाएगा। सामूहिक सुरक्षा संधि संगठन के सदस्य देश अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद एवं अतिवाद, ड्रग एवं शस्त्रों के अवैध व्यापार, संगठित अपराध को रोकने हेतु मिलजुलकर कार्य करते हैं। यह सैन्य एवं राजनीतिक सुरक्षा का भी कार्य करता है। यह संगठन संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् की आतंकवाद रोधी समिति, स्वतंत्र राज्यों के राष्ट्रमंडल के आतंकवादरोधी केन्द्र तथा यूरोपीय सुरक्षा एवं सहयोग संगठन के साथ

मिलकर कार्य करता है। 2001 में एक सामूहिक त्वरित तैनाती बल (Collective Rapid-Deployment Force) की स्थापना की गई थी। शांति स्थापना हेतु एक स्थायी तंत्र की स्थापना भी की गई है। यह संयुक्त राष्ट्र के अंतर्गत शांति अभियानों में भी सहभागिता करता है। 2004 में इस संगठन को संयुक्त राष्ट्र संघ में पर्यवेक्षक का दर्जा दिया गया था। मार्च 2010 में संयुक्त राष्ट्र ने बिना किसी विरोध के संयुक्त राष्ट्र एवं सामूहिक सुरक्षा संधि संगठन के बीच सहयोग संबंधी प्रस्ताव को अपनाया है।

कैरीबियन कम्युनिटी एंड कॉमन मार्केट

(Caribbean Community and Common Market – CARICOM)

कैरीकॉम की स्थापना चागुआरामास की संधि द्वारा 4 जुलाई 1973 को की गई थी। यह 15 कैरीबियाई देशों का संगठन है। इसका मुख्यालय जॉर्ज टाउन (George Town) गुयाना में है। इसमें एंटीगुआ और बरबुडा, बहामास, बरबाडोस, बेलिज, डोमिनिका, ग्रेनाडा, गुयाना, हैती, जमैका, मॉन्टसेराट, सेंट किट्स एंड नेविस, सेंट लूसिया, सेंट विंसेंट एवं ग्रेनाडिंस, सुरिनाम, त्रिनिडाड एवं टोबैगो शामिल हैं। कैरीकॉम ने यह घोषणा कर रखी है कि लोकतांत्रिक तरीके से चुनी गई किसी भी सरकार को अपदस्थ नहीं किया जाएगा।

अधिदेश (Mandate)

कैरीकॉम की स्थापना का मुख्य उद्देश्य एकीकरण की प्रक्रिया को बढ़ावा देना है जिससे कि एकीकरण से होने वाले लाभ में सभी को समान लाभ प्राप्त हो, क्षेत्र में कुछ सामान्य सेवाओं को आरम्भ किया जा सके तथा सदस्य राज्यों के बीच विदेश मामलों में समन्वय स्थापित किया जा सके। यह सदस्य देशों के बीच आर्थिक एवं राजनीतिक मामलों में समन्वय स्थापित करता है। यह एक साझा बाजार (Common Market) के रूप में कार्य करता है।

कैरीबियन कम्युनिटी एंड कॉमन मार्केट की स्थापना कैरीबियन मुक्त व्यापार संघ (Caribbean Free Trade Association) के रूप में 1968 में की गई थी। कैरीकॉम जीवन स्तर उच्च करने एवं कार्य दशा को सुधारने, श्रमिकों को पूर्ण रोजगार देने, सतत आर्थिक विकास को बढ़ावा देने, आर्थिक संबंधों एवं व्यापार का विस्तार करने, अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धात्मकता को बढ़ावा देने, बढ़ी हुई उत्पादन एवं उत्पादकता को ठोस रूप देने तथा तीसरे देशों के साथ लेने-देने के मामले में सदस्य देशों की प्रभावकारिता बढ़ाने का कार्य करता है।

संरचना (Structure)

शासन प्रमुखों का सम्मेलन (The Conference of Heads of Government): शासन प्रमुखों का सम्मेलन, कैरीकॉम का सर्वोच्च अंग है तथा यह संगठन के लिए नीति-निर्देशन का कार्य करता है। इसकी बैठकों में भाग लेने के लिए कोई सरकार प्रमुख अपनी ओर से किसी मंत्री या अन्य व्यक्ति को अधिकृत कर सकता है। सामान्य रूप से, शासन प्रमुख स्वयं ही इसकी बैठकों में भाग लेते हैं। शासन प्रमुखों का सम्मेलन समुदाय को ओर से संधियों को अंतिम रूप देने के लिए प्राधिकृत है। यह समुदाय के खर्चों को चलाने के लिए वित्तीय व्यवस्था भी करता है। सम्मेलन संगठन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक संस्थाओं की स्थापना कर सकता है। समुदाय के वित्तीय मामलों से संबंधित निर्णय लेने वाला यह अंतिम प्राधिकार है।

मंत्रि-परिषद् (Council of Minister)

राष्ट्रीय सुरक्षा तथा विधि प्रवर्तन (Law Enforcement) के लिए उत्तदायी शासन प्रमुखों का सम्मेलन तथा मंत्रि-परिषद् को वित्तीय एवं योजना परिषद्, व्यापार एवं आर्थिक विकास परिषद्, विदेश एवं सामुदायिक संबंध परिषद्, मानव एवं सामाजिक विकास परिषद् द्वारा सहायता उपलब्ध करायी जाती है। कानूनी मामलों की समिति संगठन के अंगों एवं संस्थानों को कानूनी मामलों में सहायता उपलब्ध कराती है। बजट समिति, बजट प्रारूप का परीक्षण करती है।

अमरीकी राज्यों का संगठन (Organisation of American States-OAS)

इस संगठन में शामिल लगभग सभी अमरीकी देश आर्थिक, सैन्य एवं सांस्कृतिक सहयोग प्रोत्साहित करने हेतु प्रतिबद्ध हैं। यह विश्व का सबसे पुराना संगठन है। अमरीकी राज्यों का प्रथम सम्मेलन वाशिंगटन में अक्टूबर 1889 से अप्रैल 1890 के बीच हुआ था। इसी बैठक में अमेरिकी राज्यों का अंतर्राष्ट्रीय संगठन बनाने का निर्णय लिया गया था। लेकिन यह संगठन 1948 में अस्तित्व में आया जिसके लिए बोगोटा (कोलंबिया) में हस्ताक्षर किया गया था। संगठन का चार्टर दिसंबर 1951 में प्रभावी हुआ था। इस संगठन का मुख्यालय वाशिंगटन डी.सी. (अमेरिका) में है। अमरीकी राज्यों के संगठन में 35 देश शामिल हैं।

अधिदेश (Mandate)

इसके उद्देश्यों में शांति एवं न्याय की स्थापना करना, सदस्य देशों के बीच एकता एवं सहयोग को मजबूती देना तथा सदस्य देशों की स्वतंत्रता, क्षेत्रीय अखंडता तथा संप्रभुता की रक्षा करना शामिल है। यह संगठन राजनीतिक, न्यायिक एवं सामाजिक पंच के रूप में कार्य करता है।

शीतयुद्ध समाप्त होने के बाद इस संगठन ने कई नई प्राथमिकताओं का निर्धारण किया है जिसमें लोकतंत्र को मजबूत बनाना, शांति के लिए कार्य करना, मानवाधिकारों की रक्षा करना, मुक्त व्यापार को बढ़ावा देना, ड्रग व्यापार को रोकना तथा सतत् विकास को बढ़ावा देना जैसे विषय शामिल हैं, अमरीकी राज्यों के संगठन का चार्टर का अनुच्छेद-19 किसी देश को सदस्य देशों के आंतरिक या बाह्य मामलों में हस्तक्षेप को प्रतिबंधित करता है। जबकि अनुच्छेद-21 किसी सदस्य देश में सैन्य दखल को प्रतिबंधित करता है। यद्यपि आर्थिक एवं सामाजिक मामलों महत्ता प्राप्त कर रहे हैं, लेकिन यह संगठन मुख्यतः राजनीतिक एवं सुरक्षा मामलों को देखती है। यह क्षेत्र में लोकतांत्रिक सरकारों को प्रोत्साहन देने एवं उनके संरक्षण में सक्रिय है। यह आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिए विकास संबंधी क्षेत्रों में लैटिन अमरीकी एवं कैरीबियन नागरिकों को प्रशिक्षण भी देती है। इसके अन्य कार्यों में संगठित अपराध एवं भ्रष्टाचार को रोकना, मानवाधिकारों एवं पर्यावरण का संरक्षण करना तथा सदस्य राज्यों के बीच सांस्कृतिक सहयोग को बढ़ावा देना शामिल है।

संरचना (Structure)

महासभा (General Assembly): महासभा अमरीकी राज्यों का सर्वोच्च अंग है। इसमें सभी सदस्य राज्यों के प्रतिनिधि शामिल होते हैं। संगठन के तंत्रों (Mechanisms) नीतियों, कार्यों, अधिदेश का निर्धारण महासभा द्वारा की जाती है। प्रत्येक सदस्य देश को एक वोट का अधिकार है। महासभा की वार्षिक बैठक होती है। विशेष परिस्थितियों में दो-तिहाई सदस्यों के समर्थन से विशेष बैठक बुलाई जा सकती है। स्थायी परिषद (Permanent Council) महासभा की विशेष बैठक बुला सकती है।

विदेश मंत्रियों की बैठक (Meetings of Minister of foreign affairs): विदेश मंत्रियों की बैठक अत्यावश्यक मामलों में बुलायी जाती है। ऐसे मामलों सभी सदस्य देशों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। यह संगठन के लिए परामर्श संस्था के रूप में कार्य करता है। इसकी बैठक के लिए कोई भी सदस्य देश आग्रह कर सकता है। यह आग्रह संगठन के स्थायी परिषद को संबोधित होना चाहिए। स्थायी परिषद पूर्ण बहुमत से निर्णय लेती है कि क्या ये बैठक बुलायी जानी चाहिए। बैठक की कार्य-सूची भी स्थायी परिषद द्वारा तय की जाती है।

स्थायी परिषद (Permanent Council): संगठन के चार्टर में यह कहा गया है कि स्थायी परिषद सदस्य राज्यों के बीच मित्रतापूर्ण संबंध बनाए रखने के संबंध में निगरानी तथा उनके बीच विद्यमान विवादों का समाधान करने में उनको मदद करेगा। स्थायी परिषद संगठन के अधिदेशों को लागू करने के लिए उत्तरदायी है। परिषद महासभा के प्रस्तावना समिति (Preparatory Committee) के रूप में कार्य करती है। परिषद, सदस्य राज्यों के आग्रह पर अमरीकी राज्यों का संगठन, संयुक्त राष्ट्र तथा अन्य अमरीकी संस्थाओं के बीच सहयोग को बढ़ावा देने के लिए समझौतों का प्रारूप तैयार करता है। परिषद अंतर अमरीकी व्यवस्था के अंगों, एजेंसियों एवं संस्थाओं के रिपोर्ट पर विचार करती है तथा इसे महासभा के समक्ष रखती है। इस संबंध में यह आवश्यक अनुशंसा भी करती है।

अंतर-अमरीकी न्यायिक समिति (Inter-American Juridical Committee): यह समिति न्यायिक मामलों में संगठन के सलाहकारी संस्था के रूप में कार्य करती है। यह प्रगतिशील विकास को बढ़ावा तथा अंतराष्ट्रीय कानून का सहिताकरण करने का कार्य करता है तथा इस क्षेत्र के विकासशील देशों के एकीकरण से संबंधित न्यायिक समस्याओं का अध्ययन करता है।

मानवाधिकार संबंधी अंतर-अमरीकी आयोग (Inter-American Commission on Human Rights): यह संस्था मानवाधिकारों को संरक्षण एवं उन्हें बढ़ावा देने का कार्य करता है। इसके सात सदस्यों का निर्वाचन महासभा (General Assembly) द्वारा किया जाता है। इनका कार्यकाल चार वर्ष का होता है। ये मात्र एक बार पुनर्निर्वाचन के योग्य होते हैं।

आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन

(Organisation for Economic Cooperation and Development – OECD)

इसका गठन 1961 में किया गया था। इसका मुख्यालय पेरिस (फ्रांस) में है। इसके सदस्य देशों की संख्या 36 है।

अधिदेश (Mandate)

इस संगठन का मुख्य उद्देश्य सदस्य देशों में आर्थिक संवृद्धि, रोजगार, रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाना है। इसके लिए यह नीतियों में समन्वय स्थापित करता है। यह विश्व अर्थव्यवस्था के ठोस, समावेशी एवं सतत् विकास में मदद करता है। यह विशेषकर गरीब देशों की मदद करता है। विश्व व्यापार की वृद्धि तथा वित्तीय स्थिरता को बनाए रखना भी इसके उद्देश्यों में शामिल है। आर्थिक

सहयोग एवं विकास संगठन एक ऐसे पंच के रूप में कार्य करता है जहाँ सरकारें अपने अनुभवों को बाँट सकती हैं तथा सामान्य समस्याओं का समाधान कर सकती हैं। यह आर्थिक, सामाजिक एवं पर्यावरणीय परिवर्तनों के लिए जिम्मेवार कारकों की पहचान करने में सरकारों की सहायता करता है। यह वैश्विक व्यापार, निवेश प्रवाह एवं उत्पादकता का मापन करता है। यह भविष्य की प्रवृत्तियों को समझने के लिए आँकड़ों की तुलना एवं भविष्यवाणी करता है। यह कृषि, कर (Tax) से लेकर रसायनों की सुरक्षा जैसी चीजों के लिए अंतर्राष्ट्रीय मानक (International Standard) का निर्धारण करता है। यह साधारण व्यक्ति के जीवन को प्रत्यक्ष तौर पर प्रभावित करने वाले कर तथा सामाजिक सुरक्षा जैसे मुद्दों को भी देखता है।

संरचना (Structure)

परिषद् (Council): आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन की निर्णयन (Decision Making) शक्ति परिषद् में निहित है। इसमें प्रत्येक सदस्य देश का एक प्रतिनिधि होता है। इसके अलावा इसमें यूरोपीय संघ का भी एक प्रतिनिधि होता है। परिषद् की नियमित बैठक होती है तथा सर्वसम्मति से निर्णय लिए जाते हैं। बैठकों की अध्यक्षता महासचिव द्वारा की जाती है।

समितियाँ (Committees): अर्थव्यवस्था, व्यापार, विज्ञान, रोजगार, शिक्षा तथा वित्तीय बाजार जैसे विशिष्ट नीतिगत क्षेत्रों में हुए विकास की समीक्षा करने तथा विचारों को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से सदस्य देशों के प्रतिनिधि विशिष्ट समितियों में मिलते हैं। संगठन के अंतर्गत लगभग 250 समितियाँ, कार्यकारी समूह तथा विशेषज्ञ समूह कार्यरत हैं। प्रत्येक वर्ष सचिवालय द्वारा शुरू किए जाने वाले कार्यों की समीक्षा एवं उनमें योगदान करने के लिए 40 हजार वरिष्ठ अधिकारी भाग लेते हैं।

सचिवालय (Secretariat): संगठन का सचिवालय पेरिस में स्थित है। यहाँ लगभग 2500 कर्मचारी कार्यरत हैं जो समितियों की गतिविधियों में सहायता तथा परिषद् द्वारा निर्धारित प्रारम्भिकताओं के संदर्भ में कार्य करते हैं। इन कर्मचारियों में आर्थिक विश्लेषक, वकील, वैज्ञानिक तथा अन्य पेशेवर शामिल होते हैं।

अंतर-संसदीय संघ (Inter-Parliamentary Union)

अंतर-संसदीय संघ की स्थापना 1889 में की गई थी। यह विश्व में सभी राजनीतिक विचारधाराओं एवं राजनीतिक प्रतिनिधित्व करने वाले संसद सदस्यों या विधायिका के सदस्यों के बीच केंद्र का कार्य करता है। संयुक्त राष्ट्र ने अंतर-संसदीय संघ को संसदों का विश्व संगठन की मान्यता दी है।

अधिदेश (Mandate)

यह सभी देशों के संसदों एवं संसदों के बीच संपर्क, समन्वय एवं अपने अनुभवों का आदान-प्रदान अंतर्राष्ट्रीय महत्व के विषयों पर विचार-विमर्श करने तथा ऐसे विचार-विमर्श के बाद लिए गए निर्णयों को लागू करवाने का कार्य करती है। संसदीय लोकतंत्र एवं विकास को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक मानवाधिकारों के संरक्षण का कार्य करता है। प्रतिनिध्यात्मक संस्थाओं के कार्यकरण के बारे में बेहतर जानकारी देता है तथा कार्य के साधनों (Means of Actions) के विकास एवं उन्हें मजबूत बनाने का कार्य करता है। अंतर-संसदीय संघ तथा संयुक्त राष्ट्र संघ कई विषयों विशेषकर शांति एवं सुरक्षा, आर्थिक एवं सामाजिक विकास, अंतर्राष्ट्रीय कानून, मानवाधिकार, लोकतंत्र तथा लैंगिक विषयों पर नजदीकी सहयोग करते हैं। यह संघ अंतर-सरकारी स्तर पर संस्थाओं की स्थापना का भी कार्य करता है।

संरचना (Structure)

शासी परिषद् (Governing Council): शासी परिषद् को पहले अंतर-संसदीय परिषद् कहा जाता था। संघ का नीति निर्माण करने वाली संस्था है। कई समितियाँ तथा कार्यकारी समूह इसके अधीन हैं। ये अपने कार्यों की रिपोर्ट परिषद् को करते हैं। अंतर-संसदीय का अध्यक्ष शासी परिषद् का पदेन अध्यक्ष होता है। शासी परिषद् अंतर-संसदीय संघ के वार्षिक कार्यक्रम एवं बजट का निर्धारण करता है। यह नए सदस्यों के प्रवेश या निलंबन (Suspension) के लिए उत्तरदायी है। शासी परिषद्, प्रत्येक सदस्य देश के संसद के तीन प्रतिनिधियों से मिलकर बनती है।

कार्यकारिणी समिति (Executive Committee): कार्यकारिणी समिति अंतर-संसदीय संघ का प्रशासन देखती है और शासी परिषद् को सलाह देती है। कार्यकारिणी समिति के 15 सदस्यों का चुनाव शासी परिषद् द्वारा चार वर्षों के लिए की जाती है। अंतर-संसदीय संघ का अध्यक्ष कार्यकारिणी समिति का पदेन सदस्य एवं अध्यक्ष होता है। कार्यकारिणी समिति के कम से कम 12 सदस्यों का निर्वाचन शासी परिषद् के सदस्यों में से किया जाता है तथा कम से कम तीन महिला सदस्य होती हैं। कार्यकारिणी समिति संघ से संबद्ध परिषद् की बैठकों के लिए कार्यसूची, दिन एवं स्थान तय करता है। कार्यकारिणी समिति, सचिवालय का प्रशासन देखने के साथ-साथ सभा तथा परिषद् द्वारा लिए गए निर्णयों को लागू करवाता है।

सभा (Assembly): सभा को पहले अंतर-संसदीय सम्मेलन (Inter-Parliamentary Conference) के रूप में जाना जाता था। यह अंतर-संसदीय संघ के राजनीतिक मुद्दों पर विचार व्यक्त करने वाली प्रमुख सांविधिक संस्था है। यह अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं के अध्ययन के लिए संसद सदस्यों को एक साथ लाता है तथा कार्रवाई के लिए अनुरास करता है। परंपरागत रूप से सभा की बैठकों में सभी दलों के सांसद भाग लेते हैं। सभा की वर्ष में दो बैठक भिन्न-भिन्न देशों में होती है।

स्थायी समितियाँ (Standing Committees): सभा के कार्यों में सहायता देने के लिए स्थायी समितियाँ भी हैं जैसे- शांति एवं अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा से संबंधित स्थायी समिति, सतत् विकास, वित्त एवं व्यापार से संबंधित स्थायी समिति, लोकतंत्र एवं मानवाधिकार से संबंधित स्थायी समिति।

वर्ल्ड वाइड फंड फॉर नेचर (Worldwide Fund For Nature)

इसका गठन एवं पंजीकरण सन् 1961 में एक चैरिटी के रूप में किया गया था। इसका मुख्यालय ग्लैड (स्विट्जरलैंड) में है। यह पर्यावरण की देखभाल, संरक्षण एवं उससे संबंधित अनुसंधान का कार्य करता है। इसका पुराना नाम वर्ल्ड वाइड लाइफ फण्ड था जो अभी भी अमेरिका एवं कनाडा में इसका आधिकारिक नाम है। वर्ल्ड वाइड फंड फॉर नेचर विश्व का सबसे बड़ा संरक्षण संगठन है। यह राष्ट्रीय संगठनों एवं कार्यक्रम कार्यालयों के वैश्विक नेटवर्क से जुड़ा है।

अधिदेश (Mandate)

वर्ल्ड वाइड फंड फॉर नेचर की स्थापना का मुख्य उद्देश्य विभिन्न प्रजातियों तथा पारिस्थितिक विविधता का संरक्षण करना, नवीकरणीय प्राकृतिक संसाधनों की सतृता को सुनिश्चित करना, वर्तमान तथा आने वाले समय में सभी जीवों की भलाई का कार्य करना, प्रदूषण को न्यूनतम स्तर पर लाने के लिए कार्यक्रमों को प्रोत्साहन देना, संसाधनों एवं ऊर्जा के उपयोग में बर्बादी को रोकना आदि शामिल है। पृथ्वी के प्राकृतिक वातावरण के क्षय को रोकना और एक ऐसे भविष्य का निर्माण करना जिसमें मानव प्रकृति के साथ तालमेल बनाकर रह सके। इसके अंतर्गत पाँच हजार से ज्यादा कर्मचारी सौ से ज्यादा देशों में कार्यरत हैं। वर्ल्ड वाइड फंड फॉर नेचर समस्याओं के समाधान के लिए समुदायों, राजनेताओं तथा उद्योगपतियों के साथ मिलकर कार्य करता है ताकि लोगों एवं प्रकृति के बीच सामंजस्य बना रहे। यह वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित सहयोगपूर्ण तथा नवप्रवर्तनशील परियोजनाओं का संचालन करता है। वर्ल्ड वाइड फंड फॉर नेचर प्रयोगिक क्षेत्र परियोजना, वैज्ञानिक अनुसंधान, पर्यावरण नीतियों के संबंध में स्थानीय एवं राष्ट्रीय सरकारों को सलाह, पर्यावरण शिक्षा को बढ़ावा तथा पर्यावरणीय मुद्दों पर जागरूकता बढ़ाने का कार्य करता है।

संरचना (Structure)

वर्ल्ड वाइड फंड फॉर नेचर को इसके कार्यों में संरक्षण में रूचि रखने वाले वैज्ञानिकों, नीति विशेषज्ञों, वकीलों, संचार विशेषज्ञों तथा कार्यक्रम विशेषज्ञों द्वारा मदद की जाती है। यह एक अंतर्राष्ट्रीय अध्यक्ष (International President) के निर्देशन में एक ट्रस्ट बोर्ड द्वारा स्वाधीन रूप से कार्य करता है। स्विट्जरलैंड के कानून के तहत इसका एक स्वतंत्र फाउंडेशन के रूप में पंजीकरण किया गया है। ग्लैड (स्विट्जरलैंड) में ही इसका सचिवालय स्थित है। सचिवालय नीतियों एवं प्रथमिकताओं का विकास कर वैश्विक सहभागिता का विकास करता है। यह अंतर्राष्ट्रीय अभियानों में समन्वय स्थापित कर तथा सहायता उपायों के माध्यम से विश्वभर के कार्यालयों में समन्वय स्थापित करता है। वर्ल्ड वाइड फंड फॉर नेचर के वैश्विक कार्यालय (Offices) दो तरह के हैं-

प्रहला : वे हैं जो स्वायत्त रूप से कोष संग्रह एवं विभिन्न कार्यों को कार्यान्वित करते हैं।

दूसरा : वे हैं जो किसी न किसी स्वतंत्र कार्यालय के अधीन रहकर कार्य करते हैं।

एंटी बैलिस्टिक मिसाइल संधि (Anti-Ballistic Missile Treaty)

एंटी बैलिस्टिक मिसाइल सिस्टम को सीमित करने के लिए अमेरिका एवं सोवियत संघ के बीच इस संधि पर मई 1972 में हस्ताक्षर किया गया था। यह समझौता अक्टूबर 1972 से प्रभावी हुआ। एंटी बैलिस्टिक सिस्टम के अंतर्गत शत्रु देश से आने वाले आक्रमक मिसाइलों को रोकने के लिए रडार तथा इंटरसेप्टर मिसाइल का प्रयोग किया जाता है। मूल संधि द्वारा केवल दो क्षेत्रों में एंटी बैलिस्टिक मिसाइल सिस्टम को तैनात करने की अनुमति दी गई थी। इसमें एक राष्ट्रीय राजधानी की सुरक्षा तथा दूसरा अंतरमहाद्वीपीय बैलिस्टिक मिसाइल वाले क्षेत्र की सुरक्षा के लिए तैनात की जा सकती थी। दोनों क्षेत्रों में कुल मिलाकर दो सौ मिसाइलों की तैनाती की जा सकती थी। इसके अंतर्गत एंटी बैलिस्टिक मिसाइलों के तकनीकी सुधार को सीमित करने पर भी दोनों देश सहमत हुए थे। संधि के प्रावधानों के अनुपालन एवं कार्यान्वयन संबंधी मुद्दों को देखने के लिए एक स्थायी सलाहकारी आयोग (Standing Consultative Commission-SCC) का भी गठन किया गया था।

अधिदेश (Mandate)

इस संधि का उद्देश्य परमाणु अस्त्रों की होड़ समाप्त करना, सामरिक अस्त्रों की संख्या कम करने के लिए प्रभावी कदम उठाना, परमाणु निरस्त्रीकरण तथा संपूर्ण निरस्त्रीकरण के लिए तिथि सुनिश्चित करना था। यह संधि पारस्परिक सुनिश्चित विनाश (Mutual Assured Destruction-MAD) सिद्धांत पर आधारित था। परस्पर सुनिश्चित विनाश सिद्धांत के अंतर्गत कोई परमाणु अस्त्र संपन्न देश परमाणु अस्त्रों के प्रयोग से डरता है क्योंकि दूसरा परमाणु अस्त्र संपन्न देश भी प्रतिक्रिया स्वरूप इन अस्त्रों का प्रयोग कर सकता है। फलस्वरूप इस प्रक्रिया में दोनों का विनाश सुनिश्चित हो जाता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए कोई भी देश इन अस्त्रों के प्रयोग से डरता है। इस संधि से संबंधित एक प्रोटोकॉल पर 1974 में हस्ताक्षर किया गया था जिसमें तैनात की जा सकने वाली मिसाइलों की संख्या घटाकर दो सौ से एक सौ कर दी गई थी। आगे चलकर अंतरिक्ष आधारित तकनीक तथा छोटे एवं धीमी गति के मिसाइलों की तैनाती के कारण एंटी बैलिस्टिक मिसाइल संधि की महत्ता कम हो गई। दिसंबर 2001 में अमेरिका ने एकतरफा तरीके से इस संधि से अलग हो जाने की घोषणा की। उसका कहना था कि 21वीं शताब्दी के वास्तविक संकटों से निपटने के लिए आवश्यक आक्रमक क्षमता की प्राप्ति में यह संधि बाधक है तथा शांति सुनिश्चित करने में यह सक्षम नहीं है। इस तरह यह संधि अब अप्रभावी हो चुका है। इस संधि में यह प्रावधान था कि कोई भी संबंधित पक्ष छह महीने की पूर्व सूचना देकर आपसी सहमति से या एकतरफा तरीके से संधि से अलग हो सकता है।

मिसाइल तकनीकी नियंत्रण व्यवस्था

(The Missile Technology Control Regime-MTCR)

मिसाइल तकनीक नियंत्रण व्यवस्था (एम.टी.सी.आर.) एक अनौपचारिक या स्वैच्छिक संगठन है। इस व्यवस्था या संगठन का उद्देश्य जनसंहार में सक्षम मानवरहित प्रक्षेपण सिस्टम (Unmanned Delivery System) के प्रसार को रोकना है। यह मानव रहित प्रक्षेपण प्रणाली के प्रसार को रोकने के लिए देशों के निर्यात लाइसेंसिंग प्रक्रियाओं के बीच समन्वय बैठाने का प्रयास करता है। एम.टी.सी.आर. की स्थापना 1987 में मूल रूप से कनाडा, फ्रांस, जर्मनी, इटली, जापान, यू.के. तथा अमेरिका द्वारा की गई थी। इस व्यवस्था में शामिल देशों की संख्या 34 हो गई है।

अधिदेश (Mandate)

एम.टी.सी.आर. की शुरुआत परमाणु, रासायनिक एवं जैविक जनसंहारक हथियारों का प्रसार रोकने के लिए की गई थी। जनसंहारक हथियारों के प्रसार को हमेशा अंतराष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा के लिए खतरे के रूप में देखा जाता है। इस खतरे को 1992 के सुरक्षा परिषद के शिखर सम्मेलन घोषणापत्र (Summit Meeting Declaration) में भी स्वीकार किया गया था। 11 सितंबर 2001 के आतंकवादी धड़ना के बाद इस तरह के हथियारों का आतंकवादी समूहों या व्यक्तियों के हाथों में पड़ने को लेकर चिंता व्यक्त की जाने लगी। इस तरह के खतरे को कम करने का एक उपाय मिसाइल संबंधी उपकरणों, सामग्री एवं संबंधित तकनीकों के हस्तांतरण पर निगरानी रखना है। एम.टी.सी.आर. की सफलता निर्यात सामग्रियों जिसमें यंत्र, सॉफ्टवेयर एवं तकनीक से संबंधित सामान्य निर्यात नीति दिशा-निर्देश (Common Export Policy Guidelines) के अनुपालन पर निर्भर करता है। एम.टी.सी.आर. से संबंधित सभी निर्णय सर्वसम्मति से लिए जाते हैं। सदस्य देश प्रासंगिक राष्ट्रीय निर्यात लाइसेंसिंग मुद्दों पर सूचनाओं का नियमित आदान-प्रदान करते हैं। राष्ट्रीय निर्यात लाइसेंसिंग मानकों (National Export Licensing Measures) के कारण राष्ट्रों के लिए जनसंहारक हथियारों के प्रक्षेपण से संबंधित मानवरहित प्रक्षेपण तकनीकों की प्राप्ति एक कठिन समस्या बन जाती है। परिणामस्वरूप एम.टी.सी.आर. से जुड़े सभी सदस्य देशों एवं सहभागियों ने स्वेच्छपूर्वक रॉकेट तथा मानवरहित प्रक्षेपण वायुयान, तकनीक, यंत्र या सामग्री से संबंधित निर्यात लाइसेंसिंग मानक तय किए हैं।

एम.टी.सी.आर. कोई संधि नहीं है क्योंकि सदस्य देश कानूनी रूप से इसके प्रावधानों से बंधे नहीं हैं। यह सदस्य देशों के बीच एक अनौपचारिक राजनीतिक समझ है जो मिसाइल या मिसाइल तकनीकों के प्रसार को सीमित करना चाहता है।

संरचना (Structure)

मिसाइल तकनीकी नियंत्रण व्यवस्था के अंतर्गत सभी निर्णय सर्वसम्मति से लिए जाते हैं। इसमें नए सदस्य देशों के प्रवेश से संबंधित निर्णय भी शामिल है। सदस्य देशों की वार्षिक बैठक होती है जिसकी अध्यक्षता सदस्य देशों द्वारा चक्रान्वय आधार पर (Rotational Basis) पर की जाती है। तकनीकी विशेषज्ञों, सूचना विनिमय तथा प्रवर्तन विशेषज्ञों की अस्थायी बैठक होती है। एम.टी.सी.आर. का सचिवालय नहीं है।

मानवाधिकारों से संबंधित विना घोषणा-पत्र (Vienna Declaration on Human Rights)

मानवाधिकारों से संबंधित विश्व सम्मेलन (World Conference) जून 1993 में विना में हुआ था। इस सम्मेलन में अंतराष्ट्रीय समुदाय ने मानवाधिकारों को बढ़ावा देने एवं इनके संरक्षण हेतु प्रतिबद्धता व्यक्त की थी। इस सम्मेलन में मानवाधिकारों को उच्च प्राथमिकता वाला विषय बनाने तथा मानवाधिकार संबंधी प्रपत्रों को मजबूत बनाने के लिए विशिष्ट कदम उठाने, उनके लिए निगरानी व्यवस्था करने, मानवाधिकारों को बढ़ावा देने संबंधी संयुक्त राष्ट्र गतिविधियों में समन्वय स्थापित करने तथा संयुक्त राष्ट्र महासभा (UN General Assembly) द्वारा एक उच्चायुक्त (High Commission) की नियुक्ति की बात कही गई थी। महासभा ने दिसंबर 1993 में मानवाधिकारों की देखरेख के लिए एक संयुक्त राष्ट्र उच्चायुक्त (UN High Commissioner) की नियुक्ति की थी। इस सम्मेलन में मानवाधिकार के उल्लंघनकर्ताओं को दण्डित करने के लिए एक अंतराष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय (International Criminal Court) की स्थापना का भी समर्थन किया गया था।

इस सम्मेलन में मानवाधिकार संबंधी विना घोषणा-पत्र तथा कार्य-योजना अपनाया गया। घोषणा-पत्र में सभी मानवाधिकारों को सार्वभौमिक, अंतरनिर्भर, अंतर्संबंधित एवं अविभाज्य बताया गया। सभी लोगों के आत्म-निर्णय (Self-Determination) के अधिकार को स्वीकार किया गया था तथा इस संबंध में किसी प्रकार के वैध कार्य को सही ठहराया गया था। लेकिन इसमें किसी देश से अलग होने, सदस्यता त्यागने या किसी स्वतंत्र एवं संप्रभु देश की क्षेत्रीय एकता को हानि पहुँचाने का अधिकार नहीं दिया गया था। घोषणा-पत्र में लोकतंत्र विकास एवं मानवाधिकारों के सम्मान को अंतर्निर्भर बताया गया था। घोषणापत्र में देशों से एकपक्षीय रूप से ऐसा कोई भी कार्य करने की अपेक्षा नहीं की गई थी जो अंतराष्ट्रीय विधि का विरुद्ध हो। इसमें यह भी कहा गया था कि भोजन या खादान सहायता को राजनीतिक दबाव डालने के यंत्र के रूप में प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। लैंगिक हिंसा, यौन उत्पीड़न एवं शोषण के विरुद्ध गंभीर चिंता व्यक्त की गई थी तथा लिंग आधारित भेदभाव को समाप्त करने के लिए राष्ट्रीय प्रयास एवं अंतराष्ट्रीय सहयोग करने की बात कही गई थी। घोषणा पत्र में अल्पसंख्यकों को उनके धार्मिक एवं सांस्कृतिक अधिकार को स्वीकार किया गया था।

यू. एन. वीमेन (UN Women)

लिंग समानता एवं महिलाओं के सशक्तीकरण हेतु संयुक्त राष्ट्र महासभा (UN General Assembly) द्वारा जुलाई 2010 में इस संस्था का सृजन किया गया था। यू. एन. वीमेन का सृजन संयुक्त राष्ट्र सुधार प्रक्रिया के रूप में किया गया है। महिलाओं के सशक्तीकरण एवं लिंग समानता की दिशा में कार्य कर रहे सभी एजेंसियों का विलय कर इस संस्था का बताया गया है। लिंग समानता केवल एक मूलभूत अधिकार नहीं है बल्कि इसकी प्राप्ति के व्यापक सामाजिक-आर्थिक परिणाम होते हैं। महिलाओं के सशक्तीकरण से अर्थव्यवस्था उत्पादकता एवं समृद्धि में महत्वपूर्ण परिवर्तन आते हैं। लिंग समानता लगभग सभी समाजों में देखी जाती है।

अधिदेश (Mandate)

यू. एन. वीमेन के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं-

- महिलाओं की स्थिति संबंधी आयोग (Commission on the Status of Women) जैसे अंतरसरकारी संस्थाओं का समर्थन करना, नीतियों को बनाने, वैश्विक मानक एवं आदर्श तय करने में उनकी सहायता करना।
- इन मानकों को लागू करने में सदस्य राज्यों की सहायता करना। किसी देश द्वारा अनुरोध किए जाने पर किसी सदस्य राज्य को उपर्युक्त तकनीकी एवं वित्तीय सहायता देना तथा सिविल सोसाइटी के साथ मजबूत भागीदारी स्थापित करना।
- लिंग समानता के संदर्भ में संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था को इसके प्रतिबद्धताओं के प्रति जिम्मेदार बनाए रखना तथा व्यवस्थागत प्रगति की समीक्षा करना।
- महिलाओं एवं लड़कियों के विरुद्ध भेदभाव को समाप्त करना।
- महिलाओं का सशक्तीकरण करना है।
- महिलाओं एवं पुरुषों के बीच समानता की प्राप्ति करना। विकास, मानवाधिकार, मानवीय कार्यवाही, शांति एवं सुरक्षा में भी समानता को बढ़ावा देना।
- यू.एन.वीमेन राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए नए राष्ट्रीय कानूनों तथा संवैधानिक सुधारों की वकालत करता है।

संरचना (Structure)

यू.एन.वीमेन को इसके कार्यों में संयुक्तराष्ट्र महासभा (General Assembly), आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् तथा महिलाओं की स्थिति संबंधी आयोग (Commission on the Status of Women) द्वारा सहायता एवं नीतिगत मामलों में मार्गदर्शन किया जाता है।

लैटिन अमरीकी एवं कैरीबियन देशों का समुदाय

(Community of Latin American and Caribbean States-CELAC)

यह कैरीबियन एवं लैटिन अमरीकी देशों का संगठन है। इसकी स्थापना दिसंबर 2011 में की गई थी। इसमें 33 देश शामिल हैं। अमरीकी क्षेत्र में केवल कनाडा और अमेरिका ही इसमें शामिल नहीं है। यह संगठन दशकों पुरानी अमरीकी एकता हेतु प्रयास का नतीजा है।

अधिदेश (Mandate)

इस संगठन का उद्देश्य राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकीकरण को बढ़ावा देना तथा अर्थव्यवस्था एवं राजनीति के क्षेत्र में इन देशों की अमेरिका पर अति-निर्भरता को समाप्त करना है। यह संगठन इस क्षेत्र में सतत विकास को बढ़ावा देने के लिए संयुक्त प्रयास को बढ़ावा देता है। सामान्य हित के मामलों में सहयोग को बढ़ावा देता है। यह विदेशों में वार्ता के दौरान लैटिन अमरीकी एवं कैरीबियन देशों की ओर से अपनी राय रखता है। यह दक्षिण-दक्षिण सहयोग को भी बढ़ावा देता है। इसे अमरीकी देशों का संगठन (Organisation of American States-OAS) के विकल्प के भी रूप में देखा जाता है। ओ.ए.एस. एक क्षेत्रीय संगठन है जो अमेरिका द्वारा 1948 में संगठित किया गया था जिसका प्रमुख उद्देश्य इस क्षेत्र में सोवियत संघ के प्रभाव को रोकना था। लैटिन अमरीकी एवं कैरीबियन देशों का समुदाय इस क्षेत्र में राजनीतिक वार्ता के प्रमुख मंच के रूप में कार्य करता है। एकता, लचीलापन, क्रमिकता (Gradualism), बहुलता, विविधता, काशों की संपूर्णता, नए पहल में सहभागिता इसके प्रमुख सिद्धांत हैं।

भारत ने भी इस संगठन के साथ सहयोग बढ़ाने का निर्णय किया है। अगस्त 2012 में भारत के विदेश मंत्री श्री एस. एम. कृष्णा ने चिली, ब्रेजिल तथा क्यूबा के विदेश मंत्रियों के साथ बैठक की थी। इस बैठक में भारत-सी.ई.एल.ए.सी. संबंधों की समीक्षा की गई थी। यह भारत एवं इस संगठन के तीन सदस्य देशों के विदेश मंत्रियों के बीच पहली बैठक थी। इसमें संयुक्त राष्ट्र सुधार, अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संकट, जलवायु परिवर्तन तथा अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद जैसे मुद्दों पर चर्चा की गई थी। यह निर्णय भी लिया गया कि भारत एवं इस संगठन के बीच सामरिक सहभागिता (Strategic Partnership) की स्थापना के लिए प्रत्येक वर्ष शिखर वार्ता आयोजित की जाएगी। यह शिखर वार्ता भारत एवं इस संगठन के सदस्य देशों में बारी-बारी से होगी।

संरचना (Structure)

इस संगठन के सदस्य देशों ने किसी स्थायी संरचना का विकास नहीं किया है। जो सदस्य देश राज्य प्रमुखों एवं सरकार प्रमुखों का शिखर सम्मेलन की मेजबानी करता है, वहीं इसकी अध्यक्षता करता है।

लैटिन अमरीकी एवं कैरीबियन देशों का समुदाय कई स्तरों पर वार्तालाप करता है जिनमें प्रमुख निम्नलिखित हैं-

राज्य एवं शासन प्रमुख (Heads of State and Government): इनकी प्रत्येक वर्ष बैठक होती है। उनके द्वारा लिए गए निर्णयों को राष्ट्रपति घोषणा-पत्र (Presidential Declaration) कहा जाता है। इन कार्यक्रमों एवं कार्यक्रमों के माध्यम से पूरा करना होता है। राष्ट्रपति घोषणा-पत्र को लागू करने की जिम्मेवारी विदेश मंत्री की होती है।

मंत्री-स्तरीय बैठक (Sectorial Ministerial Meeting): इस बैठक के अंतर्गत संगठन के कार्य-सूची में शामिल विषयों के लिए उत्तरदायी मंत्रियों की बैठक बुलाई जाती है।

उच्च पदस्थ अधिकारी (High Ranking Officials): प्रत्येक सदस्य देश एक उच्च पदस्थ अधिकारी को नामित करता है, जो दस्तावेजों को तैयार करने एवं विदेश मंत्रियों की बैठक आयोजित करने का कार्य करता है।

सबसे कम विकसित देश (Least Developed Countries-LDCs)

संयुक्त राष्ट्र ने एक अलग श्रेणी के रूप में 1971 में एल. डी. सी. की स्थापना की। यू.एन. ने 1970 के दशक में अंतर्राष्ट्रीय विकास रणनीति के अंतर्गत एल. डी. सी. के विकास के लिए विशेष उपाय किए। उसके बाद संयुक्त राष्ट्र ने एल. डी. सी. के विकास के लिए प्रत्येक 10 वर्ष बाद एक बैठक करने का निर्णय किया। एल.डी.सी. के विकास के लिए अब तक तीन कार्य योजना को (Programme of Action) अपनाया गया है जिसका अब तक सीमित प्रभाव ही पड़ा है। परिणामस्वरूप केवल तीन देश बोत्सवाना, केप वर्ड तथा मालदीव इस समूह से बाहर निकल सके हैं।

एल. डी. सीज के निर्धारण के निम्नलिखित मापदण्ड हैं। यह निर्धारण संयुक्त राष्ट्र के आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् द्वारा किया जाता है।

प्रति व्यक्ति आय, मानव सम्पत्ति सूचकांक (Human Asset Index) तथा आर्थिक असुरक्षा सूचकांक (Economic Vulnerability Index)।

एलडीसीज (LDCs) कुछ सामान्य समस्याओं से पीड़ित हैं जैसे अत्यधिक गरीबी, उत्पादक क्षमता की कमी, आधारभूत संरचना एवं संस्थाओं का अभाव, खाद्यान्न एवं ऊर्जा का अभाव, कमजोर घरेलू बाजार, निर्यात सामग्री पर निर्भरता, उच्च वैश्विक स्वास्थ्य बोझ (High Global Health Burden), बाहरी आघात के प्रति अतिसंवेदनशीलता तथा संरचनात्मक कमजोरी (Structural Weakness) इत्यादि। ये देश सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों (Millennium Development Goals) की प्राप्ति में भी अक्षम हैं।

निम्न सामाजिक-आर्थिक विकास, कमजोर मानव एवं संस्थात्मक क्षमता, निम्न एवं असमान रूप से वितरित आय, घरेलू वित्तीय संसाधनों का अभाव उनके सामान्य लक्षण हैं। वे ज्यादातर शासन संबंधी संकट, राजनीतिक अस्थिरता तथा आंतरिक एवं बाह्य संकटों का सामना करते हैं। वे सामान्य रूप से कृषि अर्थव्यवस्था वाले देश हैं। जो निम्न उत्पादकता एवं निम्न निवेश से जूझते हैं। वे कुछ प्राथमिक वस्तुओं के निर्यात पर निर्भर करते हैं। यही उनके राजकोषीय आय का प्रमुख साधन है। इन मजबूरियों के कारण कई बार उन्हें अनुचित व्यापार शर्तों को मानना पड़ता है। अल्पविकसित देशों की श्रेणी में अभी 49 देश शामिल हैं। इसमें अफ्रीका के 34, एशिया एवं प्रशांत क्षेत्र के 14 तथा लैटिन अमेरिका का 1 देश शामिल है। सबसे कम विकसित देश अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के सबसे गरीब एवं सबसे कमजोर हिस्से का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये विश्व के लगभग 12 प्रतिशत जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करते हैं लेकिन विश्व के सकल घरेलू उत्पाद में 2 प्रतिशत तथा वस्तुओं के वैश्विक व्यापार में 1 प्रतिशत से भी कम की इनकी भागीदारी है।

भारत एल. डी.सी. का एक प्रमुख समर्थक है। वास्तव में भारत ने इस समूह की स्थापना में सक्रिय भूमिका निभाई थी। भारत का एल. डी. सी. के साथ बेहतर संबंध है और उनके साथ लम्बे समय से विकास कार्यों में भागीदारी कर रहा है। भारत की एल. डी. सी. के साथ विकास सहायता उत्पादक क्षमताओं के निर्माण, संस्थात्मक मजबूती, आधारभूत संरचना का विकास तथा तकनीकी विशेषज्ञता पर आधारित है ताकि इन देशों में होशियार विकास सुनिश्चित किया जा सके।

स्वच्छ विकास एवं जलवायु संबंधी एशिया-प्रशांत भागीदारी (Asia-Pacific Partnership on Clean Development and climate)

इस सहभागिता की शुरुआत 2006 में हुई थी। इसमें ऑस्ट्रेलिया चीन, भारत, दक्षिण कोरिया तथा अमेरिका शामिल हैं।

विकास एवं गरीबी उन्मूलन इस भागीदारी का तात्कालिक अंतर्राष्ट्रीय लक्ष्य है। सतत विकास संबंधी अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भी वहनीय, विश्वसनीय एवं स्वच्छ ऊर्जा पर इसने बल दिया है। सतत विकास एवं जलवायु परिवर्तन से संबंधित दिल्ली घोषणापत्र में भी जलवायु परिवर्तन संबंधी कार्यसूची को महत्व देने की बात कही गई है। बिजली ऊर्जा, जल संचयन तथा इससे जुड़ी चुनौतियाँ, जिसमें वायु प्रदूषण, ऊर्जा सुरक्षा तथा ग्रीन हाउस गैस शामिल है, से निपटने के लिए आपसी सहयोग आवश्यक है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अपनी-अपनी राष्ट्रीय परिस्थितियों के अनुसार सहयोग करना आवश्यक है। इसके लिए स्वच्छ एवं विशिष्ट तकनीक का विकास, उपयोग, हस्तांतरण आवश्यक है जिससे कि प्रदूषण में कमी की जा सके, ऊर्जा सुरक्षा बढ़ाया जा सके तथा जलवायु परिवर्तन से संबंधित चिंताओं को दूर किया जा सके। इस जलवायु परिवर्तन से संबंधित संयुक्त राष्ट्र अभिसमय रूपरेखा (United Nation Framework Convention On Climate Change-UNFCCC) के प्रावधानों को भी ध्यान में रखा जाना जरूरी है। इस सहभागिता से किफायती एवं स्वच्छ तकनीकों का विकास, तैनाती एवं हस्तांतरण किया जा सकता है। सहयोग के क्षेत्रों में ऊर्जा दक्षता, स्वच्छ कोयला (Clean Coal), तरल प्राकृतिक गैस, कार्बन संग्रहण एवं भंडारण, संयुक्त ऊष्मा एवं ऊर्जा, मिथेन संग्रहण एवं प्रयोग, नागरिक परमाणु ऊर्जा, भूतापीय (Geothermal), ग्रामीण ऊर्जा व्यवस्था, उन्नत यातायात, भवन निर्माण एवं संचालन, जैव ऊर्जा (Bio Energy), कृषि एवं वानिकी, जल विद्युत, पवन ऊर्जा, सौर ऊर्जा एवं अन्य नवीकरणीय ऊर्जा शामिल हैं। आपसी सहभागिता में राष्ट्रीय सतत विकास के उपाय एवं ऊर्जा रणनीतियाँ भी शामिल की जा सकती हैं तथा ग्रीन हाउस गैस के उत्सर्जन की तीव्रता को कम करने का उपाय किया जा सकता है। इसके अलावा सहभागिता में वित्तीय व्यवस्था एवं मानव क्षमता (Human Capacity) का भी विकास किया जा सकता है।

संरचना (Structure)

भागीदारी को कार्यान्वित करने के लिए एक नीति एवं कार्यान्वयन समिति (A Policy and Implementation Committee) तथा प्रशासनिक सहायता समूह का गठन किया गया है। यह सहयोग के लिए संरचना, नीतियों का निर्माण, सहभागिता की प्रक्रिया, सहयोग की समय-समय पर समीक्षा तथा प्रशासनिक सहायता समूह को निर्देशन देता है। यह सहभागी गतिविधियों के प्रबंधन के लिए

उत्तरदायी है। यह संबंधित गतिविधियों में निजी क्षेत्र के प्रतिनिधियों को भी शामिल कर सकता है। यह भागीदारों को उनके स्वच्छ विकास संबंधी राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायता कर सकता है। इस उद्देश्य के लिए यह विभिन्न कार्यबलों (Task Force) का भी गठन कर सकता है। प्रशासनिक सहायता समूह सहभागिता के लिए महत्वपूर्ण है। यह समन्वयक (Coordinator) के रूप में कार्य करता है। यह बैठकों के आयोजन के लिए उत्तरदायी होता है। यह कार्यशाला एवं टेलीकॉन्फ्रेंसिंग (Tele Conferencing) जैसी गतिविधियों के आयोजन के लिए उत्तरदायी है।

संयुक्त राष्ट्र संघ (United Nations Organisations – UNO)

संयुक्त राष्ट्र संघ विश्व का सबसे बड़ा अंतर्राष्ट्रीय संगठन है। विश्व स्तर पर इस तरह का अंतर्राष्ट्रीय संगठन बनाने का यह दूसरा प्रयास था। इसके पहले प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद युद्ध एवं हिंसा को रोकने के लिए राष्ट्र संघ (League of Nations) की स्थापना की गई थी लेकिन यह संगठन युद्ध रोकने में सफल नहीं हो सका था। द्वितीय विश्व युद्ध की विभीषिका को देखते हुए युद्ध के दौरान ही विश्व के प्रमुख नेताओं ने एक ऐसा संगठन बनाने पर विचार करना शुरू कर दिया था जो भावी पीढ़ी को युद्ध की विभीषिका से बचाये, साथ ही विश्व में शांति भंग करने के प्रयासों को रोक सके। इसे देखते हुए द्वितीय विश्व युद्ध के बाद 51 देशों द्वारा 24 अक्टूबर 1945 को संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना की गई। ये देश अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा बनाए रखने, राष्ट्रों के बीच मित्रतापूर्ण संबंध विकसित करने, सामाजिक प्रगति, बेहतर जीवन स्तर की प्राप्ति तथा मानवाधिकारों को प्रोत्साहित करने के प्रति प्रतिबद्ध थे।

संयुक्त राष्ट्र संघ का इतिहास (History of the United Nation)

संयुक्त राष्ट्र शब्द अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट द्वारा दी गई थी। संयुक्त राष्ट्र शब्द का प्रयोग पहली बार द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान 1 जनवरी 1942 को संयुक्त राष्ट्र घोषणा पत्र (Declaration by the United Nation) में की गई थी। उसी समय 26 देशों के प्रतिनिधियों ने अपनी सरकारों की तरफ से धुरी राष्ट्रों के विरुद्ध लड़ने का संकल्प व्यक्त किया था। संयुक्त राष्ट्र के पूर्ववर्ती राष्ट्र संघ (League of Nations) का गठन भी इन्हीं परिस्थितियों में प्रथम विश्व युद्ध के दौरान 1919 के वर्साय की संधि (Treaty of Versailles) के अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय सहयोग, शांति एवं सुरक्षा की प्राप्ति के लिए किया गया था। लेकिन द्वितीय विश्व युद्ध को रोक सकने में अपनी अक्षमता के कारण राष्ट्र संघ अपनी प्रासंगिकता तथा वैधता खो बैठा। 1945 में 50 देशों के प्रतिनिधि सैन फ्रांसिस्को के अंतर्राष्ट्रीय संगठन संबंधी संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (United Nation Conference on International Organization) में संयुक्त राष्ट्र चार्टर तैयार करने के लिए मिले। इन प्रतिनिधियों ने चीन, सोवियत संघ, ब्रिटेन तथा अमेरिका के प्रतिनिधियों द्वारा अमेरिका के डम्बार्टन ओक्स (Dumbarton Oaks) में अक्टूबर 1944 में तैयार किए गए प्रस्ताव पर विचार-विमर्श किया। 26 जून 1945 को चार्टर पर 50 देशों के प्रतिनिधियों द्वारा हस्ताक्षर किया गया। पोलैंड ने इस सम्मेलन में भागीदारी नहीं की थी लेकिन उसने बाद में इस पर हस्ताक्षर किया और 51वाँ प्रारंभिक सदस्य बना। आधिकारिक रूप से संयुक्त राष्ट्र 24 अक्टूबर 1945 को अस्तित्व में आया। इसके अस्तित्व में आने से पहले चीन, फ्रांस, सोवियत संघ, ब्रिटेन अमेरिका तथा बहुसंख्यक हस्ताक्षरकर्ता देशों द्वारा इसकी अभिपुष्टि की गई। प्रत्येक वर्ष 24 अक्टूबर को संयुक्त राष्ट्र दिवस (United Nations Day) मनाया जाता है।

अधिदेश (Mandate)

अपनी अद्वितीय विशेषताओं तथा चार्टर में निहित इसके शक्तियों के कारण संयुक्त राष्ट्र संघ कई मुद्दों पर कार्रवाई कर सकता है। यह संगठन विश्व के 193 देशों को अपने विचार व्यक्त करने का मंच है। ये देश अपने विचार महासभा (General Assembly) सुरक्षा परिषद्, आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् तथा अन्य संस्थाओं एवं समितियों के माध्यम से व्यक्त कर सकते हैं। संयुक्त राष्ट्र के कार्य विश्व के सभी भागों को प्रभावित करते हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ को शांति रक्षण (Peace Keeping), शांति निर्माण (Peace Building), संघर्ष रोकथाम (Conflict Prevention) तथा मानवीय सहायता के लिए जाना जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ एवं इसकी विशिष्ट एजेंसियाँ, कार्यक्रम एवं कोष हमारे जीवन को प्रभावित करते हैं तथा विश्व को एक बेहतर स्थान बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं। यह संगठन कई मुद्दों पर कार्य करता है जिसमें सतत विकास, पर्यावरण, शरणार्थी संरक्षण (Refugees Protection) आपदा राहत, आतंकवाद निरोध, निरस्त्रीकरण, परमाणु अप्रसार, लोकतंत्र, मानवाधिकार तथा लिंग समानता को बढ़ावा, महिला विकास, शासन, आर्थिक एवं सामाजिक विकास, अंतर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य, बारूदी सुरंग हटाना, खाद्य उत्पादन का विस्तार करना आदि क्षेत्रों में कार्य करता है। अपने लक्ष्यों की प्राप्ति एवं एक सुरक्षित विश्व के निर्माण के प्रयासों में यह समन्वय बैठता है।

संयुक्त राष्ट्र के चार प्रमुख उद्देश्य हैं:-

- विश्वव्यापी शांति की स्थापना करना।
- राष्ट्रों के बीच मित्रता को बढ़ावा देना।

- गरीबों की जिंदगी सुधारने, भूख, बीमारी और निरक्षरता को समाप्त करने तथा एक-दूसरे की स्वतंत्रता एवं अधिकारों का सम्मान करने के लिए राष्ट्रों को सहयोग करना।
- उपरोक्त लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए राष्ट्रों के कार्यों में सपन्वय केंद्र के रूप में कार्य करना।

संयुक्त राष्ट्र संघ को सामान्य रूप से इसके शांति रक्षण (Peace Keeping) तथा मानवीय सहायता के कार्यों में इसके भागीदारी के कारण जाना जाता है, लेकिन यह अंतराष्ट्रीय संगठन कई अन्य रूपों में भी विश्व समुदाय को प्रभावित करता है। संयुक्त राष्ट्र संघ मानवता को चुनौती देने वाले समस्याओं के वैश्विक समाधान हेतु किए जाने वाले प्रयास में केन्द्रीय स्थान रखता है। इस प्रयास में लगभग 30 अन्य सम्बद्ध (Affiliated) संगठन सम्मिलित होते हैं जिन्हें संयुक्त रूप से संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था (UN System) कहा जाता है। संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था मानवाधिकारों का सम्मान, लिंग समानता एवं महिलाओं के विकास को बढ़ावा, पर्यावरण का संरक्षण, रोग उन्मूलन तथा निर्धनता में कमी करने जैसे कार्यों में संलग्न रहती है। संयुक्त राष्ट्र एजेंसियाँ सुरक्षित एवं सक्षम वायु के मानक (Standard) परिभाषित करती हैं। ये दूरसंचार व्यवस्था में सुधार तथा उपभोक्ता संरक्षण को बढ़ावा देने का प्रयास करती हैं। संयुक्त राष्ट्र नशीली पदार्थों का अवैध व्यापार तथा आतंकवाद के विरुद्ध अंतराष्ट्रीय अभियान चलाता है। विश्व स्तर पर संयुक्त राष्ट्र एवं इसकी एजेंसियाँ शरणार्थियों की सहायता, बारूदी सुरंगों की सफाई, खाद्य उत्पादन तथा एड्स की रोकथाम जैसे कार्यों में संलग्न रहती हैं। सितंबर 2000 में संयुक्त राष्ट्र के तहत 147 शासनाध्यक्षों एवं राष्ट्राध्यक्षों ने सहस्राब्दी घोषणा-पत्र (Millennium Declaration) के रूप से संयुक्त राष्ट्रसंघ के क्षेत्राधिकार में आने वाले सामाजिक-आर्थिक विषयों से संबंधित लक्ष्य तय किए थे। सितंबर 2008 में विश्व नेताओं ने इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए 2015 का समय सीमा निर्धारण किया है। इसकी प्राप्ति के लिए उन्होंने ठोस कार्य योजना का निर्धारण किया है।

आधिकारिक भाषा (Official Languages): संयुक्त राष्ट्र में आधिकारिक रूप से अरबी, चीनी, अंग्रेजी, फ्रांसीसी, रूसी तथा स्पेनिश भाषाएँ प्रयोग में लाई जाती हैं।

प्रतीक (Emblem): संयुक्त राष्ट्र के वर्तमान प्रतीक को 7 दिसंबर 1946 को स्वीकृति दी गई थी। इस प्रतीक में जैतून वृक्ष की शाखाओं के बीच विश्व मानचित्र को दर्शाया गया है। इसमें पांच संकेन्द्रित वृत्त भी हैं। जैतून की शाखाएँ शांति को प्रदर्शित करती हैं। विश्व मानचित्र संयुक्त राष्ट्र की शांति एवं सुरक्षा से जुड़ी इसके प्रमुख उद्देश्यों की प्राप्ति से संबद्ध क्षेत्रों को प्रदर्शित करता है।

ध्वज (Flag): संयुक्त राष्ट्र के वर्तमान ध्वज को 20 अक्टूबर 1947 को अपनाया गया था। संयुक्त राष्ट्र की ध्वज उसके प्रतीक को भी हल्का नीला पृष्ठभूमि में सफेद रंग से दर्शाया गया है।

संरचना (Structure)

संयुक्त राष्ट्र चार्टर के तहत छह प्रमुख अंगों की स्थापना की गई है। इसमें महासभा, सुरक्षा परिषद, आर्थिक एवं सामाजिक परिषद, न्यायिक परिषद तथा अंतराष्ट्रीय न्यायालय शामिल हैं।

संयुक्त राष्ट्र की विशिष्ट एजेंसियाँ निम्नलिखित सम्मिलित हैं-

- संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ ए ओ)
- अंतराष्ट्रीय नागरिक उड्डयन संगठन (आई सी ए ओ)
- कृषि विकास के लिए अंतराष्ट्रीय कोष (आई एफ ए डी)
- अंतराष्ट्रीय श्रम संगठन (आई एल ओ)
- अंतराष्ट्रीय समुद्री संगठन (आई एम ओ)
- अंतराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आई एम एफ)
- अंतराष्ट्रीय दूरसंचार संघ (आई टी यू)
- संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को)
- संयुक्त राष्ट्र औद्योगिक विकास संगठन (यूनिडो)
- सार्वभौमिक डाक संघ (यू पी यू)

विश्व बैंक समूह के अंतर्गत-

- अंतराष्ट्रीय पुनर्निर्माण एवं विकास बैंक (आई बी आर डी)
- निवेश विवादों के समाधान के लिए अंतराष्ट्रीय केंद्र (आई सी एस आई डी)
- अंतराष्ट्रीय विकास संगठन (आई डी ए)
- अंतराष्ट्रीय वित्त निगम (आई एफ सी)
- बहुपक्षीय निवेश गारंटी एजेंसी (एम आई जी ए)

- विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यू एच ओ)
- विश्व बौद्धिक संपदा संगठन (डब्ल्यू आई पी ओ)
- विश्व मौसम संगठन (डब्ल्यू एम ओ)
- विश्व पर्यटन संगठन (डब्ल्यू टी ओ)

संयुक्त राष्ट्र से संबंधित निम्नलिखित संगठन हैं-

- अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (आई ई ई ए)
- रासायनिक हथियार निषेध संगठन (ओ पी सी डब्ल्यू)
- विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू टी ओ)
- परमाणु परीक्षण प्रतिबंध संधि संगठन हेतु तैयारी आयोग (Preparatory Commission)

इसके अलावा संयुक्त राष्ट्र न्यास कोष (Trust fund) का भी संचालन करता है। इसमें प्रमुख हैं-

- संयुक्त राष्ट्र लोकतंत्र कोष (United Nation Democracy Fund)
- अंतर्राष्ट्रीय सहभागिता के लिए संयुक्त राष्ट्र कोष

महासभा (General Assembly)

महासभा संयुक्त राष्ट्र के अंतर्गत विचार-विमर्श करने वाली प्रमुख संस्था है। यह संयुक्त राष्ट्र सभी सदस्य देशों से मिलकर बना है। संयुक्त राष्ट्र का कार्य महासभा द्वारा दिए गए अधिदेश (Mandate) के अंतर्गत ही होता है। वर्तमान समय में महासभा में संयुक्त राष्ट्र के सभी 193 देशों की भागीदारी है। महासभा (General Assembly) संयुक्त राष्ट्र के अंतर्गत प्रमुख वार्ता करने वाली, एवं नीति बनाने वाली प्रमुख प्रतिनिधिक संस्था है। चार्टर में शामिल सभी अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर बहुपक्षीय एवं विस्तृत बातचीत करने का यह अद्वितीय मंच है। महासभा मानक स्थापना की प्रक्रिया (Process of Standard Setting) अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के संहिताकरण में भी यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। महासभा अपने नियमित सत्र हेतु सितंबर से दिसंबर तक प्रत्येक वर्ष मिलती है।

कार्य एवं शक्तियाँ (Functions and Powers of the General Assembly): संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अनुसार महासभा निम्नलिखित कार्य करती है-

- अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा (निरस्त्रीकरण सहित) के क्षेत्र में सहयोग के सामान्य सिद्धांतों के बारे में विचार-विमर्श तथा अनुशंसा करना।
- यदि वर्तमान में किसी विवाद या समस्या पर सुरक्षा परिषद द्वारा चर्चा की जा रही हो तो उसे छोड़कर अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा से जुड़े किसी प्रश्न पर विचार-विमर्श करना तथा इस संबंध में अनुशंसा करना।
- उपरोक्त अपवाद के अतिरिक्त संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अंतर्गत या संयुक्त राष्ट्र के किसी अंग के कार्यों या शक्तियों को प्रभावित करने वाले प्रश्नों पर विचार-विमर्श करना तथा इस संबंध में अनुशंसा करना।
- अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक सहयोग को बढ़ावा, अंतर्राष्ट्रीय कानून का विकास एवं संहिताकरण, मानवाधिकारों एवं मूलभूत स्वतंत्रता की प्राप्ति, आर्थिक, सामाजिक, मानवीय, सांस्कृतिक, शैक्षिक एवं स्वास्थ्य क्षेत्रों में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की प्राप्ति के लिए शुरुआती अध्ययन एवं अनुशंसा करना।
- वैसे किसी भी विवाद के शांतिपूर्ण समाधान हेतु अनुशंसा करना जो राष्ट्रों के बीच मित्रतापूर्ण संबंधों को प्रभावित कर सकता है।
- सुरक्षा परिषद एवं संयुक्त राष्ट्र के अन्य अंगों से रिपोर्ट प्राप्त करना तथा उन पर विचार करना।
- संयुक्त राष्ट्र के बजट पर विचार करना तथा उसे पास करना तथा सदस्य राज्यों का वित्तीय आंकलन करना।
- सुरक्षा परिषद के अस्थायी सदस्यों तथा संयुक्त राष्ट्र के अन्य परिषदों एवं अंगों के सदस्यों का चुनाव करना तथा सुरक्षा परिषद की अनुशंसा पर महासचिव (Secretary General) की नियुक्ति करना।

नवंबर 1950 की शांति के लिए एकता (Uniting for Peace) प्रस्ताव के अनुसार सुरक्षा परिषद द्वारा कार्रवाई करने में असफल रहने की स्थिति में भी महासभा कार्रवाई कर सकती है। ऐसी स्थिति विशेषकर तब उत्पन्न होती है जब कहीं भी शांति को खतरा हो, शांति का उल्लंघन किया गया हो या आक्रमण की कार्रवाई की गई हो तथा इन स्थितियों में सुरक्षा परिषद द्वारा नकारात्मक मतदान किया गया हो। ऐसी स्थिति में महासभा सामूहिक कार्रवाई के उद्देश्य से मामले पर त्वरित विचार कर सकती है ताकि अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा को बनाए रखा जा सके। अपने कार्यक्षेत्र में महासभा अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर राज्यों के लिए गैर-बाध्यकारी (Non-Binding) अनुशंसा करने के लिए ही अधिकृत है। इसके बावजूद इसने कई ऐसे राजनीतिक, आर्थिक, मानवीय, सामाजिक एवं कानूनी निर्णय लिए हैं जिसने विश्व के करोड़ों लोगों का जीवन प्रभावित किया है। 2000 में अपनाई गई सहस्राब्दी घोषणा-पत्र (Millennium Declaration) तथा 2005 के विश्व शिखर सम्मेलन के परिणाम दस्तावेज (World Summit Outcome Document)

से सदस्य राज्यों का शांति, सुरक्षा, निरस्त्रीकरण के साथ-साथ विकास एवं गरीबी उन्मूलन, मानवाधिकारों की रक्षा तथा कानून के शासन को प्रोत्साहन, पर्यावरण की रक्षा, अफ्रीका की विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति तथा संयुक्त राष्ट्र को मजबूत बनाए जाने जैसे विशिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति के प्रति प्रतिबद्धता का पता चलता है।

प्रत्येक सदस्य देश का महासभा में एक वोट है। शांति, सुरक्षा तथा सुरक्षा परिषद् के सदस्यों का चुनाव जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों के लिए 2/3 मत की आवश्यकता होती है। अन्य मामलों के लिए साधारण बहुमत (Simple Majority) की आवश्यकता होती है। हाल के दिनों में कई मुद्दों पर औपचारिक मतदान की जगह सर्वसम्मति प्राप्त करने का प्रयास किया गया है। इस तरह महासभा अपने निर्णयों के लिए समर्थन प्राप्ति के आधार को व्यापक बना रहा है। प्रतिनिधि मंडलों के साथ बातचीत करने के बाद अध्यक्ष (President) किसी प्रस्ताव को बिना मतदान के ही अपनाने की घोषणा कर सकता है।

निम्नलिखित संस्थाएँ, आयोग, कार्यक्रम एवं कोष प्रत्यक्ष रूप से महासभा को रिपोर्ट करती हैं।

- संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त कार्यालय (यू एन एच सी आर)
- संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (यूनिसेफ)
- अंतर्राष्ट्रीय व्यापार केंद्र (आई टी सी)
- संयुक्त राष्ट्र व्यापार एवं विकास सम्मेलन (अंकटाड)
- संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू एन डी पी)
- संयुक्त राष्ट्र पूँजी विकास कोष (यू एन सी डी एफ)
- संयुक्त राष्ट्र स्वयंसेवक (यू एन वी)
- संयुक्त राष्ट्र मादक पदार्थ एवं अपराध कार्यालय (यू एन ओ डी सी)
- संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यू एन ई पी)
- संयुक्त राष्ट्र मानव अवस्थापन कार्यक्रम (यू एन हैबिटेट)

सुरक्षा परिषद् (Security Council)

संयुक्त राष्ट्र चार्टर द्वारा छह प्रमुख अंगों की स्थापना की गई थी जिसमें सुरक्षा परिषद् भी शामिल है। चार्टर द्वारा अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा सुनिश्चित करने का प्राथमिक उत्तरदायित्व सुरक्षा परिषद् को दिया गया है। यह शांति के लिए उत्तम खतरे देखते हुए कभी भी बैठक कर सकती है। सुरक्षा परिषद् का पहला अधिवेशन 17 जनवरी 1946 को चर्च हाउस, वेस्टमिंस्टर (लंदन) में हुआ था। पहले अधिवेशन के बाद इसने न्यूयॉर्क के संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय में स्थायी रूप से बैठक करना शुरू किया।

चार्टर के अनुसार सुरक्षा परिषद् के चार उद्देश्य हैं-

- अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा को बनाए रखना।
- देशों के मध्य मित्रतापूर्ण संबंधों को बढ़ावा देना।
- अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान तथा मानवाधिकारों के सम्मान को बढ़ावा देने के लिए सहायता करना।
- देशों के इन कार्यों में समन्वय बैठाने हेतु कदम के रूप में कार्य करना।

संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्य सुरक्षा परिषद् के निर्णयों को मानने एवं उस लागू करने के लिए बाध्य हैं। संयुक्त राष्ट्र के अन्य अंग सदस्य राज्यों की केवल अनुशंसा करते हैं लेकिन चार्टर के अनुसार सुरक्षा परिषद् द्वारा लिए गए निर्णयों को सदस्य राज्यों को लागू करना ही होता है यानी सुरक्षा परिषद् के निर्णय बाध्यकारी होते हैं।

शांति एवं सुरक्षा को बनाए रखने के संदर्भ में जब भी कोई शिकायत इसके समक्ष की जाती है तो सुरक्षा परिषद् सबसे पहले संबंधित पक्षों से शांतिपूर्ण ढंग से समझौता करने के लिए अनुशंसा करती है। सुरक्षा परिषद् ऐसे समझौतों के लिए सिद्धांतों की स्थापना, मिशन की तैनाती या विवादों के शांतिपूर्ण समाधान के लिए महासचिव से अपने अधिकारों का प्रयोग करने के लिए अनुरोध भी कर सकती है। यदि किसी विवाद से शत्रुता बढ़ने की आशंका हो तो सुरक्षा परिषद् की प्राथमिक चिंता उसे शीघ्र समाप्त करने की होती है। ऐसी स्थिति में सुरक्षा परिषद् युद्ध विराम के लिए दिशा-निर्देश जारी कर सकती है ताकि संघर्ष को बढ़ने से रोका जा सके। वह तनाव में कमी लाने के लिए सैन्य पर्यवेक्षकों (Military Observers) या शांति रक्षक बलों की तैनाती कर सकती है। यह विरोधी पक्षों को अलग कर शांति की स्थापना करती है जिससे कि विवादों का शांतिपूर्ण समाधान किया जा सके। इसके अलावा सुरक्षा परिषद् प्रवर्तनकारी कदम भी उठा सकती है। इसके अंतर्गत आर्थिक प्रतिबंध, हथियार प्रतिबंध (Arms Embargo), वित्तीय दण्ड एवं प्रतिबंध, यातायात प्रतिबंध, कूटनीतिक संबंधों की समाप्ति, नाकाबंदी (Blockade) या सामूहिक सैन्य कार्रवाई भी शामिल हो सकती है। सुरक्षा परिषद् सदस्यों के प्रतिनिधि हमेशा संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय में मौजूद रहते हैं ताकि जरूरत पड़ने पर किसी भी समय इसकी बैठक बुलाई जा सके।

सुरक्षा परिषद् के कार्य एवं शक्तियाँ (Functions and Powers of Security Council)

- संयुक्त राष्ट्र के उद्देश्यों एवं सिद्धांतों के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा बनाए रखना।
- ऐसे किसी भी विवाद या परिस्थिति का अनुसंधान करना जो अंतर्राष्ट्रीय विवाद को जन्म दे सकता हो।
- ऐसे विवादों के समाधान के लिए उपायों या सिद्धांतों की अनुशंसा करना।
- हथियारों के विनियमन हेतु व्यवस्था की स्थापना हेतु योजना बनाना।
- शांति के लिए उत्पन्न खतरा या आक्रमण की कार्रवाई का निर्धारण करना तथा इसे रोकने के लिए आवश्यक कार्रवाई की अनुशंसा करना।
- आक्रमण की कार्रवाई को रोकने के लिए बल प्रयोग से अलग सदस्य देशों से आर्थिक प्रतिबंध या अन्य उपाय अपनाने के लिए कहना।
- आक्रमणकर्ता के विरुद्ध सैन्य कार्रवाई करना।
- नये सदस्यों के प्रवेश के लिए अनुशंसा करना।
- रणनीतिक क्षेत्रों (Strategic Areas) में संयुक्त राष्ट्र के अंतर्गत न्यासिता कार्य (Trusteeship Functions) करना।
- महासचिव की नियुक्ति के लिए महासभा (General Assembly) अनुशंसा करना तथा महासभा के साथ मिलकर अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय के न्यायाधीशों का चुनाव करना।

सुरक्षा परिषद् में कुल 15 सदस्य होते हैं-

पाँच स्थायी सदस्य चीन, फ्रांस, रूस, ब्रिटेन तथा अमेरिका हैं। इसके अलावा दस अस्थायी सदस्य महासभा द्वारा 2 वर्ष के लिए चुने जाते हैं। सुरक्षा परिषद् की अध्यक्षता प्रत्येक सदस्य देश द्वारा अंग्रेजी के अक्षरों के क्रमानुसार (English Alphabetical Order) एक माह (One Month) के लिए की जाती है। कुछ ऐसी संस्थाएँ, समितियाँ एवं आयोग भी हैं जो प्रत्यक्ष रूप से सुरक्षा परिषद् को रिपोर्ट करती हैं। इनमें से प्रमुख निम्नलिखित हैं-

- आतंकवाद-रोधी समिति
- शांति बनाए रखने से संबंधित मिशन
- प्रतिबंध समितियाँ (Sanction Committees)
- स्थायी एवं तदर्थ समितियाँ
- संयुक्त राष्ट्र क्षतिपूर्ति आयोग
- बच्चों एवं सशस्त्र संघर्ष संबंधी कार्यकारी समूह
- प्रलेखीकरण (Documentation) तथा अन्य प्रक्रियात्मक प्रश्न संबंधी अनौपचारिक कार्यकारिणी समूह
- लोक प्रशासन से संबंधित विशेषज्ञों की समिति एवं
- अंतर्राष्ट्रीय मादक पदार्थ नियंत्रण बोर्ड
- संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या पंचाट समिति

आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् (Economic and Social Council-ECOSOC)

अधिदेश (Mandate)

आर्थिक एवं सामाजिक परिषद्, विश्व की आर्थिक, सामाजिक एवं पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान करती है। इसकी स्थापना 1946 में संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अंतर्गत हुई थी। सम्पूर्ण संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था का 70 प्रतिशत मानव एवं वित्तीय संसाधन आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् के उत्तरदायित्व के अंतर्गत आते हैं। यह परिषद् प्रमुख शिक्षाविदों, व्यापारिक प्रतिनिधियों तथा लगभग 3200 पंजीकृत गैर-सरकारी संगठनों के साथ बैठकें करती हैं। इसकी वार्षिक बैठकें बारी-बारी से न्यूयार्क एवं जेनेवा में होती हैं। इन बैठकों में रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य जैसे प्रमुख विषयों पर विचार किए जाते हैं।

संरचना (Structure)

आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् में 54 सदस्य देश हैं, जो महासभा द्वारा तीन साल के लिए चुने जाते हैं। परिषद् की सदस्यता भौगोलिक आधार पर आवंटित की जाती है। इसमें 14 अफ्रीकी, 11 एशियाई, 6 पूर्वी-यूरोपीय, 10 लैटिन अमेरिकी एवं कैरीबियाई तथा 13 पश्चिमी यूरोपीय एवं अन्य देश शामिल किए जाते हैं।

2005 में संपन्न शासनाध्यक्षों एवं राज्याध्यक्षों के विश्व शिखर सम्मेलन में सामाजिक एवं आर्थिक परिषद् को वार्षिक मंत्रीस्तरीय समीक्षा बैठक (Annual Ministerial Review – AMR) तथा द्विवार्षिक विकास सहयोग मंच (Biennial Development Cooperation Forum – DCF) की बैठक करने के लिए अधिकृत किया गया। वार्षिक मंत्रीस्तरीय समीक्षा बैठक का उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय रूप से सहमति प्राप्त विकास लक्ष्यों की समीक्षा करना है। द्विवार्षिक विकास सहयोग मंच की बैठक का उद्देश्य विभिन्न विकास सहभागियों के गतिविधियों की प्रभाविता एवं सम्बद्धता (Coherence) में वृद्धि करना है। यह विकसित एवं विकासशील देशों के नीति-निर्माताओं, संसद सदस्यों, सिविल सोसाइटी संगठनों, स्थानीय सरकारों तथा समाजसेवी संगठनों को एक मंच पर लाने का कार्य करता है।

सामाजिक एवं आर्थिक परिषद् के कुछ सहायक अंग भी हैं। इन सहायक अंगों में कई कार्यात्मक आयोग (Functional Commissions) भी हैं। प्रमुख आयोगों में सांख्यिकीय आयोग, जनसंख्या एवं विकास आयोग, सामाजिक विकास आयोग, महिलाओं की स्थिति संबंधी आयोग, नशीली वस्तुओं से संबंधित आयोग, अपराध रोकथाम एवं आपराधिक न्याय आयोग, विकास संबंधी विज्ञान एवं तकनीकी आयोग, सतत् विकास संबंधी आयोग हैं। परिषद् की स्थायी समितियों (Standing Committees) में कार्यक्रम एवं समन्वय समिति, गैर-सरकारी संगठनों संबंधी समिति तथा अंतरसरकारी एजेंसियों से वार्ता करने वाली समिति सम्मिलित हैं।

निम्नलिखित संस्थाएँ एवं आयोग प्रत्यक्ष रूप से सामाजिक एवं आर्थिक परिषद् को रिपोर्ट करती हैं-

- अपराध रोकथाम एवं आपराधिक न्याय आयोग
- नशीली वस्तुओं संबंधी आयोग
- जनसंख्या एवं विकास आयोग
- विज्ञान एवं तकनीकी के विकास संबंधी आयोग
- सामाजिक विकास आयोग
- महिलाओं की स्थिति संबंधी आयोग
- सतत् विकास आयोग
- सांख्यिकी आयोग
- संयुक्त राष्ट्र वन मंच
- अफ्रीका के लिए आर्थिक आयोग
- यूरोप के लिए आर्थिक आयोग
- लैटिन अमेरिका एवं कैरीबियन देशों के लिए आर्थिक आयोग
- एशिया एवं प्रशांत क्षेत्र के लिए आर्थिक एवं सामाजिक आयोग
- पश्चिम एशिया के लिए आर्थिक एवं सामाजिक आयोग
- अंतरसरकारी एजेंसियों से वार्ता करने वाली समिति
- गैर-सरकारी संगठनों से संबंधित समिति
- कार्यक्रम एवं समन्वय समिति
- विकास नीति समिति
- आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकार समिति
- कर मामलों में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग संबंधी विशेषज्ञ समिति
- संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष
- संयुक्त राष्ट्र विश्व खाद्य कार्यक्रम
- संयुक्त राष्ट्र निरस्त्रीकरण अनुसंधान संस्थान
- संयुक्त राष्ट्र प्रशिक्षण एवं अनुसंधान संस्थान
- संयुक्त राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्याय अनुसंधान संस्थान
- संयुक्त राष्ट्र सामाजिक विकास अनुसंधान संस्थान
- अंतर्राष्ट्रीय कम्प्यूटिंग केंद्र
- संयुक्त राष्ट्र एच आई वी/एड्स कार्यक्रम
- संयुक्त राष्ट्र विश्वविद्यालय
- यू एन वीमेन

न्यासिता परिषद् (Trusteeship Council)

संयुक्त राष्ट्र चार्टर द्वारा न्यास क्षेत्रों के प्रशासन (Administration of Trust Territories) के लिए प्रमुख उत्तरदायी अंग के रूप में न्यासिता परिषद् की स्थापना की गई थी। न्यासिता परिषद् का प्रमुख लक्ष्य न्यास क्षेत्र के निवासियों के विकास को प्रोत्साहित करना था। उनका इस तरह का प्रगतिशील विकास सुनिश्चित करना था जिससे कि वे स्वशासन या स्वतंत्रता की ओर बढ़ सकें। न्यासिता परिषद्, सुरक्षा परिषद् के पाँच स्थाई सदस्यों से मिलकर बनी थी। न्यासिता परिषद् का कार्य इतना सफल रहा कि सभी न्यास क्षेत्रों ने स्वशासन या स्वतंत्रता की प्राप्ति की। कई न्यास क्षेत्र या तो अलग देश बने या अपने पड़ोसी देशों से जुड़ गए।

कार्य एवं शक्तियाँ (Functions and Powers)

चार्टर के अनुसार न्यासिता परिषद् न्यास क्षेत्रों के (Trust Territories) निवासियों के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं शैक्षिक विकास संबंधी प्रशासनिक प्राधिकरण (Administering Authority) की रिपोर्ट का परीक्षण एवं उस पर विचार-विमर्श करती है। प्रशासनिक प्राधिकरण के साथ विचार-विमर्श, प्रार्थना पत्रों (Petitions) का परीक्षण तथा समय-समय पर न्यास क्षेत्रों के लिए विशेष शिष्टमंडल भेजने का कार्य करती है।

1 नवंबर 1994 से न्यासिता परिषद् ने कार्य करना बंद कर दिया है। संयुक्त राष्ट्र के अंतर्गत अंतिम न्यास क्षेत्र के रूप में पलाऊ (Palau) 1 अक्टूबर 1994 को स्वतंत्र हो गया। इसके बाद परिषद् ने अपने प्रक्रिया संबंधी नियमों में संशोधन किया। इस संशोधन के अनुसार न्यासिता परिषद् की वार्षिक बैठक करने संबंधी प्रावधान को समाप्त कर दिया गया। आवश्यकता पड़ने पर इसकी बैठक इसके अध्यक्ष या इसके सदस्यों के बहुमत या महासभा या सुरक्षा परिषद् के अनुरोध पर बुलाई जा सकती है।

अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय (International Court of Justice)

अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय, संयुक्त राष्ट्र का प्रमुख न्यायिक अंग है। इसकी स्थापना संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अंतर्गत जून 1945 में की गई थी। इसने अप्रैल 1946 से अपना कार्य प्रारंभ किया। अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय हेग (नीदरलैंड) के पीस पैलेस (Peace Place) में अवस्थित है। संयुक्त राष्ट्र के छः प्रमुख अंगों में यह एक ऐसा अंग है जो अमेरिका के न्यूयार्क में नहीं है।

अधिदेश (Mandate)

न्यायालय का कार्य देशों द्वारा इसके समक्ष लाए गए कानूनी विवादों का समाधान अंतर्राष्ट्रीय कानून के अनुसार करना तथा संयुक्त राष्ट्र के ऐसे अनुरोध के लिए अधिकृत विशिष्ट एजेंसियों द्वारा इसके समक्ष लाए गए कानूनी प्रश्नों पर सलाहकारी राय (Advisory Opinion) देना है। अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय की अधिकारिक भाषा अंग्रेजी और फ्रांसीसी है।

संरचना (Structure)

अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय में 15 न्यायाधीश होते हैं। ये संयुक्त राष्ट्र महासभा तथा सुरक्षा परिषद् द्वारा 9 वर्षों के लिए चुने जाते हैं। इनकी नियुक्ति हेतु इन दोनों संस्थाओं में क्रमशः अलग-अलग मतदान कराए जाते हैं। चुने जाने के लिए किसी उम्मीदवार को दोनों संस्थाओं में पूर्ण बहुमत (Absolute Majority) प्राप्त करना अनिवार्य है। कभी-कभी कुछ दौर का (Round) मतदान कराना आवश्यक हो जाता है। न्यायिक कार्य की निरंतरता बनाए रखने के उद्देश्य से एक तिहाई न्यायाधीशों का चुनाव प्रत्येक तीन वर्षों के बाद किया जाता है। यदि अपने कार्यकाल के दौरान कोई न्यायाधीश त्यागपत्र देता है या किसी न्यायाधीश की मृत्यु हो जाती है तो उस शेष कार्यकाल के लिए जल्द से जल्द एक नये न्यायाधीश का चुनाव किया जाता है। न्यायाधीश पुनर्निर्वाचन के योग्य होते हैं।

न्यायाधीश उच्च नैतिक चरित्र वाला व्यक्ति होना चाहिए। उसे अपने देश की उच्चतम न्यायिक कार्यालय (Highest Judicial Office) में नियुक्ति के लिए आवश्यक योग्यता धारक या अंतर्राष्ट्रीय कानूनों का मान्यता प्राप्त न्यायिक परामर्शदाता (Juris Consult) होना चाहिए। न्यायालय में एक देश के एक ही राष्ट्रियता वाले एक से ज्यादा न्यायाधीश नहीं होने चाहिए। नियुक्ति के बाद न्यायाधीश अपने देश की सरकार का प्रतिनिधि नहीं होता है। अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय में न्यायाधीशों की सदस्यता भौगोलिक रूप में अफ्रीकी-3, लैटिन अमरीकी एवं कैरीबियाई-2, एशियाई-3, पश्चिमी यूरोपीय-5, पूर्वी यूरोपीय-2, के अनुसार वितरित होता है। ध्यान देने योग्य है कि सुरक्षा परिषद् की सदस्यता भी इसी अनुरूप वितरित है। अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय के न्यायाधीश स्वतंत्रता, निष्पक्ष एवं शुद्ध अंतरण से अपने दायित्वों का निर्वहन करते हैं। उनकी स्वतंत्रता को सुनिश्चित करने के लिए किसी न्यायाधीश को उसके पद से तब तक नहीं हटया जा सकता है जब तक कि शेष न्यायाधीशों की सर्वसम्मति राय में वह कुछ आवश्यक दशाओं की पूर्ति नहीं कर पा रहा हो।

अपने कार्यकाल के दौरान कोई भी न्यायाधीश अन्य व्यवसाय नहीं कर सकता है। उसे कोई भी प्रशासनिक या राजनीतिक कार्य करने की अनुमति नहीं होती है। उसे किसी मामले (Case) में एजेंट, सलाहकार या वकील के रूप में भी कार्य करने की स्वतंत्रता नहीं होती है। इस संबंध में किसी प्रश्न का समाधान न्यायालय के निर्णय से किया जाता है। न्यायालय में कार्यरत न्यायाधीश को

किसी राजनयिक मिशन (Diplomatic Mission) के प्रमुख के समान विशेषाधिकार एवं उन्मुक्तियाँ (Privileges and Immunities) प्राप्त होती हैं।

तदर्थ न्यायाधीश (Adhoc Judges): अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय के सम्मुख लाए गए किसी मामले की सुनवाई करने वाली न्यायिक पीठ में यदि मामले से जुड़े किसी राज्य की राष्ट्रीयता वाले न्यायाधीश की अनुपस्थिति हो, तो ऐसी स्थिति में मामले से जुड़े राज्य को एक तदर्थ न्यायाधीश की नियुक्ति का अधिकार होता है। यह जरूरी नहीं होता है कि मामले से जुड़े राज्य की राष्ट्रीयता वाला ही न्यायाधीश हो। किसी निर्णय में तदर्थ न्यायाधीश अपने सहयोगियों के साथ पूर्ण समानता के आधार पर भागोदारी करते हैं। जितने दिनों तक वे कार्य करते हैं, उतने दिनों का वेतन उन्हें दिया जाता है।

अध्यक्षता (Presidency): अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष का चुनाव तीन वर्षों में न्यायालय के सदस्यों द्वारा गुप्त मतदान प्रणाली से किया जाता है। निर्वाचन के लिए पूर्ण बहुमत (Absolute Majority) की आवश्यकता होती है। राष्ट्रीयता संबंधी कोई शर्त नहीं होती है। अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष का पुनर्निर्वाचन भी हो सकता है।

अध्यक्ष न्यायालय की बैठकों की अध्यक्षता करता है। वह न्यायालय के कार्यों का निर्देशन तथा प्रशासनिक निगरानी करता है। न्यायालय के सदस्यों से बनी बजट, प्रशासनिक एवं अन्य समितियों द्वारा उसे मदद दी जाती है। न्यायिक निर्णय देने की प्रक्रिया में यदि न्यायाधीश बराबर संख्या में बैठे हो तो ऐसी स्थिति में अध्यक्ष को निर्णायक मत देने का अधिकार होता है। अध्यक्ष को उसके नियमित वार्षिक वेतन के अतिरिक्त 15 हजार डॉलर सालाना भत्ता दिया जाता है। उपाध्यक्ष, अध्यक्ष की अनुपस्थिति से कार्य करता है। अध्यक्ष द्वारा उसके कर्तव्यों के निर्वहन में सक्षम न रहने या अध्यक्ष पद के रिक्त होने की स्थिति में उपाध्यक्ष अध्यक्ष के रूप में कार्य करता है। उपाध्यक्ष की अनुपस्थिति में न्यायालय का वरिष्ठ न्यायाधीश अध्यक्ष के कर्तव्यों का निर्वहन करता है।

इसके अलावा अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय में चैम्बर्स एवं समितियाँ भी होती हैं। सक्षम प्रक्रिया चैम्बर (The Chamber of Summary Procedure) अध्यक्ष, उपाध्यक्ष सहित पाँच न्यायाधीशों से मिलकर बनती है जो कार्यों के तीव्र निपटारे पर ध्यान देती है। न्यायालय श्रम एवं संचार जैसे विषयों से निपटने के लिए तीन सदस्यीय चैम्बर का गठन करता है। इसके अलावा न्यायालय कुछ विशेष मामलों से निपटने के लिए भी चैम्बर का गठन करता है। इन्हें तदर्थ चैम्बर (Adhoc Chamber) कहा जाता है।

बजट एवं प्रशासनिक समिति (Budgetary and Administrative Committee): न्यायालय के प्रशासनिक मामलों से संबंधित निर्णय बजट एवं प्रशासनिक समिति द्वारा किए जाते हैं। बजट एवं प्रशासनिक समिति का गठन अध्यक्ष, उपाध्यक्ष के अलावा चार या पाँच न्यायाधीशों से होता है। इनका तीन वर्षों में निर्वाचन किया जाता है।

नियम समिति (Rules Committee): न्यायालय ने 1979 में स्थायी नियम समिति का गठन किया है जो न्यायालय की प्रक्रियात्मक मुद्दों तथा कामकाज संबंधी प्रक्रियाओं के संदर्भ में सलाह देती है।

पुस्तकालय समिति (Library Committee): 1970 में स्थापित पुस्तकालय समिति न्यायालय के पुस्तकालय के अधिप्राप्ति कार्यक्रमों (Programme of Acquisition) तथा इसके सेवाओं में सुधार से संबंधित चल रहे आधुनिकीकरण कार्यों की निगरानी करता है।

संबंधित पक्षों को वित्तीय सहायता (Financial Assistance to Parties): संयुक्त राष्ट्र महासचिव ने विवादों को न्यायालय के समक्ष लाने हेतु प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से 1889 में न्याय कोष (Trust Fund) का गठन किया था। इस कोष के गठन का एक उद्देश्य विवाद से संबंधित देशों को न्यायालय के निर्णयों को स्वीकार करने हेतु प्रोत्साहित करना भी था।

पंजीयन कार्यालय (The Registry): पंजीयन कार्यालय, न्यायालय का स्थायी प्रशासनिक अंग है। यह न्यायालय के प्रति उत्तरदायी है। रजिस्ट्रार कार्यालय का प्रधान होता है। डिप्टी रजिस्ट्रार इसे इसके कार्यों में सहायता करता है। चूँकि यह न्यायालय दो रूपों पहला, एक न्यायालय तथा दूसरा, एक अंतर्राष्ट्रीय संगठन के रूप में कार्य करता है इसलिए पंजीयक कार्यालय के कार्य न्यायिक, कूटनीतिक एवं प्रशासनिक प्रकृति के भी होते हैं।

पंजीयक कार्यालय, तीन विभागों कानूनी, भाषायी तथा सूचना संबंधी मामले तथा कई तकनीकी प्रभागों तथा न्यायालय के सदस्य सचिवालय से मिलकर बनता है। वर्तमान में लगभग सौ अधिकारी इस कार्यालय में कार्यरत हैं। इनकी नियुक्ति न्यायालय या रजिस्ट्रार द्वारा की जाती है।

वार्षिक रिपोर्ट (Annual Reports): प्रत्येक वर्ष अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय संयुक्त राष्ट्र महासभा को अपनी गतिविधियों से संबंधित रिपोर्ट भेजता है। रिपोर्ट 1 अगस्त से अगले वर्ष के 31 जुलाई तक के लिए तैयार की जाती है। इस रिपोर्ट में न्यायालय से संबंधित जानकारी, क्षेत्राधिकार, न्यायिक कार्य, यात्रा, आयोजन, व्याख्यान, न्यायालय के प्रकाशन, प्रशासनिक एवं बजट संबंधी पहलू शामिल होते हैं।

सचिवालय (Secretariate)

सचिवालय, पूरे विश्व में अपने कार्यालयों के माध्यम से संगठन के दैनिक कार्यों का संचालन करता है। यह संयुक्त राष्ट्र के अन्य प्रमुख अंगों की सहायता करता है तथा उनके द्वारा शुरू की गई कार्यक्रमों एवं नीतियों का प्रशासन देखता है। महासचिव (Secretary General) सचिवालय का प्रधान होता है। इसकी नियुक्ति सुरक्षा परिषद् की अनुमति पर महासभा (General Assembly) द्वारा 5 वर्षों के लिए की जाती है। वह पुनर्नियुक्ति का भी पात्र होता है।

सचिवालय का कार्य उन विभिन्न क्षेत्रों से जुड़ा होता है जो संयुक्त राष्ट्र के दायरे में आते हैं। इसमें शांति बनाए रखने से संबंधित अभियानों से लेकर अंतर्राष्ट्रीय विवादों की मध्यस्थता, आर्थिक एवं सामाजिक प्रवृत्तियों का सर्वेक्षण, मानवाधिकारों के अध्ययन से जुड़ी समस्याएँ तथा सतत् विकास जैसे विषय शामिल होते हैं। सचिवालय के कर्मचारी संयुक्त राष्ट्र के कार्यों से संबंधित जानकारी विश्व के संचार माध्यमों को भी देते हैं। वैश्विक चिंता के मुद्दों पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों का भी आयोजन करता है। भाषणों की व्याख्या तथा दस्तावेजों का संगठन के आधिकारिक भाषाओं में भाषांतर (Translation) करता है। सचिवालय में अंग्रेजी एवं फ्रांसीसी भाषाओं में कार्य किए जाते हैं।

सचिवालय में विश्व के लगभग 4300 कर्मचारी कार्यरत हैं। अपने कार्यों के लिए अंतर्राष्ट्रीय सिविल सेवक, कर्मचारी एवं महासचिव केवल संयुक्त राष्ट्र के प्रति उत्तदायी होते हैं। वे किसी बाहरी सरकार या प्राधिकरण से निर्देश नहीं लेने का शपथ लेते हैं। सदस्य देश, महासचिव के विशिष्ट अंतर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्वों का सम्मान करने के प्रति वचनबद्ध होते हैं तथा उनके उत्तरदायित्वों के पालन में उन्हें अनुचित रूप से प्रभावित करने से परहेज करते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (International Labour Organisation – ILO)

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की उत्पत्ति 1919 के वर्साय की संधि (Treaty of Versailles) द्वारा हुई थी। इस संधि द्वारा प्रथम विश्व युद्ध के अंत की घोषणा की गई थी। वर्तमान में 185 देश इसके सदस्य हैं। इस संगठन का मुख्यालय जेनेवा (स्विट्जरलैंड) में है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का संविधान शांति सम्मेलन द्वारा गठित श्रम आयोग द्वारा जनवरी से अप्रैल 1919 के बीच तैयार किया गया था। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन एक त्रिपक्षीय संगठन (Tripartite Organisation) है जो अपने कार्यकारी संस्थाओं में सरकारों, नियोक्ताओं एवं कामगारों के प्रतिनिधियों को एक साथ लाता है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना सुरक्षा, मानवीय, राजनीतिक एवं आर्थिक कारणों से की गई थी। इसकी स्थापना में मानवता, न्याय के साथ विश्व में स्थायी शांति की भावना प्रेरक तत्व थे। शांति की स्थापना में सामाजिक न्याय (Social Justice) की महत्ता को स्वीकार किया गया था। यह वह समय था जब औद्योगिक देशों में श्रमिकों का शोषण हो रहा था। उस समय आर्थिक अंतर्निर्भरता की समझ भी विकसित हो रही थी और यह प्रयास किया जा रहा था कि बाजार के लिए प्रतिस्पर्द्धा कर रहे देशों में श्रमिकों के लिए कार्य की परिस्थितियाँ समान हो। इसी को ध्यान में रखते हुए अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के प्रस्तावना में कहा गया है कि-

- सार्वभौमिक एवं स्थायी शांति की स्थापना तभी की जा सकती जब यह सामाजिक न्याय पर आधारित हो।
- श्रमिकों के अभाव एवं कठिनाई में जीने से अशांति उत्पन्न होती है, जिससे विश्व शांति एवं सद्भाव को खतरा होता है। इस कारण इन स्थितियों में सुधार की जरूरत महसूस की गई।
- किसी देश द्वारा श्रमिकों के लिए मानवीय कार्य दशा को अपनाने में असफलता, दूसरे देशों द्वारा मानवीय कार्य दशा अपनाने के मार्ग में बाधा उत्पन्न करती है।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की प्रस्तावना में जिन क्षेत्रों में सुधार की बात कही गई थी वे आज भी प्रासंगिक हैं। जैसे-

- अधिकतम कार्य दिवस एवं सप्ताह को सुनिश्चित करने के साथ कार्य - घंटों को नियमित करना।
- श्रमिक आपूर्ति, बेरोजगारी की रोकथाम तथा निर्वाह मजदूरी (Living Wage) का विनियमन करना।
- रोजगार के दौरान बीमारी, रोग एवं दुर्घटना की स्थिति में कामगारों की सुरक्षा सुनिश्चित करना।
- बच्चों, युवाओं तथा महिलाओं की सुरक्षा करना।
- अपने देश से अलग देशों में रोजगार कर रहे कामगारों के हितों की सुरक्षा तथा दुर्घटना एवं वृद्धावस्था की स्थिति में सुरक्षा का प्रावधान।
- समान कार्य के लिए समान वेतन के सिद्धांत को मान्यता।
- सभा या सम्मेलन करने की स्वतंत्रता को मान्यता।
- व्यावसायिक एवं तकनीकी पाठ्यक्रमों की मान्यता एवं अन्य उपाय।

अधिदेश (Mandate)

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का प्रमुख उद्देश्य श्रमिकों की कार्य दशा में सुधार करना तथा उनके जीवन स्तर को ऊँचा उठाना तथा उनके लिए पूर्ण रोजगार की प्राप्ति करना है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन सामाजिक न्याय तथा अंतर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त मानव एवं श्रम अधिकारों को बढ़ावा देता है। यह संपन्नता के लिए श्रमिकों के बीच शांति को अनिवार्य मानता है। यह सभी पुरुषों एवं महिलाओं के लिए उचित कार्य दशाओं एवं आय को बढ़ावा देने का कार्य करता है। यह मजदूरों के लिए उत्पादक रोजगार को प्रोत्साहित करता है। यह अंतर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलनों द्वारा उद्योगों में कार्य के घंटे, बेरोजगारी, मातृत्व सुरक्षा, महिलाओं द्वारा रात्रि कार्य, न्यूनतम उम्र तथा उद्योगों में युवाओं द्वारा रात्रि कार्य जैसे विषयों पर अंतर्राष्ट्रीय मानक (International Standard) तय करता है। यह उनके संबंध में अनुशंसा करता है एवं तकनीकी सहायता प्रदान करता है। यह सरकारों के लिए रोजगार प्रोत्साहन, मानव संसाधन विकास, सामाजिक संस्थाओं का विकास, ग्रामीण विकास, लघु उद्योग, सामाजिक सुरक्षा, औद्योगिक सुरक्षा के क्षेत्र में विशेषज्ञ मिशन (Expert Mission) तथा अध्येतावृत्ति कार्यक्रम (Fellowship Programme) की सुविधा प्रदान करता है। अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय के एक निर्णय के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन कृषि क्षेत्र के लिए भी कार्य दशाओं का विनियमन कर सकता है।

1960 में अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने जेनेवा में अंतर्राष्ट्रीय श्रम अध्ययन संस्थान (International Institute For Labour Studies) की स्थापना की है जो मूलतः सामाजिक एवं श्रमिक नीतियों के क्षेत्र में अध्ययन एवं अनुसंधान करता है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा चलाए जाने वाले प्रशिक्षण कार्यक्रमों को ध्यान में रखते हुए तुरिन (Turin) में एक अंतर्राष्ट्रीय प्रशिक्षण केंद्र की भी स्थापना की गई है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन को 1969 में नोबेल शांति पुरस्कार दिया गया है।

संरचना (Structure)

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की संरचना के अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय, प्रशासनिक न्यायाधिकरण, महानिदेशक के अलावा कुछ केंद्र एवं संस्थाएँ भी शामिल हैं-

अंतर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय (International Labour Office): अंतर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय, अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का स्थायी सचिवालय है। यह अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के सभी गतिविधियों के लिए उत्तरदायी होता है। सचिवालय की सभी गतिविधियों का प्रशासन महानिदेशक के नेतृत्व में एक शासी निकाय (Governing Body) द्वारा की जाती है। सचिवालय में 150 देशों के लगभग 2700 कर्मचारी कार्य करते हैं। विश्व में इसके लगभग 900 कर्मचारी तकनीकी सहयोग कार्यक्रमों एवं परियोजनाओं में कार्यरत हैं। कार्यालय के अधीन एक अनुसंधान एवं प्रलेखन केंद्र (Research and Documentation Centre) भी है।

प्रशासनिक न्यायाधिकरण (Administrative Tribunal): प्रशासनिक न्यायाधिकरण अंतर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय तथा इसके क्षेत्राधिकार को मान्यता देने वाले अन्य अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के अधिकारियों से मिलने वाली श्रम संबंधी शिकायतों की जाँच करता है। वर्तमान में लगभग 46 हजार अंतर्राष्ट्रीय सिविल सेवकों इससे संपर्क बनाए हुए हैं। ये विभिन्न संगठनों के कार्यरत या सेवारत अधिकारी हैं। न्यायाधिकरण का गठन विभिन्न राष्ट्रीयता वाले सात न्यायाधीशों से मिलकर होता है। इनकी नियुक्ति अंतर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय के शासी निकाय की अनुशंसा पर अंतर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन (International Labour Conference) द्वारा तीन साल के लिए की जाती है। ये पुनर्नियुक्ति के पात्र होते हैं। न्यायाधिकरण की साल में दो बैठकें होती हैं। न्यायाधिकरण को इसके कार्यों में पंजीयक कार्यालय (Registry) द्वारा मदद दी जाती है। पंजीयक कार्यालय में एक रजिस्ट्रार तथा कुछ विधिक अधिकारी होते हैं।

महानिदेशक (Director General): महानिदेशक की नियुक्ति शासी निकाय द्वारा गुप्त मतदान द्वारा पाँच साल के लिए की जाती है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय सक्षम रूप से कार्य करे, इसकी जिम्मेवारी महानिदेशक की ही होती है। महानिदेशक शासी निकाय की सभी बैठकों में भाग लेते हैं। महानिदेशक, शासी निकाय के नियमन के अधीन अंतर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय के कर्मचारियों की नियुक्ति करता है। अपने दायित्वों के निर्वहन में महानिदेशक किसी बाहरी सरकार या प्राधिकरण से निर्देश नहीं लेता है।

इसके अलावा अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन को इसके कार्यों में सहयोग देने के लिए अंतर्राष्ट्रीय श्रम अध्ययन संस्थान, अंतर्राष्ट्रीय प्रशिक्षण केंद्र, व्यवसायिक प्रशिक्षण के लिए अंतर-अमरीकी केंद्र तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यवसायिक सुरक्षा तथा स्वास्थ्य सूचना केंद्र कार्य कर रहे हैं।

शासी निकाय (Governing Body): शासी निकाय अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का कार्यकारी अंग है। इसकी साल में तीन बैठकें होती हैं। यह अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन से संबंधित नीतियों पर निर्णय लेता है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम सम्मेलन की कार्यसूची तय करता है। सम्मेलन में पेश करने के लिए संगठन का बजट एवं कार्यक्रम का प्रारूप तैयार करता है।

संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन

(United Nations Educational, Scientific and Cultural Organisation – UNESCO)

यूनेस्को के संविधान पर 16 नवंबर 1945 को हस्ताक्षर किया गया था। यह 4 नवंबर 1946 को प्रभावी हुआ। यूनेस्को के संस्थापक सदस्यों में प्रमुख रूप से मित्र देश शामिल थे। जापान एवं जर्मनी जैसे धुरी राष्ट्र 1951 में यूनेस्को में शामिल हुए। सोवियत संघ 1954 में यूनेस्को में शामिल हुआ। चीन 1971 से यूनेस्को का सदस्य है। राजनीतिक कारणों से कई सदस्य देश समय-समय पर यूनेस्को से बाहर हुए लेकिन वर्तमान में वे सभी यूनेस्को के सदस्य हैं। दक्षिण अफ्रीका 1957-1994 तक, अमेरिका 1985-2003 तक, ब्रिटेन तथा उत्तरी आयरलैंड 1986-1997 तक तथा सिंगापुर 1986-2007 तक यूनेस्को से बाहर रहे।

वर्तमान में यूनेस्को के 195 सदस्य तथा 8 सहयोगी (Associates) हैं। यूनेस्को का मुख्यालय पेरिस (फ्रांस) में है। ज्यादातर सदस्यों ने अपने स्थायी प्रतिनिधि मंडल नियुक्त किए हैं। जिनके प्रधान राजदूत (Ambassadors) होते हैं। सभी सदस्यों ने यूनेस्को राष्ट्रीय आयोग (National Commission for UNESCO) की स्थापना कर रखी है। जो यूनेस्को के कार्य संबंधित गतिविधियों में सरकारों एवं गैर-सरकारी संस्थाओं के बीच समन्वय बैठाने का कार्य करता है। यूनेस्को अपनी गतिविधियों में सांसदों (Parliamentarians) एवं स्थानीय प्राधिकारियों को शामिल करने का प्रयास करता है।

अधिदेश (Mandate)

यूनेस्को के सदस्य शिक्षा, विज्ञान, संचार एवं संस्कृति के क्षेत्र में सहयोग के माध्यम से शांति एवं सुरक्षा को बढ़ावा देते हैं। यूनेस्को ज्ञान को बनाए रखने, वृद्धि करने तथा प्रसार करने पर बल देता है। यह ज्ञान एवं परस्पर समझ को बढ़ावा देने में समन्वय स्थापित करता है। यूनेस्को अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों का आयोजन करता है, विशेषज्ञों से अध्ययन करवाता है तथा शिक्षा प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञान, सांस्कृतिक गतिविधियों से संबंधित सूचनाओं का प्रसार करता है। यह विचारों के मुक्त प्रवाह पर बल देता है। यह पुस्तकों, कलाओं एवं ऐतिहासिक एवं वैज्ञानिक महत्त्व के स्मारकों के संरक्षण पर बल देता है। बौद्धिक सहयोग (Intellectual Cooperation) को प्रोत्साहित करने के लिए यूनेस्को को विश्व के बहुत सारे सरकारी संगठनों से वित्तीय सहायता प्राप्त होता है। यह आजीवन शिक्षा प्राप्ति की दिशा में चलाए जाने वाले राष्ट्रीय परियोजनाओं का भी समर्थन करता है। यूनेस्को को संयुक्त राष्ट्र का बौद्धिक संस्था माना जाता है। यूनेस्को मुख्यतः चार क्षेत्रों पर ध्यान देता है।

- सभी को आधारभूत शिक्षा (Basic Education) देना।
- आधारभूत शिक्षा की पहुँच का प्रसार।
- आधारभूत शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार।
- 21वीं शताब्दी के लिए प्रासंगिक शिक्षा सुलभ करना।

अपने विकास प्रयासों के अंतर्गत यह शैक्षिक संविधानों का आधुनिकीकरण करता है।

यह शैक्षिक नीतियों पर चर्चा करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों (International Conferences) का आयोजन करता है। यह अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक सहयोग को बढ़ावा देता है तथा जीवन स्तर में सुधार करने के लिए वैज्ञानिक अनुसंधान को प्रोत्साहन देता है। प्राकृतिक एवं सामाजिक विज्ञानों में अनुसंधान तथा उच्च प्रशिक्षण देने के लिए विज्ञान-विकास कार्यक्रम (Science Development Programme) चलाए जाते हैं। संचार के क्षेत्र में यूनेस्को सूचनाओं के मुक्त प्रवाह, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, प्रेस की स्वतंत्रता तथा इसके बहुलवादी स्वरूप पर बल देता है। आगे चलकर इन प्रयासों की परिणति 1980 में नई वैश्विक सूचना एवं संचार व्यवस्था (New World Information and Communication Order – NWICO) की स्थापना के रूप में हुई। इसमें पत्रकारिता की नैतिकता संबंधी अंतर्राष्ट्रीय संहिता (International code of Journalistic Ethics) तथा पत्रकारों के लिए लाइसेंस संबंधी प्रस्ताव को शामिल किया गया था। संचार के विकास के लिए एक अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रम की भी शुरुआत की गई थी। यह संस्कृति एवं विकास के बीच संबंधों के क्षेत्र में अनुसंधान पर बल देता है। यह वैश्विक सांस्कृतिक धरोहरों (World Cultural Heritages) के संरक्षण पर भी ध्यान देता है। यह सदस्य राज्यों को उनके भौतिक एवं गैर-भौतिक धरोहरों के अध्ययन एवं संरक्षण के लिए सहायता देता है। उपरोक्त लक्ष्य की प्राप्ति के लिए 1972 में विश्व सांस्कृतिक एवं प्राकृतिक धरोहर संरक्षण समझौता किया गया है।

संरचना (Structure)

महासम्मेलन (The General Conference): महासम्मेलन सदस्य देशों के प्रतिनिधियों से मिलकर बनता है। इसकी बैठक दो वर्षों में होती है। इसकी बैठक में सदस्य देश, सहभागी सदस्य, पर्यवेक्षक, अंतर-सरकारी संगठन तथा गैर-सरकारी संगठन भाग लेते हैं। प्रत्येक देश का एक मत होता है, चाहे यूनेस्को के बजट में उसकी कितनी भी भागीदारी क्यों न हो। महासम्मेलन इस संगठन

के प्रमुख नीतियों एवं कार्यों का निर्धारण करता है। यह यूनेस्को के बजट एवं कार्यक्रमों को तैयार करता है। यह कार्यकारिणी बोर्ड (Executive Board) के सदस्यों का निर्वाचन तथा चार वर्षों के लिए महानिदेशक (Director General) की नियुक्ति करता है। महासम्मेलन के कार्य अरबी, चीनी, अंग्रेजी, फ्रांसीसी तथा रूसी भाषाओं में होता है।

कार्यकारिणी बोर्ड (Executive Board): यूनेस्को के संपूर्ण प्रबंधन के लिए कार्यकारिणी बोर्ड उत्तरदायी है। यह महासम्मेलन के कार्यक्रमों को तैयार करता है तथा इसके निर्णयों का समुचित कार्यान्वयन सुनिश्चित करता है। कार्यकारिणी बोर्ड के कार्य एवं उत्तरदायित्व प्राथमिक रूप से संविधान तथा महासम्मेलन द्वारा बनाए गए कानूनों एवं निर्देशों से तय होते हैं। कार्यकारिणी बोर्ड के 58 सदस्यों का निर्वाचन महासम्मेलन द्वारा किया जाता है। प्रत्येक दो वर्षों में महासम्मेलन कुछ विशिष्ट कार्य कार्यकारिणी बोर्ड को सौंपता है।

संयुक्त राष्ट्र औद्योगिक विकास संगठन

(United Nations Industrial Development Organisation – UNIDO)

यूनिडो की स्थापना संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 1966 में की गई थी। यूनिडो का मुख्यालय विएना (आस्ट्रिया) में है। वर्तमान में 172 देश इसके सदस्य हैं।

अधिदेश (Mandate)

यूनिडो, संयुक्त राष्ट्र की एक विशिष्ट एजेंसी है जो गरीबी में कमो-कमाने समावेशी वैश्वीकरण (Inclusive Globalisation) एवं पर्यावरणीय निरंतरता के संदर्भ में औद्योगिक विकास को प्रोत्साहित करता है। यूनिडो विकासशील देशों तथा परिवर्तनशील अर्थव्यवस्थाओं में सतत आर्थिक विकास को बढ़ावा देता है। एक वैश्विक मंच के रूप में यूनिडो मुख्यतः दो कार्य करता है। पहला, यह उद्योग संबंधी जानकारी को सृजन एवं उसका प्रसार करता है। दूसरा, तकनीकी सहायक एजेंसी के रूप में तकनीकी सहायता करता है तथा परियोजनाओं को कार्यान्वयन करता है। यह उत्पादक गतिविधियों के माध्यम से गरीबी कम करने, व्यापारिक क्षमता निर्माण के माध्यम से विकासशील देशों को वैश्विक व्यापार के साथ जोड़ने, उद्योगों में सतत विकास को बढ़ावा देने तथा ऊर्जा आपूर्ति में सुधार करने का कार्य करता है।

उत्पादक गतिविधियों के माध्यम से गरीबी निवारण: यूनिडो, उत्पादक गतिविधियों के माध्यम से गरीबी को आजीविका कमाने हेतु सक्षम बनाता है। इस तरह गरीबी से बाहर निकालने के उपाय ढूँढता है। यह विकासशील देशों तथा परिवर्तनशील अर्थव्यवस्थाओं औद्योगिक नीति-सलाह, उद्योगिता, लघु एवं मध्यम श्रेणी के उद्यम विकास, तकनीकी प्रसार, सतत उत्पादन तथा उत्पादक उपयोग के लिए ग्राणीय ऊर्जा का प्रावधान करता है। इन सैद्धांतिक प्राथमिकताओं के अलावा यूनिडो मुख्यतः अत्यधिक गरीबी एवं भूख को समाप्त करने, लिंग समानता एवं महिला सशक्तीकरण को बढ़ावा देने तथा विकास के लिए वैश्विक सहभागिता का विकास करता है।

व्यापार क्षमता निर्माण: विश्व-अर्थव्यवस्था में भागीदारी से विकासशील देशों को लाभ हो रहा है। इसलिए विश्व व्यापार में उनको भागीदारी के लिए उनकी क्षमता को बढ़ाना आवश्यक है। यह उनके आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण है। विशेषरूप से विश्व व्यापार संगठन में उनकी भागीदारी के बाद वैश्विक उत्पादन एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में उनकी सफलतापूर्वक सहभागिता के लिए तकनीकी क्षमता बढ़ाना आवश्यक है।

यूनिडो, व्यापार संबंधी सेवाओं को उपलब्ध कराने वाले सबसे बड़े प्रबंधकों में से एक है। यह उपभोक्ता केंद्रित सलाह तथा प्रतिस्पर्धात्मकता, व्यापारिक नीतियों, औद्योगिक आधुनिकीकरण एवं सुधार, व्यापारिक मानकों का पालन, परीक्षण पद्धति एवं मापपद्धति (Metrology) के क्षेत्र में तकनीकी सहायता उपलब्ध कराता है।

पर्यावरण एवं ऊर्जा: गरीबी निवारण के लिए ऊर्जा एक पूर्व आवश्यकता है। सतत विकास की प्राप्ति के लिए समाज में बदलती उत्पादन एवं उपभोग प्रवृत्ति को ध्यान में रखना आवश्यक है। इस कारण यूनिडो औद्योगिक उपभोग एवं उत्पादन के संदर्भ में सतत विकास को बढ़ावा देता है। यूनिडो विकासशील देशों तथा परिवर्तनशील अर्थव्यवस्थाओं के लिए बहुपक्षीय पर्यावरणीय समझौतों (Multilateral Environmental Agreements) को लागू करने तथा पर्यावरणीय एवं आर्थिक लक्ष्यों की प्राप्ति में सहयोग करता है।

इसके अलावा यूनिडो की गतिविधियाँ भौगोलिक अवस्थिति एवं लक्षित क्षेत्र के आधार पर भी बंटी होती हैं। यह मुख्यतः सबसे कम विकसित देशों तथा अफ्रीका पर अपना ध्यान केंद्रित करता है। कृषि आधारित उद्योगों के अलावा यह लघु एवं मध्यम श्रेणी के उद्योगों पर ध्यान केंद्रित करता है।

इन सबके अलावा संयुक्त राष्ट्र औद्योगिक विकास संगठन लिंग समानता एवं महिलाओं के सशक्तीकरण पर भी बल देता है क्योंकि ये तत्त्व आर्थिक संवृद्धि तथा सतत आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। आगे चलकर ये सामाजिक एकीकरण को बढ़ावा देने एवं गरीबी कम करने में महत्वपूर्ण साबित होते हैं।

संरचना (Structure)

संयुक्त राष्ट्र औद्योगिक विकास संगठन के अंतर्गत दो नीति निर्माण करने वाले संस्थाएँ हैं- महासम्मेलन (General Conference) तथा औद्योगिक विकास बोर्ड (Industrial Development Board)।

महासम्मेलन (General Conference): महासम्मेलन संगठन की नीतियाँ तय करता है। यूनिडो के बजट एवं कार्यक्रमों को स्वीकृत देता है। चार वर्षों के अंतराल पर महानिदेशक की नियुक्ति करता है। यह औद्योगिक विकास बोर्ड तथा कार्यक्रम एवं बजट समिति के सदस्यों का भी निर्वाचन करता है। दो वर्षों के अंतराल पर महासम्मेलन की बैठक होती है।

औद्योगिक विकास बोर्ड (Industrial Development Board):

इस बोर्ड में 53 सदस्य होते हैं, जिनका चार वर्षों के लिए निर्वाचन होता है। यह कार्यक्रमों के कार्यान्वयन तथा बजट की समीक्षा करता है। यह महासम्मेलन की नीतिगत मुद्दों के साथ-साथ महानिदेशक की नियुक्ति के संबंध में भी अनुशंसा करता है। बोर्ड की वार्षिक बैठक होती है।

कार्यक्रम एवं बजट समिति (Programme and Budget Committee): इस समिति में 27 सदस्य होते हैं। इनका कार्यकाल दो वर्षों का होता है। यह औद्योगिक विकास बोर्ड का सहायक अंग है। यह बोर्ड के कार्यक्रमों, बजट एवं अन्य वित्तीय मामले को तैयार करने एवं परीक्षण करने का कार्य करती है। इस समिति की वार्षिक बैठक होती है।

महानिदेशक (Director General): यूनिडो के संविधान के अनुसार महानिदेशक संगठन का प्रमुख प्रशासनिक अधिकारी है। यह यूनिडो की नीति निर्माण करने वाली संस्थाओं के प्रति उत्तरदायी होता है। महानिदेशक की नियुक्ति बोर्ड की अनुशंसा पर महासम्मेलन द्वारा चार वर्षों के लिए की जाती है। महानिदेशक की इसका कार्य में सहायता देने के लिए एक उपमहानिदेशक भी होता है।

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (United Nation Environment Programme)

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम, स्टॉकहोम (स्वीडन) में हुए 1972 के मानव पर्यावरण संबंधी संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (United National Conference on Human Environment) के परिणामस्वरूप अस्तित्व में आया था। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम का मुख्यालय नैरोबी (केन्या) में है।

अधिदेश (Mandate)

इस संगठन का उद्देश्य मानव पर्यावरण को प्रभावित करने वाले सभी मामलों में अंतराष्ट्रीय सहयोग प्रोत्साहित करना है, जिससे कि पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति सरकारों को पर्याप्त ध्यान दिया जा सके। पर्यावरणीय ज्ञान की प्राप्ति, मूल्यांकन एवं विनिमय इसके अन्य उद्देश्य हैं। यह संगठन तकनीकी एवं सामान्य सूचनाओं के अलावा उत्पत्ति के रूप में भी कार्य करता है। यह 1975 में स्थापित वैश्विक पर्यावरणीय निगरानी व्यवस्था (Global Environmental Monitoring System) के अंतर्गत विश्व की पारिस्थितिकी, जल-प्रदूषण तथा उष्णकटिबंधीय वनों से संबंधित जानकारी उपलब्ध करता है। इनसे संबंधित जानकारी के लिए एक तकनीकी नेटवर्क विकसित किया गया है। 1985 में स्थापित ग्लोबल रिसोर्स इंफार्मेशन डेटाबेस (Global Resource Information Database - GRID) ऑकड़ों को उपयोगी सूचनाओं में बदलता है। अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम संयुक्त राष्ट्र से जुड़ी संस्थाओं, अंतराष्ट्रीय संगठनों, राष्ट्रीय सरकारों, गैर-सरकारी संगठनों, निजी क्षेत्र एवं सिविल सोसाइटी के साथ मिलकर कार्य करता है।

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम मुख्यतः निम्नलिखित कार्य करता है-

- वैश्विक, क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय पर्यावरणीय दशाओं एवं प्रवृत्तियों का आकलन
- अंतराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय पर्यावरण तंत्र विकसित करना।
- पर्यावरण के कुशल प्रबंधन हेतु संस्थाओं को मजबूत बनाना।
- सतत विकास के लिए ज्ञान एवं तकनीकी स्थानांतरण हेतु सुविधा प्रदान करना।
- सिविल सोसाइटी एवं निजी क्षेत्रों में नई प्रकार की सहभागिता एवं मानसिकता का विकास करना।

अफ्रीका में अवस्थित होने के कारण संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम विकासशील देशों द्वारा पर्यावरण के क्षेत्र में सामना की जा रही चुनौतियों को अच्छी तरह समझ सकता है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम पर्यावरण से संबंधित बैठकों एवं सम्मेलनों का भी आयोजन करता है। इसमें ओजोन, विलुप्तप्राय प्रजातियों, रसायनों, हानिकारक अवशेषों (Hazardous Wastes) का एक देश से दूसरे देश में स्थानांतरण तथा स्थायी प्रदूषकों से संबंधित सम्मेलन भी शामिल हैं। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम पर्यावरण संरक्षण के लिए अंतराष्ट्रीय कानून एवं विनिमय को अपनाता है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की देखरेख में जलवायु परिवर्तन संबंधी संयुक्त राष्ट्र रूपरेखा अभिसमय (The United Nation Framework Convention On Climate Change) 1994 से प्रभावी हुआ।

वर्तमान में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के प्राथमिकताओं में जलवायु परिवर्तन, स्वच्छ जल, निर्वनीकरण (Deforestation), मरुस्थलीकरण को (Desertification) रोकना, वन्य पशुओं एवं पौधों का संरक्षण, हानिकारक अपशिष्टों का प्रबंधन, विषाक्त रसायनों का प्रबंधन, समुद्र एवं तटीय क्षेत्रों का संरक्षण, मानव स्वास्थ्य पर जलवायु का प्रभाव एवं जैव तकनीक शामिल हैं। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम, प्राकृतिक संसाधनों के कुप्रबंधन को बेहतर बनाने वाली शिक्षा व्यवस्था का भी समर्थन करता है। यह विकास योजनाओं को पर्यावरणीय दृष्टि से संवेदनशील बनाने का भी प्रयास करता है। फिलहाल संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम वैश्विक तापन (Global Warming) तथा ओजोन क्षरण (Ozone Depletion) के प्रति पर्याप्त ध्यान दे रहा है। इन दो अंतर्संबंधित समस्याओं के समाधान हेतु संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम ने कई सम्मेलनों का आयोजन किया है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम समय-समय पर पर्यावरण संबंधी रिपोर्ट तथा वैश्विक पर्यावरण परिदृश्य (Global Environment Outlook) भी प्रकाशित करता है।

संरचना (Structure)

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण सभा (United Nations Environment Assembly): अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरणीय मामलों में सहयोग तथा पर्यावरणीय गतिविधियों में समन्वय करने के लिए संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण सभा 1972 में स्थापित 58 सदस्यीय शासी परिषद् (Governing Council) को प्रतिस्थापित करेगी। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण सभा के गठन का निर्णय 2012 के सतत विकास संबंधी संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (रियो + 20) के दौरान किया गया था। यह सभा 2014 से कार्य करने लगेगी। दो वर्षों के अंतराल पर इसकी बैठक होगी। इसकी सदस्यता सार्वभौमिक (Universal) होगी। इस सभा के मुख्यतः निम्नलिखित कार्य होंगे-

- वैश्विक पर्यावरणीय कार्यसूची तैयार करना।
- उभरती पर्यावरणीय चुनौतियों के समाधान के लिए नीति तैयार करना एवं उसे परिभाषित करना।
- नीतियों की समीक्षा, वार्ता तथा अनुभवों का विनिमय करना।
- संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम को इसके भविष्य के कार्यों के लिए मार्गदर्शन करना।
- संबंधित दावेदारों के बीच वार्ता आयोजित करना।
- पर्यावरणीय लक्ष्यों की प्राप्ति तथा संसाधनों को गतिशील बनाने के लिए सहभागिता को बढ़ावा देना।

स्थायी प्रतिनिधियों की समिति (Committee of Permanent Representatives): इस समिति में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के सभी मान्यता प्राप्त प्रतिनिधि शामिल होते हैं। इसकी स्थापना 1997 में शासी परिषद् के सहायक अंग के रूप में की गई थी। इस समिति के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं-

- शासी निकाय के कार्यसूची को तैयार करने में सहायता करना।
- शासी निकाय की नीतिगत मामलों में सलाह देना।
- शासी निकाय द्वारा लिए जाने वाले निर्णयों को तैयार करना तथा उनका कार्यान्वयन सुनिश्चित करना।
- विषय एवं कार्यक्रम संबंधी वार्ता आयोजित करना।
- शासी निकाय द्वारा सौंपे गए किसी अन्य कार्य को करना।

शासी निकाय का सचिवालय (The Secretariat of Governing Body): शासी निकाय का सचिवालय, शासी निकाय को सहायता देने का कार्य करता है। सचिवालय, शासी निकाय की बैठकों की कार्यसूची तय करता है। सचिवालय, सरकारों के लिए संचार (Communication) का प्रमुख माध्यम है। यह सरकारों की सहायता के लिए कार्यक्रमों एवं गतिविधियों संबंधी सूचना उपलब्ध कराता है। सचिवालय, संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम इसके स्थायी मिशनों, पर्यावरण मंत्रालयों तथा अन्य संबंधित प्राधिकरणों के बीच समन्वय स्थापित करता है।

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम

(The United National Development Programme – UNDP)

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम का गठन 1965 में संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था के अंतर्गत कम विकसित देशों (Less Developed Countries) द्वारा उनके सामाजिक एवं आर्थिक विकास प्रयासों में समन्वय तथा तकनीकी सहायता को देखरेख करने के लिए किया गया था। यूएनडीपी का मुख्यालय न्यूयार्क (अमेरिका) में है। इसे सदस्य राज्यों द्वारा निधि (Fund) उपलब्ध कराए जाते हैं। फिलहाल यूएनडीपी 177 देशों में कार्य कर रहा है।

अधिदेश (Mandate)

यूएनडीपी एशिया, लैटिन अमेरिका, अरब तथा कुछ यूरोपीय देशों के साथ तीव्र आर्थिक वृद्धि तथा बेहतर जीवन स्तर की प्राप्ति के लिए मिलकर कार्य कर रहा है। अपने इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए यूएनडीपी मुख्यतः पाँच क्षेत्रों में कार्य करता है।

- औद्योगिक, वाणिज्यिक एवं निर्यात संभावना से युक्त प्राकृतिक संसाधनों का आकलन एवं सर्वेक्षण करना।
- पूँजी निवेश को प्रोत्साहित करना।
- व्यावसायिक कौशल के लिए प्रशिक्षण देना।
- उपयुक्त तकनीकों का स्थानांतरण करना तथा स्थानीय तकनीकी क्षमताओं को बढ़ाने के लिए प्रोत्साहन देना।
- सामाजिक एवं आर्थिक योजनाओं की मदद करना।

इसके अलावा संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम, सहस्राब्दी विकास लक्ष्य के अंतर्गत 2015 तक गरीबी में आधी कमी लाने के लिए भी प्रयत्नशील है। यूएनडीपी निम्नलिखित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए देशों को सहयोग कर रहा है-

- गरीबी में कमी करना तथा सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों की प्राप्ति
- लोकतांत्रिक शासन को बढ़ावा
- संकट निवारण तथा सामान्य स्थिति की बहाली करना
- पर्यावरण तथा सतत् विकास के लिए ऊर्जा

यूएनडीपी विकासशील देशों को मदद (Add) दिलाने करने तथा उनका प्रभावी इस्तेमाल करने में सहायता करता है। यूएनडीपी मानवाधिकारों का संरक्षण, क्षमता विकास तथा महिलाओं के सशक्तीकरण को बढ़ावा देता है। यूएनडीपी वार्षिक मानव विकास रिपोर्ट (Human Development Report) प्रकाशित करता है। यह विकास संबंधी प्रमुख मुद्दों पर वैश्विकवाद-विवाद को जन्म देता है। यह नए मानक तंत्रों को उपलब्ध कराने, नवप्रवर्तनशील विश्लेषण तथा कई बार विवादास्पद नीति प्रस्तावों (Controversial Policy Proposals) पर भी केंद्रित होता है।

संरचना (Structure)

प्रत्येक देश में स्थित संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम से संबंधित कार्यालय का रेजिडेंट प्रतिनिधि संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था के अंतर्गत चलने वाले विकास गतिविधियों में समन्वय स्थापित करता है। रेजिडेंट प्रतिनिधि के अधीन निदेशक (Country Director) कार्य करता है। निदेशक को इसके कार्यों में सहायता देने के लिए उपनिदेशक (Deputy Country Director) होते हैं।

प्रशासक (Administrator): प्रशासक संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम के प्रमुख (Head) रूप में अपना उत्तरदायित्व निभाता है। प्रशासक की नियुक्ति संयुक्त राष्ट्र महासचिव द्वारा चार वर्षों के लिए की जाती है।

संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त (यू.एन.एच.सी.आर.)

(United Nations High Commissions for Refugees-UNHCR)

संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायोग कार्यालय की स्थापना संयुक्त राष्ट्र प्रस्ताव द्वारा दिसंबर 1950 में की गई थी। इसकी स्थापना का मुख्य उद्देश्य शरणार्थियों का संरक्षण, आपातकालीन राहत, पुनर्वास सहायता तथा शरणार्थी समस्याओं का स्थायी समाधान करना था। द्वितीय विश्वयुद्ध के परिणामस्वरूप यूरोपीय देशों में बड़ी संख्या में शरणार्थियों का पुनर्वास करना, इसका शुरुआती दायित्व था।

संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त का मुख्यालय जेनेवा (Geneva) में स्थित है। इसके प्रशासन के लिए आवश्यक वित्तीयन सीमित रूप से संयुक्त राष्ट्र, गैर सरकारी संगठनों तथा लोगों के स्वैच्छिक सहयोग से किया जाता है। संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त को 1954 एवं 1981 में नोबेल शांति पुरस्कार दिया जा चुका है।

अधिदेश (Mandate)

संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी एजेंसी का अधिदेश, 1950 के यूएनएचसीआर संविधि द्वारा परिभाषित किया गया है। संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त यह प्रयास करता है कि शरणार्थियों के साथ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत मानकों (Internationally Accepted Standards) के अनुसार आचरण हो। संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त 1951 के शरणार्थियों की स्थिति संबंधी संयुक्त राष्ट्र अभिसमय (United Nations Conventions On Status of Refugees) को अपनाने हेतु अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को प्रोत्साहित किया था। 1967 का प्रोटोकॉल, शरणार्थियों के साथ व्यवहार करने के न्यूनतम मानक, उन्हें कुछ निश्चित सामाजिक, आर्थिक अधिकारों, कानूनी दर्जा तथा वैश्विक तौर पर लागू होने वाला शरणार्थी की परिभाषा स्पष्ट करता है। संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त ने इसे भी अपनाने

के लिए प्रोत्साहित किया था। यह सामग्री सहायता कार्यक्रम का भी प्रावधान करता है। इसके अंतर्गत आपातकालीन राहत के तौर पर खाना, चिकित्सा, कपड़े आदि मुहैया कराए जाते हैं। संयुक्त राष्ट्र की अन्य एजेंसियाँ, सरकारें, क्षेत्रीय संस्थाएँ तथा संगठन राहत उपलब्ध कराने के कार्य में संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त की मदद करते हैं। वर्तमान समय में शरणार्थियों से जुड़ी समस्याओं में अत्यधिक वृद्धि हो रही है जिसके कारण इसे शिक्षा, रोजगार, आवास आदि से जुड़े क्षेत्रों में अपनी गतिविधियों को सीमित करना पड़ा है। संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त से आंतरिक संघर्ष से प्रभावित लोगों की सहायता हेतु अपनी विशेषज्ञता का प्रयोग करने को कहा जा सकता है। इस संस्था ने राज्यविहीन लोगों (Stateless Peoples) की सहायता करने तक अपनी भूमिका का विस्तार किया है। बड़ी संख्या में उपेक्षित लोग अपने मूलभूत अधिकारों का भी उपयोग नहीं कर पाते हैं क्योंकि उनके पास किसी देश की नागरिकता नहीं होती है।

संरचना (Structure)

संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त जिसे संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी एजेंसी भी कहा जाता है, का शासन संयुक्त राष्ट्र महासभा और आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् द्वारा किया जाता है। 85 सदस्यों से बनी संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त कार्यकारी समिति एजेंसी के द्विवर्षीय कार्यक्रमों तथा उसके अनुरूप बजट को स्वीकृति देती है। इन्हें उच्चायुक्त के समक्ष रखा जाता है। संगठन के प्रमुख के रूप में उच्चायुक्त इस एजेंसी के निर्देशन एवं नियंत्रण के लिए उत्तरदायी है। उच्चायुक्त का चुनाव संयुक्त राष्ट्र महासभा (General Assembly) द्वारा किया जाता है। यह महासभा सामाजिक एवं आर्थिक परिषद् के दिशा-निर्देशों का पालन करता है। उच्चायुक्त एजेंसी के कार्यों से संबंधित वार्षिक रिपोर्ट आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् तथा महासभा को देता है। उच्चायुक्त को उसके कार्यों में मदद देने के लिए एक उप-उच्चायुक्त तथा संरक्षण एवं कार्य-संचालन के लिए सहायक उच्चायुक्त होते हैं। एजेंसी के अंतर्गत 126 देशों में लगभग 8 हजार राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय कर्मचारी कार्य कर रहे हैं। एजेंसी के प्रमुख कार्य क्षेत्रीय एवं शाखा कार्यालयों आदि के माध्यम से किए जाते हैं। एजेंसी जिस देश में कार्य करता है वहाँ उसके कार्यों की देखरेख उच्चायुक्त के प्रतिनिधि द्वारा की जाती है।

संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (The United Nations Children's Fund – UNICEF)

द्वितीय विश्वयुद्ध पश्चात् बच्चों को राहत प्रदान करने के लिए संयुक्त राष्ट्र महासभा के एक प्रस्ताव द्वारा 1946 में यूनिसेफ की स्थापना की गई थी। यूनिसेफ का मुख्यालय न्यूयार्क (अमेरिका) में है।

अधिदेश (Mandate)

यूनिसेफ को बाल अधिकारों के संरक्षण को वकालत करने, उनके मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने में मदद करने तथा उनके पूर्ण क्षमताओं का उपयोग करने के लिए उन्हें अवसर उपलब्ध कराने का अधिदेश प्राप्त है। यूनिसेफ बाल अधिकारों से संबंधित अभिसमय से मार्गदर्शन प्राप्त करता है तथा बाल अधिकारों को मान्यता दिलाने की अपना स्थायी नैतिक सिद्धांत पालन करता है। यह इस बात पर बल देता है कि बच्चों की जिंदगी, संरक्षण एवं उनका विकास सार्वभौमिक विकास अनिवार्यता है। यह मानव विकास का अभिन्न भाग है। यह राजनीतिक, इच्छाशक्ति एवं भावितक संसाधनों को गतिशील बनाने का कार्य करता है ताकि देश बच्चों एवं उनके परिवार के लिए उपयुक्त नीतियाँ एवं कल्याणकारी सेवाओं को उपलब्ध कराने हेतु आवश्यक क्षमता निर्माण कर सकें। यूनिसेफ युद्ध पीड़ित आपदा प्रभावित, अत्यधिक गरीब, किसी प्रकार के हिंसा एवं शाषण से ग्रसित या किसी प्रकार के विकलांगता से प्रभावित बच्चों का संरक्षण सुनिश्चित करता है। यह बच्चों के अधिकारों के संरक्षण के लिए अविलंब प्रतिक्रिया व्यवहृत करता है।

इसका उद्देश्य विशेषकर कम विकसित देशों को स्थायी बाल स्वास्थ्य एवं कल्याण सेवा (Child Health and Welfare Service) शुरू करने में मदद करना है। यूनिसेफ लगभग 150 देशों में बच्चों के स्वास्थ्य, पोषण एवं शिक्षा के क्षेत्र में सहायता देता है। यह रोग नियंत्रण कार्यक्रमों, डे केयर सेंटर, स्वास्थ्य केंद्र, विद्यालय भोजन योजना के अलावा अन्य परियोजनाओं के लिए सहायता देता है। यह नर्सिंग तथा शिक्षण जैसे रोजगार के लिए आवश्यक प्रशिक्षण हेतु अनुदान भी उपलब्ध कराता है। बच्चों को सहायता देने के लिए यूनिसेफ को 1965 में नोबेल शांति पुरस्कार (Nobel Peace Prize) भी दिया गया था। यूनिसेफ पूर्णतया सहायता पर निर्भर है। इसका तीन-चौथाई वित्तीयन विभिन्न सरकारों से होता है। जबकि एक-तिहाई विभिन्न संगठनों एवं व्यक्तियों से होती है। वर्तमान में यूनिसेफ विकासशील तथा सबसे कम विकसित देशों के बच्चों एवं माताओं के जीवन-स्तर को सुधारने के प्रति लक्षित विकास गतिविधियों पर ध्यान केंद्रित कर रहा है। यह सक्रियता से मातृ एवं बाल स्वास्थ्य, पोषण, शिक्षा एवं सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों के लिए समर्थन बढ़ाने का प्रयास कर रहा है। बाल स्वास्थ्य एवं पोषण की स्थिति में सुधार के लिए चार प्राथमिक स्वास्थ्य तकनीकों के द्वारा चार रणनीतियों का विकास किया गया है। इसमें ओरल रिहाइड्रेशन थैरेपी (Oral Rehydration Therapy) का प्रयोग, रोगों से बचाव के लिए बच्चों का प्रतिरक्षण, स्तनपान को बढ़ावा तथा बाल विकास चार्ट की शुरुआत (Employment of Child Growth Charts) शामिल हैं। यह संगठन विश्व का सबसे बड़ा टीका आपूर्तिकर्ता (Vaccine Supplier) है। यह विश्व स्वास्थ्य संगठन के साथ मिलकर कार्य करता है। संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 1989 में बाल अधिकारों से संबंधित समझौता अपनाने को

प्रांत्साहित करने वाला प्रमुख संगठन था। यह समझौता 1990 से प्रभावी हुआ। यूनिसेफ बालकों के संरक्षण एवं विकास को प्रोत्साहन देने के लिए अंतराष्ट्रीय सम्मेलनों का भी आयोजन करता है। यूनिसेफ विश्व के बच्चों की स्थिति संबंधी वार्षिक रिपोर्ट भी जारी करता है।

संरचना (Structure)

यूनिसेफ की उपस्थिति 190 देशों में है। यूनिसेफ की सफलता मुख्यतया क्षेत्र कार्य (Field Work) से जुड़ी है। प्रत्येक देश में स्थित यूनिसेफ कार्यालय संबंधित देश के साथ मिलकर अपना संपन्न करता है। यूनिसेफ का कार्य किसी देश में कार्य संयुक्त राष्ट्र की गतिविधियों का भाग है। कुल मिलाकर संगठन का प्रबंधन एवं प्रशासन इसके मुख्यालय से नियंत्रित होता है। यहाँ बच्चों से संबंधित वैश्विक नीति निर्माण किया जाता है। कोपोनहेगेन स्थित आपूर्ति प्रभाग (Supply Division) विकासशील देश के बच्चों के जीवनरक्षक टीकों जैसी आवश्यक सामग्री उपलब्ध कराता है।

औद्योगिक देशों में यूनिसेफ से संबंधित राष्ट्रीय समितियाँ (National Committees) कार्य करती हैं। ये गैर-सरकारी संगठन हैं जो बच्चों के अधिकारों को बढ़ावा, कोष एकत्रण, यूनिसेफ ग्रीटिंग कार्ड एवं उत्पादों की बिक्री, कार्पोरेट एवं सिविल सोसायटी से सहभागिता स्थापित करना तथा अन्य अमूल्य सहायता उपलब्ध कराने का कार्य करती हैं। ये समितियाँ ही एक-तिहाई कोष एकत्र करने का कार्य करती हैं। प्रतिष्ठित राष्ट्रीय समितियाँ कई तरह की अभियान चलाती हैं जिसमें बच्चों की स्थिति की जांच पड़ताल भी शामिल है।

यूनिसेफ के सम्पूर्ण कार्यों की निगरानी एवं निर्देशन 36 सदस्यीय कार्यकारी बोर्ड द्वारा किया जाता है। इसमें अधिकांशतः सरकारी प्रतिनिधि होते हैं। वे नीतियों का निर्माण कार्यक्रमों की स्वीकृति, प्रशासनिक एवं वित्तीय योजनाओं एवं बजट से संबंधित निर्णय लेते हैं। सदस्यों का निर्वाचन-संयुक्त राष्ट्र आर्थिक एवं सामाजिक परिषद द्वारा 3 वर्ष के कार्यकाल के लिए किया जाता है।

खाद्य एवं कृषि संगठन (Food and Agriculture Organisation—FAO)

संयुक्त राष्ट्र की एक विशिष्ट एजेंसी के रूप में खाद्य एवं कृषि संगठन की स्थापना 16 अक्टूबर 1946 को कनाडा के क्यूबेक शहर में हुई थी। इस संगठन के सदस्यों की संख्या 194 है। इसके अलावा दो सहयोगी सदस्य (Associate Member) भी हैं। इसका मुख्यालय रोम (इटली) में है।

अधिदेश (Mandate)

सभी को खाद्य सुरक्षा उपलब्ध कराना तथा लोगों को पर्याप्त उच्च गुणवत्ता वाला भोजन उपलब्ध कराना इस संगठन का प्रमुख उद्देश्य है जिससे कि लोग सक्रिय एवं स्वस्थ जीवन जी सकें। खाद्य एवं कृषि संगठन पोषण स्तर बढ़ाने, कृषि उत्पादकता में सुधार करने तथा विश्व अर्थव्यवस्था की वृद्धि करने का कार्य करता है।

खाद्य एवं कृषि संगठन का एक अन्य प्रमुख कार्य पोषण, खाद्य तथा कृषि से संबंधित वैज्ञानिक, तकनीकी, सामाजिक एवं आर्थिक सूचनाओं का एकत्रण, विश्लेषण, व्याख्या तथा प्रचार करना है। ऐसी गतिविधियों से कृषि निवेश में बढ़ोतरी, मृदा एवं जल प्रबंधन बेहतर, पशुधन एवं कृषि उत्पादन में सुधार, कृषि अनुसंधान तथा विकासशील देशों का तकनीकी स्थानांतरण करने में मदद मिलती है। भूख समाप्त करना, सतत कृषि को बढ़ावा देना, ग्रामीण विकास तथा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण हेतु नीति का विकास करना, समुद्री उत्पादों, मछलियों तथा वन संसाधनों का सतत उपयोग सुनिश्चित करना भी इसका लक्ष्य है। यह विश्व में जैव विविधता बनाए रखने का भी कार्य करता है। यह कृषि अभियांत्रिकी, कृषि सुधार, संचार विकास, मौसम एवं वनस्पति के लिए रिमोट सेंसिंग तथा कृषि पश्चात् खाद्यान्न बर्बादी को रोकने का कार्य करता है। खाद्य एवं कृषि संगठन आपातकालीन स्थितियों में खाद्य रिजर्व की स्थापना कर रहत पहुँचाने के लिए विशेष कार्यक्रम चलाता है। यह संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधान में विश्व खाद्य कार्यक्रम (World Food Programme) चलाता है। 1963 से आरंभ से इस कार्यक्रम के अंतर्गत आपदा पीड़ित व्यक्तियों को आपातकालीन रहत पहुँचाने के लिए प्रतिबद्ध विकास कार्यक्रमों को आरंभ करने के लिए सदस्य देशों द्वारा स्वेच्छापूर्वक नकदी तथा अन्य सेवाएँ उपलब्ध करायी जाती हैं। यह संगठन खाद्य नीति एवं मानक तय करने से संबंधित सम्मेलनों का आयोजन भी करता है। 1962 में खाद्य एवं कृषि संगठन ने विश्व स्वास्थ्य संगठन के साथ मिलकर कोडेक्स एलिमेंटैरियस कमिशन (Codex Alimentarius Commission) की स्थापना स्थापना की थी। यह उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य संरक्षण तथा खाद्य व्यापार में निष्पक्षता लाने के उद्देश्य से अंतराष्ट्रीय खाद्य मानकों की तैयारी तथा समीक्षा करने का कार्य करता है। खाद्य एवं कृषि संगठन लक्षित देशों को बड़े पैमाने पर उत्पादन तकनीकों के माध्यम से खाद्य उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाने में मदद करता है। बीमारियों एवं हानिकारक जीवों को रोकने, नियंत्रित करने तथा समाप्त करने के उद्देश्य से सीमापारि (Trans Boundary) पशुओं, कीटों एवं रोगों को रोकने के लिए आपातकालीन रोकथाम की व्यवस्था करता है। यह वैश्विक सूचना एवं पूर्व चेतावनी प्रणाली (Global Information and Early Warning System) का भी

संचालन करता है जो वैश्विक खाद्य स्थिति से संबंधित तात्कालिक सूचना उपलब्ध करता है। संभावित दानदाताओं के लिए खाद्य की कमी वाले राज्यों को चिन्हित करता है। खाद्य एवं कृषि संगठन की स्थापना की तारीख 16 अक्टूबर को विश्व खाद्य दिवस के रूप में मनाया जाता है। संगठन के गतिविधियों को सबके सामने लाने के लिए विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा खाद्य एवं कृषि की स्थिति (The State of Food and Agriculture) नामक वार्षिक रिपोर्ट जारी की जाती है।

संरचना (Structure)

खाद्य एवं कृषि संगठन का शासन सदस्य देशों के सम्मेलन (Conference of Member Nations) द्वारा किया जाता है। इसकी बैठक 2 वर्ष के अंतराल में होती है। इसमें संगठन द्वारा किए गए कार्यों की समीक्षा की जाती है। इसमें अगले 2 वर्षों के लिए कार्यक्रमों तथा बजट की स्वीकृति दी जाती है। सम्मेलन, अंतरिम शासकीय निकाय के रूप में कार्य करने के लिए 49 सदस्यीय परिषद् का चयन करता है। सदस्य तीन वर्ष के कार्यकाल के लिए चुने जाते हैं। सम्मेलन एक महानिदेशक का भी निर्वाचन करता है जो इस एजेंसी का प्रमुख होता है। खाद्य एवं कृषि संगठन को आठ विभागों प्रशासनिक एवं वित्त, सामान्य मामले एवं सूचना, आर्थिक एवं सामाजिक नीति, तकनीकी सहयोग, कृषि, मछली पालन, वानिकी एवं सतत विकास में बाँट दिया गया है।

अंतर्राष्ट्रीय समुद्री संगठन (International Maritime Organisation – IMO)

अंतर्राष्ट्रीय समुद्री संगठन की स्थापना 1948 में जेनेवा में संयुक्त राष्ट्र समुद्री सम्मेलन के दौरान हुए एक समझौता के तहत अंतरसरकारी समुद्री वार्ता संगठन के रूप में किया गया था। यह समझौता 1958 से प्रभावी हुआ। मई, 1982 में इसका वर्तमान नाम अंतर्राष्ट्रीय समुद्री संगठन अपनाया गया था। वर्तमान में अंतर्राष्ट्रीय समुद्री संगठन के 170 सदस्य हैं जबकि तीन सहभागी सदस्य हैं। इसका मुख्यालय लंदन में है।

अधिवेश (Mandate)

अंतर्राष्ट्रीय समुद्री संगठन संयुक्त राष्ट्र की एक विशिष्ट एजेंसी है जो नौपरिवहन (Shipping) की सुरक्षा तथा जहाजों द्वारा उत्पन्न समुद्री प्रदूषण रोकने का कार्य करता है। यह संगठन अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में शामिल नौपरिवहन को प्रभावित करने वाले सभी प्रकार के तकनीकी मामलों तथा सरकारी विनियमन हेतु सरकारों के बीच सहयोग के लिए तंत्र (Machinery) उपलब्ध करता है। समुद्री सुरक्षा, नौवहन क्षमता एवं समुद्री प्रदूषण तथा अन्य समुद्री गतिविधियों से संबंधित कानूनी मामलों में उच्चतम व्यावहारिक मानकों के सामान्य स्वीकरण को प्रोत्साहित करता है। अंतर्राष्ट्रीय समुद्री संगठन अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए बैठकें तथा अंतर्राष्ट्रीय समुद्री समझौता के लिए प्रारूप भी तैयार करता है। समुद्री मामलों को विनियमित करने के संबंध में यह मुख्य केन्द्र के रूप में कार्य करता है।

संरचना (Structure)

अंतर्राष्ट्रीय समुद्री संगठन एक सभा, एक परिषद् तथा पांच प्रमुख समितियों से मिलकर बनता है। पांच प्रमुख समितियों में समुद्री सुरक्षा समिति, समुद्री पर्यावरण सुरक्षा समिति, विधिक समिति, तकनीकी सहायता समिति और फेसिलिटेशन समिति शामिल हैं। इसके अलावा कई उप-समितियाँ होती हैं जो प्रमुख तकनीकी समितियों को उनके कार्यों में सहायता करती हैं।

सभा (Assembly): यह संगठन का सर्वोच्च शासकीय निकाय है। यह सभी सदस्य देशों से मिलकर बनता है। इसकी बैठक 2 वर्ष में होती है। सभा कार्यक्रमों को अनुमति देने, बजट पास करने तथा संगठन के वित्तीय प्रावधानों का निर्धारण के लिए उत्तरदायी होती है। सभा, परिषद् का भी निर्वाचन करती है।

परिषद् (Council): परिषद् का निर्वाचन 2 वर्षों के लिए किया जाता है। परिषद्, अंतर्राष्ट्रीय समुद्री संगठन का कार्यकारी अंग है। यह संगठन के कार्यों की निगरानी करती है। परिषद् के अन्य कार्यों में निम्नलिखित शामिल हैं-

- संगठन के विभिन्न अंगों के कार्यों के बीच समन्वय स्थापित करना।
- कार्यक्रम प्रारूपों एवं बजट अनुमानों पर विचार करना तथा उसे सभा के समक्ष प्रस्तुत करना।
- समितियों एवं अन्य अंगों से रिपोर्ट एवं प्रस्ताव प्राप्त करना तथा उन्हें उपयुक्त टिप्पणियों एवं अनुशंसाओं के साथ सभा एवं सदस्य राज्यों के समक्ष पेश करना।
- महासचिव की नियुक्ति करना। इसका अनुपोदन सभा द्वारा होना चाहिए।
- अन्य संगठनों के साथ समझौता करना।

अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ (International Telecommunication Union – ITU)

अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ की स्थापना 1865 में अंतर्राष्ट्रीय टेलीग्राफ संघ (International Telegraph Union) के रूप में हुआ था। 1934 में इसका वर्तमान नाम अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ पड़ा। 1947 में अंतर्राष्ट्रीय दूर संचार संघ संयुक्त राष्ट्र संघ की एक विशिष्ट एजेंसी बना। इसका मुख्यालय जेनेवा (स्विट्जरलैंड) में है।

अधिदेश (Mandate)

इस संघ का लक्ष्य दूरसंचार के तार्किक उपयोग एवं इसमें सुधार के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देना है। यह संघ विश्व में रेडियो स्पेक्ट्रम तथा उपग्रह कक्ष (Satellite Orbit) का आवंटन करता है। एक-दूसरे को जोड़ने के लिए आवश्यक नेटवर्क एवं तकनीक का विकास करने के लिए तकनीकी मानकों का विकास करता है। अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ विश्व के सभी लोगों को एक-दूसरे से जोड़ने के लिए प्रतिबद्ध है, चाहे वे कहीं और किसी भी स्थिति में रहते हों। अपने शुरुआत के समय से ही अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ निजी-सार्वजनिक सहभागिता के आधार पर कार्यरत है। वर्तमान में इसके 193 सदस्य देश हैं। लगभग 700 निजी-सार्वजनिक संस्था इसके साथ जुड़ी हैं।

अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ के मानक, प्रोटोकॉल तथा समझौते वैश्विक दूरसंचार व्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण हैं। यह स्पेक्ट्रम एवं कक्ष (Orbit) के प्रबंधन द्वारा विश्व के सभी उपग्रहों (Satellites) के बीच समन्वय स्थापित करता है। जिससे कि दूरसंचार, टेलीविजन प्रसारण, जीपीएस नेविगेशन, समुद्री एवं वैज्ञानिक संचार, मौसम संबंधी सूचना, ऑनलाइन मानचित्र तथा पृथ्वी के सबसे दूर दराज के क्षेत्रों में भी संचार संभव हो पाता है। यह इंटरनेट पहुँच (Internet Access) को संभव बनाता है। तकनीकों एवं सेवाओं के विकास के लिए अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ उद्योगों के साथ मिलकर कार्य करता है। मोबाइल एवं ब्रॉडबैंड संचार को संभव बनाने के लिए तकनीकी मानक एवं नीतिगत ढाँचा बनाने का कार्य करता है। अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ निजी एवं सार्वजनिक भागीदारों के साथ मिलकर कार्य करता है ताकि सूचना एवं संचार संबंधी तकनीक की प्राप्ति एवं सेवाएँ वहनीय समानता पर आधारित तथा सार्वभौमिक हों। अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ विश्व के लोगों को तकनीकी शिक्षा एवं प्रशिक्षण के माध्यम से सशक्त करता है।

संरचना (Structure)

महासचिवालय (General Secretariat) अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ के वित्तीय एवं प्रशासनिक मामलों का प्रबंधन करता है। इसमें सम्मेलन, बैठकों की योजना एवं संगठन, सूचना सेवाएँ, सुरक्षा, रणनीतिक योजना तथा निम्न कार्य (Corporate Functions) जैसे संचार, कानूनी सलाह, वित्त, कार्मिक अधिप्राप्ति (Procurement), आंतरिक अकस्मिक आदि शामिल होते हैं। संघ के सम्पूर्ण प्रबंधन के लिए महासचिव (Secretary General) उत्तरदायी होता है। वह इसके कानूनी प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता है। महासचिव के कार्यों में उप-महासचिव (The Deputy Secretary General) मदद करता है। यह महासचिव द्वारा सौंपे गए विशेष कार्यों का संपादन करता है। महासचिवालय में निम्नलिखित विभाग हैं: महासचिव का कार्यालय, रणनीतिक योजना एवं सदस्यता, मानव संसाधन प्रबंधन, वित्तीय संसाधन प्रबंधन, आईटीयू टेलीकॉम सचिवालय, सम्मेलन, प्रकाशन तथा सूचना सेवाएँ।

पूर्णाधिकारी सम्मेलन (Plenipotentiary Conference): पूर्णाधिकारी सम्मेलन में अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ के सदस्य देश संगठन द्वारा भविष्य में किए जाने वाले कार्यों के संबंध में निर्णय लेते हैं। पूर्णाधिकारी सम्मेलन, अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ का नीति निर्माण करने वाला सर्वोच्च निकाय है। यह संघ के सामान्य नीतियों का निर्धारण करता है। चार वर्षीय नीतिगत एवं वित्तीय योजना को अपनाता है। यह संगठन के वरिष्ठ प्रबंधन टीम, परिषद् के सदस्यों तथा रेडियो विनियमन बोर्ड (Radio Regulation Board) के सदस्यों का निर्वाचन करता है।

आईटीयू परिषद् (ITU Council): पूर्णाधिकारी सम्मेलनों के बीच आईटीयू परिषद् अंतर्राष्ट्रीय दूरसंचार संघ के शासकीय निकाय के रूप में कार्य करता है।

रेडियो विनियमन बोर्ड (Radio Regulation Board): रेडियो विनियमन बोर्ड के 12 सदस्यों का निर्वाचन पूर्णाधिकारी सम्मेलन में होता है। वे स्वतंत्र एवं अंशकालिक रूप से कार्य करते हैं। वे सामान्यतः वर्ष में चार बैठकें करते हैं। बोर्ड रेडियो विनियमन के संबंध में रेडियो कम्युनिकेशन ब्यूरो द्वारा लागू किए जाने वाले प्रावधानों के संबंध में विधि प्रक्रिया (Rules of Procedure) को अनुमति प्रदान करता है।

अंतर्राष्ट्रीय नागरिक उड्डयन संगठन

(International Civil Aviation Organisation – ICAO)

यह संयुक्त राष्ट्र की एक विशिष्ट एजेंसी है। इसका मुख्यालय मॉंट्रियल (कनाडा) में है। इसके सदस्य देशों की संख्या 191 है।

अधिदेश (Mandate)

यह संगठन अंतर्राष्ट्रीय वायु नौवहन (International Air Navigation) के सिद्धांतों एवं तकनीकों का निर्धारण करता है। अंतर्राष्ट्रीय विमानन के सुरक्षित एवं सुव्यवस्थित विकास के लिए योजना निर्माण एवं उसका विकास करता है। वायु परिवहन के सतत विकास के लिए यह संगठन सहायता तथा प्रोत्साहन देता है। अंतर्राष्ट्रीय उड्डयन संबंधी कार्य करने के अलावा यह संगठन रणनीतिक प्राथमिकताओं का निर्धारण, नीतियों एवं मानकों का विकास, वैश्विक निगरानी में समन्वय, विश्लेषण एवं रिपोर्ट तैयार करना तथा लक्षित सहायता एवं क्षमता निर्माण का कार्य करता है। अंतर्राष्ट्रीय उड्डयन संगठन ने रणनीतिक उद्देश्यों का भी निर्धारण किया है। वैश्विक नागरिक उड्डयन की सुरक्षा बढ़ाना एवं वायु परिवहन का पर्यावरणीय संरक्षण करना भी इस संगठन का उद्देश्य है।

संरचना (Structure)

परिषद् (Council): अंतर्राष्ट्रीय नागरिक उड्डयन संगठन का स्थायी निकाय है। यह सभा (Assembly) के प्रति उत्तरदायी होती है। इसका गठन 36 सदस्य राज्यों से मिलकर होता है। इनका निर्वाचन सभा द्वारा तीन वर्ष के लिए किया जाता है। परिषद् (Council) विमानन संबंधी मानक अपनता है तथा कार्यप्रणाली लागू करता है। इसमें आधारभूत संरचना, वायुयान जाँच, गैर-कानूनी हस्तक्षेप रोकना तथा सीमापार के लिए प्रक्रियाओं का निर्धारण करता है। अंतर्राष्ट्रीय उड्डयन संधिपत्र पर हस्ताक्षर करने वाले देशों में यातायात सुरक्षा अधिकारियों द्वारा अपनाए जाने वाले प्रक्रियाओं को परिभाषित करता है। यह सभा को वार्षिक रिपोर्ट सौंपता है तथा सभा के निर्देशों का पालन करता है।

सभा (Assembly): सभा में अंतर्राष्ट्रीय नागरिक उड्डयन संगठन के सभी सदस्य देश शामिल होते हैं। इसकी बैठक तीन वर्ष के अंतराल पर होती है। सभा की शक्तियाँ एवं कार्यों में परिषद् (Council) के लिए सदस्य देशों का निर्वाचन करना, परिषद् द्वारा सौंपे गए रिपोर्ट का परीक्षण करना एवं उपयुक्त कार्रवाई करना तथा संगठन के बजट को स्वीकृति देना आदि शामिल हैं।

वायु नौवहन आयोग (Air Navigation Commission): अंतर्राष्ट्रीय नागरिक उड्डयन संगठन की तकनीकी संस्था है। यह आयोग 19 आयुक्तों से मिलकर बनता है। इनकी नियुक्ति अंतर्राष्ट्रीय नागरिक उड्डयन परिषद् द्वारा की जाती है। ये आयुक्त स्वतंत्र रूप से कार्य करते हैं। हालाँकि इनका नामांकन (Nomination) संबंधित राज्यों द्वारा किया जाता है, लेकिन वे संबंधित देशों के प्रतिनिधि या राजनीतिक प्रतिनिधि के रूप में कार्य नहीं करते हैं। उड्डयन मानकों एवं कार्यप्रणाली का विकास वायु नौवहन आयोग के निर्देशन में होता है। आयोग द्वारा एक बार स्वीकृत हो जाने के बाद मानकों को अंतर्राष्ट्रीय नागरिक उड्डयन संगठन परिषद् के पास भेजा जाता है। इसे अंतिम तौर पर अपनाए जाने से पहले सदस्य राज्यों के बीच विचार-विमर्श एवं समन्वय के लिए भेजा जाता है।

सचिवालय (Secretariat): महासचिव सचिवालय का मुख्य कार्यकारी अधिकारी होता है। यह सचिवालय के सामान्य कार्यों का निर्देशन करता है। महासचिव परिषद् के महासचिव के रूप में कार्य करता है एवं उसके प्रति उत्तरदायी होता है। परिषद् द्वारा सौंपे गए कार्यों को संपन्न करता है तथा सचिवालय के गतिविधियों से संबंधित कार्यों का बार-बार रिपोर्ट तैयार करता है। महासचिव सचिवालय के वित्त, मूल्यांकन, आंतरिक अंकुश, संचार से संबंधित कार्य एवं प्रबंधन के लिए उत्तरदायी है।

अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी

(International Atomic Energy Agency – IAEA)

अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी की स्थापना परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में सहयोग करने के लिए 1957 में की गई थी। तब इसे शांति के लिए परमाणु (Atoms for Peace) संगठन के रूप में संयुक्त राष्ट्र संघ के अंतर्गत सृजित किया गया था। अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी के सदस्य देशों की संख्या 159 है। इसका मुख्यालय वियना (ऑस्ट्रिया) में है।

अधिदेश (Mandate)

यह एजेंसी परमाणु तकनीकों के शांतिपूर्ण एवं सुरक्षित प्रयोग के लिए विश्व के अपने सदस्यों एवं अन्य भागीदारों के साथ मिलकर कार्य करता है। अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी विश्वभर में शांति, स्वास्थ्य एवं संपन्नता के लिए परमाणु ऊर्जा के योगदान को बढ़ावा देता है। अपने क्षेत्राधिकार के अधीन यह सुनिश्चित करता है कि इसके द्वारा उपलब्ध कराए गए सहायता या इसके अनुरोध, नियंत्रण या पर्यवेक्षण के अधीन इसके द्वारा उपलब्ध कराए गए सहायता का सैनिक उद्देश्यों के लिए उपयोग न किया जाए। एजेंसी अपने सामग्रियों (Materials) के भंडारण एवं संरक्षण के लिए उत्तरदायी है। एजेंसी यह सुनिश्चित करता है कि इन

सामग्रियों पर मौसम का खतरनाक प्रभाव न पड़े, इनका अनाधिकृत रूप से स्थानांतरण न हो, क्षति, विध्वंस या तोड़-फोड़ न हो, बलपूर्वक अधिग्रहण न हो। अपने नियंत्रणाधीन विखंडनीय पदार्थों के संग्रहण में एजेंसी इस बात को सुनिश्चित करता है कि इनका भौगोलिक वितरण इस प्रकार से हो कि ऐसे सामग्रियों का एक देश या क्षेत्र में अत्यधिक मात्रा में संग्रहण न हो। इसके अलावा एजेंसी सामग्रियों के संग्रहण, प्राप्ति एवं विकास के लिए संयंत्र की स्थापना, शारीरिक सुरक्षा मानक, पर्याप्त स्वास्थ्य एवं सुरक्षा मानक, प्राप्त किए गए सामग्रियों के विश्लेषण एवं प्रभावी करने के लिए प्रयोगशालाओं पर नियंत्रण, पूर्ववर्ती कर्मचारियों के लिए आवास एवं प्रशासनिक सुविधाएँ उपलब्ध कराता है। यह विश्वभर में परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण प्रयोग के लिए अनुसंधान को प्रोत्साहन, सहायता तथा अनुप्रयोग को प्रोत्साहित करता है। यदि अनुरोध किया गया तो यह सेवा निष्पादन की सुरक्षा, एक सदस्य देश द्वारा दूसरे सदस्य देश को दी जा रही सुविधाओं के संबंध में किसी कार्य को करने या अनुसंधान में या परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण प्रयोग में मध्यस्थ या मध्यवर्ती संस्था का कार्य करता है। एजेंसी के संविधि के अनुरूप यह अनुसंधान की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सामग्री, सेवा, यंत्र, सुविधाओं को उपलब्ध कराता है। विद्युत उत्पादन के साथ-साथ परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिए प्रयोग का प्रावधान करता है। विश्व के अधिकसित भागों की आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण प्रयोग के लिए वैज्ञानिक एवं तकनीकी सूचनाओं के विनिमय को बढ़ावा देता है। परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण प्रयोग के लिए वैज्ञानिक एवं विशेषज्ञों के विनिमय को प्रोत्साहित करता है। अपने आधिकारिक कार्यों को करने हेतु आवश्यक यंत्रों, सुविधाओं, संयंत्रों की प्राप्ति एवं स्थापना करता है। लेकिन एजेंसी ऐसा तभी करती है जब संबंधित क्षेत्रों में उपलब्धता अपर्याप्त हो या ऐसे शर्तों पर मिलता हो जिसे संतोषप्रद नहीं कहा जा सकता है। एजेंसी संयुक्त राष्ट्र के शांति एवं अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देने वाले उद्देश्यों एवं सिद्धांतों के अनुसार अपनी गतिविधियों का संचालन करता है। यह विश्वव्यापी निरस्त्रीकरण या ऐसी नीतियों के अनुसरण में अंतर्राष्ट्रीय समझौतों को लागू करने का प्रयास करता है। अपने संसाधनों का आवंटन इस प्रकार करता है कि इसका विज्ञान के सभी भागों में यथासंभव समान लाभ प्राप्त हो। इसमें विश्व के कम विकसित क्षेत्रों की विशेष आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाता है। अपनी कार्यकलापों की वार्षिक रिपोर्ट संयुक्त राष्ट्र महासभा को सौंपता है। यदि एजेंसी की गतिविधियों से संबंधित प्रश्न सुरक्षा परिषद के दायरे में आते हैं तो ऐसी स्थिति में रिपोर्ट सुरक्षा परिषद को भी सौंपी जा सकती है। आर्थिक एवं सामाजिक परिषद तथा संयुक्त राष्ट्र के अन्य अंगों के अंतर्गत आने वाले मामलों से संबंधित रिपोर्ट इन्हें संगठनों को सौंपता है। एजेंसी अपने कार्यों के निर्वहन में किसी सदस्य देश को अपने संविधि के विरुद्ध राजनीतिक, आर्थिक, सैन्य या अन्य मामलों में सहायता नहीं करती है।

सदस्यता (Membership)

अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी के शुरुआती सदस्य वे देश माने जाते हैं जो इसकी संविधि (Statute) को हस्ताक्षर करने के लिए खोले जाने के 90 दिनों के अंदर इस पर हस्ताक्षर किया था साथ ही अनुसमर्थन दस्तावेज (Instrument of Ratification) जमा कर दिया था। अन्य सदस्य देश वे हैं जो संयुक्त राष्ट्र के सदस्य हैं या नहीं हैं लेकिन जिन्होंने संविधि को स्वीकार्य दस्तावेज (Instrument of Acceptance) को जमा किया है। उन्हें शासक मंडल की अनुशंसा पर महासम्मेलन (General Conference) के अनुमोदन से सदस्यता दी जाती है। सदस्यता की अनुशंसा एवं अनुमति देते समय शासक मंडल तथा महासम्मेलन इस बात का निर्धारण करता है कि क्या सदस्यता की इच्छा देश एजेंसी के दायित्वों को पूरा करने में सक्षम एवं इच्छुक है। संयुक्त राष्ट्र चार्टर के सिद्धांतों एवं उद्देश्यों के प्रति क्राम करने की क्षमता एवं इच्छा की ओर भी पर्याप्त ध्यान दिया जाता है। एजेंसी में शामिल सभी सदस्य देश समानता के आधार पर कार्य करते हैं।

संरचना (Structure)

महासम्मेलन (General Conference): महासम्मेलन में सभी सदस्य देशों की भागीदारी होती है। महासम्मेलन सर्वोच्च निर्णयन संस्था है। इसकी वार्षिक बैठक होती है। इस वार्षिक बैठक में एजेंसी के कार्यक्रमों तथा बजट को स्वीकार किया जाता है। यह शासक मंडल (Board of Governors), महानिदेशक या सदस्य राज्यों द्वारा लाए गए मामलों का निर्णय करता है। जब तक महासम्मेलन द्वारा अन्यथा निर्धारित नहीं किया जाए, तब तक वार्षिक सत्र एजेंसी के मुख्यालय में ही होते हैं। महासम्मेलन अपनी सत्रों के संचालन के लिए एक अध्यक्ष का चुनाव करता है। महासम्मेलन में निर्णय, उपस्थित एवं मतदान करने वाले दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत से किए जाते हैं। महासम्मेलन संविधि के अंतर्गत आने वाले किसी भी विषय पर या इस संविधि के अंतर्गत किन्हीं अंगों (Organs) के शक्तियों एवं कार्यों के संबंध में विचार-विमर्श कर सकता है या एजेंसी की सदस्यता या शासक मंडल या किसी प्रश्न या मामले के संबंध में अनुशंसा कर सकता है।

महानिदेशक (Director General): महानिदेशक एजेंसी के कर्मचारियों का प्रमुख होता है। महानिदेशक की नियुक्ति चार वर्षों के लिए महासम्मेलन की सहमति से शासक मंडल द्वारा की जाती है। वह एजेंसी का प्रमुख प्रशासनिक अधिकारी (Chief Administrative Officer) होता है। महानिदेशक, कर्मचारियों की नियुक्ति, संगठन एवं कार्य के लिए उत्तदायी होता है। वह शासक मंडल के प्राधिकार एवं नियंत्रण के अधीन कार्य करता है। वह शासक मंडल के द्वारा अपनाए गए विनियमों (Regulations) के

अनुसार अपने दायित्वों का निर्वहन करता है। एजेंसी के कार्यों एवं दायित्वों को पूरा करने के लिए ऐसे कर्मचारियों की नियुक्ति की जाती है जो वैज्ञानिक एवं तकनीकी तौर पर योग्य हों।

शासक मंडल (Board of Governors): शासक मंडल अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी का एक अन्य नीति निर्माण करने वाली संस्था है। शासक मंडल अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी की गतिविधियों एवं बजट से संबंधित अनुशंसा महासम्मेलन को करता है। यह अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी के मानकों (Standards) को प्रकाशित करने के लिए भी उत्तरदायी है तथा महासम्मेलन की सहमति के अधीन रहते हुए महानिदेशक की नियुक्ति करता है। वर्तमान शासक मंडल में 35 देश हैं। सभी को एक मत (Vote) प्राप्त है। शासक मंडल के सदस्य वर्ष में 5 बैठकों करते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक पुलिस संगठन-इंटरपोल (International Criminal Police Organisation – ICPO/ Interpol)

इंटरपोल विश्व का सबसे बड़ा पुलिस संगठन है।

अधिदेश (Mandate)

इसकी स्थापना 1923 में की गई थी तथा इस संगठन का मुख्यालय लिओन (फ्रांस) में है। इसे संयुक्त राष्ट्र महासभा में पर्यवेक्षक का दर्जा दिया गया है। यह संगठन विश्व को सुरक्षित बनाने के लिए मिलकर कार्य करता है। 21वीं शताब्दी की आपराधिक चुनौतियों से निपटने के लिए तकनीकी एवं संचालनात्मक सहायता के लिए यह संगठन आधारभूत संरचना उपलब्ध कराता है। इंटरपोल की गतिविधियों का संचालन सदस्य देशों द्वारा सांविधिक बैठक (Statutory Meeting) के अधीन किया जाता है। इंटरपोल का उद्देश्य विश्व को सुरक्षित बनाने के लिए विभिन्न देशों के पुलिस के बीच संपर्क एवं सहयोग स्थापित करना है। यह विश्व के नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए जहां कभी भी आवश्यक होता है पुलिस सूचना का प्रसार एवं प्रोपि सुनिश्चित करता है। पुलिस कार्य एवं सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए नवप्रवर्तनशील एवं आधुनिकतम तकनीक तथा उपाय उपलब्ध कराता एवं उसे प्रोत्साहन देता है। इंटरपोल पुलिस मामलों में सहयोग को बढ़ावा देता है। यह सहायता यथासंभव पुलिस एजेंसियों के बीच उपलब्ध कराया जाता है। इंटरपोल पुलिस आंकड़ों एवं सूचनाओं की विश्वव्यापी पहुंच सुनिश्चित करता है। यह अपराध नियंत्रण क्षेत्रों में संचालनात्मक सहयोग (Operational Support) देता है। यह आपराधिक गतिविधियों को रोकने के लिए आवश्यक ज्ञान एवं कौशल के विकास में सुधार का लगातार प्रयास करता है।

इंटरपोल प्रष्टाचार, बच्चों के विरुद्ध किए जाने वाले अपराध, साइबर अपराध, नशीले पदार्थों की तस्करी, पर्यावरणीय अपराध, वित्तीय अपराध, अनास्त्र (Firearms), भगोड़ा छानबीन या जांच (Fugitive Investigation), समुद्री तस्करी, संगठित अपराध, आतंकवाद, मानव दुर्व्यापार, तकली एवं अवैध सीमापार, का दुर्व्यापार, ज्वान सबंधी अपराध जैसी गतिविधियों को रोकने का कार्य करता है। 21वीं शताब्दी में कई ऐसे अपराध किए जाते हैं जिसका वैश्विक आग्राम होता है और इन्हें नियंत्रित करने के लिए वैश्विक प्रयास की आवश्यकता है। इसमें इंटरपोल की महत्वपूर्ण भूमिका है।

संरचना (Structure)

अध्यक्ष (President): संगठन का अध्यक्ष कार्यकारी समिति (Executive Committee) का प्रधान होता है। इसका निर्वाचन महासभा द्वारा चार वर्ष के लिए किया जाता है। यह महासभा एवं कार्यकारी समिति की बैठकों की अध्यक्षता करता है। यह सुनिश्चित करता है कि संगठन की गतिविधियाँ महासभा एवं कार्यकारी समिति द्वारा लिए गए निर्णयों के अनुरूप हों।

महासभा (General Assembly): महासभा सदस्य देशों के प्रतिनिधियों से मिलकर बनती है। इंटरपोल के सर्वोच्च शासकीय निकाय के रूप में इसकी वर्ष में एक बैठक होती है। यह संगठन के सामान्य नीतियों को प्रभावित करने वाले सभी निर्णय लेती है। इसके अलावा अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के लिए आवश्यक संसाधनों, कार्यपद्धति, वित्त तथा गतिविधियों से संबंधित कार्यक्रमों के बारे में निर्णय लेती है। महासभा, संगठन के कार्यकारी समिति (Executive Committee) का भी चुनाव करती है। महासभा प्रस्तावों के रूप में सामान्य बहुमत से निर्णय लेती है। प्रत्येक सदस्य देश को एक मत प्राप्त है।

कार्यकारी समिति (Executive Committee): कार्यकारी समिति वर्ष में तीन बैठक करती है तथा संगठन के नीति एवं निर्देशों को तय करती है। कार्यकारी समिति के सदस्य अपने-अपने देश में सर्वोच्च पुलिस अधिकारी होते हैं तथा इन्हें पुलिस संबंधी कई वर्षों का अनुभव एवं ज्ञान होता है। वे बेहतर मार्गदर्शन में सक्षम होते हैं। कार्यकारी समिति की भूमिका महासभा द्वारा लिए गए निर्णयों के कार्यान्वयन की निगरानी करना है। यह महासभा की बैठकों के लिए कार्यसूची (Agenda) तैयार करती है। कार्यक्रमों एवं परियोजनाओं को महासभा के समक्ष प्रस्तुत करती है। यह प्रशासन एवं महासचिव के कार्यों की निगरानी करती है। कार्यसमिति का चुनाव महासभा द्वारा की जाती है जिसमें नौ प्रतिनिधि, तीन उपाध्यक्ष तथा संगठन के अध्यक्ष के सहित कुल 13 सदस्य होते हैं। अध्यक्ष का चुनाव चार वर्ष के लिए किया जाता है जबकि उपाध्यक्ष का चुनाव तीन वर्ष के लिए किया जाता है।

महासचिवालय (General Secretariat): इन्टरपोल का महासचिवालय लियोन में स्थित है। यह पूरे वर्ष कार्य करती है। यह महासभा एवं कार्यकारी समिति द्वारा लिए गए निर्णयों को लागू करने का कार्य करती है। महासचिव महासचिवालय का प्रमुख अधिकारी होता है।

विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन (World Intellectual Property Organization-WIPO)

विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन संयुक्त राष्ट्र की विशेषीकृत एजेंसी है। इसका गठन सृजनात्मकता एवं नवप्रवर्तन हेतु बौद्धिक सम्पदा (पेटेंट, कॉपीराइट, ट्रेडमार्क, डिजाइन) आदि के विकास पर बल देने के लिए की गई है। इसकी स्थापना 1967 में की गई थी तथा इसके सदस्य देशों की संख्या 186 है। संगठन का मुख्यालय जेनेवा (स्विट्जरलैंड) में है।

अधिदेश (Mandate)

विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन विकास एवं अंतर्राष्ट्रीय बौद्धिक सम्पदा व्यवस्था को सेवाओं, विधियों, आधारभूत संरचना एवं क्षमता विकास के माध्यम से प्रोत्साहित करता है। सेवाओं के अंतर्गत संगठन ऐसी व्यवस्था का संचालन करता है जिसमें पेटेंट, ट्रेडमार्क, डिजाइन, मूल उत्पत्ति की पदवी (Appellation of Origin) तथा बौद्धिक सम्पदा विवादों का समाधान करने जैसी सुविधाएँ उपलब्ध कराता है। यह प्रक्षेत्र नाम विवाद समाधान (Domain name dispute Resolution) तथा अंतर्राष्ट्रीय वर्गीकरण का भी कार्य करता है। विधि के अंतर्गत संगठन समाज की बढ़ती जरूरतों के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय विधि एवं बौद्धिक सम्पदा ढाँचा का विकास करता है।

आधारभूत संरचना के अंतर्गत ज्ञान की सहभागिता, बौद्धिक सम्पदा लेन-देन का सरलीकरण जिसमें सूचना-विनिमय के लिए यंत्र एवं डाटाबेस को मुक्त करना शामिल होता है। विकास के अंतर्गत आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए क्षमता निर्माण को बढ़ावा देता है। विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन आपसी समझ बढ़ाने तथा बौद्धिक सम्पदा अधिकारों की विश्वव्यापी सम्मान दिलाने के लिए सदस्य देशों एवं अन्य भागीदारों के साथ मिलकर कार्य करता है। संगठन आर्थिक विश्लेषण एवं सांख्यिकी आँकड़े भी उपलब्ध कराता है। संगठन वैश्विक चुनौतियों के समाधान के लिए बौद्धिक सम्पदा आधारित समाधानों को प्रयास करता है। सामान्य रूप से बौद्धिक सम्पदा (Intellectual Property-IP) में वाणिज्य-व्यापार में उपयोग किए जाने वाले खोज, साहित्यिक एवं कलात्मक कार्य, प्रतीक, नाम एवं डिजाइन जैसी चीजें शामिल होती हैं। बौद्धिक सम्पदा को दो भागों में बाँटा जाता है। औद्योगिक सम्पदा जिसमें खोज (Inventions), पेटेंट, ट्रेडमार्क, औद्योगिक डिजाइन, स्रोत का भौगोलिक संकेतक (Geographical Indicator of Source) तथा कॉपीराइट जिसमें साहित्यिक एवं कलात्मक कार्य जैसे आरेख (Drawing), पेंटिंग, फोटोग्राफ, मूर्तिकला (Sculpture) तथा वास्तुकला डिजाइन (Architectural Design) शामिल होते हैं। कॉपीराइट के अंतर्गत प्रदर्शन करने वाले कलाकार, रिकार्डिंग करने वाले फोनोग्राम्स (Phonograms) के निर्माता या उत्पादक तथा रेडियो एवं टेलीविजन कार्यक्रमों के प्रसारकों के कार्य शामिल होते हैं।

संगठन निम्नलिखित उद्देश्यों की प्राप्ति करना चाहता है-

- बौद्धिक सम्पदा के लिए अंतर्राष्ट्रीय मानक रूपरेखा का समुचित विकास करना।
- प्रमुख वैश्विक बौद्धिक सम्पदा सेवाओं का प्रावधान करना।
- विकास के लिए बौद्धिक सम्पदा के प्रयोग की सुविधा प्रदान करना।
- वैश्विक बौद्धिक सम्पदा आधारभूत संरचना का विकास करना एवं समन्वय स्थापित करना।
- बौद्धिक सम्पदा सूचना एवं विश्लेषण के लिए वैश्विक संदर्भ स्रोत (World Reference Source) के रूप में कार्य करना।
- बौद्धिक सम्पदा को सम्मान दिलाने के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोग सुनिश्चित करना।
- वैश्विक नीतिगत मुद्दों के संदर्भ में बौद्धिक सम्पदा संबंधी मामलों को हल करना।
- विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन, सदस्य राज्यों एवं अन्य संबंधित भागीदारों के प्रति उत्तरदायी संचार व्यवस्था (Responsive Communication Interface) सुनिश्चित करना।
- विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन द्वारा कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने में सक्षम बनाने के लिए एक सक्षम प्रशासनिक एवं वित्तीय रूप से सहायक संरचना का निर्माण करना।

संरचना (Structure)

विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन का सदस्य देश संगठन के निर्देशन, बजट तथा विधियों का निर्धारण नीति निर्माण संस्थाओं के माध्यम से करते हैं। विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन के सदस्य देश संगठन का राजनीतिक निर्देशन एवं गतिविधियों का निर्धारण करते हैं। वे सभा, समिति, कार्यकारी समूह में मिलते हैं। विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन सचिवालय के कर्मचारी लगभग 90 देशों से लिए

गए हैं। वे संगठन के विभिन्न सेवाओं एवं कार्यक्रमों को लागू करने के लिए आवश्यक कौशल एवं अनुभव का योगदान करते हैं तथा संगठन के अंतर्गत सक्षम प्रशासन सुनिश्चित करते हैं। संगठन, विभिन्न भागीदारों जैसे अंतरसरकारी संगठन, गैर-सरकारी संगठन, सिविल सोसाइटी के प्रतिनिधियों एवं औद्योगिक समूहों के साथ मिलकर कार्य करता है। विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन के बैठकों के लिए लगभग 250 गैर-सरकारी एवं अंतरसरकारी संगठनों को पर्यवेक्षक का दर्जा दिया गया है। विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन के अंतर्गत रणनीतिक निर्देशन एवं गतिविधियों से संबंधित सारे निर्णय सदस्य राज्यों द्वारा लिए जाते हैं। विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन महासभा (General Assembly) में वे सभी राज्य शामिल होते हैं जो इसके किसी भी संघ (Union) के सदस्य रहे हों। प्रत्येक सरकार का प्रतिनिधित्व एक प्रतिनिधिमंडल द्वारा किया जाता है।

महासभा, समन्वय समिति द्वारा की गई नामांकन के आधार पर महानिदेशक (Director General) की नियुक्ति करती है। वह महानिदेशक के रिपोर्ट की समीक्षा, स्वीकृति तथा उसे आवश्यक निर्देश देती है। समन्वय समिति की रिपोर्ट एवं गतिविधियों की समीक्षा करती है। उसे संस्तुति तथा निर्देश भी देती है। विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन का नीति निर्माण करने वाली प्रमुख संस्था महासभा एवं समन्वय समिति हैं।

सम्मेलन (Conference): अभिसमय (Convention) में शामिल सभी सदस्य राज्य चाहे वे किसी भी संघ के सदस्य हों या नहीं हों, से मिलकर सम्मेलन (Conference) का निर्माण होता है। प्रत्येक सरकारों का प्रतिनिधित्व एक प्रतिनिधि के माध्यम से होता है। सम्मेलन बौद्धिक सम्पदा से संबंधित सामान्य रुचि के मामलों पर विचारविमर्श करता है तथा संघों की स्वायत्तता एवं सामर्थ्य से संबंधित अनुरासों को अपनाता है।

समन्वय समिति (Coordination Committee): समन्वय समिति, संघों के एक जोड़ी सदस्यों से मिलकर बनती है। समन्वय समिति के प्रत्येक सदस्य देश का प्रतिनिधित्व एक प्रतिनिधि के माध्यम से किया जाता है। समन्वय समिति, संघों (Unions) महासभा, सम्मेलन के अन्य अंगों एवं महानिदेशक को प्रशासनिक, वित्तीय या दो या दो से अधिक संघों के सामान्य हित के मामलों में सलाह देता है।

काला सागर आर्थिक सहयोग (Black Sea Economic Cooperation)

25 जून 1992 को काला सागर (Black Sea) से सटे 11 देशों अल्बानिया, आर्मेनिया, एज़रबैजान (Azerbaijan), बुल्गारिया, जॉर्जिया, ग्रीस, मल्दोवा, रोमानिया, रूस, तुर्की, यूक्रेन के राष्ट्राध्यक्षों ने इस्तांबुल में काला सागर आर्थिक सहयोग संगठन की स्थापना की। काला सागर आर्थिक सहयोग संगठन का मुख्यालय 1994 में इस्तांबुल (तुर्की) में स्थापित किया गया था।

1 मई 1999 से इसका चार्टर प्रभावी होने के साथ ही इस संगठन को अंतराष्ट्रीय विधिक मान्यता प्राप्त हो गई थी। इसे पूर्ण रूप से एक क्षेत्रीय आर्थिक संगठन के रूप में बदल दिया गया था। अप्रैल 2004 में सर्बिया एवं मॉन्टेनेग्रो की भागीदारी के साथ ही इसकी सदस्य संख्या 12 हो गई। इस संगठन में काला सागर से सटे देशों के अलावा बाल्कन एवं कॉकेशस (Caucasus) के देश भी शामिल हैं।

अधिदेश (Mandate)

इस संगठन का लक्ष्य सदस्य देशों के बीच आर्थिक एवं राजनीतिक सहयोग को बढ़ावा देना है। यह सदस्य देशों के बीच अंतर्क्रिया एवं समन्वय को बढ़ावा देता है। यह काला सागर क्षेत्र में मित्रता एवं अच्छे पड़ोसी का संबंध विकसित करने के साथ शांति, स्थिरता एवं समृद्धि को बढ़ावा देता है। फारस की खाड़ी (Persian Gulf) के बाद तेल एवं प्राकृतिक गैस का यहाँ दूसरा सबसे बड़ा भण्डार है। काला सागर आर्थिक सहयोग संगठन के सदस्य देश कृषि, बैंकिंग, वित्त, अपराधों की रोकथाम, संस्कृति, सीमाशुल्क, आपातकालीन सहायता, शिक्षा, ऊर्जा, पर्यावरण संरक्षण, सांख्यिकी आँकड़ों एवं सूचनाओं का विनिमय, स्वास्थ्य एवं औषध विज्ञान एवं तकनीकी, लघु एवं मध्यम उपक्रम के क्षेत्र में सहयोग करते हैं।

संरचना (Structure)

विदेश मामलों की मंत्रिपरिषद् (Council of Ministers of Foreign Affairs): विदेश मामलों की मंत्रिपरिषद् काला सागर आर्थिक सहयोग संगठन का प्रमुख नीति निर्माण करने वाली संस्था है। संगठन के अंतर्गत कोई भी निर्णय शिखर सम्मेलनों के अतिरिक्त विदेश मामलों की मंत्रिपरिषद् को सौंपा गया है। परिषद् अपने सहायक संस्थाओं को निर्णय लेने की जिम्मेदारी सौंप सकती है लेकिन उन्हें निर्णय की जानकारी परिषद् को देनी पड़ती है। इनके कार्यों में सहयोग करने के लिए इस्तांबुल में एक स्थायी सचिवालय भी है।

नार्डिक परिषद् (Nordic Council)

नार्डिक परिषद् की स्थापना 16 मार्च 1952 को डेनमार्क, फिनलैंड, आइसलैंड, नार्वे तथा स्वीडन द्वारा की गई थी। नार्डिक परिषद् नार्डिक क्षेत्र की आधिकारिक अंतरसंसदीय (Inter-Parliamentary) संस्था है। इसका मुख्यालय कोपेनहेगेन (डेनमार्क) में है। यहाँ पाँच नार्डिक देशों, फारो द्वीप (Faroe Island), ग्रीनलैंड तथा आलैंड (Aland) के बीच राजनीतिक वार्ता होती है।

अधिदेश (Mandate)

यह अंतर्राष्ट्रीय सहयोग का एक अद्वितीय उदाहरण है। नार्डिक परिषद्, सदस्य देशों की सरकारों एवं विधायिकाओं के बीच सामान्य हित के मामलों में वार्ता के लिए मंच उपलब्ध कराता है। सदस्य देशों के बीच प्रमुखतः आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, कानूनी, श्रम तथा पर्यावरणीय मामलों में सहयोग की जाती है। पिछले कुछ वर्षों से वैश्वीकरण, जलवायु परिवर्तन तथा आवागमन की स्वतंत्रता (Freedom of Movement) जैसे- विषय कार्यसूची के प्रमुख विषय रहे हैं। सांसद सरकारों के साथ मिलकर कार्य कर रहे हैं ताकि अनुसंधान, विकास एवं नवप्रवर्तन (Innovation) को बढ़ावा मिल सके। वैश्वीकरण से संबंधित कार्यों के लिए नार्डिक परिषद् द्वारा एक संसदीय दबाव समूह (Parliamentary Pressure Group) की स्थापना की गई है और वार्षिक वैश्वीकरण सम्मेलनों में ज्यादा भागीदारी की मांग की है। जलवायु से संबंधित कई प्रस्ताव स्वीकृत किए गए हैं जिनमें हरित कार से संबंधित नार्डिक समझौता, जैव ईंधन दृष्टिकोण (Bio Fuel Vision) तथा सार्वजनिक क्षेत्र में ऊर्जा की खपत में और कमी करना तथा गरीब देशों में जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न समस्याओं के समाधान हेतु विकास सहायता का प्रयोग करना शामिल है। इसके अलावा नार्डिक कार्यसूची में मौसम अनुकूल यातायात नीति तथा नार्डिक क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन को निगरानी करने के लिए आर्कटिक क्षेत्र में नार्डिक प्रेक्षण व्यवस्था (Nordic Observation System) की स्थापना संबंधी कार्ययोजना शामिल है। आवागमन की स्वतंत्रता के अंतर्गत नार्डिक परिषद् नार्डिक क्षेत्र के नागरिकों की स्वतंत्रतापूर्वक रहने, काम करने, अध्ययन करने तथा व्यापार करने पर बल देता है।

संरचना (Structure)

नार्डिक परिषद् में डेनमार्क, फिनलैंड, आइसलैंड, नार्वे, स्वीडन, फारोद्वीप, ग्रीनलैंड तथा आलैंड के सांसद सदस्य शामिल हैं। नार्डिक परिषद् एक प्रधान परिषद् (Presidium) द्वारा चलाई जाती है। इसकी वर्ष में दो बैठक होती है। इसी दौरान नार्डिक सांसद नार्डिक सरकारों द्वारा लागू किए जाने वाले मुद्दों पर निर्णय लेते हैं। प्रत्येक सामान्य सत्र में अगले वर्ष के लिए अध्यक्ष, उपाध्यक्ष के साथ प्रधान परिषद् (Presidium) के सदस्यों का चुनाव किया जाता है। नार्डिक परिषद् की अध्यक्षता सदस्य देशों द्वारा बारी-बारी से की जाती है। नार्डिक परिषद् के वर्तमान राजनीतिक कार्यों का संचालन समितियाँ एवं दलीय समूहों (Party Groups) द्वारा की जाती है। नार्डिक परिषद् का प्रबंधन एक सचिवालय (Secretariate) द्वारा किया जाता है।

हिन्द महासागर आयोग (Indian Ocean Commission)

हिन्द महासागर आयोग का गठन हिन्द महासागर क्षेत्र के देशों मडागास्कर, मॉरीशस, सेशेल्स के बीच आपसी समझ से 1982 में किया गया था। वर्तमान में हिन्द महासागर आयोग के पाँच सदस्य देश मडागास्कर, मॉरीशस, सेशेल्स, कोमोरोस संघ तथा फ्रांस/रीयूनियन द्वीप (France/Reunion Island) हैं।

अधिदेश (Mandate)

हिन्द महासागर आयोग का प्राथमिक लक्ष्य सदस्य देशों के बीच मित्रता तथा पूरे हिन्द महासागर क्षेत्र के लोगों के बीच एकता को बढ़ावा देना है। हिन्द महासागर आयोग का लक्ष्य परियोजनाओं के माध्यम से विकास करना है जिससे कि इस पूरे क्षेत्र की रक्षा, जीवन स्तर में सुधार तथा उन प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा हो सके जिस पर कोई देश निर्भर है। हिन्द महासागर आयोग क्षेत्र में अकेला संगठन है जो केवल महाद्वीपों से मिलकर बना है। यह क्षेत्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महाद्वीपों के परस्पर हितों की रक्षा करता है। यह आयोग क्षेत्रीय सहयोग को केंद्र में रखकर खाद्य, सुरक्षा, वित्त, ऊर्जा एवं पारिस्थितिकीय एवं वैश्वीकरण से जुड़ी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करता है। यह संसाधनों, विशेषज्ञ सूचना, अनुभव तथा कार्यान्वयन के बेहतर तरीकों का आदान-प्रदान सुनिश्चित करता है।

संरचना (Structure)

हिन्द महासागर आयोग की अध्यक्षता बारी-बारी से इसके सदस्य देशों द्वारा की जाती है। अध्यक्षता करने वाला देश ही हिन्द महासागर आयोग की संस्थाओं की बैठक बुलाता है, कार्यों की प्राथमिकता का निर्धारण एवं उनका कार्यान्वयन सुनिश्चित करता है। यह हिन्द महासागर के सहयोगियों के साथ बैठक, क्षेत्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय बैठकों में प्रतिनिधित्व करता है तथा संघर्ष समाधान में सुगमकर्ता (Facilitator) की भूमिका निभाता है।

शासनाध्यक्षों का शिखर सम्मेलन (The Summit of Heads of Government): शासनाध्यक्षों का शिखर सम्मेलन राजनीतिक दिशा-निर्देश (Strategic Guidelines) तय करता है। इसे मंत्रिपरिषद् (Council of Minister) द्वारा उद्देश्यों एवं कार्यों में विभाजित कर दिया जाता है। इसका कार्यान्वयन सचिवालय (Secretariat) द्वारा किया जाता है। मंत्रिपरिषद् में सदस्य देशों के विदेशमंत्री शामिल होते हैं। हिन्द महासागर आयोग का सचिवालय मॉरीशस में स्थित है। सचिवालय का प्रमुख महासचिव होता है।

यूरोपीय सुरक्षा एवं सहयोग संगठन

(Organization for Security and Co-operation in Europe – OSCE)

यूरोपीय सुरक्षा एवं सहयोग संगठन की स्थापना 1970 के दशक में तनाव शैथिल्य (Cold War Detente) के दौर में हुआ था। संगठन का वर्तमान नाम 1994 में दिया गया था। इससे पहले इसे यूरोप में सुरक्षा एवं सहयोग सम्मेलन (Conference on Security and Cooperation in Europe) के नाम से जाना जाता था। इसकी स्थापना पूर्व एवं पश्चिम के देशों के बीच बातचीत के लिए एक बहुपक्षीय मंच के रूप में 1975 में की गई थी। इस संगठन में यूरोप, मध्य एशिया तथा उत्तरी अमेरिका के 57 देश शामिल हैं।

अधिदेश (Mandate)

यह पूर्व चेतावनी (Early Warning) संघर्ष रोकथाम, संकट प्रबंधन, संघर्ष पश्चात् पुनर्वास जैसे क्षेत्रों में राजनीतिक वार्ता एवं नीति निर्माण मंच के रूप में कार्य करता है। अपने क्षेत्रीय मिशनों के माध्यम से अपने सदस्य राज्यों की राजनीतिक इच्छाशक्ति को व्यवहार में लाता है। यूरोपीय सुरक्षा एवं सहयोग संगठन सुरक्षा की व्यापक अवधारणा को अपनता है जिसमें राजनीतिक, सैन्य, आर्थिक, पर्यावरणीय तथा मानवीय आयाम शामिल होते हैं। इस तरह यह संगठन सुरक्षा से जुड़े विभिन्न चिन्ताओं जैसे अस्त्र नियंत्रण, विश्वास एवं सुरक्षा बहाली, उपाय, मानवाधिकार, लोकतंत्राकरण, पुलिस-रणनीति (Police Strategies), आतंकवादरोधी उपाय, आर्थिक एवं पर्यावरण गतिविधियाँ शामिल होती हैं। सभी 57 सदस्य देश समानता पर आधारित व्यवहार करते हैं तथा राजनीतिक निर्णय सर्वसम्मति से लिए जाते हैं लेकिन ये निर्णय कानूनी रूप से बाध्यकारी नहीं होते हैं। संगठन के बजट में सभी 57 सदस्य देशों की भागीदारी होती है। यह संगठन संघर्ष निवारण के अतिरिक्त आर्थिक विकास को बढ़ावा, प्राकृतिक संसाधनों का सतत उपयोग सुनिश्चित करना, मानवाधिकार एवं मूलभूत स्वतंत्रताओं को प्रोत्साहन देने का कार्य करता है। यूरोपीय सुरक्षा एवं सहयोग संगठन वैध यात्रा, वाणिज्य, मानव सम्पर्क को बढ़ावा देने के साथ सीमा प्रबंधन का कार्य भी करता है। संगठन मानव दुर्व्यापार रोकने का भी कार्य करता क्योंकि इससे संगठन के सभी सदस्य देश या तो सीत या गंतव्यस्थल के रूप में प्रभावित होते हैं।

संरचना (Structure)

संगठन को राजनीतिक दिशा-निर्देश शासनाध्यक्ष या राज्याध्यक्षों के शिखर सम्मेलन द्वारा दिया जाता है। मंत्रिपरिषद् (Ministerial Council) इस संगठन का सर्वोच्च निर्णय लेने वाला निकाय है। इसकी बैठक प्रत्येक वर्ष के अंत में होती है। सुरक्षा सहयोग मंच (The Forum For Security Co-operation) की निर्णय लेने वाला निकाय है जो मुख्यतः सैन्य सहयोग संबंधी मामलों को देखता है।

संगठन की अध्यक्षता एक साल के लिए बारी-बारी से सदस्य राज्यों द्वारा की जाती है। अध्यक्ष के रूप में अध्यक्षता करने वाला सदस्य देश का विदेश मंत्री कार्य करता है। अध्यक्ष को पूर्व अध्यक्ष एवं संभावित अध्यक्ष सहयोग करते हैं। यही तीन व्यक्ति प्रमुख भूमिका निभाते हैं। यूरोपीय सुरक्षा एवं सहयोग संगठन के महासचिव को नियुक्ति मंत्रिपरिषद् द्वारा तीन वर्षों के लिए की जाती है। उसकी पुनर्नियुक्ति भी की जा सकती है। महासचिव को प्राधिकार सहभागी राज्यों के सामूहिक निर्णय से प्राप्त होता है। यह संगठन के मुख्य प्रशासनिक अधिकारी के रूप में कार्य करता है।

संसदीय सभा (Parliamentary Assembly): इस बात को समझते हुए कि संसद सदस्य यूरोपीय आर्थिक एवं सुरक्षा सहयोग में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं, संसदीय सभा का गठन किया गया है। संसदीय सभा राजनीतिक एवं सुरक्षा मामलों, आर्थिक एवं पर्यावरणीय मुद्दों, लोकतंत्र एवं मानवाधिकार से संबंधित प्रस्ताव पास करती है। यह संगठन के संसदों का सामूहिक प्रतिनिधित्व करती है। इसके अलावा यह संसदीय कूटनीति एवं विस्तृत चुनाव निगरानी का कार्य भी करती है।

अंतर्राष्ट्रीय सचिवालय (International Secretariat): अंतर्राष्ट्रीय सचिवालय, सभा को इसके विभिन्न कार्यों में सहयोग देता है। यह सभा की वार्षिक सत्रों के अलावा बैठकों, ब्यूरो (Bureau) एवं स्थायी समिति की बैठकों का आयोजन करता है। सचिवालय विएना (ऑस्ट्रिया) में स्थित है।

यूरोप की परिषद् (Council of Europe)

यूरोप की परिषद् की स्थापना यूरोप के 47 देशों द्वारा लोकतंत्र को बढ़ावा, मानवाधिकारों का संरक्षण तथा विधि का शासन स्थापित करने के लिए 1949 में लंदन समझौता द्वारा की गई थी। यह यूरोप महादेश का प्रमुख मानवाधिकार संगठन है। ध्यान देने योग्य है कि यूरोप की परिषद् यूरोपीय परिषद् (European Council) से अलग है।

अधिदेश (Mandate)

यूरोप की परिषद् इस पूरे महादेश में एक समान लोकतांत्रिक एवं कानूनी क्षेत्र का सृजन तथा इसके मूलभूत मूल्यों, मानवाधिकारों, लोकतंत्र एवं विधि का शासन सुनिश्चित करवाता है। ये मूल्य सभ्य एवं सहनशील समाज के लिए तथा यूरोप की स्थिरता, आर्थिक विकास एवं सामाजिक एकता के लिए महत्वपूर्ण हैं। इन आधारभूत मूल्यों के आधार पर यूरोप की परिषद् आतंकवाद, संगठित अपराध, भ्रष्टाचार, साइबर क्राइम, जैव नैतिकता (Bio Ethics) एवं क्लोनिंग, महिलाओं एवं बच्चों के विरुद्ध हिंसा, मानव दुर्व्यापार जैसी समस्याओं के समाधान का प्रयास करता है। संक्षेप में यूरोप की परिषद् निम्नलिखित कार्य करती हैं-

- मानवाधिकार, बहुलवादी लोकतंत्र तथा विधि का शासन का संरक्षण करना।
- यूरोप की सांस्कृतिक पहचान एवं विविधता के विकास को प्रोत्साहित करना।
- यूरोपीय समाज द्वारा सामना की जा रही चुनौतियों का सामान्य समाधान ढूँढना।
- राजनीतिक, विधायी एवं संवैधानिक सुधारों के माध्यम से यूरोप में लोकतांत्रिक स्थिरता को सुदृढ़ बनाना।

संरचना (Structure)

संसदीय सभा (Parliamentary Assembly): संसदीय सभा यूरोप की परिषद् की विचार-विमर्श करने वाली निकाय (Deliberative Body) है। संसदीय सभा का गठन 318 जनप्रतिनिधियों एवं इतनी ही संख्या में स्थानापन्न प्रतिनिधियों (Substitutes) से मिलकर होती है। इनकी नियुक्ति 47 सदस्य राज्यों द्वारा की जाती है।

मंत्रिपरिषद् (The Council of Ministers): यह यूरोप की परिषद् की नीति-निर्माण करने वाली संस्था है। इसका गठन प्रत्येक सदस्य देश के विदेश मंत्रियों या स्टासबर्ग स्थिति उनके स्थायी कूटनीतिक प्रतिनिधियों से मिलकर होता है। मंत्रिपरिषद् यूरोप की परिषद् की नीति तय करती है। बजट तथा गतिविधियों से संबंधित कार्यक्रमों को अनुमति देती है।

महासचिव (Secretary General): संगठन के प्रमुख के रूप में महासचिव का निर्वाचन संसदीय सभा द्वारा पाँच वर्ष के लिए की जाती है। महासचिव परिषद् के रणनीतिक योजनाओं एवं निर्देशन, परिषद् के कार्यक्रमों एवं बजट तथा संगठन के दैनिक कार्यों के प्रबंधन के लिए उत्तरदायी होता है।

सचिवालय (Secretariate): सभी सदस्य राज्यों के लगभग दो हजार स्थायी कर्मचारी स्टासबर्ग (फ्रांस) स्थिति सचिवालय में कार्य करते हैं।